आदि रत्न

हमारे पूर्वज*

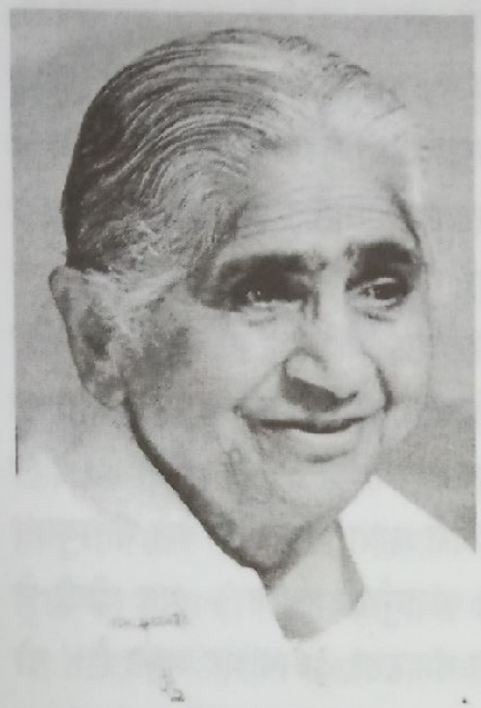

राजयोगिनी दादी जानकी जी

'पूर्वज' शब्द कितना ऊँचा है। देवतायें भले पूज्य हैं पर उन्हें पूर्वज नहीं कहेंगे। पूर्वज डायरेक्ट ईश्वर की संतान हैं। वे झाड़ के फाउण्डेशन में इस तरह बैठे हैं जो सारे झाड़ को शक्ति दे रहे हैं। भले ही आज ये पूर्वज शरीर में नहीं हैं पर जब थे, उनका त्याग, तपस्या, सेवा अति विशेष थी। तपस्या का अर्थ है, एक बाबा, दूसरा न कोई। इन्होंने अपनी हड्डी-हड्डी सेवा में लगा दी। मन, वाणी, कर्म से सेवा की है।

मम्मा तो जगदम्बा माँ है। बाबा के ज्ञान को सुनना, समाना और स्वरूप में लाना – यह मम्मा की पहचान है। यज्ञ माता होकर रही, थी कुमारी। मैंने आँखों से देखा। मम्मा को ज्ञान में आये डेढ़ साल हो चुका था तब मैंने उनको देखा था। मुझे क्वीन मदर (दीदी की माँ) ने कहा – मम्मा को देखा? मैंने समझा ही नहीं कि मम्मा किसको कहते हैं, फिर कहती है, मम्मा को देखो न! मैंने देखा, मुझे कुमारी से माँ लगी। माँ माना गंभीरता, रूहानियत, सच्चाई की मूरत। उन दिनों क्लिफ्टन पर बाबा मुरली लिखता था, फिर मम्मा को भेजता था। मम्मा पढ़कर सुनाती नहीं थी परंतु पढ़कर पहले अपने अंदर समाती थी फिर जबानी ऐसा सुनाती थी कि हम वन्डर खाते थे। ऊपर में बड़ा हॉल था, कोने में मम्मा का कमरा था। वहाँ आँगन में (बाबा की याद में) बैठी रहती थी। सुबह-सुबह नीचे उतरती थी, फिर भंडारे की तरफ जाती थी। एक दिन हम सब सोये थे, तब हमको कहा, तुम्हारी मंदिरों में पूजा हो रही है, तुम सब सोये हुए हो! तब से हम सबको लगा, हमें जल्दी उठना चाहिए। मैं तो भक्ति मार्ग की आदत के अनुसार जल्दी उठ जाती थी, बाकी सब बहनें छोटी-छोटी थी। दादी चंद्रमणि 13 साल की थी, दादी कुमारका 14 साल की थी, मम्मा जब यज्ञ में आई तो 17 साल की थी। मम्मा हर समय योगयुक्त रहती थी। एक बार मैंने मम्मा से पूछा था, आपको योगयुक्त रहना इतना सहज लगता है, हमको नहीं लगता, क्यों? मम्मा का बोल था, बुद्धि को मैं सदा प्लेन रखती हूँ।

** दादी जानकी जी ने आदि रत्नों को ही 'पूर्वज' नाम दिया है।*

बृजइन्द्रा दादी का त्याग अति विशेष रहा। लौकिक में बाबा की बहू थी। क्या हीरे-जवाहरात थे उसके पास! कैसे ऊँचे कपड़े पहनती थी! क्या बाबा ने उसकी पालना की थी! जब शिवबाबा, ब्रह्मा बाबा के तन में आया तो बृजेन्द्रा दादी ने फट से सब जेवर, कपड़े त्याग कर दिये। इस प्रकार, प्रथम त्याग इसका रहा। योग ऐसा था कि 'बाबा' कहते ही बृजइन्द्रा का चेहरा लाल हो जाता था। लौकिक में दो बच्चे भी थे लेकिन एकदम निर्मोही रही। जब बाबा समर्पित हुआ तो पहले-पहले इसने कहा, जहाँ बाबा, वहाँ हम। सदा बाबा के चरित्र सुनाती रहती थी। भले बाबा के साथ क्लिफ्टन पर रहती थी पर जब भी मिलती थी, हम उसका चेहरा चमकता हुआ ही देखते थे। बाबा ने इसको मुंबई की सेवा के निमित्त बनाया। दादी में जो सच्चाई और प्रेम भरा हुआ था, अपनी पालना से भाई-बहनों में भी वो भर दिया।

दीदी मनमोहिनी की कहानी क्या सुनाऊँ! श्रीमत को ऐसे सिर-माथे पर रखा जो मननत न कभी चलाई और न चलाने दी। बाबा का बनने से पहले भी मैं दीदी को जानती थी और दीदी मुझे सेन्सीबल लगती थी परंतु वो तो दुनिया के हिसाब से लगती थी। दीदी का लौकिक नाम था गोपी। जब बाबा की बनी तो सचमुच पहले नंबर की गोपी (भागवत् प्रसिद्ध) का पार्ट दीदी का रहा। त्यागमूर्त और बाबा की मुरली पर मस्तानी थी।

एक बार कराची में बाबा ने कहा, कुएँ में डूब जाओ, कोई है डूबने को तैयार? दीदी ने हाथ उठाया, मैं तैयार हूँ। बाद में बाबा ने कहा, बाप कभी कह सकता है क्या कि डूब जाओ लेकिन दीदी हाथ खड़ा कर बाबा की इस बात में भी पास हो गई। मुझे दीदी ने भगवान से सर्वसंबंधों से शक्ति प्राप्त करना सिखाया। 'कम्पेनियन ऑफ गॉड' पुस्तक के पीछे दीदी की ही प्रेरणा है। पहले मुझे लगता था कि बाबा भगवान है, गॉड है, वह तो प्रभु है, उसे बाबा-बाबा न कहूँ। दीदी ने कहा, सखा है ना! दीदी ने बाबा से सखा रूप में अनुभव करना सिखाया। माता, पिता, टीचर आदि का अनुभव तो था पर सखा रूप में विशेष अनुभव करना सिखाया। सच्चाई तो दीदी में इतनी थी कि कुछ भी बाबा से छिपाया नहीं। सदा कहती थी, सच की नैया डोलेगी पर डूबेगी नहीं, बाबा बैठा है। ज्ञान का मंथन करना, जैसे बाबा कहता है वैसे योगयुक्त रहना, एकांतप्रिय अंतर्मुखी रहना – यह दीदी ने सिखाया। दीदी का मंत्र रहा, 'अब घर जाना है।' दो साल तक दीदी ने यह धुन लगाकर रखी।

मैं बहुत पुरुषार्थ करती थी। एक बार दीदी ने कहा, क्या कर रही हो? मुझे लगा, मुझे रोना आ जायेगा कि मैं इतना अच्छा पुरुषार्थ नहीं करती हूँ। दीदी ने मेरा हाथ पकड़ा और कहा, पुरुषार्थ-पुरुषार्थ कहकर शक्ल कैसी बना ली है, खुशी से पुरुषार्थ करो। तब से खुशी वाला पुरुषार्थ करने लगी। पहले मेहनत वाला पुरुषार्थ करती थी।

दादी प्रकाशमणि को तो सब जानते हैं। दादी, कुमारियों में सबसे पहले समर्पण हुई। अन्य कुमारियों को बैठकर पढ़ाती थी। बाबा की मुरली को अच्छी रीति धारण करती थी, मर्यादा सिखाती थी। दादी तो तब भी दादी थी। विश्व सेवा के लिए, कराची में, बाबा दादी को डायरेक्शन देता था जैसे कि झाड़ का चित्र कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी में, ऑक्सफोर्ड में भेजना है

आदि-आदि। यज्ञ सेवा, विश्व सेवा का संस्कार दादी में शुरू से ही था। दादी ने सच्चाई और प्रेम से बाबा के हाथ में हाथ देकर सेवाओं की वृद्धि की। स्वमान में रहकर और सबको सम्मान देकर वृद्धि की। पांडव भवन, ज्ञान सरोवर से लेकर शान्तिवन तक सेवाओं को चार चाँद लगाया। कराची में बाबा, दादी को 'मुन्नी मम्मा' कहते थे।

चंद्रमणि दादी जितनी त्यागी, उतनी तपस्वी थी। तपस्या में एकदम दृढ़ मूर्ति, उसको साधारण रूप में कभी नहीं देखा। कभी उसमें इच्छायें नहीं देखीं। मुझे स्टेज मिले, कभी यह चाहना नहीं देखी। कितने घमासान होते थे पंजाब में पर दादी चंद्रमणि के आने से शान्ति-सुख का राज्य हो गया। जब बाबा योग का प्रोग्राम देता था तो दादी चंद्रमणि सबसे आगे रहती थी, योगयुक्त रहती थी।

गंगे दादी के लिए बाबा कहता था, 'हर गंगे' क्योंकि मनोहर दादी का नाम पहले 'हरि' था। दोनों आपस में सखियाँ थी। गंगे दादी बाँधेली थी, घर का त्याग किया था, ज्ञान-योग में बड़ी मस्त थी। भाषण बहुत अच्छा करती थी। बाबा दोनों (गंगे दादी, मनोहर दादी) को मिलाकर 'हर गंगे' कहता था। जब इलाहाबाद में कुंभ मेला हुआ तो कानपुर और लखनऊ का सेन्टर खुला। गंगे दादी कानपुर में रही, वहाँ से बहुत अच्छे-अच्छे युगल निकले। साधु-संतों, महात्माओं का उद्धार करने के निमित्त बाबा ने गंगे दादी को बनाया।

दादी हृदयपुष्पा, चंद्रमणि दादी की बड़ी बहन थी। प्रेम की अवतार थी, बाबा के लिए प्यार बहुत था। बैंगलोर में रही, वहाँ की भाषा क्या और दादी की भाषा क्या, फिर भी उनकी बहुत-बहुत अच्छी पालना की। मेरे साथ बहुत प्यार था। मैं पूना में रहती थी। हम आपस में विचार करते थे कि सेवा के बारे में जो बाबा के प्लैन्स हैं, डायरेक्शन हैं, वे पूरा करेंगे। इसने बाबा के सब डायरेक्शन्स को प्रेक्टिकल स्वरूप बैंगलोर में दिया। बाबा कहता था, घर-घर में गीता पाठशाला होनी चाहिए। दादी हृदयपुष्पा ने यह करके दिखलाया।

विश्वकिशोर भाऊ सारे यज्ञ का फ़िकर (ख्याल) रखता था ताकि बाबा बेफिकर रहे। कराची से स्टीमर में चढ़ाकर विश्वकिशोर दादा हम सबको आबू में लेकर आया। कार, बस भी स्टीमर में चढ़ाकर ले आया। हम सब बहनों का इतना ख्याल रखता था कि किसी को जरा भी खाँसी, बुखार न हो। मुझे उनसे बहुत सीखने को मिला। इकॉनामी से भी चलना, यज्ञ की सब जिम्मेवारियाँ भी संभालना, सबकी तबीयत का भी ध्यान रखना – ये उनसे सीखा। कोलकाता से उसने होम्योपैथी दवाइयों के बारे में जानकारी प्राप्त की थी। मुझे कॉपी में लिखकर दी कि अमुक बीमारी में यह-यह दवाई देना। अभिमान का तो नाम ही नहीं था। सब सरकारी काम करता था। पांडव भवन का स्थान लिया और भी बहुत सारी जिम्मेवारियाँ उठाई। जब हम कहते थे, भाऊ, आप इतनी सारी सेवायें करते हो, तो कहता था, मैं थोड़े ही करता हूँ, बाबा ने कहा, हो गया। भाऊ को ये शब्द कंठ थे। जैसे ब्रह्मा बाबा कहते थे (ऊपर की ओर इशारा करके) 'वो करता है', ब्रह्मा बाबा ने कभी नहीं कहा, मैंने किया। बाबा में 'मैं' शब्द था ही नहीं। बाबा ने उसको कहा था कि तुम सूट, बूट और हैट पहनो, ऐसे व्हाइट

कपड़ा पहनकर नहीं रहो क्योंकि बाहर वाले लोगों से मिलना होता है। बाहर वाले लोग भी इसे सलाम करते थे, इतना इसके प्रति रिगार्ड था।

भाऊ को कृपलानी कहकर याद करते थे। भाऊ ने जब शरीर छोड़ा तो बहुतों ने कहा, कृपलानी जैसा यहाँ और कोई नहीं है। जब ऑपरेशन कराने मुंबई जाना था तो हिसाब- किताब का सारा कारोबार रमेश भाई को और बाबा के ज्ञान को लिखने आदि का सारा कारोबार जगदीश भाई को सुपुर्द करके फिर गया। संतरी दादी उसकी युगल थी पर कभी किसी को पता नहीं पड़ता था कि ये आपस में युगल है।

मनोहर दादी अति मीठी थी, हम सदा ही आपस में मिलकर ज्ञान की रूहरिहान करते थे, योग की बहुत अच्छी लेन-देन की है। पुरुषार्थ में हम एक-दो से रेस करते थे।

दादी शान्तामणि शुरू से बड़ी मीठी, सच्ची, शान्तमूर्त होकर चली। शुरू से बाबा के साथ बड़ी फेथफुल रही। बाबा इनको सचली कौड़ी और हर की पौड़ी कहते थे। शान्तिवन में बैठकर मुरली सुनाई और शान्तिवन की शोभा बढ़ाई। सभी को आदि रत्नों का अनुभव कराया।

देवता (कमलसुन्दरी) **दादी** शुरू से लेकर ट्रांस में जाती थी। बाबा-मम्मा ने इसे मेरठ की सेवा पर रखा था।

दादी पुष्पशांता का त्याग भी अति विशेष था। पति भी था, बच्चे भी थे, जापान में कारोबार था। इसको पहले-पहले मम्मा का साक्षात्कार हुआ था, मम्मा को लक्ष्मी रूप में देखा था। मुंबई के कोलाबा सेन्टर पर रहकर बहुत अच्छी सेवायें की। ध्यान में भी जाती थी, भोग भी लगाती थी। जब बाबा बॉम्बे में होता था तब दादी पुष्पशान्ता की सूरत-मूरत से कई प्रकार की सेवायें हुई है।

आनन्द किशोर दादा, ब्रह्मा बाबा और मनमोहिनी दीदी दोनों का संबंधी था। दीदी के तो देवर का लड़का था और बाबा के भाई की बेटी का युगल था। बाबा का त्याग और समर्पण देखकर इसको भी अंदर से आया, मैं भी बाबा का बच्चा बन जाऊँ। बाबा के प्रति बहुत रिगार्ड था। पहले आनन्द किशोर दादा ही अंग्रेजी जानता था। जगदीश भाई के आने से पहले, बाबा को अंग्रेजी में कुछ भी लिखाना होता था तो आनन्द किशोर दादा को ही डायरेक्शन देता था।

दादा विश्वरत्न आलराउंडर था। मन, वचन, कर्म से बहुत सेवायें की। भोजन करते वक्त कभी बोलते नहीं देखा। जैसे ब्रह्मा बाबा टांग पर टांग चढ़ाकर योग करता था, वैसे अमृतवेले यह भी करता था। जब चलता था तो विदेशी भाई-बहनें मेरे से पूछते थे कि ब्रह्मा बाबा ऐसे चलता था क्या? यह चलता-फिरता फ़रिश्ता था।

संतरी दादी एकदम शांतमूर्त थी। किसी की बातों में न आना, योग में मस्त रहना – यह उसकी विशेषता थी।

दादी आलराउंडर, गुलजार दादी की लौकिक माँ थी। किसी को पता ही नहीं पड़ता था कि ये माँ-बेटी हैं। इनका भी विशेष त्याग था। दादी आलराउंडर बहादुर बहुत थी। भाइयों वाले सब काम आलराउंडर करती थी। कराची में भी और दिल्ली में भी सारी रात पहरा देती थी। जब हम आबू में आये तो सब्जी लाना, अनाज लाना आदि सब खरीदारी आलराउंडर करती

थी। असली नाम रुक्मिणी था पर बाबा ने आलराउंडर नाम रखा।

शिवबाबा जब ब्रह्मा बाबा में आया तो सबसे पहले समर्पित **ध्यानी दादी** हुई। ध्यानी दादी लौकिक में मम्मा की मौसी थी। उसने मम्मा को बेटी बनाया था। ध्यानी दादी के पति ने शरीर छोड़ दिया था। शांतामणि दादी की माता जी, मम्मा की लौकिक माँ और ध्यानी दादी – तीनों बहनें थीं। तीनों ही यज्ञ में समर्पित हो गई। ध्यानी दादी की भावना थी कि मम्मा ज्ञान में आ जाये तो बहुत अच्छा हो क्योंकि मम्मा, और कुमारियों से न्यारी थी। यज्ञ में, पहले-पहले हम सबका भोजन बनाने वाली, हम सबकी संभाल करने वाली ध्यानी दादी थी। मीठी होने के कारण बाबा ने ध्यानी दादी का नाम 'मिश्री' रख दिया था। कभी ध्यानी दादी के मुख से कड़वा शब्द नहीं सुना होगा। जो भी भंडारे में जायेगा, ध्यानी दादी कुछ न कुछ खिलाएगी।

जगदीश भाई को बाबा ने नाम दिया 'संजय', 'गणपति'। कलम उनके हाथ में रही। जब जगदीश भाई ज्ञान में आया, मैं दिल्ली में थी। थियोसॉफिकल हॉल में प्रोग्राम था। जगदीश भाई वहाँ आया था। हम तीन बहनें वहाँ गई थी। हम ड्रामा की बात समझा रही थी, बहुत लोग थे, यह बहुत ध्यान से सुन रहा था। इसको ज्ञान अच्छा लगा। कार्यक्रम के बाद यह हमारे

प्रभु के नूरे रत्न, परम तपस्विनी, ब्राह्मण कुलभूषण, विश्व-वंदनीय, विश्व-कल्याणी भारतमाता शिवशक्तियाँ राजयोगिनी दादियाँ

पीछे-पीछे बस तक आ गया। कहता है, मुझे मिलना है। फिर हमने इसको सुबह 5 बजे आने का समय दिया। रोज सुबह 5 से 6 बजे आता था। बृजकोठी में पहले-पहले आने वाली थी सावित्री बहन (दादा राम) और दूसरा आया जगदीश भाई। बाबा ने कहा, अच्छा बच्चा है।

संदेशी दादी शांतामणि दादी की छोटी बहन थी। संदेशी बहन एवं गुलजार बहन दोनों समान उम्र में यज्ञ में आई। संदेशी दादी भी ध्यान में जाती थी। बहुत मीठी थी, बहुत रमणीक थी। इसलिए बाबा ने नाम ही रखा था, 'रमणीक मोहिनी'। बाबा को हँसाने में, बहलाने में बहुत मीठी थी। भुवनेश्वर में बहुत अच्छी सेवायें की।

आत्ममोहिनी, पुष्पशांता दादी की लौकिक बहन थी। कभी महसूस नहीं होता था कि ये आपस में कोई देह के संबंधी हैं। आत्ममोहिनी पहले कानपुर में गंगे दादी के साथ रहती थी, फिर आई मुंबई में। पुष्पशांता दादी के बाद आत्ममोहिनी ने मुंबई के कोलाबा सेन्टर को अच्छी तरह से उठाया। उनकी एक खास यादगार मेरे पास यह है कि मुझे आकर कहती थी कि भाषण तो सभी करते हैं, तुम मुझे भासना दो। हमारा आपस में फ्रेंडली प्यार था।

शीलइन्द्रा दादी, मनमोहिनी दीदी की लौकिक छोटी बहन थी। इतने बड़े घर की छोटी-सी कुमारी शील का त्याग अति विशेष था। शरीर थोड़ा ढीला-ढाला रहता था परंतु सेवा बड़ी मस्ती से करती थी। अपने लौकिक को भी सुजाग करने की सेवा की। बाबा के साथ ईशू बहन भले बाद में निमित्त बनी पर जब बाबा मुंबई में रहता था तब शील, यज्ञ कारोबार संभालने के लिए एकदम फ्री होकर बाबा के साथ रहती थी।

चंद्रहास दादा की रग-रग में बाबा की मुरलियाँ थी। सारी मुरलियाँ, जो अब हम सुन रहे हैं, चंद्रहास दादा ने इकट्ठी करके रखी। इसने बहुत खज़ाना इकट्ठा किया। पांडव भवन में चंद्रहास दादा का कमरा अभी तक भी है। उसमें बड़ा खज़ाना इकट्ठा किया हुआ है।

भोली दादी बाबा का भंडारा संभालकर बैठी थी।

मिट्ठू दादी जब कराची में थी तो मैं उनके साथ नर्स होकर रही। पंजाब में पटियाला की सेवा मिट्ठू दादी ने की।

ये सब आदि रत्न हमारे पूर्वज हैं। इन सबका पार्ट सबसे न्यारा और प्यारा रहा है।

– ब्रह्माकुमारी जानकी,
मुख्य प्रशासिका,
प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय

आदि रत्नों को पुष्पांजली

जिस पेड़ की जड़ें जितनी ज्यादा गहरी होती है, वो उतना ही ज्यादा मजबूत और टिकाऊ होता है। इसी प्रकार, किसी भी संगठन को चलाने वाले निमित्त व्यक्तियों की भी त्याग, तपस्या की जड़ें जितनी गहरी होती हैं, वह संगठन भी उतना ही शक्तिशाली, दीर्घजीवी और निर्विघ्न होता है। प्रजापिता ब्रह्मा कुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय इस अर्थ में एक अद्वितीय संगठन है। इस संगठन के एक-एक आधारमूर्त, आदि रत्न ऐसे ही तपस्वी हैं जिन्होंने अपने आप को, अपने त्याग को गुप्त रखते हुए, अथक होकर, निःस्वार्थ भाव से श्रीमत प्रमाण श्वास-श्वास से मानवता की आजीवन आध्यात्मिक सेवा की।

ताजमहल में दो प्रकार के पत्थर लगे हैं। एक संगमरमर के चमकदार पत्थर जिनकी चिकनाहट और सफेदी लोगों को आकर्षित करती है और दूसरे वे पत्थर भी हैं जो मौन भाव से नींव में पड़े हैं, किसी को दिखाई नहीं देते पर सारा भार उठाए हुए भी अचल-अडोल हैं। इस यज्ञ के आदि रचयिता प्रजापिता ब्रह्मा तथा आदि देवी जगदम्बा सरस्वती के साथ 14 वर्ष की तपस्या का तेज अपने में समाये हुए हमारे आदि रत्न भी ऐसे ही गुप्त रत्न थे। ये रत्न भी आबू पर्वत की शान्त वादियों में, तपस्यारत रहकर, इस विशाल यज्ञ की स्थापना के बाद इसकी सुव्यवस्था और वृद्धि करते रहे। एक तरफ यज्ञ फलता-फूलता गया, ब्रह्मावत्सों की कतार लंबी होती गई और ईश्वरीय कार्य की तरफ संसार की आँखें भी आकर्षित होने लगी और दूसरी तरफ, अपनी हड्डी-हड्डी यज्ञ सेवा में समर्पित कर ये आदि रत्न अव्यक्त अवस्था के समीप पहुँचते गये। लेकिन अव्यक्त होकर, सकाश द्वारा वे आज भी यज्ञ रूपी विशाल वटवृक्ष की जड़ों को सींच रहे हैं। शरीर में ना होते हुए भी हमारे दिलों के अति समीप हैं। उनकी उपस्थिति का अहसास हम हर पल करते हैं। उनका यश शरीर, कर्त्तव्य शरीर और धारणा शरीर आज भी नित्य हमारा मार्गदर्शन करता है। उनसे जो सीखा है, वो जीवन की अमूल्य धरोहर है। उन

सब बड़ों के प्रति हम करबद्ध कृतज्ञ हैं, अपनी इस कृतज्ञता के फलस्वरूप उनके कदमों पर कदम रखकर चलने के लिए दृढ़ संकल्पित भी हैं।

यह पुस्तक उन सभी आदि रत्नों के प्रति विनम्र श्रद्धांजलि है। कुछ का उल्लेख, स्थानाभाव के कारण भले ही इसमें नहीं हो पाया है परंतु उन सभी का त्याग और तप अविस्मरणीय है। आने वाले ब्रह्मावत्स अपने इन पूर्वजों के साकार जीवन की झलकियाँ पढ़-सुनकर, अपने को भी उसी त्याग-तप के सांचे में ढाल सके, यह हार्दिक शुभकामना है और यही पुस्तक की सफलता भी है।

पुस्तक का निर्माण आदरणीया दादी जानकी जी के दृढ़ संकल्प से साकार हुआ है। साथ-साथ जिन भाई-बहनों ने अपने अमूल्य अनुभवों को लिपिबद्ध कराया, आदि-रत्नों के जन्म और जीवन से संबंधित तिथि विवरण, फोटो आदि का सहयोग दिया, ऑडियो-वीडियो काउंटर ने सहेजकर रखे हुए पुराने संस्मरण उपलब्ध कराए, जिन्होंने टाइपिंग और पुस्तक की पेज सेटिंग की अनमोल सेवा की तथा प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष सहयोग दिया – उन सभी का मैं हृदय से आभारी हूँ।

पुस्तक में सिन्ध-हैदराबाद, कराची, माउंट आबू के पांडव भवन तथा पांडव भवन से पहले के तीन भवनों – बृजकोठी, कोटा हाऊस, धौलपुर हाऊस में बापदादा के चरित्रों, दिव्य कर्त्तव्यों की अनेक दुर्लभ झलकियाँ हैं। बहुत से नये-नये अनुभवों की परतें खुली हैं। पुराने तथा नये – सभी ब्रह्मावत्सों के लिए यह पुस्तक ईश्वरीय कर्त्तव्य की अनुभूतियों तथा जानकारियों का अमूल्य स्रोत सिद्ध होगी। अनुभवगम्य होने के कारण यह इतनी रुचिकर है कि पढ़ते-पढ़ते पाठक दृश्य भी देखने लगता है और उनसे एकाकार भी जाता है। कभी वह सिन्ध-हैदराबाद की गलियों में प्रभु-प्रेम में रंगी अबोध गोपियों के भोलेपन और त्याग का साक्षात्कार करता है तो कभी कराची की मौन तपस्या की गहन शान्ति में खो जाता है। कभी उसे आबू की वादियों में बरसते ईश्वरीय प्रेम में भीगने का अनुभव होता है और कभी भारत के विभिन्न कोनों में ईश्वरीय सेवा की चहल-पहल का आभास होता है। साहित्य प्रसिद्ध नौ रसों को अपने में समाए यह पुस्तक, सहजता से सर्व प्रधान ईश्वरीय रस में आकंठ डुबोने में सक्षम है। नम्र निवेदन है कि ईश्वरीय चरित्रों की चमक से, सृष्टि चक्र में आत्मा के पार्ट को चमका देने वाली इस पुस्तक का लाभ सभी अवश्य उठाएँ।

– ब्रह्माकुमार आत्म प्रकाश

विषय सूची

प्रस्तावना iii

प्रकाशक की ओर से ix

मातेश्वरी जगदम्बा सरस्वती 1

दादी बृजइन्द्रा 18

दीदी मनमोहिनी 30

दादी प्रकाशमणि 49

दादी चन्द्रमणि 82

गंगे दादी 100

दादी हृदयपुष्पा 107

भाऊ विश्वकिशोर 117

दादी मनोहर इन्द्रा 127

दादी शान्तामणि 146

दादी पुष्पशान्ता 157

दादा आनन्द किशोर 168

दादा विश्वरत्न 175

दादी सन्तरी 197

दादी आलराउण्डर 215

दादी ध्यानी 220
जगदीश भाई 229
दादी सन्देशी 249
दादी आत्ममोहिनी 263
दादी शीलइन्द्रा 267
दादी कमलसुन्दरी 271
दादा चन्द्रहास 284
दादी भोली 300
दादी मिट्ठू 314
दादी भूरी 321

◈ ◈ ◈

मातेश्वरी जगदम्बा सरस्वती

आपका लौकिक नाम राधे था। आप यज्ञ की स्थापना के समय जब बाबा के पास आई, बाबा ने आपको ओमराधे नाम से संबोधित किया। बाबा ने अपनी सारी संपत्ति कन्याओं-माताओं की जिस कमेटी के आगे समर्पित की, आप उस कमेटी की हेड थीं। बाबा ने आपको कन्याओं, माताओं की संभाल करने, यज्ञ को सुचारु रूप से चलाने तथा मातृ स्नेह एवं पालना देने के निमित्त बनाया, इसलिए आपको नाम मिला जगदम्बा सरस्वती, ब्रह्मा की पहली मुख संतान। बाबा ने आपके भविष्य को देखते हुए आपको साक्षात्कार कराया कि आप राधे ही भविष्य की अनुराधे अथवा श्रीलक्ष्मी बनने वाली हैं, इसी आधार से आपके अंदर वे सब लक्षण आते गये और आपने यज्ञ माता बन यज्ञ-वत्सों की पालना की। आपकी वाणी में अति मधुरता और स्पष्टता थी जो हर एक उसे सहज समझकर ग्रहण कर लेता। आप योगनिष्ठ थी, आपको सदा हाँ जी का पाठ पक्का था। बाबा के मुख से जो निकला, वह बिना कुछ सोचे आप तुरंत कर लेती। आपमें पवित्रता का ऐसा बल था जो आसुरी वृत्तियों वाली आत्मा सामने आते ही परिवर्तन हो जाती। आपकी दृष्टि से योग का जौहर दिखाई देता था। आपने भारत के विभिन्न प्रांतों में जाकर सेवाओं का खूब विस्तार किया। अनेक विघ्नों में अचल-अडोल-एकरस, स्थिर रही। आप 24 जून, 1965 में अव्यक्त वतनवासी बन गई।

राजयोगिनी दादी जानकी जी मम्मा के बारे में अपने अनुभव इस प्रकार व्यक्त करती हैं –

गुप्त पुरुषार्थी

मम्मा की कितनी महिमा करें, वो तो है ही सरस्वती माँ। मम्मा में सतयुगी संस्कार इमर्ज रूप में देखे। बाबा की मुरली और मम्मा का सितार बजाता हुआ चित्र आप सबने भी देखा है। बाबा के गीत बड़े प्यार से गाती रही परंतु पुरुषार्थ में गुप्त रही इसलिए भक्तिमार्ग में भी सरस्वती (नदी) को गुप्त दिखाते हैं। मम्मा से काली देवी का अनुभव किया। उनके सामने जाते ही सबका उद्धार हो जाता था। शीतला भी मम्मा ही है। मम्मा के शीतला रूप के मंदिर अनेक स्थानों पर हैं। जगत अम्बा के रूप में उन पर चढ़ावा चढ़ता है। हम सब जो यज्ञ से खा रहे हैं, यह यज्ञमाता पर चढ़ा हुआ चढ़ावा ही तो है। यज्ञ का देगड़ा, द्रोपदी का देगड़ा है, कभी खाली नहीं होगा। मम्मा पहले राधे, फिर सरस्वती, फिर जगदम्बा बनी। मम्मा से ज्वालामुखी स्वरूप का अनेक बार अनुभव किया। यह नहीं कहेंगे कि मम्मा, शिव बाबा को याद करती

थी बल्कि याद स्वरूप स्थिति कैसे होती है, यह मम्मा के चहरे से दिखाई पड़ता था। व्यक्तित्व में रूहानियत, दिल में परमात्मा पिता के लिए प्यार और सम्मान, पढ़ाई में एक्यूरेट– ये मम्मा की विशषताएँ थीं।

हाथ पकड़ने से अशरीरी बन जाते थे

मम्मा के हाथों में इतनी कशिश, जो हाथों में हाथ दो तो अशरीरी बन जाते थे। मम्मा ने बाबा से इतना सीखा जो धारणा करने में नम्बरवन चली गई। मम्मा की शिक्षा सुनते-सुनते बुद्धि शिवबाबा और परमधाम की स्मृति में टिक जाती थी। कमाल यह थी कि बैठते थे मम्मा के सामने, याद शिवबाबा आता था। अपना नाम-रूप भुलवाने में बड़ी होशियार थी। देखते थे तो सम्पूर्ण मम्मा दिखाई देती थी। उनकी वाणी सुनते-सुनते कैसा भी व्यक्ति पिघल जाता था। बोल में इतनी रूहानियत थी जो तुरंत देहभान भुला, शांतिधाम होने का अनुभव कराती थी। दिल कहता था, मम्मा के सामने आवाज़ में कैसे आएं?

मम्मा-बाबा के साथ दादी जानकी जी तथा अन्य भाई, बहनें और मातायें।

हर घड़ी अन्तिम घड़ी

मैं नई-नई यज्ञ में आई थी, कराची में मम्मा के सामने बैठी थी। मैंने पूछा, मम्मा मैं क्या पुरुषार्थ करूं? मम्मा ने कहा, 'हर घड़ी को सदा ही अंतिम घड़ी समझना।' उसी घड़ी से सब पसारा बुद्धि से निकल गया। आज तक भी इस धारणा को कभी भूली नहीं हूँ।

कभी ख्याल ना आए कि यह शिक्षा क्यों मिली

एक बार मम्मा ने कहा, 'कभी कोई शिक्षा मिले तो उसे संभाल कर रखना। कभी यह ख्याल ना आए कि मुझे यह शिक्षा क्यों मिली, मेरी भूल तो थी नहीं। शिक्षा बड़ी काम की होती है। समय पर बड़ी काम में आयेगी।' तब से लेकर बुद्धि में एक बॉक्स बनाया हुआ है। बहन-भाई किसी द्वारा भी शिक्षा मिले, संभाल कर उसे बॉक्स में रख लेती हूँ, यह महसूस कभी नहीं किया कि यह कौन होता है मुझे शिक्षा देने वाला? इस प्रकार, सीखने की

भावना मम्मा ने पैदा की। सेवा में जब नर्स थी तो मम्मा से बहुत धैर्य सीखा। बाबा (बाबा भवन से) टेलिफोन पर मुरली सुनाता था, मम्मा सुनती थी कुंज भवन में, बड़ी एकाग्रता से हुँकारा भरती जाती थी। हमें भी ध्यान रहे कि मम्मा जैसी गंभीरता, नम्रता, सत्यता की मूर्ति बनना है।

संकोच दूर कर दिया

एक बार एक सखी को ऐसे ही सुनाया मैंने कि मैं मम्मा से थोड़ा डरती हूँ। सखी ने मम्मा को सुनाया। फिर मम्मा हाथ पकड़ कर टेनिस कोर्ट में चलते-चलते पूछने लगी, आप मेरे से डरती हो? मैंने कहा, डरती तो नहीं हूँ, शायद संकोच करती हूँ बात करने में। उसी घड़ी मम्मा ने मेरा संकोच दूर कर दिया। बहुत हल्का कर दिया। उस दिन के बाद भाग्य खुल गया। मैं नर्स थी, मम्मा राउण्ड लगाने आए तो भी मेरा हाथ, हाथ में ले ले। जब भी सामने जाऊं, बोले, आओ बैठो। बाबा ने अपने समीप लाया। सम्मुख और समीप रहने से समान बनना सहज हो गया है। उतावली से, फोर्स से कभी मम्मा ने नहीं बोला। वे सेकण्ड में समझ जाती थी कि अब इसके व्यर्थ ख्यालात शुरू हैं। मीठा इतना बोलती थी मानो लोरी दे रही हो परंतु उस लोरी में नींद नहीं आती थी बल्कि आत्मा उठकर खड़ी हो जाती थी। व्यर्थ का समापन कर देना सामने बिठाकर – यह मम्मा में देखा।

ड्रामा के पट्टे पर अडिग-अडोल

दृष्टि से ही सब कुछ सिखा देना, यह मम्मा को आता था। मैंने पूछा, मम्मा, मुझे क्या करना है। पहले तो बताया नहीं, फिर बोली, सब ठीक है, फिर इशारे से कहा, 'किसी का अवगुण चित्त पर रखती हो।' उसी दिन से कान पकड़ लिया। शांतचित्त, उदारचित्त तब बनेंगे जब चित्त साफ होगा। योग बल क्या होता है, मम्मा से सीखा है। पूना में डेढ़ महीना मम्मा हमारे पास थी। लगता नहीं था कि मम्मा के शरीर को कोई तकलीफ है। शांतामणि दादी के लिखे हुए मुरली के नोट्स रोज मम्मा के पास आते थे। नोटस् पढ़ती थी, बाबा की मुरली पढ़ती थी, टेप भी सुनती थी। भले ही रात के 11 बज जाएँ, फिर भी मुरली पढ़ने का नियम पक्का था। मम्मा, बाबा की आज्ञाकारी, चाहे कुछ भी हो जाए अचल-अडोल रहने वाली थीं। किसी के शरीर छोड़ने का समाचार सुनाओ तो बोलेंगी, अच्छा, ड्रामा। मम्मा बैंगलोर गई थी। वहाँ के भाई-बहनों को मम्मा से बहुत प्यार मिला तो छुट्टी देते समय सबकी आँखें भर आईं। मम्मा उसी अचल अवस्था में रही। फिर हमारे पास पूना आई। भाई-बहनों ने पूछा, यहाँ से जाकर हमें भूल जाएँगी? मम्मा ने कहा, और क्या करेंगी। मम्मा ड्रामा के पट्टे पर अडिग, अडोल रहती थी।

इनको होवे तो पता चले

बाबा जब मुम्बई में, ऑप्रेशन कराने आए थे, हम भी वहीं थे। कई लोग पूछते थे, क्या आपके गुरु हैं ये? तब बाबा ने कहा, बोलो, बापदादा हैं। तब से बापदादा नाम प्रचलित हो गया। बाबा ऑप्रेशन कराने हॉस्पिटल में अपने कमरे में आये, शरीर चदर से ढका पड़ा था, कहने लगे, मुझे कलम दो मुरली लिखूँ। छह पेज की मुरली लिखी। कितना बाबा का प्यार हम बच्चों से है! हमने पूछा, मम्मा, बाबा को शरीर को

तकलीफ क्यों हुई? मम्मा ने कहा, नहीं तो मनुष्य कहेंगे, इनको होवे तो पता चले। यानि शरीर को कुछ हुआ तो पता चला कि स्थिति कैसी हो? बाबा की उस घड़ी की स्थिति देखी, बड़ी वंडरफुल थी। देह में होते हुए भी जैसे देह के असर से पूर्ण मुक्त थे।

******

मातेश्वरी जगदम्बा से साकार में पालना प्राप्त आदरणीय **भ्राता जगदीश चन्द्र जी** उनके प्रति अपने अनुभव इस प्रकार लिखते हैं –

जगदम्बा सरस्वती गुणों की साक्षात् मूर्त थीं

सारे जीवनकाल में हमने उस जगदम्बा सरस्वती को साक्षात् देखा, जिसकी लोग पूजा करते है। स्कूलों और कॉलेजों के बाहर, कहीं मूर्ति बनाकर और कहीं चित्रो द्वारा उनकी पूजा होती है। लोग कहते हैं, ये विद्या की देवी थी। वे कैसे विद्या की देवी बनी, क्या विशेषता थी उनकी? उनसे अनुभव सुनना, जो उनके अंग संग रहे, बहुत लाभकारी बात है। आप जानते हैं कि आर्य समाज के संस्थापक के आगे "सरस्वती" उपाधि लगती है, ये सरस्वती कौन थी? सरस्वती जो हुई, वे तो आत्मा और परमात्मा को बहुत बारीकी से जानती थी, उन्होंने जो समझा था, उसे जीवन में पूरी तरह उतारा था। वे गुणों की साक्षात् मूर्त थी।

देहली में एक व्यक्ति था, जो पवित्रता के नाम पर अपनी पत्नी को तंग करता था। रिश्तेदारों को कहता था कि जब से यह ब्रह्माकुमारी में जाती है, सेवा नहीं करती है, बच्चों को नहीं संभालती है। असली बात तो वह बताता नहीं था क्योंकि वह बात उसके विरूद्ध जाती थी। उसने मेरी भी पिटाई करने की कोशिश की थी, वो समझता था कि यही भाई है जो सभी को सहयोग देता है। उसने अपनी पत्नी को घर से निकाल दिया। हमने फैसला होने तक उस बहन को महिला आश्रम में रखा।

मम्मा से बहुत प्रभावित हुआ

मैं महिला आश्रम के प्रधान को अपने साथ दिल्ली राजौरी गार्डन सेवाकेन्द्र पर मम्मा से मिलाने ले गया। मेरे से आधा घण्टा पहले वो व्यक्ति भी आश्रम पर पहुँचा था। उसने सेन्टर की दरी फैक दी, बल्ब तोड़ दिये, कुर्सियाँ इधर-उधर कर दी, काफी अपना तमाशा दिखाया। फिर पूछने लगा, मम्मा कहाँ है, आज मैं फैसला करके ही जाऊंगा। बहने डर गई कि पता नहीं यह मम्मा को क्या कह दे। मम्मा को उन्होंने सबसे ऊपरी मंजिल पर भेज दिया। वह कहने लगा, 'आपने मम्मा को छिपाकर रखा है, मेरे सामने क्यों नहीं आती, मेरे से बात कराओ।' फिर अपने आप ही सारे मकान में घूमा ऊपर-नीचे, फिर सबसे ऊपर की मंजिल पर गया। वहाँ कमरे में एक चारपाई और एक कुर्सी थी। कुर्सी पर मम्मा बैठी थी। वह जब पहुँचा तो मम्मा कुर्सी से उठ गई और बोली, 'आओ बच्चे, आओ, कैसे आए?' बहुत प्यार से उसको कहा, 'आओ बच्चे!' यह सुनकर उसने सच्चे मन से कहा, माँ, माँ, माँ!, प्रश्न सब उसके खत्म हो गए। मम्मा ने फिर पूछा, 'बोलो, कैसे आए?' कहता है, 'कुछ नहीं।' जो उसकी शिकायत थी, जो वह झगड़ा करने आया था, वे सब बातें एक तरफ रहीं, मम्मा से बहुत प्रभावित हुआ। मम्मा ने तो कोई बात भी नहीं की थी, केवल प्यार से उसे बुलाया था कि 'आओ बच्चे, बैठो।' उसने कहा,

'नहीं मम्मा, आप यहीं बैठो, मै वहाँ बैठता हूँ।' बड़ी नम्रता से मम्मा ने उसे कहा, 'नहीं, नही, आप बैठो।' उसे आश्चर्य लगा कि ये इतनी बड़ी हैं और मुझे अपनी जगह दे रही हैं। बैठ तो गया वह पर शान्ति से मम्मा से दृष्टि लेता रहा। उस दृष्टि से उसे बहुत लाभ हुआ, अच्छा अनुभव हुआ। वापस लौटकर लोगों को बताने लगा कि मम्मा इनकी बहुत महान है।

शिक्षाओं का प्रत्यक्ष नमूना

वह मम्मा का कायल हो गया। मम्मा की तरफ से कोई गुस्सा नहीं किया गया, झगड़ा नहीं किया गया कि क्यो आये तुम, कौन है तुम्हारे साथ, किसी से इजाज़त क्यों नहीं ली, क्या यह कोई सभ्यता है, कुछ नहीं कहा मम्मा ने। मम्मा का प्यार, दुलार, व्यक्तित्व इतना प्रभावशाली था कि वह बाबा की शिक्षाओं को प्रत्यक्ष करने में आदर्श नमूना थी।

मातेश्वरी जी, दादी हृदयशांता जी, दादी प्रकाशमणि जी

इनका कसूर नहीं है

योगी के लिए गाया हुआ है कि उसकी मनसा, उसकी आंतरिक स्थिति, सबके प्रति प्रेम और सद् भावना वाली होती है। वह सोचता है, जो निंदा करे वह भी हमारा मित्र। बाबा के जीवन मे भी हमने देखा, सिर्फ कहने मात्र नहीं बल्कि निन्दा करने वालों को कहते, 'बच्चे है ना। इनको ज्ञान नहीं है, इनका कसूर नहीं है। ड्रामानुसार इनका यही पार्ट है, जब समझ जायेंगे तब ऐसा नहीं करेंगे। इसलिए इनकी बात का बुरा मानने की ज़रूरत नहीं है।'

निर्मल जीवन दर्पण जैसा

मम्मा की चुम्बकीय शक्ति इस बात के कारण थी कि वे सबको बच्चे समझती थी। सिर्फ ब्रह्माकुमार-ब्रह्माकुमारियों की माँ नहीं, वे तो अपने व्यवहार से साक्षात् दर्शाती थी कि सभी उनके बच्चे हैं, चाहे आयु कुछ भी थी। शत्रु-मित्र का, स्त्री-पुरुष का, आयु का, किसी का भी उनको देहभान नहीं था। तो वे योगी हो गई ना। बिना योग के देहाभिमान जा नहीं सकता। योग की शक्ति सर्वश्रेष्ठ है। योगी इसी से विजय प्राप्त करता है, विजयमाला का दाना बनता है। यह हमने मम्मा के जीवन में प्रत्यक्ष देखा। उन दिनों इस संस्था के प्रति लोगों की प्रतिक्रिया बहुत विरोधात्मक थी। कई लोग उन दिनों बाबा की बड़ी निन्दा कर दिया करते थे। अब मनुष्य अपनी निन्दा तो सुन ले, चलो संस्था की भी बर्दाश्त कर ले परन्तु बाबा, जिनसे अनन्य

प्रेम है, जिनसे नया जीवन पाया है, उनके लिए ऐसा-वैसा सुनने से उत्तेजना होती थी। लेकिन यह ना हो, यह हमने मम्मा का जीवन देखकर सीखा। मम्मा की तरह सहनशीलता, मधुरता, नम्रता, सबके प्रति सज्जनता- ये सभी दैवी गुण हममें भी होने चाहिएँ। जब तक कोई रोल मॉडल, आदर्श सामने ना हो व्यक्ति किसका अनुकरण करे? मम्मा का जीवन निर्मल था, दर्पण की तरह से। कोई भी देखे, उनके पास बैठे, चाहे विरोधी हो, चाहे सहयोगी हो, कहेगा, 'यह मेरी मम्मा है।'

निर्बल आत्माओं को बल मिला

ऐसे ही एक अन्य स्थान पर विरोधियों का एक समूह मम्मा से मिलने सेन्टर की ऊपरी मंज़िल पर गया तो देखा, वो अचल, स्थिर अवस्था में बैठी थी। नीचे जो विरोध के स्वर गूँज रहे थे, उनसे एकदम अप्रभावित। वे मम्मा के सामने आकर बैठ गए। उनमें से किसी को कुछ, किसी को कुछ अलौकिक अनुभव हुए। जब कोई ठीक स्थिति में बैठता है तो बाबा भी मदद करते है। थोड़ी देर बैठने पर उन्हें अनुभव हुआ कि मम्मा के नेत्रों से बहुत नूर निकल रहा है। जैसे टार्च की रोशनी किसी पर फेंकी जा रही हो। जब वे नेत्रों की तरफ देखते थे तो उनको लगता था कि वहाँ प्रकाश ही प्रकाश है। उनके मन से यह आवाज़ निकली – यह साधना की शक्ति है वरना तो कोई महिला, ऐसी स्थिति में या तो डर जाएगी या उठ खड़ी होगी या झगड़ा करेगी या ज़ोर से चिल्लाएगी, पर ये तो एक दम शांत हैं। शान्ति की शक्ति से मम्मा ने उनको एकदम शान्त कर दिया। उस समय उन्हें शान्ति की शक्ति की ज़रूरत थी क्योंकि वे अशान्त आत्मायें थीं। उन निर्बल आत्माओं को बल मिला। उनको लगा कि यह स्थान आवाज़ से ऊपर की दुनिया का है। यहाँ हमें आवाज़ नहीं करनी चाहिए। उन्होंने सोचा, कौन है इस दुनिया में जो इतनी देर तक एक ही आसन पर बैठा रहे। पर इन्होंने तो शरीर, मन और नेत्र सभी को साध लिया है। ये महान आत्मा है।

विरोधी शान्त हो गए

उनमें से कुछ ने धार्मिक साहित्य पढ़ा था। योगी के लक्षणों को वे जानते थे। योगी के चारों ओर बैठने वाले जानवर, जो जन्मजात शत्रु होते हैं, मित्र बन जाते हैं, जैसे कि तपस्वी शंकर के यादगार चित्र में दिखाया गया है। उनके पास मोर, सांप, बैल आदि बैठे दिखाते हैं, जो यूं तो जन्मजात एक-दो के वैरी हैं, पर वहाँ एक परिवार के सदस्य की भांति बैठे हैं। भाव यह है कि शंकर जी की योग समाधि से प्रभावित होकर वे भी शान्त हो गए हैं। ये विरोधी लोग मम्मा को देखकर शान्त हो गए। वे वहाँ से जाना नहीं चाहते थे, मम्मा की शक्ति ने उनको पकड़ लिया था पर फिर भी वे यह सोचकर नीचे आ गए कि कहीं बाहर खड़े लोग और ज्यादा हल्ला-गुल्ला ना कर दें।

सच्ची शान्ति यहीं मिल सकती है

नीचे आए तो नीचे खड़े लोग तो बेसब्री से उनका इंतज़ार कर ही रहे थे। इन्होंने कहा, 'भाई, इनकी मम्मा कमाल है, आप चाहो तो जाके देख लो। मम्मा इनकी बहुत अच्छी है।' विरोधियों ने कहा, 'देखा, तुम लोगों को भी जादू लग गया ना। हम पहले ही डर रहे थे कि तुम इतनी देर से बैठे हो, बिल्कुल उनके

होकर ही आओगे। हो गया ना जादू!' वे बोले, 'ऐसा नहीं है, आप खुद जाकर देख लो।' उन्होंने कहा, 'आपका मतलब यह है कि हम भी जायें और जादू लगवाकर आ जायें? ना भाई, हमारे बच्चे, बीवी कहेंगे, ये कहाँ से बदलकर आ गए हैं, हम नहीं जाते।' ऐसा कहकर बहुत-से चले गए। पर कुछ बहुत ही निकृष्ट प्रकार के लोग थे, अब भी खड़े रहे। पूछने लगे, 'क्या तुम्हारी आँखों में सूरमा डाला था?' वे बोले, 'नहीं।' फिर पूछा, 'कुछ खिलाया था क्या?' वे बोले, 'नहीं।' फिर पूछा, 'तो जादू कैसे किया, दृष्टि से कर दिया होगा।' वे बोले, 'तुम चाहे जो कह लो पर सच्ची शान्ति मिल सकती है तो यहाँ ही मिल सकती है और मिल सकती है इनकी मम्मा से।'

पुरुषार्थी अर्थात् शिक्षा को तुरन्त जीवन में उतारना

मैंने दो वृत्तांत बताए। बाबा बार-बार हमसे कहते है– 'बच्चे, आपकी योग की स्टेज ऐसी हो जो मनसा सेवा कर सको। अन्त में ऐसी ही सेवा होगी। लोग बहुत घबराए हुए और अशान्त होंगे। आप साइलेन्स में रहकर उनको शान्ति की शक्ति देना, जो चाहिए वो देना।' अभी तक हमारे जीवन में वो विशेषता नहीं आई और मम्मा में तो उन दिनों आ गई थी। मम्मा को बाबा ने कोई बात बार-बार नहीं कही। यही मम्मा की विशेषता थी। बाबा ने जो एक शिक्षा दी, दुबारा कहने की ज़रूरत बाबा को नहीं रही। 'जी बाबा' कहकर मम्मा ने उसको अपने जीवन में लाया। इसको कहते हैं पुरुषार्थ। मम्मा, वाणी में भी कहती थी, जब आप कहते हो, 'मैं पुरुषार्थी हूँ ', तो इसका अर्थ आप यह लेते हो कि हमारे में कमी-कमज़ोरियाँ हैं, हमसे भूलें हो जाती हैं परन्तु सच्चे अर्थों में पुरुषार्थी का अर्थ है, एक बार बात समझ ली तो दुबारा समझाने की ज़रूरत ना रहे। हम संस्कार बदलना चाहते हैं पर बदलते नहीं पर मम्मा ने तुरन्त संस्कार बदल लिए इसलिए आगे चली गईं।

******

राजयोगिनी दादी मनोहरइन्द्रा जी मातेश्वरी जगदम्बा के प्रति अपने उद्गार इस प्रकार व्यक्त करती हैं –

गंभीर और हर्षितमुख

मम्मा, मम्मा कैसे बनी, वो सब मैंने देखा। मम्मा को लौकिक जीवन में भी हमने देखा था। हम स्कूल से जब निकलते थे तो मम्मा और साथ में उनकी बहन, दोनों को देखते थे। हम स्कूल की कुछ लड़कियाँ एक कोने में खड़े होकर एक बार तो दर्शन करती थीं। मालूम नहीं था, क्यों हमको कशिश (खिंचाव) होती है। शायद इसलिए कि वो भविष्य में हमारी माँ बनने वाली थी। मम्मा का चेहरा गम्भीर और हर्षितमुख था। थी तो वो लौकिक जीवन में, फ्राक पहने, जुराबें पहने, लम्बे बाल और चेहरे पर थोड़ी दिव्यता की झलक। उस समय तो हम दिव्यता को भी नहीं समझते थे, लेकिन कशिश थी। कुछ दिनों बाद मालूम पड़ा कि वो हमारी ज्ञान-कक्षा में आने लगी हैं। बाबा नया गीत बनाता था और मम्मा शाम के समय उस गीत की तर्ज निकाल कर गाती थी। ऐसे तो गाने वाली और भी बहुत बहने थीं, परन्तु मम्मा का चेहरा ही बोलता था। दृष्टि से, चहरे से, हाव-भाव से, मम्मा द्वारा गाया गया

गीत बहुत अच्छा लगता था। इसलिए सभी क्लास वालों को बड़ा आकर्षण होता था। बाबा के नामी रिश्तेदार, मम्मा के नामी रिश्तेदार भी देखने मिलने आते थे, सभी को मम्मा का गीत बहुत अच्छा लगता था। पहले भी वो स्कूल में गाया करती थी परन्तु उस समय की और बात थी। यहाँ ओम मण्डली में आकर एकदम दिव्यता से भरपूर होकर गीत गाना और उस दिव्य नशे से गीत गाना उसका प्रभाव लोगों पर बहुत अच्छा पड़ता था।

कोर्स से फोर्स भरती थी

बाबा ने एक विशेष गीत बनाया था और मम्मा ने अनुभव के आधार से उसे गाया। गीत के भाव इस प्रकार थे, मीठी सखियों! मैंने यहाँ सत्संग में आकर देखा कि मैं मानो हॉस्पिटल में आ गई हूँ जहाँ ज्ञान का नेत्र खुलता है, नई आँखें ज्ञान की मिलती हैं, पुरानी दुनिया की पुरानी आँखें बन्द हो जाती हैं, ऐसा मैंने यहाँ देखा है। और भी कई अनुभव के शब्द इसमें थे। इसे सुनकर लोगों के मन में मम्मा के प्रति भाव और सम्मान पैदा होने लगा। पहले तो मम्मा को सभी राधे बोलते थे, यही उनका नाम था परन्तु जैसे-जैसे वो ॐ ध्वनि लगाने लगी, ॐ के अर्थ में टिकने टिकाने की शक्ति उनमें आती गई तो सभी ने नाम रखा 'ॐ राधे'। फिर थोड़ा और आगे चली तो मम्मा, ज्ञान का कोर्स

मम्मा के साथ दादी मनोहर इंद्रा जी, दादी प्रकाशमणि जी एवं अन्य

कराने लगी और कोर्स में फोर्स भर कर ऐसा सुनाती थी कि जिज्ञासु रोज़ आने लगता था। दूसरी बहनें ज्ञान सुनाती थीं, जिज्ञासु दो दिन आया, तीन दिन आया फिर ढीला हो जाता था या चला जाता था परन्तु मम्मा ऐसा फोर्स भरती थी कि क्लास वृद्धि को प्राप्त होती चली गई।

मम्मा द्वारा श्री लक्ष्मी का साक्षात्कार

मम्मा में योग का जौहर था। वे अर्थ में टिककर गाती थी। उसका भाषण भी सबसे अधिक अच्छा होता था। जब बाबा कश्मीर में गये, वहाँ से ज्ञान का सारा सार, पत्र में लिखकर भेजते थे, हरेक के नाम पर, उसे पढ़ कर फिर वाणी चलाई जाती थी। उसमें भी मम्मा का जो बोलना था, उसमें इतनी ताकत होती थी कि सब दत्तचित्त हो जाते थे। फिर मम्मा उठती थी तो सब उनके सामने खड़े हो जाते थे और जिनको भी वो दृष्टि देती थी तो जैसे बाबा के द्वारा श्री कृष्ण का साक्षात्कार होता था, ऐसे मम्मा के द्वारा भी राधे, श्री लक्ष्मी का साक्षात्कार होता था। फिर यशोदा माता (बाबा की युगल) को साक्षात्कार हुआ कि यही श्री लक्ष्मी बनने वाली है। इस प्रकार, सभी बड़ी- बड़ी बहनें भी, इस भविष्य को जानकर अपने आप मम्मा को सम्मान देने लगीं। किसी को भी यह विचार नहीं आया कि हम इनसे आगे जा सकते है। मम्मा जैसे अपने गुणों से स्वत: आगे बढ़ती चली गई।

हम झुक गये उनकी पालना के आगे

पालना करने का तो जैसे कुदरती संस्कार था मम्मा में। हम बांधेली बहनें, मारें खा-खाकर आती थीं, मम्मा को अपना दु:ख सुनाती थीं तो वो एक तरफ हमारे दिल की सच्चाई को परखती थी और दूसरी तरफ हममें हिम्मत भरती थी, हमें पाँवों पर खड़ा करती थी और युक्तियाँ बताती थी कि तुम ऐसा-ऐसा कर सकती हो। इससे मम्मा का सहारा हम को मिल गया। हम घर में जाकर लौकिक रिश्तेदारों से वैसा ही व्यवहार करती थीं जैसा कि मम्मा हमको दिशानिर्देश प्रदान करती थी। तो मम्मा ने शुरू से लेकर हमको बच्चों की तरह पाला। थी तो खुद भी हमारे जैसी, चार-पांच साल बड़ी, पर मम्मा का स्वभाव-संस्कार इतना स्पष्ट हो गया तो लगा कि यह हमारी माँ है। उनकी पालना के कारण हम सब झुक गए। उनकी अध्यात्मिक शक्ति इतनी तीव्र थी कि उसके आगे किसी की भी अथॉरिटी चली ही नहीं। हर बात में मम्मा हमारी साथी बन कर रही। भण्डारे में पहले वो सेवा में फिर हम उनके पीछे-पीछे। हम उनको फॉलो करते रहते थे। उनकी अपनी धारणा का चमत्कार था यह सब।

******

पटना के **ब्रह्माकुमार भगवती प्रसाद** मातेश्वरी जगदम्बा के साथ का अनुभव इस प्रकार व्यक्त करते हैं –

जुलाई सन् 1959 की बात है जब मैं ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के संपर्क में पहली बार आया था। मैंने ब्रह्माकुमारी बहनों के अनुभव के आधार पर भागवत् की वास्तविक अमर कथा को सात दिनों तक सुना और बहुत प्रभावित हुआ। ज्ञान के बाण मर्म-स्थल तक घुस जाते थे और मैं सोचने को बाध्य हो जाता था कि यही एकमात्र सत्य है। लेकिन 'कल्पपूर्व' की भाँति गीता के भगवान पुन: अवतरित होकर प्राय: लोप गीता-ज्ञान दे रहे हैं और कलियुग के विनाश

और सतयुग की स्थापना की तैयारी करा रहे है – इतनी ऊँची बातों को मानने में कभी-कभी हृदय साथ नहीं देता था, भले ही मस्तिष्क साथ दे देता था। मस्तिष्क तो प्रभावित हो चुका था लेकिन हृदय अभी तक अछूता-सा ही था।

कुछ महीनों के बाद मैंने सुना कि मातेश्वरी जगदम्बा सरस्वती जी का शुभागमन पटना में होने वाला है। जब कभी अनुभवी बहनों तथा भाइयों से मैं माँ की बड़ी महिमा सुनता था तो कभी-कभी मन में हँसी आती थी कि बड़े भोले और सहज विश्वासी हैं ये लोग। मैं हृदयहीन, अविश्वासी तथा कड़े संस्कारों वाला था और स्वयं को बड़ा तार्किक समझता था। माँ के साक्षात्कार से पहले मैंने उनको माँ या 'मम्मा' शब्द से संबोधित नहीं किया। 'सरस्वती' शब्द से भी संबोधित करने के लिए हृदय गवाही नहीं देता था। सोचता था, औरों की तरह होंगी या शायद कुछ ऊँची हों।

मातेश्वरी जी का अलौकिक और स्नेह-भरा व्यक्तित्व

प्राण माँ से मिलन की घड़ियाँ आखिर आ पहुँची। ज्ञान-गर्भ में तड़पते बच्चे को मधुर लोरी सुना नवजीवन देने के लिए दिसंबर मास की एक प्रभात वेला में जगदंबा जी का पदार्पण पटना धरनी पर हुआ और कुछ समय बाद माँ क्लास में आसन पर आ विराजमान हुई। नयनों से अव्यक्त रूहानी मिलन हुआ तो ऐसा लगा जैसे किसी ने मेरे अणु-परमाणुओं में एक दैवी चेतना, एक दैवी स्फूर्ति फूँक दी हो। फिर तो मैं एकटक देखता ही रह गया। देवत्व की काल्पनिक प्रतिमा साकार में सजीव हो उठी। लगता था, कोई मानवी नहीं, देवी बैठी हो। योगमयी मम्मा की हर भाव-मुद्रा से एक दिव्यता की, अलौकिकता की भासना आती थी। लगता था जैसे उस तेजोमयी देवी से अलौकिक प्रेम की, करुणा की, आध्यात्मिक शक्ति की किरणें विकीर्ण हो चारों तरफ फैल रही हैं और सबको सराबोर करती, अनुप्राणित करती जा रही हैं। अतिशय गंभीर थीं वह, तो प्यार की सागर भी थीं। उस जगजननी के नेत्र इतने चपल थे कि सबको लगता था कि जैसे माँ हमीं को दृष्टि दे रही हैं, हमारी आत्मा में शक्ति भर रही हैं। इतने तेजस्वी नेत्र थे कि सब कुछ भेद कर सीधे आत्मा को ही देख रहे थे। प्रेम और वात्सल्य की धारायें तो उन नयनों से जैसे बरस रही थीं। वाणी का माधुर्य तो भुलाये नहीं भूलता। बैठे-बैठे सोचता था कि क्या कोई मानवी ऐसी अमृत-भरी वाणी बोल सकती है। और तो और, मम्मा के मौन और मुस्कान में भी अजीब जादू-सा लगता था जो बरबस हृदय को खींच लेता था। जगदंबा का वर्णन करने में पहली बार तुलसीदास की वह पंक्ति प्रत्यक्ष रूप में सामने आ गई कि 'गिरा अनयन, नयन बिनु वाणी' अर्थात् जबान को आँखें नहीं हैं और आँखों को जबान नहीं है।

मातृत्व सुधा बरसाने वाली जगजननी थी वे

अभी तक के अछूते हृदय को, प्रेममयी माँ ने केवल स्पर्श ही नहीं किया, आप्लावित भी कर दिया। सारा संशय, सारा अविश्वास, सारा कल्मष बह गया। मन-मयूर आनन्द-विभोर हो थिरक उठा कि सचमुच ही यह कामधेनु जगदम्बा श्री सरस्वती ही हैं जो कल्पवृक्ष के नीचे बैठ तपस्या कर रही हैं तथा कल्पवृक्ष के नीचे बैठे अन्य सभी रूहानी वत्सों की आध्यात्मिक कामनाओं

को पूर्ण कर रही है। पहले कभी 'माँ' शब्द मुँह से निकलता ही न था और आज 'मम्मा, मम्मा' कहते जी नहीं अघाता था। बच्चे से बूढ़े तक को ईश्वरीय गोद का बच्चा समझकर मातृत्व सुधा बरसाने वाली जगजननी ही तो थीं वह। मन-हरनी शीतला माँ के निकट बैठने पर ऐसा मालूम हुआ कि जन्म-जन्मांतर के विकारों की जलन शांत होती जा रही है। मन की सारी वृत्तियाँ ऊर्ध्वमुखी हो उठी थीं और अतीन्द्रिय सुख की एक भासना-सी आने लगी।

मातेश्वरी जी के दो कल्याणकारी रूप

माँ एक तरफ आध्यात्मिक पालना करने के लिए प्रेमरूपिणी जगदम्बा थीं तो दूसरी तरफ विकारों की बलि लेने के लिए रौद्ररूपिणी काली भी

पूना की माताओं के साथ मातेश्वरी जगदंबा सरस्वती जी

थीं। उनके दोनों रूप प्रत्यक्ष में देखने को मिले। अज्ञान-काल में खोज तो मैं आनन्द की कर रहा था लेकिन आनन्द सागर प्रभु से विमुख होकर मरुभूमि– माया की मृग-मरीचिका में भटक गया था। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार में आनन्द की झलक देखता तथा उनकी तरफ दौड़ता था लेकिन मिलता था घोर दुख ही। अस्तु, इन दुखदायी विकारों की बलि लेने के लिये माँ काली ने कहा और मैंने भी सहर्ष अपने आसुरी जीवन की बलि माँ पर चढ़ा दी और मरजीवा जन्म ले हंसवाहिनी माँ का एक बच्चा – पावन राज-हंस बना। फिर तो उस वीणा-वादिनी ने मेरी जीवन-वीणा पर जो मधुर ज्ञान-तान छेड़ी, उससे आज भी मेरा जीवन संगीतमय है, हृदयतंत्री अभी भी झंकृत है।

आध्यात्मिक शक्ति की स्रोत माँ

बाल ब्रह्मचारिणी श्री मातेश्वरी जी आध्यात्मिक शक्ति की स्रोत थीं। वे ईर्ष्या-द्वेष, मान-अपमान से पूर्णरूपेण ऊपर उठकर निरंतर स्वरूपस्थ रह पतित-पावन, सदा जागती ज्योति परमप्रिय

परमपिता परमात्मा शिव की सहज स्मृति में स्थित हो चुकी थीं। गीता के भगवान के 'मन्मनाभव' के आदेश को उन्होंने पूर्णरूपेण हृदयगम कर लिया था और उनकी स्थिति निरंतर निर्विकल्प समाधि की थी। माया की भूमिका से वह बहुत ऊपर उठ चुकी थीं और मनसा, वाचा, कर्मणा तथा तन-मन-धन से पूर्णरूपेण परमात्मा शिव के रुद्र ज्ञान-यज्ञ में स्वाहा हो गई थीं।

अबलाओं को बनाया शिवशक्ति

औरों की तरह वह भी प्रजापिता ब्रह्मा की मानस-पुत्री ही थीं लेकिन ज्ञान-योग में अतिशय उच्च अवस्था के कारण 'यज्ञ माता' के उच्चतम पद पर प्रतिष्ठित हो गईं। जिस लाड़-प्यार से उन्होंने प्रजापिता ब्रह्माकुमार और ब्रह्माकुमारियों की आध्यात्मिक पालना की, वह विश्व के इतिहास में बेजोड़ है। उन्होंने परमात्मा शिव के कार्य में सहायक बनकर अबलाओं को शिवशक्ति बना दिया जो माया रावण के युद्ध में आज सिंहनाद कर रही हैं और सारे विश्व से रावण-राज्य को निकाल रामराज्य लाने के लिए कटिबद्ध हैं। अज्ञान-अंधकार में ठोकरें खाते मानव-मात्र की सच्ची रूहानी सेवा के लिए करुणा-विगलित होकर जगदम्बा की इस रूहानी शक्ति सेना ने सारे भौतिक सुखों को, कलियुगी लोक-लाज, मान-मर्यादा को तिलांजलि दे दी। तभी तो इन भारतमाताओं अथवा शक्तियों का इतना गायन है और स्वर्ग की स्थापना के लिए ज्ञान-सागर परमात्मा शिव ने इनके सिर पर ज्ञानामृत का कलश रखा है।

विकर्मों के अभेद्य चक्रव्यूह का भेदन कर डाला

शक्तिसेना की सेनानी ज्ञानेश्वरी आदि देवी, जगदम्बा श्री सरस्वती सारे कल्प में वह पहली आत्मा है जिन्होंने कर्मों की गहन शक्ति को समझकर विकर्मों के अभेद्य चक्रव्यूह का भेदन कर डाला और पूर्ण कर्मातीत स्थिति को प्राप्त किया। कर्मबंधन से रहित हो, अव्यक्त फरिश्ता बन मानवमात्र की बेहद की सेवा करने का जगदम्बा का महान कार्य अभी भी वे कर रही हैं। सर्वशक्तिमान परमात्मा शिव ने भारतमाता श्री सरस्वती द्वारा ही मुक्तिधाम का द्वार खुलवाया है और शीघ्र ही इस दुखधाम पर सुखधाम (वैकुंठ) का उद्घाटन होने वाला है। आधुनिक युग के एक चिन्तक और साधक अरविन्द ने भी कहा था कि माता ही सब कुछ करती है, वही साधक को पार लगाती है। इतना ही नहीं, भगवान की प्राप्ति के लिए माता ही मध्यस्थता करती है, जो अनिवार्य है। अत: उन्होंने मानवमात्र को संदेश दिया कि मानव तू मातृमुखी हो। उसके सम्मुख आत्म-निवेदन कर। एकमात्र वही तेरी रक्षा कर सकती है। आज प्रत्यक्ष रूप में जगद्गुरु परमपिता परमात्मा शिव द्वारा माता गुरु की महिमा स्थापित हो रही है।

मातेश्वरी जी एक ज्वलंत दृष्टांत

व्यस्त जीवन में रहते हुए भी हम कैसे योगयुक्त रह सकते हैं, श्री मातेश्वरी जी इसका ज्वलंत दृष्टांत थीं। उनके दर्शन मात्र से मन की तामसिक वृत्तियाँ शांत हो जाती थीं और मनुष्य आपस के छोटे-मोटे मतभेदों को भूल जाते थे। पूर्ण श्वेत वस्त्रधारिणी श्री सरस्वती बाहर-भीतर से पूर्ण धवल थीं। तभी तो भक्तिमार्ग में उनकी महिमा है –

''या कुन्देन्दु तुषार हार धवला
या शुभ्र वस्त्रा वृत्ता.....''

हम ब्रह्माकुमार और ब्रह्माकुमारियाँ परम सौभाग्यशाली हैं जिन्होंने जगत-पिता और जगदम्बा की प्रत्यक्ष में पालना ली है। लेकिन स्वधर्म में स्थित हो तथा दिव्य गुणधारी देवता बन मानव-मात्र को देवता बनाने तथा देवभूमि भारत को फिर से वही खोया हुआ गौरव दिलाने का महान उत्तरदायित्व भी हमारे ऊपर है। अव्यक्त प्रेरणा द्वारा इसी कार्य को शीघ्रातिशीघ्र पूर्ण करने के लिए ही तो श्री मातेश्वरी जी कर्मातीत हो इस स्थूल लोक से विदाई ले सूक्ष्म लोकवासी हुई हैं। अत: उनके लिए हमारी सबसे बड़ी श्रद्धांजलि यही है कि हम प्रतिज्ञा करें कि उस वीणावादिनी की वह अति पावन चैतन्य वीणा बनेंगे जिससे केवल सुखद तथा शीतल ईश्वरीय स्वर ही निकलें, माया के कुस्वर नहीं।

****

बिकानेर की **ब्रह्माकुमारी शान्ता जी,** मातेश्वरी जगदम्बा के प्रति अपने उद्गार इस प्रकार व्यक्त करती हैं –

हमें 5 नवंबर, 1962 से 30 जून, 1963 तक, लगभग आठ मास, मुंबई में मातेश्वरी जी के साथ ठहरने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इन आठ महीनों में मातेश्वरी जी ने मुंबई में बहुत अधिक ईश्वरीय सेवा करके अनेकानेक मनुष्यात्माओं को जगाया और उनकी अवस्था को ऊँचा उठाया। उन दिनों उन्होंने कर्म, अकर्म और विकर्म की गति तथा सुख-दुख रूप फल आदि-आदि विषयों पर बहुत सरलतापूर्वक गहन रहस्य समझाये और कर्मयोग आदि के बारे में भी कई अनमोल ज्ञान-रत्न हम सबको दिए। उन्हीं दिनों माँ सरस्वती जी के निकट संपर्क में आने के कारण हमें मातेश्वरी जी के उच्च जीवन से आलोकित होने का शुभ अवसर मिला। हमें उनके ईश्वर-अर्पित और पवित्र जीवन से आदर्श विद्यार्थी और आदर्श शिक्षिका का परिचय भी मिला।

नियमों का पूर्ण पालन

कई बार मातेश्वरी जी को, ईश्वरीय सेवा के कारण रात्रि को ग्यारह, बारह बजे तक भी नींद करने का अवकाश नहीं मिलता था तो भी वो केवल दो-ढाई घंटे नींद करके 2.30 बजे या 3 बजे अवश्य उठ बैठती थीं। हमने देखा कि वह ज्ञान तथा योग के नियमों का पूर्ण पालन करती और कठिनाइयों तथा असुविधाओं की परवाह न करके अपने पुरुषार्थ और अभ्यास को निर्विघ्न रूप से चलाती रहती। यहाँ तक कि जिन दिनों उनके शारीरिक स्वास्थ्य में काफी अंतर आ गया था, उन दिनों भी वह पहले की तरह ही निरंतर अपना सब-कुछ चलाती रही और वैसे ही प्रात: ढाई बजे उठती रही।

प्रैक्टिकल जीवन की मिसाल

आखिर एक दिन हमने यह प्रश्न पूछ ही तो लिया। हमने कहा, 'माँ, क्या शारीरिक तकलीफ के कारण आपको ढाई बजे के बाद नींद नहीं आती?' तब प्राण माँ ने कहा, 'हमें जो ईश्वरीय ज्ञान मिला है, उसके अनुसार, हमें योग का विशेष अभ्यास तो करना ही चाहिए। मैं तो शिवबाबा (परमात्मा शिव) की याद में जल्दी उठ जाती हूँ। बीमारी है तो क्या हुआ?' सारा दिन व्यस्त रहने, शारीरिक कष्ट झेलने और रात को बहुत देर से सोने के बाद भी इतनी जल्दी उठ बैठना, प्रेरणाप्रद ही तो है। परमप्रिय परमपिता परमात्मा से हमारी लगन कितनी सच्ची और तीव्र होनी चाहिए,

यह हमे सजग करने के लिए एक प्रैक्टिकल जीवन की मिसाल ही तो थी।

ईश्वरीय पढ़ाई कभी नहीं छोड़ी

मातेश्वरी जब अस्पताल में थीं तब भी उन्होंने अपनी पढ़ाई बंद नहीं की। वहाँ भी वे प्रतिदिन शिव बाबा के महावाक्य (प्रजापिता ब्रह्मा के मुख द्वारा उच्चारे हुए) सुनती थीं और उनके महावाक्यों की जो लिखित प्रतियाँ आती थीं, उन्हें भी पढ़ती रहती थी। अनेक बार हमने माँ से प्रश्न पूछा कि 'माँ, इस ईश्वरीय ज्ञान-यज्ञ में तो बहुत बहनें और भाई आए। इनमें से कई आपसे आयु मे बड़े भी थे और कई इस यज्ञ में आपसे थोड़ा पहले भी आए हुए थे, तो भी आपने उन सबकी भेंट में, यह उच्च स्थिति कैसे प्राप्त की जो आप सरस्वती कहलाई। आपका ऐसा कौन-सा पुरुषार्थ था जिससे कि आपको इतनी सफलता मिली?' तब माँ ने कहा, ' देखो, मैंने यह ईश्वरीय पढ़ाई कभी भी नहीं छोड़ी। कितना भी शारीरिक कष्ट होते हुए भी मैं हमेशा इस पढ़ाई के लिए अपने टाइम पर तैयार हो जाती थी। ज्ञान और दिव्य गुणों की धारणा के लिए शिवबाबा की जो भी राय अथवा शिक्षा मिलती थी, मैं उसे फौरन अमल में लाती थी। '

माँ के ये बोल शत-प्रतिशत सच्चे थे। माँ शारीरिक कष्ट के अंतिम दिन तक भी नित्यप्रति ज्ञान-स्नान करती रहीं।

******

लुधियाना के **ब्रह्माकुमार अशोक भाई** मातेश्वरी जगदम्बा के प्रति अपने उद्‌गार इस प्रकार व्यक्त करते हैं –

फ़रिश्तों जैसे रॉयल

सन् 1963 में मम्मा अंबाला में आई। हम उन्हें निमंत्रण देकर लुधियाना में लाये। लुधियाना में उस समय मिट्ठू दादी थे। मम्मा का लुधियाना में जोरदार स्वागत हुआ। बहुत भाई-बहनों की लंबी कतार लगी। सबके हाथों में फूल थे। सभी मम्मा से दृष्टि लेते गये तथा फूल देते गए। उनकी दृष्टि जब मुझ पर पड़ी तो

सर्व की मनोकामना पूरी करने वाली कामधेनु माँ सरस्वती

लगा कि अद्‌भुत दृष्टि है, कोई महान हस्ती है। असली माँ हमारी यही है। उनका चलना तथा बातचीत का ढंग बिल्कुल फरिश्तों जैसा रॉयल था। मम्मा की गोद में जाने का मौका मिला। सुबह क्लास में गोद में जाते थे। हमारी आत्मिक स्थिति होती थी। गोद में जाकर ऐसा लगा, मम्मा हमारी सच्ची माँ है, गोद ऐसी थी जैसे रूई की बनी हो। योगबल से उनका शरीर कोमल रूई जैसा हो गया था।

वरदान मिला मम्मा से

एक दिन क्लास में चर्चा चली, मम्मा ने प्रश्न पूछा कि बच्चे बाप पर निछावर होते है या बाप बच्चों पर? क्लास के भाई-बहनों में से किसी ने कहा, बाप पहले निछावर होता है। मैंने कहा, पहले हम बच्चे निछावर होते हैं, पहले हम बाप को अपना बच्चा बनाकर उन पर कुर्बान जाते हैं। मम्मा ने दो-तीन बार घुमा-फिराकर पूछा, आप कैसे बच्चा बनायेंगे, कैसे निछावर होंगे? फिर भी मैंने दृढ़ता से कहा, हम निछावर होंगे। फिर मम्मा ने कहा, बच्चे का निश्चय बड़ा पक्का है, आज से अशोक कुमार की जगह इनका नाम हुआ 'अशोक पिल्लर', ऐसा वरदान मुझे दिया। उन्हीं वरदानों को लेकर हम आज तक चले आये है।

लुधियाना के बाद मम्मा जालंधर, पटियाला, नाभा में गये। हम भी पीछे-पीछे जाते रहे उनसे ज्ञानामृत पीने के लिए। मम्मा ने पूछा, मैं जहाँ जाती हूँ, आप वहीं आ जाते हो, आपको समय और छुट्टियाँ मिल जाती हैं? मैंने कहा, जी, मिल जाती हैं। मैं प्राइवेट सर्विस करता था। मेरा मालिक मेरे से और ज्ञान से बहुत प्रभावित था। उसने खुद ही कहा, मेरी कार लेकर जालंधर जाओ मम्मा से मिलने। उसने एक बार जगदीश भाई का लेक्चर सुना था, उसका उस पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा था। मेरे व्यवहार, कर्म और चरित्र से भी बहुत खुश था।

मम्मा के शरीर छोड़ने के 15 दिन पहले हम मधुबन गए, उनसे मिले, उनकी तबीयत ठीक नहीं थी। इतनी तकलीफ होते भी उनका चेहरा बहुत हर्षित था। लगता ही नहीं था कि कोई बीमारी है। उन्होंने हम सबको दृष्टि तथा टोली भी दी। ऐसी मीठी-प्यारी अलौकिक माँ जगदम्बा की ये मीठी स्मृतियाँ आत्मा को, उनसे मिलन मनाने जैसा अनुभव कराती हैं।

******

लुधियाना के **ब्रह्माकुमार खुशीराम साहनी जी**, जगदम्बा मातेश्वरी के साथ का अनुभव इस प्रकार व्यक्त करते हैं –

सोलह जनवरी, 1964 को सतगुरुवार के दिन मैं अपने वकील से मिलने सवेरे-सवेरे उसके घर गया। मुझे नहीं मालूम था कि वह ब्रह्माकुमार भी है। उसके मुख से मातेश्वरी अक्षर सुनते ही अंदर एक झटका-सा महसूस हुआ। उससे पूछा कि यह मातेश्वरी कौन है तो उसने बताया कि एक नई ईश्वरीय संस्था ब्रह्माकुमारी नाम से है, यह ब्रह्माकुमारी बहनों की एक मुख्य बहन है जो यहाँ लुधियाना में एक सप्ताह के लिए 19 जनवरी को आ रही हैं। संस्था के केन्द्र का पता पूछकर मैं वहाँ चला गया। जैसे ही दरवाज़े के अंदर कदम रखा, मानो आकाशवाणी सुनाई दी, 'आप सही स्थान पर पहुँच गये हो।' सुनकर मैं हैरान हो गया। सामने दीवार पर लटका हुआ एक बोर्ड भी देखा जिस पर लिखा था, 'बुरा न देखो, बुरा न सुनो,

बुरा न बोलो, बुरा न सोचो और बुरा न करो' तो झट विश्वास हो गया कि यह बिल्कुल ठीक स्थान है क्योंकि मैंने घर के मन्दिर में ऐसा ही बोर्ड लटकाया हुआ था।

मातेश्वरी से प्रथम मिलन

ब्रह्माकुमारी आश्रम में पहले दिन ही यह ज्ञान मिला कि प्रकृति के पाँच तत्वों से बना शरीर मैं नहीं हूँ, मैं तो चेतन शक्ति ज्योतिबिन्दु आत्मा हूँ जो भ्रकुटि के बीच बैठी हूँ और शरीर की चालक और मालिक हूँ – यह जानकर बंद आँखें खुल गई और खुशी के नशे में घर आकर यह सब अपनी डायरी में लिख लिया। दूसरे दिन परमात्मा के नाम, रूप, धाम, गुणों और कर्त्तव्य की यथार्थ जानकारी मिली तो परमात्मा के बारे में सारी अज्ञानता एक पल में मिट गई और खुशी के नगाड़े मन में बजने लगे। तीसरे दिन मातेश्वरी के बारे में पता चला कि मन्दिर में रखी हुई

मम्मा से दृष्टि लेते हुए साहनी जी

जगदम्बा माता की मूर्ति इसी मातेश्वरी की जड़ यादगार है, इसी की शक्ति ने मेरी पत्नी की छाती से जानलेवा फोड़े को भगाया है, यही ज्ञान की देवी सरस्वती प्रत्यक्ष होकर ईश्वरीय ज्ञान से अनेक आत्माओं की बुझी ज्योति को जगा रही है और निकट भविष्य में आने वाले सतयुग में यही विश्व महारानी श्री लक्ष्मी बनकर सारे विश्व रूपी भारत में राज्य करेगी। ऐसा जानकर खुशी के फव्वारे एकदम मन में फूट पड़े और उनको शीघ्र देखने और मिलने के लिए मन बेचैन हो गया। अगले दिन सायंकाल वे लुधियाना में पधारीं और रूहानी दृष्टि मेरे ऊपर डाली तो मैं रूहानी नशे में चूर होकर उनके सामने खड़ा हो गया और उन्होंने मेरे हाथ में पकड़े हुए फूल को अपने हाथ में लेकर बड़े प्यार से कहा कि अब तुम्हें इस फूल जैसा बनना है।

पति-पत्नी का सत्धर्म का नाता

अगले दिन उन्होंने अपनी रूहानी शक्ति से मुझे और मेरी पत्नी को अपने पास खींच कर हमारे सिर अपनी पवित्र गोदी में लेकर अति

स्नेह से यह शिक्षा दी, 'देह से प्यार करना झूठ से प्यार करना है और आत्मा से प्यार करना सच से प्यार करना है। परमात्मा सदा देह से न्यारा है, उससे प्यार करना ही सच से प्यार करना है, वही परम पवित्र और परम सत्य है। अब मेरी गोदी में आप दोनों का नया, धर्म का जन्म हो चुका है, अब तुम्हें पति-पत्नी का पिछला अधर्म का रिश्ता त्यागकर और भूलकर धर्म-पति और धर्म-पत्नी के रिश्ते में चलना है। भोजन सदैव शुद्ध और सात्विक अपने ही हाथों से बनाकर खाना है और बच्चों को भी खिलाना है। इस अविस्मरणीय मुलाकात के बाद घर आते ही हमने लहसुन और प्याज पड़ोसन को दे दिया। पति-पत्नी के असत्य धर्म के रिश्ते से हमें पहले से ही नफरत हो चुकी थी, इसलिए इसको त्यागने में और पति-पत्नी के सत्धर्म को अपनाने में मनवांछित इच्छा पूरी होने जैसी खुशी हुई।

शुरू-शुरू में पिताश्री जी और मातेश्वरी जी अपना फोटो किसी बच्चे को इसलिए नहीं देते थे ताकि उनका ध्यान निराकार परमात्मा शिव की ओर जाने के बजाय उनके साथ ही न लगा रहे। मैंने मातेश्वरी जी से बड़े प्यार और दिल से जब यह कहा कि जब आपने हमें नया डिवाइन बर्थ दिया है तो डिवाइन मदर का एक फोटो यादगार रूप में रूहानी दृष्टि देते हुए होना चाहिए। वे मान गये। मैंने सोचा कि पेपर पर खिंचवाये हुए फोटो के फट जाने की संभावना होती है इसलिए टिन पर फोटो उनसे दृष्टि लेते हुए खिंचवाने के लिए एक अच्छे फोटोग्राफर को ले आया। वह फोटो आज भी मैंने बहुमूल्य धरोहर के रूप में संभाल कर रखा हुआ है।

माउंट आबू का निमंत्रण

मातेश्वरी जी के मुख-कमल से और दो दिन ज्ञान-रत्न सुनने से जीवन में एकदम ऐसा परिवर्तन आया कि भक्ति की सारी सामग्री नदी में प्रवाहित कर दी। एक ही ब्रह्माकुमारी आश्रम पर सवेरे-शाम दोनों समय जाना शुरू कर दिया। उसी महीने सरकारी नौकरी छोड़कर पेन्शन लेने लग पड़ा और अपने नाम पर जीवन बीमे की एजेन्सी लेकर एक ही काम की ओर पूरा ध्यान कर लिया। मातेश्वरी जी ने जब हमारे अंदर इतनी जल्दी परिवर्तन होते देखा तो अपने आप ही कहा, 'अब माउंट आबू जाकर पिताश्री ब्रह्मा के तन में पधारे हुए शिव परमात्मा से मंगल मिलन मनाओ।' मातेश्वरी जी से माउंट आबू जाने का आदेश मिलने से, बेहद खुशी इस कारण भी हुई कि वास्तव में ब्रह्मा की आत्मा ही श्री नारायण की आत्मा है जिसको मिलकर मन की इच्छा पूरी होगी। मातेश्वरी जी जब लुधियाना से जालंधर, चड़ीगढ़ और पटियाला में गये तो उनसे ज्ञान-दूध पीने के लिए मैं गाय के बछड़े की तरह उनके पीछे ही भागता रहा। शिवरात्रि के पावन पर्व पर लौकिक पिताजी के देह-त्याग का पूर्व आभास भी मातेश्वरी की शक्ति से मुझे हो गया था।

मातेश्वरी जी के अव्यक्त होने से एक दिन पहले अर्थात् 23 जून, 1965 को हमारी उनसे अन्तिम मुलाकात पाण्डव भवन में हुई थी और उनके पवित्र हाथों से आम की टोली भी मिली थी।

दादी बृजइन्द्रा

आप बाबा की लौकिक पुत्रवधू थी। आपका लौकिक नाम राधिका था। पहले-पहले जब बाबा को साक्षात्कार हुए, शिवबाबा की प्रवेशता हुई तो वह सब दृश्य आपने अपनी आँखों से देखा। आप बड़ी रमणीकता से आँखों देखे वे सब दृश्य सुनाती थी। बाबा के अंग-संग रहने का सौभाग्य दादी को ही प्राप्त था। बाबा ने आपके बारे में महावाक्य उच्चारण किया था, बच्ची, 84 जन्म ही भिन्न-भिन्न नाम रूप से ब्रह्मा की आत्मा के बहुत समीप संबंध में रही है इसलिए अंतिम जन्म में भी लौकिक पुत्रवधू के रूप में अति समीप का पार्ट मिला। बाबा के साथ-साथ कोलकाता, हैदराबाद (सिन्ध), कराची, आबू की यात्रा करते-करते अंत में आपको बाबा ने महाराष्ट्र जोन की संचालिका के रूप में मुंबई सायन सेवाकेन्द्र पर रखा। महाराजकुमारी और महारानी जैसी रहकर फिर बृजकोठी में बेगरी पार्ट बजाते हुए आप वज्र के समान दृढ़ रहकर, इंद्र समान फरिश्ता बनकर अब एडवांस पार्टी में सेवारत हैं। आप 1 जनवरी 1990 को अपना पुराना शरीर छोड़ अव्यक्त वतनवासी बनी।

ब्रह्माकुमारी बृजइन्द्रा जी ने शिवबाबा की प्रवेशता से पहले के कुछ वर्ष, दादा की बहू के रूप में बिताये, उस अवधि के दौरान हुए अनुभवों को इस प्रकार व्यक्त किया है –

राजकुल की महिलाओं से ज्यादा जेवर

दादा ने मुझे रानियों से भी अधिक ठाठ से रखा। एक बार नेपाल के राजकुल में मालूम पड़ा कि दादा अपने घर बहू लाये हैं तो उनके सदस्य, शहजादियाँ इत्यादि मुझसे मिलने आई थी। जब उदयपुर के महाराजा को मालूम हुआ कि दादा कोलकाता में बहू को ले गये हैं तो उन्होंने भी दादा को लिखा था कि वे सिन्ध जाते समय अपनी पत्नी और बहू सहित बीकानेर से होते जायें। दोनों राजाओं के राजकुल की महिलाओं ने जब मुझे देखा तो वे यह देखकर हैरान रह गई कि मैंने उनसे ज्यादा जेवर पहन रखे थे। मैंने एक-एक अंगुली में दो-दो अगुठियाँ पहन रखी थीं और वे भी कीमती हीरों की। मेरा हार भी हीरों का बना था। यह सब देखकर वे सब बाबा को बेताज राजा मानते थे और यह भी महसूस करते थे कि बाबा फराखदिल हैं। परंतु जैसे-जैसे बाबा अधिकाधिक अंतर्मुखी होते गये, उनका मन इन चीज़ों से हटता गया और उन्हें ये शृंगार फीके दिखाई देने लगे और आखिर सुनहरे शब्दों में लिखी जाने वाली इतिहास की वह घड़ी आई जब

शिव बाबा ने फराखदिल और राजकुलोचित संस्कार वाले साधारण और साथ-साथ उच्च जीवन-प्रणाली वाले दादा के रथ को माध्यम रूप में अपनाया।

ससुर के स्थान पर श्री कृष्ण

मैं बाबा की अंतर्मुखता तथा उनकी तपश्चर्या इत्यादि को देखकर बहुत प्रभावित हुई थी। एक बार एक विशेष दृश्य मेरे सामने आया जिसके बाद इस ईश्वरीय परिवार में मेरा भी पार्ट शुरू हुआ। एक बार बाबा भोजन करने बैठे थे। मैं उनके सामने भोजन की थाली लेकर गई। ज्योंहि मैं उनके सामने पहुँची और उनकी ओर मेरी दृष्टि गई तो मुझे बाबा के स्थान पर सजे-सजाये श्री कृष्ण ही दिखाई दिये। मैं आश्चर्यचकित हो गई कि यहाँ कुर्सी पर श्री कृष्ण कैसे बैठे हैं! थाली मेरे एक हाथ में थमी रही और मैं उधर देखती ही रह गई। पहले जब मैं बाबा के सामने जाया करती थी तो घूंघट किया करती थी। परंतु अब जब मैं घूंघट करने ही वाली थी तो सामने श्रीकृष्ण दिखाई दिये। मैं श्री कृष्ण के सामने भला घूंघट क्यों निकालती? मुझे लगा कि मेरे ससुर के रूप में साक्षात् भगवान मुझे स्वयं आ मिले हैं। तब मुझे रूहानी नशा-सा चढ़ गया और तब से घूंघट निकालना मुझसे छूट गया। उस समय यह ज्ञान तो नहीं था कि दादा को देखने से श्री कृष्ण का साक्षात्कार क्यों होता है। यह ज्ञान तो धीरे-धीरे, बाद में ही मिला परंतु इससे मेरे जीवन का नया अध्याय खुला। इसके थोड़े ही दिनों बाद मुझे विष्णु चतुर्भुज रूप का भी साक्षात्कार हुआ। सजा-सजाया, दिव्य, प्रकाशमान रूप था। इन सब अलौकिक वृत्तांतों से मुझसे शृंगार, सज-धज सब सहज रीति से छूटते गये और मैं रूहानियत के रंग में पूरी तरह रंगती गई।

उन्ही दिनों में एक बार की बात है, दादा के गुरु भी आये हुए थे। दादा ने उनके आगमन पर 25,000 रुपये खर्च किये थे। उन्होंने एक बहुत बड़ी सभा की थी। उसमें बहुत लोग बैठे थे परंतु मुझे दादा का उठना-बैठना बहुत निराला लगा। दादा थे तो साकार अर्थात् शरीरधारी ही परंतु मुझे ऐसा लगा कि उनका शरीर उनसे दूर है। गुरु का भाषण चल रहा था परंतु दादा सभा से उठ गये। इससे पहले कभी भी दादा सभा से उठकर नहीं गये थे। मेरा ध्यान दादा की ओर गया। मैंने जसोदा जी, जोकि दादा की धर्मपत्नी थी, को दादा के पास भेजा। जसोदा जी के जाने के बाद मुझे ख्याल आया कि मैं भी जाऊँ। मैं दादा के कमरे में गई। मैं दादा के पास बैठ गई और जसोदा जी गुरु की सभा में लौट आई।

आदिद्रष्टा

मैंने देखा कि दादा अर्थात् बाबा के नेत्रों में इतनी लाली थी कि ऐसे लगता था जैसे कि उनमें कोई लाल बत्ती जग रही हो। उनका चेहरा भी एकदम लाल था और कमरा भी प्रकाशमय हो गया था। मैं भी शरीर-भान से अलग मानो अशरीरी हो गई। इतने में एक आवाज ऊपर से आती मालूम हुई जैसे कि दादा के मुख से कोई दूसरा बोल रहा हो। वह आवाज पहले धीमी थी, फिर धीरे-धीरे ज्यादा हो गई। आवाज यह थी –

"निजानन्द स्वरूप, शिवोऽहम् शिवोऽहम्
ज्ञान स्वरूपं शिवोऽहम् शिवोऽहम्
प्रकाश स्वरूपं शिवोऽहम् शिवोऽहम्।""

फिर दादा के नयन बंद हो गये।

मुझे आज तक न वह अद्भुत दृश्य भूलता है, न वह आवाज ही भुलाई जा सकती है। वह वातावरण भी अविस्मरणीय है और उस समय की वह अशरीरी अवस्था भी मुझे अच्छी तरह याद है।

एक लहर थी, कोई माइट थी

दादा के नयन खुले तो वे ऊपर-नीचे कमरे में चारों ओर आश्चर्य से देखने लगे। उन्होंने जो कुछ देखा था उसकी स्मृति में वे लवलीन थे। मैंने पूछा, "बाबा, आप क्या देख रहे है?" बाबा बोले, "कौन था? एक लाइट थी, कोई माइट (शक्ति) थी। कोई नई दुनिया थी। उसके बहुत ही दूर, ऊपर सितारों की तरह कोई थे और जब वह स्टार नीचे आते थे तो कोई राजकुमार बन जाता था तो कोई राजकुमारी बन जाती थी। एक लाइट और माइट ने कहा, यह ऐसी दुनिया तुम्हें बनानी है परंतु उसने कुछ बताया नहीं कि कैसे बनानी है। मै यह दुनिया कैसे बनाऊँगा? वह कौन था? कोई माइट थी।"

(वास्तव में यह दृश्य था दादा लेखराज के तन में, निराकार शिव परमात्मा की प्रथम पधरामणि का जिसे दादी बृजइन्द्रा ने अपनी आँखों से देखा। जैसे ब्रह्मा आदि देव है, वैसे ही दादी बृजइन्द्रा का भी आदि द्रष्टा होने का कल्प-कल्प का पार्ट निश्चित हो गया)

******

दादी निर्मलशान्ता जी दादी बृजइन्द्रा के बारे में सुनाती हैं –

मेरे सबसे बड़े भाई किशन की शादी करने का संकल्प बाबा को जब आया तो बाबा ने घर में प्रथम बहू लाने के लिए ऊँचे से ऊँचा श्रेष्ठ संकल्प किया हुआ था कि बहू ऐसी हो जो सुशील, सुन्दर, सरल वा सात्विक विचारों वाली शाही यानि श्रेष्ठ नामी-गिरामी परिवार की हो। बाबा ने पहले से ही एक लड़की को देखा था। आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से बाबा उस समय ऊँची स्थिति में थे। खूब मान-सम्मान था। राजा-महाराजाओं से संबध थे। इन सबके कारण, कोलकाता में जवाहरात के व्यापारी बाबा को "खिदरपुर का नवाब" कहते थे। अत: नवाब के घर में प्रथम बहू कैसी आनी चाहिए। वह भी शहजादी, राजकुमारी जैसी हो।

सब सुविधाएँ घर में मौजूद थीं

राधिका नाम की एक बच्ची थी, जिसका

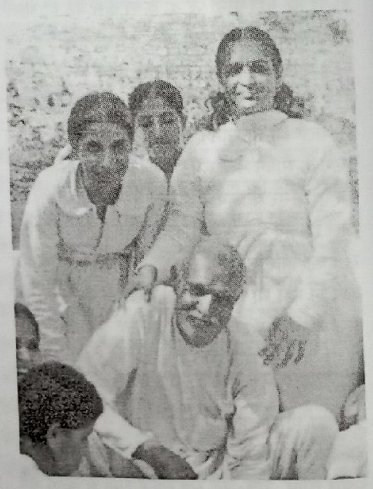

बाबा के साथ दादी निर्मलशान्ता जी, दादी बृजइन्द्रा जी

अलौकिक नाम दादी बृजइन्द्रा पड़ा, वह बहू के रूप में हमारे घर में कैसे आई, उसकी भी एक कहानी है। बाबा संपन्न, धनी परिवारों में से होने के कारण बृजइन्द्रा दादी के परिवार को जानते थे तथा उनका भी व्यापार ऐसा ही था। बचपन में बृजइन्द्रा दादी (राधिका) एक मिठाई की दुकान से मिठाई खरीद रही थी। उसके सिर पर एक बहुत सुन्दर टोपी थी। बाबा ने राधिका को परिवार के साथ देखा तो कुछ बोला नहीं लेकिन संकल्प किया था कि यह बच्ची किशन के लिए बहू के रूप में लायेंगे। समय गुजरता गया, राधिका बड़ी हो गई। राधिका के बड़े भाई को बाबा ने कहा कि मुझे अपने घर में किशन के लिए, राधिका बहू के रूप में चाहिए। यह सुनकर राधिका के भाई ने तीन शर्तें बाबा के सामने रखी और कहा, इन्हें पूरा करने पर ही हम अपनी बहन को आपके घर दे सकेंगे। वो तीन शर्तें थीं – (1) उसके पाँव गलीचों पर ही पड़ेंगे (2) वह कभी भी अपने हाथ से खाना नहीं बनायेगी और (3) उसके आने-जाने के लिए गाड़ी का प्रबंध होगा। बाबा ने इन तीनों शर्तों को ऐसे स्वीकार किया मानो कि ये कोई बड़ी बातें नहीं हैं और ये सब सुविधाये उस समय घर में मौजूद थीं ही।

बाबा की दृढ़ संकल्प शक्ति का कमाल

उस समय हम कोलकाता में रहते थे, राधिका हैदराबाद में थी। उसके लौकिक भाई देखने वा जानने के लिए कोलकाता हमारे घर पर आये। घर में उस समय भी गाड़ी, नौकर, नौकरानियाँ थीं। कारपेट (गलीचों) पर ही हम चलते थे। अचानक आने पर सब कुछ स्वयं ही देखा तथा बाबा ने उसे घर का सारा खज़ाना खोलकर भी दिखा दिया। एक अलमारी में अनेक प्रकार के, एक से एक कीमती हीरे, रत्न, माणिक्य, मोती आदि थे। फिर बाबा ने कई अलमारियाँ खोलकर दिखाई जिनमें एक से एक सुन्दर डिजाइन के सोने के जेवर थे जिनमें हीरों आदि के भी हार थे। उनको देखकर उसका भाई तो आश्चर्यचकित हो गया। बाबा ने चाँदी के अनेक प्रकार के बर्तन और शृंगार के सामानों से भरी और भी कई अलमारियाँ दिखाई। कहा जाता है, समझदार को इशारा ही काफी होता है। राधिका का भाई यह तो सोच भी नहीं सकता था कि बाबा के पास इतनी धन-संपत्ति है। घर में बहू को लाना था तो उनकी शर्तों को पूरा कर, बाबा ने युक्ति से बाजी जीत ली। राधिका का भाई खुशी से आँखों देखा हाल और सारा समाचार परिवार वालों को बताकर संतुष्ट हुआ तथा एक दिन राधिका, जिसे बचपन में बाबा ने देखा था, बहू के रूप में घर में आ गई। यह बाबा की दृढ़ संकल्प शक्ति का कमाल था। ऐसी बहूरानी के घर में आने पर परिवार की खुशी में चार चाँद लग गये। वह बहू के साथ-साथ बेटी का भी पार्ट निभाती थी। वह बाबा के लौकिक-अलौकिक परिवार के साथ अंत तक रही।

******

दादी बृजइन्द्रा जी के बारे में अपने अनुभव, **ब्र.कु. रमेश शाह,** मुंबई इस प्रकार सुनाते हैं –

अगोचर प्रेरणा

घर में सत्संग चल रहा है। गुरु लालजी महाराज का प्रवचन हो रहा है। आये हुए सभी मेहमान और भक्तजन शान्ति से रोचक भाषा में कहे हुए भारतीय

तत्वज्ञान की बातें सुन रहे हैं और उसी सभा के बीच से दादा लेखराज जी (ब्रह्मा बाबा का उस समय का लौकिक नाम) अचानक उठे। सबने सोचा कि शायद कोई साधारण कार्य अर्थ दादा उठे होंगे। परंतु उसी स्थान पर बैठी हुई दादा लेखराज की लौकिक पुत्रवधू राधिका जी को प्रश्न उठा मन में, दादा क्यों उठे? शायद किसी चीज़ की उन्हें जरूरत होगी, इसी कारण वह भी उठी और दादा जी के पीछे-पीछे गई। एक अगम्य अगोचर प्रेरणा इसके पीछे थी।

पहले दृश्य को देखने का सौभाग्य

इसी सभा में पिताश्री जी की लौकिक युगल जसोदा जी, लौकिक पुत्र-पुत्री आदि-आदि सब बैठे थे। सबने पिताश्री जी को उठते देखा परंतु राधिका जी के ही भाग्य में लिखा था – पिताश्री के पीछे-पीछे जाना, पहले-पहले आने वाले दृश्य को देखने का सौभाग्य था उनका! और उन्होंने उस कमरे में क्या देखा? पिताश्री जी धीर-गभीर होकर ध्यानस्थ स्थिति में बैठे थे। उनके मुख पर दिव्य प्रकाश छा गया। सारा कमरा उसी दिव्य प्रकाश से चमकने लगा। वायुमंडल शीतल और शक्तिवान बन गया। मृदु सुगंधित वायु और ओजस्वी, तेजस्वी प्रकंपन से भरा, मंगलमय वातावरण हो गया। ऐसी शुभ घड़ी में दादा लेखराज जी के साधारण तन में परमपिता परमात्मा की प्रवेशता हुई। परमधाम से अब तक सूक्ष्म रूप से वा साक्षात्कार आदि के माध्यम से कार्य करने वाले परमात्मा ने, प्रकृति का आधार ले, साकार रूप के निमित्त तन में प्रवेश कर पहला-पहला शब्दोच्चारण किया, "निजानंद स्वरूपं शिवोहम् शिवोहम्।"

राधिका बनी आदिद्रष्टा

उस दिव्य अवतरण को, भागीरथ के तन में उतरने वाली गंगा के प्रति शास्त्रकारों ने जो गायन किया है, उसके यथार्थ रूप को, प्रथम देखने के निमित्त बन गई राधिका जी अर्थात् परमात्मा के दिव्य अवतरण को प्रथम देखने वाली राधिका जी आदिद्रष्टा बन गई। या तो कहो ज्ञान-सागर परमात्मा के मुख से निकलने वाले आदि ज्ञान-रत्नों को सुनने वाली आदि ज्ञानगंगा बन गई राधिका जी। और बाद में परमपिता परमात्मा ने जब सब समर्पित भाई-बहनों के नये जीवन के नये

दादी बृजइन्द्रा (राधिका) जी बाबा के साथ

नाम दिये तब राधिका जी के नये दिव्य जीवन का नाम हो गया बृजइन्द्रा जी।

इस प्रकार संगमयुग के प्रथम साक्षात्कार का सौभाग्य प्राप्त करने वाली दादी बृजइन्द्रा जी शायद जरूर सतयुग का प्रथम साक्षात्कार करने वाली भी होंगी। ब्रह्मा रूप का प्रथम दिव्य दर्शन करने वाली बृजइन्द्रा दादी ब्रह्मा सो विष्णु और विष्णु सो बालक रूप में श्रीकृष्ण का प्रथम दर्शन करने वाली भी होंगी। ऐसा मेरा अनुमान है, भविष्य के ड्रामा को तो भाग्यविधाता परमात्मा ही जाने। और फिर क्या हुआ?

त्याग की परीक्षा में सम्पूर्ण सफल

ड्रामा की विभिन्न परिस्थितियाँ वा दृश्य आगे आते गये। कई आत्मायें समर्पित हो गईं। दादी बृजइन्द्रा ने भी अपना सर्वस्व समर्पित किया। लोग समझते हैं कि बहनों को गहने बहुत प्यारे लगते हैं। दादी बृजइन्द्रा जी के पास भी हीरे-मोती-सोने आदि के बहुत गहने थे। उन्हों को अपने दो लौकिक बच्चे भी थे। संकटकालीन परिस्थिति के लिए या पुत्रों की शादी पर फर्जअदाई के रूप से देना जरूरी है, ऐसा समझ करके भी इन्होंने थोड़ा-सा भी धन या गहने अपने पास नहीं रखे। त्याग की परीक्षा में और नष्टोमोहा की परीक्षा में संपूर्ण सफलता उन्होंने पाई। त्याग का भी त्याग किया अर्थात् कभी भी त्याग का भी वर्णन नहीं किया, याद भी नहीं किया कि मैंने इतना त्याग किया। दुनिया के लोग थोड़ा भी त्याग करते हैं तो उसका वर्णन करते हैं, गायन करते हैं। तब हमें दादी बृजइन्द्रा जी ने सिखाया कि निमित्त बन करके कैसे त्याग का भी त्याग करना है।

ईश्वरीय सेवाओं में सहन भी किया

और इस ज्ञान गंगा की जीवनयात्रा आगे बढ़ती रही। स्थापना के आदिकाल में अर्थात् 1937 से 1952 तक के 16 वर्षों में उन्होंने यज्ञ कारोबार में अथक सेवा की। ड्राइवर बनकर के बस आदि भी चलाई और जब बस का एक्सीडेन्ट हुआ तब देश-विदेश में समाचार छपे कि भारत में महिला जागृति इतनी आई है कि बहनें बस आदि भी चलाती हैं। ईश्वरीय सेवा के हर स्थूल, सूक्ष्म कार्य में सदा ही अपने आपको आगे रखा। श्रीमत का पालन चुस्ती से किया और जब 1953 से ईश्वरीय सेवा अर्थ सब निमित्त ज्ञान गंगाओं को विभिन्न स्थानों पर पिताश्रीजी ने भेजा तब दादी बृजइन्द्रा तथा दादी पुष्पशान्ता जी मुंबई आए। पश्चिम भारत की आदि की ईश्वरीय सेवा में भी सहभागी बने। मायावी मुंबई नगरी में भी अनेक कष्ट सहन किये। मुंबई में चार पैर पृथ्वी मिलना भी बहुत मुश्किल है। शुरू में रुंगठा हाऊस, कोठारी मैदान, दिव्यांत्र, अमीचंद मेन्शन, वाटरलू मेन्शन आदि-आदि स्थानों पर सेवा करने के लिए बृजइन्द्रा दादी निमित्त बन गये। दक्षिण मुंबई में ईश्वरीय सेवा बढ़ी परंतु अब उत्तर मुंबई में भी यह दैवी फुलवारी बढ़ने लगी और उसी कारण सायन (शिव) में भी नरोत्तम निवास में तीन पैर पृथ्वी पहले-पहले किराये पर ली। और इस स्थान पर विराजमान होकर दादी बृजइन्द्रा जी ने यह दैवी फुलवारी बढ़ाई। इस प्रकार मुंबई में अनेक स्थानों पर ईश्वरीय सेवा बढ़ती गई। मुंबई के बाहर पूने आदि स्थानों पर भी ईश्वरीय सेवा बढ़ी और उसके परिणामस्वरूप एक विस्तृत जोन बन गया जिसका नाम रखा गया महाराष्ट्र एवं आंध्रप्रदेश जोन। पहले-पहले दादी पुष्पशान्ता और

बाद में दादी बृजइन्द्रा जी इस जोन की मुख्य संचालिका बने और यह कार्यभार उन्होंने अंत तक उठाया। सारे यज्ञ की हरेक प्रकार की ईश्वरीय सेवा में संपूर्ण सहयोग दिया।

हर प्रसंग का यथार्थ वर्णन करने वाली

यज्ञ इतिहास के मुख्य पात्रधारियों में से एक ऐसा पार्ट अदा किया, ऐसा इतिहास के साथ अपने को ओत-प्रोत कर दिया कि वह इतिहास का दूसरा स्वरूप बन गई। हर प्रसंग का यथार्थ वर्णन करने वाली बन गई। उस समय का वह तेजस्वी, दिव्य, भव्य वर्तमान अब भूतकाल बन गया, उसी भूतकाल का यथार्थ यशोगान करने वाली बन गई। मैं भी जब इस दैवी परिवार का सदस्य बना तो मेरे लिए भी दादी बृजइन्द्रा जी लक्ष्य मूर्ति, प्रेरणा मूर्ति इस अर्थ में बन गई कि मैं भी वर्तमान की हर घड़ी को अमूल्य घड़ी समझकर, हर घड़ी का साक्षी और साथी बनूँ ताकि जब वर्तमान, भूतकाल बने तब आने वाले हमारे बहन-भाइयों को उस का साक्षात्कार कराऊँ और गाऊँ – गुजर गया वह जमाना कैसे-कैसे?

मातृवत् पालना

दादी बृजइन्द्रा जी हरेक की महानता और गुण को पहचानने में सदा सफल रहीं और सदा ही अपने साथियों को आगे बढ़ाती रहीं जैसे कि माँ अपने बच्चों की पालना करके बच्चों को आगे बढ़ाती है, उनकी प्रेरणामूर्ति बनती है, मार्गदर्शक बनती है। ऐसे दादी बृजइन्द्रा जी ने सदा मातृवत् पालना का कर्त्तव्य बहुत अच्छा किया और अनेक बहनों को आदर्श शिक्षिका बना उनका जीवन ईश्वरीय सेवा में समर्पित करने में निमित्त बनीं।

शुभ राय में विशेष बल

बाल्यकाल में लौकिक विद्या का अभ्यास इतना नहीं किया था दादी ने परन्तु सदा ही आदर्श विद्यार्थी बनकर लौकिक बातों के प्रति भी समझने की जिज्ञासु वृत्ति रखी, परिणामरूप, अंग्रेजी भाषा के शब्दों का यथार्थ प्रयोग वह करती थीं। सदा हरेक बात की गुह्यता में उसका आदि और अंत समझने का प्रयत्न करती थीं। परिणामरूप उनके शुभ विचार या शुभ राय में एक विशेष बल होता था जो शुभ राय पाने वाले की हर कदम पर सहायता भी करता था।

कम खर्च बालानशीन

अस्थमा का रोग था परंतु अस्थमा के कारण वह असहाय नहीं बनी। अपना कर्त्तव्य सदा ही निभाती रहीं। इस बीमारी के कारण और बाद में वृद्धावस्था के कारण शारीरिक रूप से बृजइन्द्रा जी सीमित थे परंतु मानसिक रूप से सदा सबके साथी थे और एक स्थान पर होते भी इस विशाल जोन के अनेक ईश्वरीय सेवाकेन्द्रों को संभालने में सदा ही मार्गदर्शक रहे। दादी जी की एक और खूबी थी कि वे कोई भी निर्णय लेते थे तो उसका पालन करने-कराने में सदा ही सभी के सहायक रहते थे। इसलिए, कभी भी निर्णय प्रमाण कार्य करने वाले को यह डर नहीं लगता था कि कहीं दादी विचार बदलेंगे तो नहीं? आज की दुनिया में कार्य करने वाले को कई बार ऐसा डर रहता है परन्तु दादी जी सदा ही विघ्न-विनाशक के रूप में सबके मददगार पूर्ण रूप से बने। कम खर्च बालानशीन के रूप में हर बात की इकॉनामी कराने में निमित्त बनते

थे। ऐसे प्रसंगों की बहुत बड़ी लंबी लाइन है जिसका वर्णन उनकी जीवन कहानी के रूप में होना चाहिए। यह छोटा-सा लेख तो उनके प्रति श्रद्धांजली के रूप में गुणानुवाद करने के लिए लिखा है ताकि सभी रसास्वादन कर सकें और मैं भी ऐसी शब्दांजलि द्वारा कृतार्थ हो जाऊँ। हमारी दादी बृजइन्द्रा जी ऐसी गुणमूर्त थे, परमपिता परमात्मा की ऐसी दिव्य चेतनामूर्त थे जिसका गायन यह दैवी परिवार बहुत समय तक सदा ही करता रहेगा।

******

दादी जी के त्यागी-तपस्वी जीवन की 25 वर्षों तक साक्षी रही महाराष्ट्र जोन की निमित्त प्रभारी **ब्रह्माकुमारी संतोष बहन** उनके बारे में इस प्रकार बताती है–

दादी का केवल बाप के प्रति नहीं लेकिन बापदादा के प्रति जो निश्चय था वो अखण्ड था, कभी उसका खण्डन नहीं हुआ। वह बापदादा को एक-दो से अलग नहीं समझती थी। जैसे शरीर और आत्मा कम्बाइंड हैं, ऐसे ही बाप और दादा भी सदा कम्बाइंड है, दादी का यह निश्चय अटल था।

बाबा का शान्त स्वभाव

दादी बताती थी कि लौकिक जीवन में भी बाबा बहुत मिलनसार और सर्वस्नेही थे। उनका सिखाने का ढंग बहुत ही निराला था। बाबा को भक्ति भी जसोदा माता ने ही सिखाई थी। जसोदा माता हमेशा भक्ति में लीन रहती थी। एक बार हम सपरिवार कोलकाता घूमने गए थे। जसोदा माता वहाँ भक्ति में इतनी लीन हो गई, जो ट्रेन का समय हो गया पर तल्लीनता में उसे पता ही नहीं चला। उस जमाने में कारे तो थी नहीं, फिर बाबा ने घोड़ागाड़ी मँगवाई और सारा परिवार सामान सहित स्टेशन पहुँचा, देखा, सामने से ट्रेन जा रही थी। बाबा को मालूम था कि ट्रेन चली गई होगी परंतु यह मालूम होते भी, सिखाने के लिए ही बाबा लेकर गया और कुछ भी बोला नहीं। जसोदा माता ने कहा, अरे, ट्रेन सामने से जा रही है! बाबा सिर्फ मुस्कराए, बोले कुछ नहीं। कैसे समय का पाबंद रहना है, यह सिखाने के लिए बाबा ने यह सब किया था। फिर सामान सहित सब स्टेशन से वापस आए, टिकट भी व्यर्थ गए। आगे की यात्रा अगले दिन ही सभव हो पाई पर फिर भी बाबा का इतना शांत स्वभाव था कि कुछ भी बोला नहीं, देखा सब साक्षी होकर के। प्रथम नंबर की आत्मा के अंतिम जन्म तक भी, रॉयल्टी के संस्कार गये नहीं थे।

खुद के लिए कम से कम

दादी का जीवन अति त्यागमय था। हमने देखा, उनका मूलमंत्र था, कम से कम साधनों से अपने को चलाना। दादी कहती थी, हम अपने प्रति जो भी प्रयोग करते हैं, वो भी हमारे भविष्य में से कट हो जाता है। दादी को दमा की थोड़ी तकलीफ रहती थी। हम हमेशा सोचते थे, दादी के लिए थोड़ा फल लेकर आएँ, पर दादी कहती थी, मुझे फलों की आवश्यकता नहीं है। खुद के लिए वह इतना-सा खर्चा करने को भी तैयार नहीं थी। सेवा के लिए जितना चाहिए, उतना खर्चा करो पर खुद के लिए कोई खर्चा नहीं करना है।

ट्रेन से ही सफर

दादी महाराष्ट्र तथा उसके आस-पास के सेवाकेन्द्रों की उन्नति के निमित्त थी। कभी किसी दूसरे सेवास्थान पर जाना होता था तो ट्रेन से जाती थी। मुंबई में स्थानीय ट्रेनों की बहुत सुविधा है और उन द्वारा जल्दी भी पहुँचते हैं। बहन-भाई पूछते थे, आप इतनी बड़ी दादी हो, फिर भी ट्रेन में क्यों जाती हो? दादी कहती थी, नहीं, मैं जा सकती हूँ इसलिए ट्रेन से ही जाऊँगी। सबको यह महसूस होता था कि इतनी छोटी-छोटी बहनें, वो तो कारों में जाती हैं, फिर दादी ट्रेन से क्यों जाती है। पर उनका बहुत-बहुत त्यागी जीवन था।

बाबा से कनेक्शन जुड़वाया

हम कुमारियों को माँ जैसा प्यार देती थी जिस कारण कोई भी लौकिक संबंधी कभी याद नहीं आया। हमें अपनी लौकिक माता में बहुत मोह था पर जैसे-जैसे दादी की पालना मिली, मोह टूटता गया। इतना प्यार देते हुए भी दादी ने हमें कभी खुद में नहीं फँसाया, हमारा सारा कनेक्शन बाबा के साथ रखवाया। दादी की तबीयत ठीक ना रहने के कारण, दादी से संबंधित बहुत सारी सेवाओं को हम संपन्न करते थे पर दादी कभी भी अपने को बड़ा नहीं समझती थी। कोई बात होती थी, कुछ निर्णय लेना होता था तो कहती थी, प्रकाशमणि दादी से पूछो। उनसे पूछते थे तो कहती थी, अरे तुम मेरे से क्यों पूछती हो, तुम्हारे पास इतनी बड़ी दादी बैठी है, उनसे पूछो। इस प्रकार इनका इतना आपसी प्यार था, विश्वास था और एक-दो को आगे रखकर चलते थे। इन बातों से हमें बहुत कुछ सीखने को मिला। जैसे हम सतयुग का गायन करते हैं कि श्री लक्ष्मी, श्री नारायण, अपने होते हुए, अपने बच्चों को राज्य कैसे चलाना है, यह सिखाते हैं तो हमने प्रैक्टिकल में देखा कि दादी स्वयं पीछे हो गई और हमें आगे करके हमेशा आगे बढ़ाया।

हर्षित नेचर

जब कराची में क्लिफ्टन पर रहते थे, समुद्र के सामने बाबा का बंगला था, तब से दादी को दमा की तकलीफ हो गई थी। उस समय तो इतनी दवाइयाँ भी नहीं होती थी। दादी को बहुत जोर से दमा होता था, उसकी आवाज़ भी बहुत आती थी। परन्तु तकलीफ होते भी, तकलीफ की फीलिंग नहीं करते थे। उनका चेहरा बहुत हर्षित और अच्छा था। बहुत ही हँसमुख नेचर थी लेकिन बाबा की श्रीमत का कभी भी उल्लंघन नहीं करना है, यह उनके जीवन का बहुत बड़ा नियम था। कुछ भी हो जाए, कुछ भी करना पड़े, परंतु हमें हर हाल में बाबा की श्रीमत पर ही चलना है, यह उनका दृढ़ निश्चय था।

बाबा में श्रीकृष्ण का साक्षात्कार

सारे विश्व की आत्माओं में से दादी ही वह पद्मापद्म भाग्यशाली आत्मा है जिसने भगवान का अवतरण देखा। उसे देखने के बाद इनको पक्का निश्चय बैठ गया कि बाबा साधारण नहीं हैं। जब भी बाबा के सामने जाती थी तो बाबा नहीं दिखाई पड़ता था बल्कि श्रीकृष्ण ही दिखाई देता था। पहले तो कृष्ण को ही भगवान मानते थे इसलिए इनको एकदम निश्चय हो गया और मन में एकदम त्याग भावना भर गई।

त्याग में पहला नम्बर निमित्त

गहनों का त्याग भी सबसे पहले इन्होंने ही किया। दादी सुनाती थी कि जब बाबा समर्पण हुए, उन दिनों एक बार मैं और मम्मा बगीचे में टहल रहे थे। तभी कोई सरकारी अधिकारी बाबा से पूछताछ करने आए कि ये सब मातायें-कन्यायें सब कुछ छोड़कर आपके पास आती हैं, आप इन्हें क्या देते हैं? बाबा ने कहा, मैं ना तो गहने देता हूँ, ना कपड़े देता हूँ, ये सब बड़े-बड़े घरों की हैं, सुविधाओं में पली हैं, यहाँ तो बड़ा सादा जीवन है, तो इन्हें यहाँ केवल ईश्वरीय सुख का आकर्षण ही लेकर आता है। बाबा की ये बातें हमारे कानों तक भी आ रही थी। मैंने कहा, मम्मा, देखो, बाबा हमारे लिए क्या कह रहा है और हम क्या कर रहे हैं क्योंकि मैंने उस समय भी बड़े कीमती गहने पहने हुए थे। मेरे मन में प्रेरणा आई कि अब हमें ये गहने नहीं पहनने हैं। तो उस समय हमने गहने उतार दिए। हम जानते हैं, उस जमाने में, घर में सास के होते, सास से पूछे बिना यदि बहू गहने उतार दे तो उसे कितना सहन करना पड़ता था परंतु इनको किसी की परवाह नहीं थी। बाबा पर अटूट निश्चय था कि बाबा जो कहेंगे, वही मैं करूँगी। फिर दादी ने बाबा को बताया, बाबा, आज से मैं गहने नहीं पहनूँगी। बाबा ने कुछ नहीं बोला, जसोदा माता को अच्छा नहीं लगा परंतु बाबा ने कुछ बोला नहीं। जब बहू ने नहीं पहने तो सास कैसे पहनेगी। इस प्रकार, इसे देखकर अन्य भी कइयों ने गहनों का परित्याग किया। इस प्रकार त्याग करने में पहला नंबर निमित्त बनी।

बड़े दिल वाली

जैसे बाबा ने सिखाया है, दादी की बड़ी दिल, फराखदिल थी। बाबा की जैसे एकदम कॉपी थी। उन जैसी रॉयल्टी और विशाल दिल हमने देखी नहीं। कोई मेहमान आता था या हम लोग भी दादी के पास रहते थे तो वो सोचती थी कि मैं इनको क्या न खिला दूँ। साकार बाबा के सामने कर्नाटक तथा आंध्रप्रदेश के कुछ क्षेत्रों में सेवाकेन्द्र खुले थे। वहाँ के भाई-बहनें आते-जाते मुंबई को क्रॉस करते थे तो दादी से मिलने आते थे। दादी उनकी बहुत खातिरी करती थी।

बाबा की बहू मर गई

दादी को मरजीवा जन्म का बहुत नशा था। लौकिक जन्म बिल्कुल भूल गया था। एक बार कर्नाटक के कुछ बहन-भाई आये हुए थे। उन्होंने एक छोटी बहन से कहा, हम कर्नाटक से आये हैं, हमको बाबा की बहू से मिलना है। उस बहन ने आकर दादी को संदेश दिया। दादी ने कहा, उनको बोलो, बाबा की बहू मर गई। वह बहन तो चकित नज़रों से दादी को देखती रही और वहीं खड़ी रही। दादी ने फिर कहा, जाओ, जाकर कह दो। वह बहन तो कुछ नहीं बोल सकी। थोड़ी देर बार दादी तैयार होकर बाहर गई और बोली, देखो, जिस दिन से यह आत्मा बाबा की बनी, उसी दिन से बाबा की बहू मर गई। मैं बाबा की बहू नहीं, बाबा की बेटी हूँ। वर्सा बहू को नहीं, बेटी को मिलता है। इस प्रकार, मरजीवा जन्म का जो नशा था, वह दादी ने व्यवहार में दिखाया। दादी को देखकर हम भी सीखे। दादी इतनी नष्टोमोहा थी कि कभी पुरानी बातें याद नहीं की। यदि पिछली बातें बताती भी

थी तो केवल ये कि बाबा का जीवन कितना अलौकिक था आदि-आदि।

नष्टोमोहा स्थिति

दादी के दो बेटे थे। बाबा समर्पित हुआ तो सारे परिवार के साथ वे भी समर्पित हो गए। एक बच्चे को कराची में स्मालपॉक्स (चेचक) निकली और शरीर छूट गया। दूसरे बेटे का नाम घनश्याम था, उसे घनसी कहते थे। वह भी आबू में सबके साथ आया पर जब नारायण दादा मुंबई गए तो उसे अपने साथ ले गये कि मैं इसे पढ़ाऊँगा और संभालूँगा। उसने उसे अपना बच्चा ही समझा। वह रहता था नारायण दादा के पास पर हर रविवार को दादी के पास (मुंबई के सेन्टर पर) आता था। उसको अपनी माँ (बृजइन्द्रा) से बहुत प्यार था। बाबा पर अटूट निश्चय था। उस समय 35 वर्ष का हो गया था पर बोला, मुझे शादी नहीं करनी है, योगी था। उसे बाबा से अति प्यार था। बाबा भी उसे बहुत प्यार करता था। दादी बताती थी, जब यह छोटा था, बाबा आता था तो देखते ही दौड़ता था, उसे संभालना मुश्किल हो जाता था, जब तक बाबा गोद में ना ले ले। अति प्यार था दादा (बाबा) से।

इतना बड़ा होने के बाद उसे भी स्मालपाक्स निकली। उसे मुंबई के हॉस्पिटल में रखा था। बाबा भी उस समय मुंबई में आये हुए थे। बच्चे को पता पड़ा तो बोला, मुझे बाबा से मिलना है। विश्वकिशोर भाऊ ने कहा, नहीं, बाबा को ऐसी जगह नहीं ले जाना, यह छूत की बीमारी होती है। बाबा ने कहा, बच्चा याद करे और बाप ना जाए, यह कैसे हो सकता है, अवश्य जाना है। तो बाबा उससे मिलने गए। जब हॉस्पिटल में अंदर जाते थे तो बाहर इंजेक्शन लेना पड़ता था सेफ्टी की दृष्टि से। बाबा ने कहा, नहीं, मुझे ऐसे ही जाना है। फिर बाबा अंदर गए तो उस बच्चे को अति खुशी हुई और एकदम उठकर बाबा को जैसे गले लगा। उसको इतनी ज्यादा निकली थी कि आँख, नाक, गला सारा भर गया था। वह पानी भी नहीं पी सकता था। ग्लूकोज चढ़ाने की शरीर में जगह ही नहीं थी फिर भी वह बहुत आनन्द में था। ध्यान में जाता था वह। उसको दादी पूछती थी, घनसी भूख लगी है? कहता था, बाबा के पास वतन में गया था, बाबा ने बहुत शूबीरस पिलाया, मेरा पेट भरा हुआ है। शिवबाबा उसे अपने पास वतन में बुलाकर खिलाता था।

बाबा ने दादी को कहा, तुम पूरा समय इसका ध्यान रखो। दादी, बाबा से मिलने थोड़ा समय जाती थी फिर हॉस्पिटल में उसके पास बैठती थी। जब शरीर छोड़ने का समय हुआ, डॉक्टर को पता चल गया।

दादी बृजइन्द्रा जी, दादी रतनमोहिनी जी, दादी प्रकाशमणि जी और दादी मनोहर इन्द्रा जी

उसने दादी को कहा, आपको जिसको भी बुलाना हो, बुलाओ। डॉक्टर ने पूछा, आप कौन हैं इसकी? दादी ने कहा, माता हूँ। डॉक्टर ने पूछा, स्टेप मदर है क्या? दादी ने कहा, नहीं, रियल हूँ। डॉक्टर को बड़ा आश्चर्य लगा कि माँ होकर इसके चेहरे पर कोई असर नहीं, हलचल नहीं। उस समय फिर विश्वकिशोर भाऊ आया। बच्चे के शरीर को जब अंतिम झटका लगा तो भाऊ ने सोचा, यह ध्यान में गया। दादी को पता चल गया कि आत्मा गई। नर्स भागी इंजेक्शन देने पर दादी ने उसका हाथ पकड़ लिया। फिर सब क्रियाकर्म करके, स्नानादि करके दादी बाबा के पास आई, बाबा को सब समाचार सुनाया, फिर पूछा, बाबा, घनसी ने जब शरीर छोड़ा, मेरे को खुशी की लहर आई, ऐसा क्यों? बाबा ने कहा, वो आत्मा बहुत कमाई करके गई, इसलिए खुशी की लहर आई। इस प्रकार, दादी की नष्टोमोहा की स्टेज देखकर हमने सीखा कि नष्टोमोहा कैसे बना जाता है। दादी ऐसी सुन्दर क्लास कराती थी, सब जड़ होकर बैठ जाते थे। उन जैसा यज्ञ-इतिहास तो कोई सुना भी नहीं सकता।

कख का चोर सो लख का चोर

बाबा कहते हैं, "कख का चोर सो लख का चोर।" दादी इस बात पर बहुत समझानी देती थी और कर्मों की गहन गति समझाती थी। मानो, लौकिक ऑफिस में काम करने वाला कोई भाई कभी कोई पेन, पिन या स्टेशनरी की चीज़ सेन्टर पर ले आता था तो दादी बहुत ध्यान देती थी। पूछती थी, यह कहाँ से आई? वो भाई कहता, मैं ले आया ऑफिस से। दादी कहती, ऑफिस की चीज़ तो ऑफिस में रहनी चाहिए। वो कहता, दादी, सभी ले जाते हैं, बॉस भी ले जाता है। दादी समझाती थी, सभी चोरी करते तो उन्हें देख हमें चोर नहीं बनना है। भाग्य बनाने का अर्थ यह नहीं है। भाग्य अपने वैध पैसे से बनता है अतः ऐसी चोरी की चीज़ें, भले एक पिन भी हो, नहीं लाओ क्योंकि बाबा कहता है, कख का चोर सो लख का चोर। वो लोग कलियुग में हैं पर हम संगमयुगी हैं अतः हमारा कर्म बहुत श्रेष्ठ होना चाहिए।

कर्मों द्वारा सीख

दादी का युगल विदेश चला गया था। उसने वहाँ जाकर दूसरी शादी की। वो लड़की भी यज्ञ की गई हुई थी। फिर कई वर्षों बाद मुंबई में आया और दादी को फोन किया। उसने पूछा, बृजेन्द्रा है? दादी ने पूछा, आप कौन हो? क्योंकि कोई भी इस प्रकार दादी का नाम लेकर नहीं पूछता था। उसने कहा, मैं किशा हूँ (कृष्ण नाम था, किशा कहते थे)। दादी ने पूछा, क्या काम है? उसने कहा, मुझे आपसे मिलना है। दादी ने कहा, मुझे आपसे मिलना नहीं है, ऐसा कहकर फोन रख दिया। इस प्रकार दादी ने यहाँ भी नष्टोमोहा का सबूत दिया। संसार में नारी को सबसे अधिक पुत्र और पति के मोह की जंजीरें ही बाँधकर रखती हैं। दादी ने दोनों जंजीरों से मुक्त होने का प्रमाण दे दिया।

बाबा कहते हैं, अपने कर्मों से सिखाओ तो दादी ने प्रैक्टिकल कर्मों द्वारा हमें भी नष्टोमोहा का पाठ पढ़ाया। फिर वो कोलाबा में रहा और उधर ही सेवाकेन्द्र पर भी आता-जाता रहा पर दादी तो देह के नातों से पूरी तरह ऊपर उठ चुकी थी। दादी ने 1-1-1990 को पार्थिव देह का त्याग किया। ◈

दीदी मनमोहिनी

दीदी जी का लौकिक नाम गोपी था। आप एक बहुत ही नामीगिरामी धनाढ्य सिन्धी परिवार से थी। यज्ञ की स्थापना के समय, किसी की परवाह किये बिना, अनेक बंधनों को तोड़ते हुए, आप अपनी लौकिक माँ क्पीन मदर और लौकिक बहन शील के साथ, झाटकू रूप से समर्पित हो गई। आपमें अनेकानेक विशेषतायें थी। आपका बाबा से अटूट प्यार था। हर पल, हर बोल में बाबा-बाबा ही निकलता था। आप दिलवाला की सच्ची दिलरुबा थी। दीदी को अव्यक्त नाम मिला, "मनमोहिनी"। दीदी के सान्निध्य में जो भी आता, दीदी उसका मन ऐसा मोह लेती थी जो वह बाबा का बन जाता था। विभाजन के बाद सन् 1952 से भारतवर्ष में जब ईश्वरीय सेवायें प्रारंभ हुई, तब आप पहले-पहले दिल्ली, इलाहाबाद आदि स्थानों पर त्याग-तपस्या के आधार पर कई सेवाकेन्द्र खोलने के निमित्त बनी और मातेश्वरी जगदम्बा माँ के अव्यक्त होने के पश्चात् सन् 1965 से आप फिर से बापदादा के साथ मधुबन में रहकर यज्ञ की इंटरनल कारोबार को, पूरे प्रशासन को संभालने के निमित्त बनी। सन् 1969 में ब्रह्मा बाबा के अव्यक्त होने के पश्चात् दीदी और दादी की जोड़ी ने पूरे यज्ञ को संभाला, दोनों ने मिलकर मात-पिता के रूप में देश-विदेश के सर्व ब्राह्मण परिवार की निःस्वार्थ पालना की और पूरे विश्व में सेवाओं का खूब विस्तार किया। दीदी-दादी की जोड़ी को सभी कहते थे - शरीर दो हैं, आत्मा एक है। ऐसी एकता का प्रमाण देकर, एक दो की राय को सम्मान देते हुए यज्ञ को निर्विघ्न बनाया। आप 28 जुलाई, 1983 में अव्यक्त वतनवासी बन एडवांस पार्टी में चली गई।

दादी मनोहर इन्द्रा जी ने, दीदी मनमोहिनी के साथ का अनुभव इस प्रकार सुनाया था –

हैदराबाद-सिन्ध में दीदी जी का लौकिक जन्म एक धनीमानी घर में हुआ। दीदी का लौकिक नाम गोपी था। गोपियाँ कृष्ण की प्यारी होती हैं। तो जैसा नाम था, वैसी ही उसके जीवन में चाहना थी। गोपी के नाम से गोपीपने के संस्कार भी उनमें जागृत हो गये थे। उन्होंने अपने मुख से स्वयं हमें बताया कि मैं श्रीकृष्ण की भक्तिन थी और दिल में चाहना थी कि जैसे गोपियो का जीवन था, वैसे मेरा भी हो परंतु ड्रामा में हरेक बात समय आने पर ही इमर्ज होती है।

अपनी कमाई से दान करने की लगन

दीदी की शादी दस वर्ष की बाल्यावस्था में हो गई थी। दीदी कपड़े सिलाई में बहुत होशियार थी। हाथ में बहुत सफाई थी। बड़े घर की होने के कारण सिलाई करने की उन्हें जरूरत नहीं थी। जिसके साथ शादी की वो भी बहुत पैसे वाला था पर दीदी की

भावना यह थी कि मैं जितना अधिक पैसा कमाऊँगी, उतना अधिक गरीबों को दान कर पाऊँगी, अपनी मेहनत से पैसा कमाकर दान करने का अधिक पुण्य मिलता है। जब बाबा ने बड़े बेटे की शादी रचाई थी तब शादियों के दिन होने के कारण कपड़े सिलाई वाले नहीं मिल रहे थे। बाबा को मालूम था कि गोपी बहुत अच्छे कपड़े सिलाई करती है। बाबा ने जब दीदी को कहा तो दीदी ने कहा कि मैं दो दिन में कपड़े सिलाई करके दे दूँगी। जसोदा माता तो बहुत खुश हो गई। इस प्रकार, बाबा के घर दीदी का आना-जाना प्रारंभ हो गया। बाबा के घर में धन बहुत था पर धन के साथ-साथ भक्ति और नम्रता भी बहुत थी।

दादी गुलज़ार जी, दादी मनोहर इंद्रा जी, दीदी जी, दादी प्रकाशमणि जी और दादी रतनमोहिनी जी विदेशी भाई-बहनों के साथ

बाबा से श्री कृष्ण की भासना आई

जब बाबा के घर में सत्संग शुरू हुआ तो पहली बार दीदी अपनी माँ के साथ वहाँ गई। बाबा अपने छोटे-से मकान में बैठा था, गीता का पाठ चल रहा था। दीदी को उस सत्संग में आनन्द बहुत आया। जब सत्संग पूरा करके बाबा उठा तो बाबा ने दीदी को अपने पास बुलाया और पूछा, "तुमने सुना, तुम्हें कैसा लगा?" बाबा को जवाब देने के स्थान पर दीदी ने ही पूछ लिया, "हमारे शास्त्रों में लिखा है कि हिन्दू नारी को गुरु करने की जरूरत नहीं क्योंकि पति ही गुरु और परमेश्वर है।" बाबा ने कहा, "बच्ची, मैंने तो कहा ही नहीं कि तुम मुझे गुरु बनाओ, यहाँ गुरु बनाने की तो बात ही नहीं, यह तो ज्ञान है, इस ज्ञान से जीवन बनता है। बच्ची, अगर तुम रोज आओगी, सात दिन तक सुनोगी तो तुम्हारा जीवन बहुत ऊँचा बन जायेगा।" बाबा ने जब यह कहा तो दीदी को लगा कि यहाँ केवल ज्ञान सुनने आना है, बाकी गुरु आदि बनाने की बात नहीं है। फिर दीदी ज्ञान सुनती रही, ज्ञान तो बुद्धि में कम बैठा लेकिन जब बाबा को

देखती थी तो बाबा के साकार स्वरूप से श्री कृष्ण की भासना आती थी। दीदी ट्रांस में नहीं जाती थी लेकिन उन्हें पक्का अनुभव होता था कि मैं श्री कृष्ण के सामने हूँ। इस अनुभव से दीदी के दुनिया के सब आकर्षण अपने आप छूट गये और वे भगवान के आकर्षण में बँध गई।

बाबा और बाबा की हर वस्तु से प्यार

ओम मण्डली में सत्संग करके दीदी जब घर में जाती थी तो चैन नहीं आता था, मन करता था, बाबा के पास जाऊँ। थोड़े समय बाद बाबा कश्मीर चले गये। फिर कश्मीर से बाबा के पत्र आने लगे। बाबा के पत्रों को पढ़-पढ़कर गोपी रोती रहती थी कि बाबा कब आयेंगे। पत्रों को छिपाकर रखती थी, पत्रों को प्यार करती रहती थी। बाबा के पत्रों में बहुत मिठास और रूहानी स्नेह होता था तो गोपी को उन पत्रों से बहुत स्नेह हो गया। बाबा से प्यार तो बाबा की हर वस्तु से प्यार हो गया।

शांत समाधि में रहना

एक बार इसने बाबा से पूछा कि बाबा, पति कहता है कि मेरे साथ सिनेमा में जाओ तो मैं जाऊँ क्या? बाबा ने कहा, "बच्ची, तुम जाना पर बाबा को याद करना। तुम अपनी मस्ती में रहना, शांत समाधि में रहना, निज अवस्था में टिकी रहना।"

बाबा ने कहा, "बच्ची, तुम बड़े घर की हो। ऐसे ना हो कि झगड़ा हो जाए, नहीं तो सारी कन्याओं-माताओं पर बंधन आ जायेगा। तुम बड़ी हो, युक्ति से चलती रहना।"

बहाना मिला

दीदी का पति यूँ तो अच्छा था पर एक दिन पति को बड़ा गुस्सा आ गया। कभी हाथ नहीं लगाया था लेकिन उस दिन गुस्से में हाथ भी लगा दिया। हाथ लगाया तो चश्मा गिर गया। शीशा टूट गया, दीदी को बहाना मिल गया। दीदी ने कहा, आप विकारों के कारण मुझे मारते हो, आपको विकार प्रिय हैं या मैं प्रिय हूँ। अगर ऐसा है तो अभी ही मुझे छोड़ दो।

******

दादा चन्द्रहास दीदी के परिवार से ही थे। दीदी के लौकिक जीवन के बारे में उन्होंने लिखा है, जे.टी.चैनराय फर्म के मालिक भाई हासाराम मेरे मौसा जी (मौसी के पति) थे। बाल्यकाल में मैं उनके पास रहा। उनके तीन बेटे अपने परिवारों सहित उनके साथ रहते थे। बड़ा बेटा दुर्घटना में गुजर गया था, उनकी युगल (क्वीन मदर) अपने दो बेटों और दो बेटियों (दीदी मनमोहिनी तथा शील इन्द्रा) के साथ रहती थी।

जब बाबा ने सत्संग शुरू किया तो उसमें मौसा हासाराम, दीदी, क्वीन मदर आदि नियमित आने लगे। हासाराम शहर के नामीगिरामी व्यक्ति थे। इस कारण भी शहर में अच्छा प्रभाव पड़ा लेकिन अचानक ड्रामा ने पलटा खाया। दादी प्रकाशमणि जी की बड़ी बहन सती का पति विदेश से आया तो उनका पत्नी के साथ पवित्रता पर झगड़ा आरंभ हुआ। उससे शहर में हंगामा आरंभ हो गया कि जो ओम मण्डली में जायेगी, उसके पति को विष नहीं मिलेगा। एंटी ओम मण्डली वालों ने पहले बड़े लोग जैसे मेरा मौसा हासाराम, मुखी मंघाराम आदि को बहकाना आरंभ किया। हासाराम उनकी बातों में आ गया जिस कारण दीदी, शील बहन, क्वीन

मदर तथा दादी बृजशान्ता का परिवार, इन पर बाधा आ गई। दीदी जी तो कभी मेरे साथ छिपकर ओम निवास जाकर बाबा से मिलकर आती थी। हासाराम के विरोधी हो जाने से एंटी ओम मंडली वालों को बल मिला और उन्होंने ओम निवास के बाहर पिकेटिंग की। नज़ारा बड़ा दिलकश था। एक तरफ पगड़ी वाले हासाराम तथा बड़े मुखी चौधरी तो दूसरी तरफ उनकी ही मातायें, कन्यायें, बच्चे आदि। उनमें दीदी तथा शील बहन और मैं भी था। आखिर अपने ही बच्चों को कहाँ तक भूखा-प्यासा खड़े रखते, उनको हारना ही पड़ा। एक-दो दिन यह धर्म युद्ध चला, आखिर कलेक्टर को हस्तक्षेप करना पड़ा।

दीदी को पिकेटिंग में देख हासाराम इतना क्रोधित हुआ जो दीदी को घर से चले जाने को कहा। दीदी ओम निवास में आ गई तो क्वीन मदर और शील बहन भी घर छोड़ ओम निवास आ गईं। वहाँ ओम निवास के सामने ही बाबा ने एक किराये का मकान लेकर उसमें तीनों को रखा। मैंने भी दीदी जी से कुछ सिलाई का काम सीखा था।

******

दादी मनोहर इन्द्रा जी दीदी मनमोहिनी के साथ के अनुभव को जारी रखते हुए आगे कहती हैं–

सिलाई स्कूल चलाया

दीदी के पिताजी का एक दुर्घटना में तब देहांत हो गया जब दीदी 16-17 वर्ष की थी। क्वीन मदर कहती थी कि उनकी सारी बुद्धि इसको मिल गई इसलिए ही दीदी की बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण थी। जब ये ओम मंडली में आने लगी तो सब बातों में आगे रहने (लीडर) का इसका पार्ट था। बाबा जिस कमेटी के आगे समर्पण हुआ, उस कमेटी में भी इसका नाम था। बाबा के समर्पण होने के बाद हम कन्यायें-मातायें आईं तो उनको पनाह चाहिए थी। हम कुमारियों पर भी शादी के लिए बंधन आता था तो हम चाहती थी कि हमें कोई शरण मिले तो हम यहाँ आती-जाती रहें। दीदी ने बाबा को कहा कि बाबा, मैं सिलाई जानती हूँ। ओम मंडली के स्थान पर 8-10 सिलाई मशीनें रख लेती हूँ और दो-तीन सखियों को भी साथ रख लेती हूँ। जो भी बाँधेली कुमारियाँ हैं, जिनको माँ-बाप तंग करते हैं, उनको बाबा का बनाने के लिए सिलाई सिखाने के बहाने से यहाँ बुलायेंगे। बाबा की स्वीकृति से दीदी ने सिलाई स्कूल चलाया। मैं भी सिलाई सीखने के बहाने से जाती थी। सिलाई स्कूल में सिलाई भी सिखाते थे तो योग भी लगाते थे, रास रचाते थे, शांत समाधि में बैठते थे, मम्मा-बाबा भी आ जाते थे। इस प्रकार सिलाई क्लास के बीच में यह रास-विलास चलता था।

दीदी कंट्रोलर थी

ओम मंडली के बाद ओम निवास खुला तो उसमें पढ़ने वाले बच्चे रहने लगे। कुछ समय बाद हम कराची चले गए। वहाँ दीदी बनी कंट्रोलर और मैं बनी वाइस कंट्रोलर। दीदी बड़ी एक्यूरेट और चुस्त थी। स्मृति बड़ी पावरफुल थी। कारोबार संभालने में बड़ी होशियार थी। यज्ञ का सारा कारोबार इनके हाथ में था। कपड़ा देना, फैन्सी सामान देना आदि-आदि सब सेवायें करती थी। आठ-दस बहनें उनकी मददगार थी पर सब उनकी राय से चलती थी। बाबा भी मम्मा को कहता था, बच्ची, कोई भी काम करना हो तो दीदी से राय कर

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

है कि डॉक्टर, तुम मेरे भाई हो ना, सच बताओ, किसका ऑप्रेशन करना है, ये बहने मेरे से छिपाती हैं, कुछ सुनाती नहीं हैं, समझती हैं, मैं कोई डरूँगी। मेरे भाई हो ना, मुझे सच बताओ, किसका ऑप्रेशन है? डॉक्टर ने कहा, सच तो यह है कि इतनी छोटी गांठ है, उसका ऑप्रेशन है, चुम्बक का है, यह सच बात है। दीदी ने कहा, ठीक है। दादी जानकी, बृजइन्द्रा, सब दीदी के पास आते थे। सुबह 10.30 का रिकॉर्ड बजता तो ये योग करते, पूरी दिनचर्या ठीक चलती थी। नर्स आती थी, देखती थी, ये सब चटाई बिछाके बैठ जाते हैं, उसे मालूम तो था, ये लोग कौन हैं। दीदी कहती थी, यह हॉस्पिटल नहीं है, सत्संग है। दीदी कभी हँसती थी, रूहरिहान करती थी, कभी लेट जाती थी। एक दिन हमने भी पूछा था, दीदी, लूडो लाएँ, खेलेंगे? जब हम गई, वो तीन मिनट की सीन तो क्या बताऊँ! जितने दीदी को प्रेम के मोती बहाने थे, वो उसी घड़ी बहाए। बाबा ने कहा है, दो सितारों का मिलन होता है, वो दो सितारों के मिलन की घड़ी थी। बाबा ने ड्रामा में ऐसी विचित्र जोड़ी बनाई जो सभी कहते, शरीर तो दो हैं पर आत्मा एक है। प्रैक्टिकल ऐसा है भी। नेचुरल मिलने की घड़ी में भी ऐसे रहा। फिर गुलजार बहन, निर्वैर भाई, जगदीश भाई सब पहुँचे, दीदी से मिले। दीदी की गोद में बैठे। दीदी ने कहा, तुम लोग तो बच्चे हो, आओ, बैठो। ऐसे मिलकर हम सभी हलके होकर बैठे थे। दीदी हलकी हो गई, हर्षितचित्त हो गई। शाम को हम घूमने भी गए।

बाबा स्पेशल मिलने आए

फिर एक पाँच मिनट की प्राइवेट बात सुनाऊँ क्या? हमने कहा, गुलजार, बाबा को कहो, दो मिनट मिलके जाए, प्राइवेट में आए। तो दीदी तो बाबा की लाडली थी। बाबा बिल्कुल थोड़े मिनटों के लिए, प्राइवेट कमरे में, स्पेशल मिलने आए। दीदी से मिले, हँसे-बहले। दीदी को बोले, तुम तो मेरी स्पेशल बेटी हो, देखो, तेरे लिए स्पेशल बाबा आया है क्योंकि बाबा तो आता नहीं है ना यहाँ। खबर भी नहीं किसको। दीदी, तुम कोई फिकर नहीं करना, बाबा तुम्हारे साथ है, बाबा जो कहता है तुम नंबरवन हो, तो नंबरवन जो विन करेगा, उसे पेपर तो पास करना पड़ेगा ना। तुम तो बाबा की गोदी में बैठी हो – ऐसे कहते बाबा हँसते-बहलते रहे। फिर ऑप्रेशन हुआ। ऑप्रेशन के दिन तो मिलने नहीं दिया। अगले दिन हम गई, हमने कहा, दीदी। तो दीदी ने आँखें खोली, देखा, मुसकराया, बोल नहीं सकी। तीसरे दिन भी मिलकर आई। मैंने कहा, ओमशान्ति। दीदी ने धीरे से कहा, ओमशान्ति। उस समय दीदी पूरी कांशस में थी और तीसरे दिन थोड़ा जूस मुख से लेती रही। ऑप्रेशन बिल्कुल ठीक हुआ।

******

निर्वैर भाई दीदी के प्रति अपना अनुभव इस प्रकार सुनाते हैं –

अब घर जाना है

कुछ समय से, जब भी कारोबार की कोई बात सामने आती थी, दीदी एक ही बात कहती थी, अब तो घर चलना है, इन बातों में अब क्या रखा है! यूँ तो बाबा ने सबके लिए यह संदेश दिया पर उनके मुख पर हर रोज ही यह बात सुनते थे।

भाषा का बैरियर खत्म कर देती थी

याद आता है, विदेश के भाई-बहनें जब उनसे मिलने आते, तो बड़े रमणीक ढंग से वो सबको बोलती, इंग्लिश में मैं बुद्धु, हिन्दी में यू बुद्धु, नो इंग्लिश – ऐसा कहकर वो भाषा का बैरियर (बाधा) खत्म कर देती और स्नेह से जो दृष्टि देती, उसमें जैसे बाबा का साक्षात्कार करा देती और साथ-साथ उस समय जो दो शब्द हिन्दी में बोलती, उन्हें कोई ट्रांसलेट कर देता, वे उन सबके लिए प्रेरणादायक, जीवन को पलटाने वाले महावाक्य सिद्ध हो जाते।

******

तुलसी भाई (मधुबन) दीदी जी के साथ का अनुभव इस प्रकार सुनाते हैं –

मैं अजमेर से हूँ, अजमेर का कनेक्शन दीदी के साथ था। उन दिनों अजमेर में 35-40 मिनट तक भी ट्रेन रुकती थी। हमें सौभाग्य मिलता था दीदी-दादियों की स्टेशन पर सेवा करने का। दीदी से मेरी पहली मुलाकात स्टेशन पर ही हुई थी। दीदी अपना बनाने में बहुत होशियार थी, साथ-साथ मर्यादाओं का पालन कराने में भी उतनी ही होशियार थी।

परख शक्ति और सूझ-बूझ

जयपुर में फरवरी 1979 में एक मेला हुआ था, उसकी सेवा में मधुबन निवासी आये थे। उस मेले में भोली दादी भी आई थी भण्डारे की सेवा में। मैं भी वहाँ सेवारत था। उन्होंने मुझे पसंद कर लिया था कि यह लड़का मुझे चाहिए। बाद में मधुबन में मुझे दीदी ने बुलाया। मुझे स्टोरकीपर बनाया गया। दीदी मुरली सुनने जाती थी तो किचन की तरफ से चक्कर लगाते हुए जाती थी। उस समय मैं स्टोर ठीक कर रहा होता था। इस कारण उनका विशेष अटेन्शन रहा। दीदी अपने और यज्ञ के राजा थे। जो उन्होंने चाहा, ठीक समझा, वो किया। उनकी परख शक्ति, सूझ-बूझ बहुत थी।

समय की पाबंद

दीदी समय की बड़ी पाबंद थी। एक बार अमृतवेले का योग पूरा होने पर मैंने एक लंबा गीत बजने दिया। अमृतवेले 4.50 पर मेडिटेशन पूरा हुआ। मुझे लगा, अरे अच्छा हुआ, इस बहाने सबने 4-5 मिनट ज्यादा योग किया लेकिन 11 बजे मुझे दीदी ने बुलाया और कहा, आज तुम्हारे कारण मेरी सारी दिनचर्या खराब हो गई, क्यों, क्योंकि गीत लंबा हुआ, मैं योग से लेट आई, लेट आई तो चाय ठंडी हो गई, जब तक लच्छू चाय दूसरी बनवाकर या गर्म कराके लाये और मैं पीऊँ तो बाथरूम में पानी जो पंडित जी रखकर गया, वो ठण्डा हो गया। पानी ठण्डा हो गया, तो जब तक पंडित को ढूँढ़कर दूसरी बाल्टी पानी की मंगवाई जाए, मैं क्लास में लेट हो गई। मेरी सारी दिनचर्या खराब हो गई और तुमने इतना भी नहीं सोचा कि दीदी का रिकार्ड खराब हो जायेगा। सफेद लाइट होने से पहले दीदी पहुँच जानी चाहिए ना (दीदी के हाथ में डायरी होती थी और दीदी टाइम पर पहुँच जाती थी)। तुमने इतना भी नहीं सोचा कि दीदी आई नहीं है तो मैं वो गीत भी इतना लंबा करूँ, तुमने सफेद लाइट कर दी। मेरा जो रिकार्ड था कि मैं टाइम पर क्लास में पहुँचती हूँ, सारा रिकार्ड खराब हो गया। दीदी हर कार्य में बड़ी रेग्यूलर पंक्चुअल थी।

जो भी नया आता था, दीदी उसे सब शिक्षाओं से सजा देती थी। मुझे शिक्षा दी कि तुम्हें संग बहुत संभालकर करना है। ज्ञान-योग से भरपूर संग करना है। एक बार मैंने पूछा, दीदी, आपको कैसे पता पड़ता है कि इस आत्मा को कहाँ सेट करना है? दीदी ने कहा, नये आने वाले को मैं चार-पाँच दिनों तक खाली छोड़ देती हूँ, फिर देखती हूँ, वो कौन-से डिपार्टमेंट में जाता है, कहाँ का संग करता है, तो वह वहाँ जाकर सेट हो जायेगा।

******

लुधियाना सेवाकेन्द्र की निमित्त संचालिका **राज बहन** दीदी के प्रति अपने अनुभव इस प्रकार व्यक्त करती हैं –

विवेक को कभी मत दबाना

जब पहली बार मधुबन आए तो मैं दीदी को नहीं जानती थी। मैं आफिस की तरफ जा रही थी। दीदी सामने से आ रही थी। जैसे ही मेरी दृष्टि उनसे मिली, मैं खड़ी हो गई, वे भी खड़ी हो गईं। यह मौन मिलन था जिसमें जन्मों के संबंध के राज़ खुल गये। मेरा संकोच खत्म हो गया और उनसे अपनापन पैदा हो गया। मैं जयपुर में रहती थी। हर 15 दिन बाद दीदी, जयपुर में आते थे, वहाँ म्यूजियम बन रहा था। दीदी बड़ी तर्कवाली बातें करती थी। उन्होंने हमें भी सिखाया कि यज्ञ में रहते अपने विवेक को कभी मत दबाना।

बड़ों की श्रीमत में कल्याण

मैं बांधेली थी, अकेली चलती थी। दीदी ने युक्तियों से मुझे बंधनमुक्त कराया। बाबा के अव्यक्त होने से पहले, 19 दिसंबर, 1968 में मैं यज्ञ में समर्पित हो गई। बाद में कन्याओं की भट्ठी शुरू हुई। दीदी ने मुझे बुलाया। उद्घाटन अव्यक्त बाबा को करना था। हरेक कुमारी की दिल थी कि मैं बाबा की गद्दी के नजदीक बैठूँ। मेरी भी दिल थी पर दीदी ने मुझे सब कुमारियों के लास्ट में बिठाया। मैं चुप करके बैठ गई, मेरा कोई जोर नहीं था। फिर बाबा आए, बाबा की पहली दृष्टि मुझ पर ही पड़ी, मुझे ही सबसे पहले बुलाया और बाबा ने विक्ट्री का तिलक सबसे पहले मेरे मस्तक पर लगाया। इससे मुझे बहुत प्रेरणा मिली कि बड़े जहाँ भी बिठाएँ, उसी में कल्याण समाया हुआ है।

केक काटते हुए दादी जानकी जी, दादी हृदयमोहिनी जी, दादी प्रकाशमणि जी, राज बहन, दादी चंद्रमणि जी तथा अन्य बहनें।

भट्ठी के दिनों में ही मेरा लौकिक जन्मदिन आया। मैंने कहा, दीदी, मुझे 24 फल चाहिएँ। दीदी ने कहा, 24 टोलियाँ ले लो। दीदी ने कहा, आपका जन्मदिन हम सब मिलकर मनायेंगे। हिस्ट्री हाल की छत पर दीदी ने सबकी पिकनिक कराई। कई बार मुझे कई कार्यक्रमों में जाने में रुचि नहीं होती थी। दीदी कहती थी, अमुक कार्यक्रम में जाओ। मैं कहती थी, मुझे बोलना तो है नहीं, जाकर क्या करूँगी। दीदी ने कहा, कार्यक्रम में जाकर देखने से भी मनुष्य बहुत कुछ सीखता है। दीदी की इस बात को माना तो सचमुच सेवा के क्षेत्र में बहुत कुछ सीखने को मिला।

एक बार एक बाँधेली गोपिका को मैं अमृतसर ले गई। दीदी भी वहाँ आई थी। दीदी ने चन्द्रमणि दादी को कहा, इनको बेड दे देना। उन दिनों बहुत ठंड थी। रात 10.30 बजे दीदी खास देखने आये कि इनको बिस्तरा-रजाई सब मिला है? इतने व्यस्त होते भी बहुत ध्यान रखती थी।

कुछ मिनट याद कर लेना

मुम्बई जाने का मेरा कार्यक्रम दीदी ने बनाया। मैंने कहा, मैं मुम्बई जाकर क्या करूँगी, वहाँ लड़कियाँ बहुत होशियार हैं, मेरे से तो बोला ही नहीं जायेगा। दीदी ने कहा, हम तुमको जानते है, तुम अपने को नहीं जानती, तुम सब कुछ कर सकती हो पर मेरा मन उमंग में नहीं आया। उस समय बाबा के कमरे में बाबा आये हुए थे। बृजमोहन भाई बात कर रहे थे। दीदी ने कहा, इनके बाद आप बाबा से बात कर लेना। बाबा के सामने भी मैंने वही बात रखी। बाबा ने कहा, तुम अपने को नहीं जानती हो, त्रिकालदर्शी बाबा तुम्हारे तीनों कालों को जानता है, तुमको जब बोलना हो तो पहले कुछ मिनट मुझे याद कर लेना। इस तरह बाबा ने बल भरकर मुझे तैयार कर दिया। मैंने इस युक्ति को अपनाया और सफल रही।

बोलने से शिकायतें बढ़ेंगी

एक बार दीदी ने कुछ दिन अपने साथ मधुबन में रखा। मैं मधुबन में ग्रुप समझाने की सेवा करती थी। किसी ने शिकायत की कि यह बोलती नहीं है (बातचीत नहीं करती, मेलजोल नहीं रखती)। दीदी ने कहा, अभी तो एक ही शिकायत है कि यह बोलती नहीं। बोलने लगेगी तो बहुत शिकायतें आने लगेंगी। कभी-कभी दीदी से विश्व महाराजन की भासना आती थी, कभी सखी की। मैं उनसे फ्री होकर लेन-देन कर लेती थी।

******

दिल्ली, रानीबाग सेवाकेन्द्र की **सरला बहन** दीदी के साथ के अनुभव इस प्रकार सुनाती हैं –

दीदी, राजौरी गार्डन सेवाकेन्द्र पर आये हुए थे। मैं छोटी कुमारी थी, घर से आती-जाती थी। किसी ने मुझे कहा कि दीदी से मिलो। मैं दीदी से मिली, दीदी ने पूछा, तुम्हें ट्रेनिंग में बुलाऊँगी, तुम आओगी ना? मैंने कहा, हाँ दीदी। दीदी ने ऐसा ट्रेनिंग में बुलाया कि हम वापस घर ही नहीं गये। ट्रेनिंग के बाद सीधे सेन्टर पर ही चले गये।

दीदी के बोल साकार होने लगे

जब भी हम मधुबन आते तो दीदी बहुत प्यार करती। मधुबन में दीदी से मिलने का ही विशेष आकर्षण होता। दीदी के बोले हुए बोल जब साकार होने लगे तो

दीदी के प्रति भावना बढ़ने लगी। एक बार मधुबन से वापस जाने का मन नहीं कर रहा था। दीदी ने बहुत प्यार किया, कहा, तुम जल्दी वापस आना पार्टी लेकर। सेवाकेन्द्र पर गई तो सचमुच तुरंत ही शिविर की पार्टी लेकर मधुबन आने का कार्यक्रम बन गया। इस प्रकार दीदी के बोल सिद्ध होने का प्रमाण मिला।

एक बार मैंने दीदी को कहा, दीदी, नया-नया सेवाकेन्द्र खुला है, दिल नहीं लग रहा। दीदी ने कहा, दिल से सेवा करो तो सेन्टर भरपूर हो जायेगा। दीदी के ये वरदानी बोल साकार हुए। तभी से सेन्टर पर मातायें आने लगी और सेन्टर भरपूर हो गया।

अपनेपन की फीलिंग

एक बार मधुबन में मेरे हाथ से कांसे का बर्तन टूट गया। मैंने दीदी को सुना दिया कि मेरे से बर्तन टूट गया है। दीदी ने मुझे प्यार किया और कहा, आप सेवा करोगी तो बहुत बर्तन मिल जायेंगे। तब पता नहीं था कि सेवा करने से कैसे बर्तन मिलते हैं। दीदी से बहुत अपनेपन की फीलिंग आती थी।

होलसेल सेवा करो

मधुबन पार्टी लेकर आते थे तो दीदी खुद बुलाती थी, सारा समाचार पूछती थी। हम कहती थी, दीदी, फलाना-फलाना आया था, उसे कोर्स कराया। दीदी कहती, यह रेजगारी सेवा है, होलसेल सेवा करो, आपके अंदर सच्चाई-सफाई का गुण है, यह आपको आगे बढ़ायेगा।

एक बार किसी बहन ने, दूसरी बहन की शिकायत करते हुए दीदी से कहा, दीदी, यह बहन मेरे से ही चिपकी रहती है। दीदी ने कहा, तू फूल है ना, अच्छा है ना किसी और में बुद्धि नहीं जाती। दीदी की निर्णय शक्ति, परख शक्ति बहुत अच्छी थी।

******

दिल्ली, पांडव भवन की ब्र.कु. **पुष्पा बहन** दीदी के प्रति अपने अनुभव इस प्रकार बताती हैं –

बड़े निश्चिन्त हैं, यह सबसे बड़ी सेवा है

जब हम मधुबन आते तो दीदी सारा हालचाल पूछती, सेवा कैसे चल रही है आदि-आदि। मैंने दीदी को कहा कि मैं तो इतनी सेवा करती नहीं। उस समय मुझे थोड़ा ही समय हुआ था समर्पित हुए। दीदी ने कहा, तुम बहुत बड़ी सेवा करती हो। मुझे आश्चर्य हुआ कि दीदी ऐसा कैसे कह रही है। फिर दीदी ने समझाते हुए कहा, "तुमसे बड़े निश्चिन्त हैं, यह सबसे बड़ी सेवा है।" मेरे अंदर एकदम खुशी उमड़ आई। दीदी ने आगे समझाया कि सेवा करते हुए बड़ों को निश्चिन्त रखना बहुत जरूरी है। अगर सेवा करें पर बड़े निश्चिन्त न हों तो उस सेवा का कोई फायदा नहीं है।

प्रश्नोत्तर देने में तत्परता

जब हम मधुबन आते तो आलराउण्डर दादी सारा समाचार सिन्धी भाषा में लिख दीदी के नाम चिट्ठी भेजती। एक बार मैं सुबह-सुबह मधुबन पहुँची। आराम से नहा-धोकर, नाश्ता कर, 10 बजे दीदी के पास चिट्ठी देने पहुँची। दीदी ने कहा, अभी आती हो, तुम्हें पता है हमारी कारोबार सुबह से शुरू हो जाती है, क्लास के बाद पहले पत्र लिखती हूँ, पीछे नाश्ता करती हूँ। यहाँ तो डाक सुबह चली जाती है, तुम्हें आते ही देनी चाहिए थी। मैंने कहा, मैं स्नान करने चली गई।

दीदी ने कहा, चिट्ठी देना जरूरी था या पहले स्नान करना। दीदी को ख्याल था कि मैं पत्र पढ़कर, सुबह ही उसका जवाब दे चुकी होती। इससे पत्रोत्तर देने में दीदी की तत्परता का ज्ञान हुआ। तब से नियम बनाया कि मधुबन आते ही पहले जरूरी पत्र देने हैं, फिर बाकी के काम करने हैं।

******

ब्रह्माकुमार **ओमप्रकाश भाई** (मधुबन), दीदी के बारे में लिखते हैं –

बाबा पर गहरा निश्चय

दीदी के संपर्क में मैं सन् 1953 में आया। दीदी और सभी साथी बहनों का जीवन सादगी भरा था तथा विचार बहुत ऊँचे थे। सादगी के साथ रायल्टी भी थी। एक छटांक दाल की खिचड़ी में ये सभी बहनें तृप्त हो जाती थी। परंतु इनकी चाल-चलन, बोल-चाल इतने रॉयल थे कि बाहर वाला कोई सोच भी नहीं सकता था कि अंदर इतने कम साधन है। चेहरे पर बहुत रूहानियत थी। दीदी को बाबा पर गहरा निश्चय था। उस समय हम साकार सो निराकार, निराकार सो साकार मानते थे। बापदादा ही सब कुछ है, इसके अलावा और कुछ है ही नहीं, यही भाव था। निश्चय का अर्थ था, बाबा दिन कहे तो दिन, रात कहे तो रात। दीदी भाषण ज्यादा नहीं करती थी पर ब्राह्मण जीवन की मर्यादाओं धारणाओं में अडिग थी। मर्यादा विरुद्ध यदि कोई चलता तो समझौता नहीं करती थी। गलती करने वाले को सज़ा मिलनी ही चाहिए, यह उनका दृढ़ मत था।

मातृभाव

उन दिनों दोनों समय क्लास होती थी। दीदी सबसे पहले कापी पेन लेकर पहुँचती थी। मुरली बहुत ध्यान से सुनती थी। केवल सुनने तक नहीं थी वरन् आपस में मिलकर मुरली को दोहराती थी और बाबा के महावाक्यों को प्रैक्टिकल करती थी। दीदी में मातृ भाव बहुत था। परिवार में सबके साथ समान व्यवहार करती थी। धीरे-धीरे दिल्ली में जगह-जगह सेन्टर खुलते गए और दीदी सब जगह जाकर धारणा की क्लास कराती रही। दीदी सबका स्नेह बाबा से जुड़वा देती थी, यह उनकी बड़ी विशेषता थी।

मातेश्वरी जगदम्बा माँ के अव्यक्त होने के पश्चात् सन् 1965 से आप फिर से बापदादा के साथ मधुबन में रहकर यज्ञ की इंटरनल कारोबार को, पूरे प्रशासन को संभालने के निमित्त बनी। सन् 1969 में ब्रह्मा बाबा के अव्यक्त होने के पश्चात् दीदी और दादी की जोड़ी ने पूरे यज्ञ को संभाला, दोनों ने मिलकर मात-पिता के रूप में देश-विदेश के सर्व ब्राह्मण परिवार की निःस्वार्थ पालना की और पूरे विश्व में सेवाओं का खूब विस्तार किया।

******

दीदी के प्रति बाबा का सन्देश
(गुलजार दादी द्वारा)

जब मैं बाबा के पास गई, तो क्या देखा, दीदी जी बहुत आराम से विश्राम कर रही थी। बाबा की गोदी में उसका सिर था। जैसे बाबा की गोदी ही दीदी का तकिया था और उस ही तकिए पर आराम से विश्राम कर रही थी। जैसे ही मैं नजदीक गई, बाबा ने

दीदी को बुलाया और कहा, दीदी, देखो, मधुबन से आपके लिए याद-प्यार आया है। दीदी ने हमें देखा और लेटे हुए ही ऐसे हाथ किया, हाथ मिलाया और कहा, आप भी आओ, हमारे साथ आप भी बाबा के तकिए पर लेट जाओ। हम भी लेट गए। हमको कमी क्या थी, अच्छा ही था। दीदी ने कहा, देखो, ऐसा तकिया तो कभी किसी को नहीं मिला है, मुझे तो बाबा ने एक मास से तकिए पर ही सुला दिया है और मैंने बहुत अच्छे-अच्छे अनुभव किए हैं, तुमने भी वो अनुभव नहीं किए होंगे जो हमने किए हैं। हमने कहा, आप तो दीदी है, हम तो दीदी नहीं हैं। आपके अनुभव तो जरूर हमसे अच्छे ही होंगे।

फिर दीदी ने कहा, तुम कहोगी, हमको अनुभव सुनाओ पर अभी मैं नहीं सुनाऊँगी लेकिन सुनाती रहूँगी कि मेरे अनुभव क्या रहे। बाबा ने कहा, देखो, नम्बरवार तो है ही ना। सभी बच्चों में नम्बर वन तो दीदी, दादी है। जैसे दीदी, दादी नम्बरवन में हैं, तो नम्बर वन को अनुभव भी तो नम्बरवन होंगे ना। दीदी निमित्त मात्र शरीर में थी। बाबा ने कहा, जैसे तुम लोग ट्रांस में आती हो तो तुम्हारे शरीर का सांस तो चलता रहता है, निकल थोड़े जाता है, ऐसे ही दीदी का सांस तो चल रहा था। शरीर को तो सांस चलने के कारण डॉक्टर भी छुट्टी नहीं दे रहे थे, तो सांस तो चल रहा था परन्तु जैसे तुम लोग ट्रांस में जाते हो और शरीर का सांस चलता रहता है और तुम अपनी धुन में होती हो। जो देखती हो, उसी दुनिया में होती हो। इसी रीति से दीदी जी भी पूरा समय भिन्न-भिन्न अनुभव में विचित्र रूप की ट्रांस में थी, आप लोगों जैसी ट्रांस नहीं थी। मैंने कहा, वो भी हम सुनेंगे, वो ट्रांस कौन-सी होती है। बाबा ने कहा, जैसे नम्बरवन है, वैसे ही नम्बरवन अलौकिक, न्यारी, विचित्र रूप की ट्रांस का पार्ट रहा है। और कितना भी तुम लोग बुलाते थे, कोई-कोई टाइम दीदी सुनती भी रही है, ऐसे नहीं कि नहीं सुनती रही है, अंदर सुनती भी रही है। परन्तु, जैसे कोई अपनी मस्ती में होता है ना, बहुत मस्त, कोई अच्छी चीज़ किसको मिल जाती है और उसमें ही लगे होते हैं तो नीचे आने की जैसे दिल ही नहीं होती है। इसी रीति से वो सुनती जरूर थी, समझती भी थी, मुझे बुला रहे हैं, मेरा आह्वान कर रहे हैं।

(गुलजार दादी बीच में अपना अनुभव सुनाती है)

मुझे याद है, दीदी ने जिस दिन शरीर छोड़ा, उससे एक दिन पहले हमने डॉक्टर से छुट्टी ली थी कि आप दवा करो और हम दुआ करेंगे इसलिए हमारी कोई भी बहन वहाँ बैठकर 20-25 मिनट योग करेगी। डॉक्टर ने कहा, यह तो बहुत अच्छा। दवा के साथ अगर आप लोगों की दुआ भी हो तो हमको तो बहुत अच्छा सहयोग है। भगवती डॉक्टर ने कहा था, आप लोगों को कोई नहीं रोक सकता है, आप जरूर बैठो। उस दिन 11.30 बजे का समय था, हम लोगों ने रात और सुबह की प्राइवेट नर्स रखी थी। दिन की जो नर्स थी, वह भी दीदी से बहुत स्नेही थी और बड़े स्नेह से कहती थी, दीदी जी, दीदी जी, आओ, बुला रहे हैं, रोज ऐसे कहती थी। दीदी जी, आपको हमको आबू में ले चलना है, वो बार-बार यह कहती थी। पहले तो योग किया, फिर हमने कहा, दीदी को बुलाओ, हिलाओ थोड़ा क्योंकि उस दिन हमने देखा कि दीदी की आँखें तो खुली थी, पहले तो बन्द थी एक-दो दिन लेकिन

पीछे खुली थी और आपे ही खोली थी। ऐसे कभी-कभी दीदी की आँखों से लगता था, जैसे देख नहीं रही है। उस दिन भी लगा, दीदी देख रही है और आँखें (पलक) ऐसे-ऐसे हिल रही थी। बोलते हैं तो थोड़ा माथे पर निशान पड़ता है, ऐसे भी हो रहा था। हमने कहा, आज तो दीदी प्रैक्टिकल में जैसे हिला रही है। नर्स ने कहा, आप बोलो। हमने कहा, दीदी जी, आज शाम को आबू में जाना है आपको, अभी उठो। अभी आप उठेंगी तभी हम शाम को आपको ले चलेंगे। नर्स ने भी बोला, दीदी जी, टिकट आ गई है, आप उठो, उठो, उठो, अभी उठो, अच्छा नहीं उठ सकती हो तो हाथ हिलाकर बताओ कि आप सुन रही हो। तो दीदी जी में हाथ उठाने की ताकत तो थी नहीं, पर हाथ थोड़ा ऐसे किया (हिलाया) तो उस समय हमको ऐसा लगा कि आज दीदी जी हमारा आवाज सुन रही हैं, ऐसा लगा मुझे लेकिन कोई पूरा होश तो नहीं था, कमजोरी काफी थी, जिस कारण हिल नहीं सकती थी। (गुलजार दादी ने अपना अनुभव यहाँ पूरा किया)

तो बाबा ने सुनाया, बच्ची, बीच-बीच में सुनती जरूर रही है और महसूस भी किया है, इतने सब मेरे से मिलने आ रहे हैं पर इनको बाबा की, ब्रह्मा बाबा की याद जैसे काफी ज्यादा रही। तो बस ब्रह्मा बाबा के साथ मुझे वतन में मौज मनानी है, यह संकल्प इसका अंत तक था। ब्रह्मा बाबा के साथ इतना समय दीदी वतन में रही है, विचित्र ट्रांस के नजारे देखे, रूहरिहान की है और भिन्न-भिन्न अनुभव किये हैं बाकी आवाज जरूर सुना है और सेमी कांशस में जैसे कोई मस्त हो जाता है बहलने में, रूहरिहान में, इसी रीति से बहुत समय रहा। तो हमने कहा, बाबा, आप वतन में तो बुला रहे हो, पर यहाँ साकार सृष्टि में भी तो ऐसे हमारी बड़ी-बड़ी दादियों की आवश्यकता है ना। बाबा ने कहा, आवश्यकता तो बाबा भी जानता है तुम लोगों से ज्यादा लेकिन आवश्यकता है इसी शब्द में पक्की रहो। मेरे को पकड़ा। कहा, आवश्यकता है, कहती हो ना। मैंने कहा, हाँ, आवश्यकता है लेकिन साकार सृष्टि में है। तो कहा, मैं भी साकार सृष्टि की आवश्यकता कह रहा हूँ। मैंने कहा, बाबा, ऐसे नहीं, आप तो चतुराई से जवाब दे देते हो। साकार सृष्टि में आवश्यकता है लेकिन इसी चोले की आवश्यकता है। तो कहा, चोला बदलने में आप लोगों का क्या है, वो ही चोला थोड़े सारा टाइम पहना जाता है, बदला भी तो जाता है। मैंने कहा, यही तो हम लोग कहते हैं, आप बड़े चतुर हैं जो हम लोगों को ऐसे भोला बनाकर ऐसे चलते हो, कुछ नहीं, कुछ नहीं, फिकरात नहीं करो, और फिर कहते हो, ड्रामा। फिकरात नहीं करो वो तो सब ठीक है, हमने आपकी आज्ञा मानी, आपको भी हमारे स्नेह का रेस्पाण्ड तो आखिर देना चाहिए ना। तो बाबा ने कहा, तुम सबकी तरफ से वकील होके आई हो क्या? मैंने कहा, वकील तो होके नहीं आई लेकिन सबके संकल्प जो हैं वो तो आ रहे हैं ना और हमारे भी संकल्प हैं। बाबा ने कहा, देखो बच्ची, कहेंगे तो ड्रामा। फिर बाबा ने कहा, तुम कहेंगी, ड्रामा नहीं कहो, बाबा ड्रामा नहीं कहेगा तो क्या कहेगा? मैंने कहा, बाबा, या तो आप बता दो, ऐसा होने वाला है तो हम पहले ही तैयार हो जाते। कहा, कितना भी तैयार हो जाओ लेकिन होना सब अचानक है। यह तो आप परंपरा देखो परिवार की। अगर बताकर ही लेना होता तो पहले तो विश्व किशोर और मम्मा का जो

हुआ, वो पहले बताके फिर लेता। (अन्त तक भी देखो, मम्मा का पार्ट चला, अंत तक भी हम लोगों ने कहा, श्मशान से भी लौटके आयेगी मम्मा)। तो बाबा ने कहा, यह तो एक शुभभावना, शुभकामना की श्रद्धांजलि है। यह तो एन्ड तक देनी ही है। तो इसलिए आप यह क्यों कहते हो, बाबा पहले से बताओ। पहले से बताने का ड्रामा है ही नहीं, ना है, ना बताऊँगा। मैंने कहा, बताना ही नहीं है तो फिर हम चुप हैं लेकिन थोड़ा-सा इशारा। बाबा ने कहा, देखो तबीयत में थोड़ा-सा इशारा आप लोगों को दो दिन पहले दिया।

(पुनः गुलजार दादी अपना अनुभव सुनाती है)

हमको याद है, हम जा रही थी बॉम्बे में तीसरी बार। मधुबन में हम 5 बजे पहुँचे और अगले दिन रमेश भाई और हम बॉम्बे के लिए रवाना होने वाले थे। तो दादी ने मेरे को कहा, तुम बाबा से छुट्टी लेकर जाओ। मैं गई तो सही लेकिन उस समय मैंने दृश्य क्या देखा जैसे ऑप्रेशन थियेटर होता है, दीदी आराम से लेटी हुई हैं और बाबा ऐसे खड़े हैं। जैसे ऑपरेशन थियेटर में ऊपर एक सर्चलाइट होती है, चारों ओर लाइट ही लाइट थी, वातावरण बहुत बिजी था और बाबा इतना ऑफिशियल खड़ा था जो मेरी हिम्मत ही नहीं हुई पूछने की। पर दादी ने कहा, पूछकर जाना तो पूछना तो पड़ेगा ना। तो मैं हिम्मत रखके, धीरे-धीरे बाबा के आगे गई तो बाबा ने मेरे को देखा भी बड़ा ऑफिशियल तो थोड़ा हिम्मत मेरी कम हुई, फिर भी मैंने कहा, अभी पूछकर तो जाना है ना तो मैंने धीरे से कहा, बाबा, अभी मैं बॉम्बे जा रही हूँ। बाबा ने कहा, सहयोग के लिए पूछना होता है? तो मैं आ गई और बॉम्बे चली गई, थोड़ा-सा वातावरण और बाबा का जो ऑफिशियल रूप देखा ना, तब से लेकर हमको भी लगा कि कुछ केस थोड़ा ऐसा है। बाबा ने कहा, देख नहीं रही हो, बाबा इतना बिजी है। वहाँ जाते ही डॉक्टरों ने भी कहा, थोड़ा सीरियस है, आप भले बता दो। वो तो फिर टेम्परी मशीनों से लेवल में आ गया, वो बात दूसरी थी लेकिन इत्तला तो दो दिन पहले ही थी। बाबा ने तीन दिन पहले दी और डॉक्टरों ने दो दिन पहले दी।" (गुलजार दादी का अनुभव यहाँ पूरा हुआ)

तो बाबा ने कहा, बाबा पहले कभी बताता ही नहीं है। ब्राह्मण कुल की रीत-रस्म शुरू से देखो बच्चे, कैसे चली आ रही है। विश्व किशोर गया तो बताया था?

(पुनः दादी का अनुभव)

विश्व किशोर भाई का तो ऐसे ही हुआ था, बिल्कुल ऑप्रेशन ठीक हो गया, अभी निकलना ही है हॉस्पिटल से, अचानक ही हार्ट फेल हुआ और सेकंड में चल पड़ा। ब्रह्मा बाबा का तो आपको पता ही है। (दादी ने अपना अनुभव पूरा किया)

इसलिए बाबा ने कहा, यह तो ब्राह्मण कुल की रीत-रस्म जैसे शुरू से चली आ रही है तो बाबा, ऐसे कैसे बतायेगा। फिर बाबा ने कहा, अच्छा बच्ची, बाबा बताता, दीदी जाने वाली है, फिर आप क्या करते? मैंने कहा, दिल में थोड़ी तैयारी कर लेते, थोड़ी हिम्मत रख लेते, भई जाने वाली है, हम भी थोड़ी श्रद्धांजलि देते थे और तो कुछ नहीं कर सकते थे। अचानक का थोड़ा दूसरा लगता है। बाबा ने कहा, बच्ची, ड्रामा में ब्राह्मण कुल की ऐसी रीत-रस्म ही नहीं है। शाम को बाबा आयेंगे और सभी से मुलाकात करेंगे।

दीदी की विशेषतायें

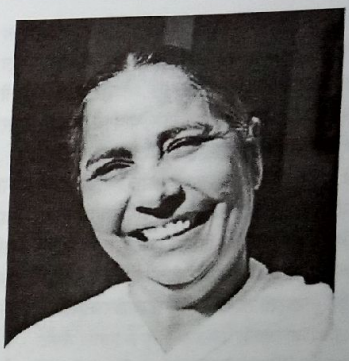

1. किसी भी कार्य को दीदी पहले खुद करती थी, फिर दूसरों से कराती थी। उनकी विशेषता थी, जो कहना है वो करना है। अपने कर्म से सिखाती थी। योग का चार्ट, यज्ञ की सेवा, सब एक्यूरेट रखती थी। सफाई में बहुत अच्छी थी। उनके संग मे रहकर ये सब बातें हम बहुत अच्छे से सीखे।
2. दीदी नंबर वन स्टूडेन्ट थी। उसने बाबा को कंप्लीट फॉलो किया। टाइम पर आना, लगन से पढ़ाई पढ़ना, प्वाइंटस नोट करना और बाबा जो कहे वो करना। अंतिम समय तक भी चश्मा, पेन और डायरी लेकर क्लास में आती रही। मुरली से अच्छे-अच्छे प्रश्न निकालती थी। फिर आपस में ज्ञान-चर्चा करती थी। रात को एक बहन को कमरे में बुलाकर कहती थी, आज जो प्रश्न निकाले, वो मुझे सुनाओ फिर जो पार्टी मिलने आती, प्रश्न पूछकर उनको बहलाती थी। श्रीमत पर चलने की बहुत बड़ी शक्ति थी दीदी के अंदर। सारा जीवन हमने देखा, दीदी कदम-कदम श्रीमत पर चली।
3. निश्चय का फाउंडेशन दीदी का बहुत गहरा था।
4. समर्पित थी तो संपूर्ण समर्पित थी। समर्पण के बाद कभी भी लौकिक घर की, दौलत की आकर्षण नहीं हुई।
5. दीदी को जो भी मिलती थी, उसको कहती थी, तुम तो मेरी सखी हो। छोटी हो या बड़ी हो, सखी कहकर उसका दिल जीत लेती थी।
6. हरेक से गुण उठाती थी। समझो किसी ने भाषण अच्छा किया तो झट दीदी का ध्यान जाता था कि देखो, इसने भाषण कितना अच्छा किया, समझो किसी ने अच्छा काम किया तो कहती थी, कितना अच्छा काम किया। फिर उसका उत्साह भी बढ़ाती थी, आफरीन भी देती थी। दीदी को देखकर हम सीखते थे कि छोटी-सी बच्ची का अच्छा काम देखकर दीदी ने कैसे उसे लिफ्ट दे दी। दीदी गुणचोर थी।
7. सौगात देने की भी दीदी में वंडरफुल कला थी। बाबा के घर में बच्चे तो आते ही रहते हैं, उन्हें मीठे वचन बोलकर, प्यार से सौगात देती थी। डायरी-पेन देती थी तो डायरी का पन्ना खोलकर पढ़ाती थी कि देखो कितना अच्छा स्लोगन है। फिर पूछती थी कि स्लोगन से क्या प्रेरणा मिली। ज्ञान देकर ज्ञानयुक्त सौगात देती थी।

8. अगर कभी किसी कारण से छोटी-मोटी भूल हो भी जाये तो छोटे के सामने भी अपनी भूल मानने में हिचकती नहीं थी जैसे दीदी कहती थी, मैंने यह बात इस भाव से कही, अगर आपको फील हुई हो तो भूल जाना।

9. दीदी सच्ची मस्तानी गोपिका थी। बाबा से इतना अटूट स्नेह था जो नज़रों में एक ही बाबा बसता था। दीदी के दिल में एक बाबा के सिवाय कोई भी नहीं समाया। बाबा के प्यार में कभी डांस करती तो सेमी ट्रांस में जाकर लवलीन (मगन) हो जाती।

10. दीदी सच्ची पतिव्रता, सतीव्रता, पिताव्रता थी। सदा तुम्हीं संग खाऊँ, तुम्हीं संग बैठूँ, तुम्हीं से रास रचाऊँ – ऐसी एकव्रता होकर, सदा एक के ही गुण गाते आज्ञाकारी, वफादार, ऑनेस्ट बनकर रही। कभी किसी वस्तु, व्यक्ति की तरफ आकर्षित नहीं हुई।

11. दीदी ने कभी बड़ी स्टेज पर जाकर प्रवचन नहीं दिये लेकिन एक-एक को जिगरी पालना देकर स्नेह की भासना दी। सभी का प्यार एक बाबा से जुड़ाया। हर एक को इतना नि:स्वार्थ प्यार दिया जो और किसी में उसकी बुद्धि न जाये।

12. दीदी की बुद्धि इतनी स्वच्छ स्पष्ट थी, जो सामने कैसी भी आत्मा आये, उसे फौरन परख लेती और उसकी हर आवश्यकता को पूरा कर उसे बाबा का बना देती। दीदी के बात करने का ढंग ऐसा था जो बड़े-बड़े वी.आई.पी. भी दीदी से मिलने के बाद रेग्यूलर स्टूडेन्ट बन जाते।

13. दीदी की दृष्टि में रूहानी जादू था। जो भी दृष्टि लेते, उन्हें वैकुण्ठ की दुनिया का साक्षात्कार हो जाता। योग की ऐसी स्थिति थी, आत्मिक स्थिति का ऐसा अभ्यास था जो नजर से निहाल कर हर आत्मा को तृप्त कर देती।

14. दीदी इतनी अंतर्मुखी रहती जो उनके मुख से कभी व्यर्थ बोल नहीं निकले। कभी किसी का परचिंतन, परदर्शन नहीं किया। उनके जीवन में गंभीरता के साथ रमणीकता का बैलेन्स था। वे सभी से अलौकिक चिटचैट करके खूब रिफ्रेश कर देती। उनके साथ बहुत रमणीकता से खेलपाल करती।

15. दीदी कभी सुनी-सुनाई एक तरफ की बातों के आधार पर निर्णय नहीं लेती थी। अगर कोई किसी की कम्प्लेन करता, तो उसी समय उनके सामने उसे भी बुलाकर फैसला करती और जिसे जो शिक्षा देनी होती उसे स्पष्ट शब्दों में दे देती।

16. दीदी कभी किसी बात में भयभीत नहीं होती थी। बाबा की शक्तियों में उनका अटूट विश्वास था। निश्चय अटल था इसलिए सदा निर्भय रही। यज्ञ के सामने कैसी भी परिस्थितियाँ आईं, उनमें सदा निश्चिंत रही, कभी क्यों-क्या का प्रश्न नहीं किया, सदा प्रसन्नचित्त रही। कभी उनके चेहरे पर चिंता के चिन्ह दिखाई नहीं दिये।

17. दीदी अंदर-बाहर स्वच्छ साफ थी। सच्चाई अति प्रिय थी, अगर कोई अपनी गलतियाँ सच्चे दिल से महसूस कर लेता तो उसे क्षमा कर देती और आगे बढ़ने की प्रेरणा देती। कथनी और करनी सदा समान रहीं। जो दूसरों को कहती, वह पहले खुद करके दिखाती।

18. दीदी यज्ञ की मालिक थी लेकिन उनके जीवन में बालक और मालिकपन का बैलेन्स देखा। जो यथार्थ बात होती वह मालिक बन सबके सामने रखती लेकिन अगर सबकी एकमत नहीं होती तो बालक बन उसे भूल जाती। कभी बहस या डिबेट में समय नहीं गंवाती थी। दीदी बालक बन बाबा की अंगुली पकड़कर यज्ञ की हर डिपार्टमेन्ट का चक्कर लगाती। बाबा उन्हें कहते, अभी आपने बाबा की अंगुली पकड़ी है, भविष्य में श्रीकृष्ण आपकी अंगुली पकड़कर चलेगा। ऐसा नशा है ना!

19. दीदी की रग-रग में यज्ञ के प्रति अटूट प्यार था, यज्ञ को किसी भी प्रकार की आंच न आये, उसके लिए बहुत ध्यान रखती थी और हर एक को यज्ञ की अमानत संभालने की, नि:स्वार्थ सेवा करने की प्रेरणा देती थी।

20. दीदी ने अनेकों का तन-मन-धन सफल कराया। दीदी ने यह परखकर कि यज्ञ को कौन संभाल सकते है, उन्हें समर्पित कराया और उनके दिल में यज्ञ के प्रति भावना भरी।

21. दीदी अलौकिक माँ के रूप में सबको स्नेह भी देती, हर प्रकार से यज्ञ वत्सों को खाने-पीने, पहनने, रहने की सुविधा देती, उनके स्वास्थ्य का ध्यान रखती, लेकिन कभी कोई ईश्वरीय नियम एवं मर्यादाओं में अलबेला होता, आलस्य करता या किसी मर्यादा को तोड़ता तो उसे फौरन सज़ा देती या डायरेक्ट बुलाकर इशारा देती।

22. दीदी स्वयं को ईश्वरीय मर्यादाओं का कंगन बांधकर रखती और सभी का उन पर ध्यान खिंचवाती। ब्राह्मण सो देवता बनने वाली आत्माओं को विशेष संगदोष, अन्नदोष न लग जाए इसलिए दीदी पहली शिक्षा यही देती कि संग से अपनी संभाल करना। पवित्रता के व्रत को कभी खंडित होने नहीं देना। ब्रह्मचर्य के साथ ब्रह्माचारी बनकर रहना।

23. दीदी का ध्यान यज्ञ की आलराउण्ड सेवा पर रहता, वे मुरली क्लास के पश्चात् स्वयं भण्डारे में चक्कर लगाती और कुछ समय सबके साथ बैठकर सब्जी काटने में मदद करती। एक्यूरेसी उनके जीवन में कूट-कूटकर बाबा ने भरी थी। वे बाबा के अव्यक्त होने के बाद सभी पत्रों का जवाब खुद बैठकर लिखती या लिखवाती। कभी दीदी ने कोई भी सेवा पैन्डिंग नहीं रखी। जो सेवा जब जरूरी है, उसे उसी समय अलर्ट बनकर किया और कराया।

24. स्वयं सर्वशक्तिवान बाबा हमारा साथी है, दीदी सदा इसी स्वमान में रहती और सबको दिल से सम्मान देती। अगर कोई अपनी सेवा समय प्रमाण सच्चाई से करता तो उसे इतना ही सम्मान देती, खातिरी करती, विशेष सौगात देती। दीदी के दिल में यज्ञ के सच्चे सेवाधारियों प्रति अति रिस्पेक्ट था।

25. दीदी स्वयं योग के गहरे अनुभवों में सदा रहती और अमृतवेले विशेष खुद सबको संगठित रूप में योग की ड्रिल कराती, साथ-साथ कर्म करते कैसे योग में रहना है, उस पर भी ध्यान खिंचवाती। अव्यक्त रूप से यज्ञ का कारोबार निर्विघ्न रूप से चलाने के लिए दीदी बीच-बीच

[illegible]

दादी प्रकाशमणि

[illegible]

कभी किसी से डांट नहीं खाई

स्कूल में रिलीजियस पीरियड में मैं हमेशा फर्स्ट आती थी, मुझे कम से कम 75% या 80% मार्क्स अवश्य मिलते थे। मुझे पढ़ाई से भी बहुत प्यार था। हमेशा पहला, दूसरा या तीसरा नंबर लेती थी इसलिए स्कूल में सभी टीचर्स का मुझसे बहुत प्यार था। खेल-कूद में इतना समय नहीं देती थी। लौकिक घर में माता-पिता और मैं – हम तीन ही थे। बहनें बड़ी थीं, वो अपनी ससुरालों में रहती थी। मैं ना कभी बाज़ार की कोई चीज़ खाती थी, ना कोई ऐसी सहेलियाँ थी। फैशन का शौक नहीं था। कोई बाहर का बुरा संग मुझे नहीं था। सहेलियाँ आती भी थी तो पढ़ाई के नाते से। एक बड़ा मैदान था, वहाँ गर्मी में शाम को थोड़ा खेलते थे, नहीं तो घर में ही रहते थे। घर में माता-पिता भी सत्संग में रुचि रखने वाले थे। मुझे स्मृति नहीं कि कभी माता-पिता की डांट खाई हो या कभी माँ ने थप्पड़ मारा हो या कभी घर में लड़ाई हुई हो, कभी नहीं। गुस्सा कभी घर में नहीं होता था। तीसरी कक्षा से छठी कक्षा तक हमने साल में दो-दो परीक्षायें दी। हर छह मास में मैं अगली कक्षा में चली जाती थी। जब ज्ञान में आई तो 14 साल की थी और मैट्रिक पढ़ ली थी। मुझे याद नहीं कि मैंने कभी झूठ बोला हो या चोरी की हो। मुझे स्मृति नहीं कि मैंने मुख से कभी गाली बोली हो या किसी ने मुझे बोली हो, कभी नहीं। मैंने कभी सिनेमा नहीं देखा। इसलिए बुरी बातों का कभी असर नहीं रहा।

श्रीकृष्ण के दीदार की इच्छा

लौकिक बाप स्वामी गंगेश्वरानन्द के चेले थे। उनके अंदर पवित्रता का बहुत पहले से संस्कार था। वो ज्योतिषी भी थे। भले ही बिजनेसमैन थे पर शाम को घर आने पर शास्त्रों की कोई ना कोई बात अवश्य बताते थे। स्वामी जी के पास जाते थे तो हमें ज़रूर लेके जाते थे। ज्योतिषी होने के कारण उसको मालूम था कि यह बेटी शादी नहीं करेगी, मीरा बनेगी। भले ही उन्होंने हमें कारण नहीं बताया पर सबको कहते थे, यह बेटी शादी नहीं करने वाली है। लौकिक बहनों के ससुराल पक्ष के लोग फैशनेबल और खाने-पीने वाले थे। वे मुझे बुलाते थे क्योंकि घर में छोटी मैं ही थी। वे सोचते थे, घुमाने-फिराने के लिए यही एक है पर मैं उनके संग में जाती नहीं थी। वे कहते थे, आज यहाँ चलो, वहाँ चलो, मैं कहती थी, मेरा तो मन्दिर में जाने का समय है। कभी कहते थे, आओ, हमारे घर रहो। मुश्किल से कभी आधा दिन जाती थी, फिर भाग आती थी। कहने का भाव है कि हम छोटेपन से ही ऐसे संस्कारों वाले थे जो बाद में उन संस्कारों को बहुत मदद मिली। मुझे याद नहीं कि मैंने कभी माँ को कहा हो कि मुझे इस फ्राक की दिल है, लेके दो। मैंने कभी यह कहा हो कि यह खाने की दिल है, बनाके दो। छोटेपन से यह स्लोगन याद रहा – "माँगने से मरना भला", "इच्छा मात्रम् अविद्या"। ज्ञान क्या होता है, यह मैं नहीं जानती थी पर इच्छा रखना अज्ञान है, यह मैं जानती थी। मैं कहती थी, गोपियाँ थोड़े कभी इच्छा रखती थी, मीरा थोड़े इच्छा रखती थी, सबको देना होगा, आपे दिलायेगी, खिलायेगी, मैं क्यों इच्छा रखूँ, मैं क्यों माँगूँ? कभी लोभ-लालच नहीं आया। छोटेपन से मेरे दिल में दो इच्छायें जरूर थीं कि या तो मैं विष्णु का दीदार करूँ या श्रीकृष्ण का

दीदार करूँ। कब मुझे भगवान विष्णु का या भगवान कृष्ण का दर्शन होगा, यह मुझे बहुत लगन थी। उस समय तो कृष्ण को भगवान मानते थे।

श्रीकृष्ण का दीदार हुआ

जब मैट्रिक पढ़ रही थी, सारे सब्जेक्ट इंग्लिश में थे, वो स्कूल था ही इंग्लिश पढ़ने का, मैं एक साल उसमें पढ़ी। उसी स्कूल में मम्मा मेरे साथ थी। एक ही बैंच पर हम बैठते थे। मम्मा से क्लासफैलो जैसा स्नेह था। मम्मा बहुत मॉडर्न, फैशनेबल थी। बड़े-बड़े बाल थे, बहुत सुन्दर थी, बॉम्बे की इंग्लिश पढ़ी हुई थी। मम्मा बहुत स्वीट थी, हमें बहुत अच्छी लगती थी। सन् 1936 की बात है, दशहरे और दीवाली की छुट्टियाँ हुई थी। तीन सप्ताह की छुट्टियाँ होती थीं, इस कारण बहुत समय मिलता था। एक सुबह की बात है, हम सोई पड़ी थी अपने पलंग पर। दीवाली के समय थोड़ी ठण्डी शुरू हो जाती है। मैंने अपने सामने एक सुन्दर, बड़ा शाही बगीचा देखा। बगीचे में बहुत सुन्दर लाइट-लाइट चारों तरफ थी। दूर-दूर बड़े फूल-फल लगे थे। (एक बात बीच में सुनाती हूँ, मैं चाहती थी, ऐसा बगीचा मैं कभी इस दुनिया में देखूँ। एक बार मैं ऑस्ट्रेलिया में गई तो वहाँ एक बड़ा शाही बगीचा देखा, ऐसा मानो जिसमें ग्रीन गलीचा बिछा हो। मैंने कहा, ऐसा तो मैंने स्वर्ग का बगीचा देखा था) तो सुबह-सुबह जो बगीचा देखा था, उसके बीच में एक लाइट आई, उस लाइट के बीच छोटा-सा श्रीकृष्ण, बांसुरी लेकर, नाचता-कूदता, बहुत दूर से मेरे समीप आया। मुझे बहुत खुशी हुई। मैं नींद में थी। मैं खुशी से देखती रही। उसी के पीछे सफेद वेशधारी फरिश्ता खड़ा था। हम छोटेपन में सत्यनारायण का व्रत रखते थे और उस टाइम में सुनाते थे, भगवान बूढ़े वेश में आते हैं। जब श्रीकृष्ण के साथ सफेद वेशधारी फरिश्ता देखा तो मुझे ऐसा लगा जैसे भगवान सत्यनारायण को देख रही हूँ। मुझे श्रीकृष्ण भी प्यारा लग रहा था, उसे देखूँ फिर सत्यनारायण को भी देखूँ। मुझे दोनों बहुत प्यारे लगे। इतने में जाग पड़ी, दोनों गायब हो गये।

मुझे लगन लगी कि फिर दीदार हो

मैंने बचपन में सुना था, भगवान का दीदार हो तो किसी को बताना नहीं चाहिए, यह गूंगे की मिठाई अंदर खानी चाहिए। मैंने किसी को बताया नहीं पर अंदर बड़ी इच्छा थी कि फिर मैं कब देखूँ। फिर दिखा ही नहीं। फिर कोठे पर बैठ गई श्रीकृष्ण की माला लेकर, श्रीकृष्ण, तुम फिर आओ, फिर आओ, आये नहीं। बहुत माला फेरूँ, ध्यान करूँ मूर्ति का, मंदिर में जाऊँ, आये ही नहीं लेकिन मेरी दिल बहुत थी। मेरी एक क्लासफैलो थी, वह ओम मण्डली में जाती थी। दो-तीन दिन बाद, मैं उसके घर गई। वह ध्यान में ऐसी बैठी थी कि आँखें ही ना खोले। उसका नाम था लीला। मैं कहूँ, लीला, लीला, बस वह मुसकराए, यूँ हाथ उठाये पर जवाब ना देवे। आँसू बहाए पर मुझे जवाब ना दे। मुझे मालूम नहीं था, यह क्या है? मैंने उसकी मम्मी को कहा, मुझे तो लीला ने बुलाया है पर बात ही नहीं करती है, ठीक है, मैं चली जाती हूँ। मम्मी ने कहा, बेटी, मुझे भी पता नहीं है, जब देखो ध्यान में बैठी रहती है, क्या इसको हुआ है, पता नहीं है। दो-तीन दिन से इसकी यह हालत है। फिर उसने आँखें खोली, बोली, चलो रामा (मेरा लौकिक नाम), तुमको

श्रीकृष्ण का दीदार कराके लाती हूँ। मैंने कहा, लीला, क्या नशा चढ़ा है! श्रीकृष्ण का दीदार कोई मासी का घर है! कहती है, कृष्ण का दीदार कराऊँगी, मैं कितनी पूजा करती हूँ, होता ही नहीं है, अब तुम मुझे दीदार कराओगी! जैसे बच्चियाँ हँसी-मज़ाक करती हैं, ऐसे मैंने कहा। बोली, हाँ, कराऊँगी। मैंने कहा, चलो। बोली, आज तो शाम हो गई, कल कराऊँगी। बाबा ने पहले-पहले सत्संग किया भाऊ विश्व किशोर के घर, अपने घर नहीं। वो घर पाँच-सात मिनट की दूरी पर था। बाबा सुबह 10 बजे सत्संग करता था क्योंकि भाई लोग तो दुकानों आदि पर जाते थे, मातायें 10 से 11 बजे तक फ्री होती थी। थोड़ा बड़ा कमरा था, इधर पलंग, उधर पलंग, बीच में गद्दी थी, वहाँ सत्संग होता था। जैसे पाठशाला शुरू करते हैं ना, ऐसे यज्ञ की स्थापना गीता पाठशाला की तरह हुई है।

पिताजी ने ओम मण्डली में जाने की आज्ञा दी

हमारा नियम था, मम्मी-पापा की छुट्टी के बिना कभी दरवाजे से बाहर नहीं जाती थी। कभी मम्मी-पापा को सामने जवाब नहीं देती थी, आज्ञाकारी रहती थी। मम्मी-पापा का प्यार भी रहता था, कंट्रोल भी रहता था। रात को जब पापा घर पर आये तो बोले, बेटी, तुमको छुट्टी है। यहाँ एक दादा है, वे गीता पर सत्संग करते हैं, मातायें जाती हैं, सुना है, थोड़ी ओम की ध्वनि करते हैं, स्कूल तो तुम्हारा बंद है, क्यों नहीं सत्संग करने जाओ। मैंने कहा, वो दादा हैं कौन? फिर मुझे बताया। मैंने भी कहा, आज मैं लीला के पास गई थी, उसने भी कहा, चलो, वहाँ श्रीकृष्ण का दीदार भी होता है। पापा ने कहा, हाँ, ओम ध्वनि भी होती है, तुम जाओ बेटी, जाओ। तुम्हारा कृष्ण से प्यार है ना, जा बेटी। फिर मैं सुबह में गई।

मैं ध्यान में चली गई

जब मैं सत्संग में पहुँची, बाबा ओम की ध्वनि लगा रहे थे, वह ध्वनि बहुत अच्छी थी। मेरी दृष्टि बाबा के मस्तक पर पड़ी। मुझे लगा, मस्तक से लाइट निकल रही है। मैंने मन मे कहा, यह तो सत्यनारायण भगवान जैसा ही है, जो सपने में आया था। यह सपने में क्यों आया, यह कौन है, यह सत्यनारायण भगवान है क्या? ऐसे सोचते-सोचते मैं ध्यान में चली गई। वो ही श्रीकृष्ण, वो ही बगीचा, वो ही लाइट, वो ही सत्यनारायण भगवान – बिल्कुल जो सपने में देखा, वही फिर देखा और कितनी ही देर ध्यान में बैठी रही। कब सत्संग पूरा हुआ, मुझे पता नहीं। सारे उठ गये। कोई ने मुझे उठाया होगा। फिर कुछ मैं जागी। मैं खो गई कि मैं कहाँ बैठी हूँ, सब तो चले गये, मुझे आई लज्जा, मैं लज्जा के मारे उठकर भागने लगी। बाबा दूसरे कमरे में बैठे थे, मुझे बुलाया। मुझे विचार आया, यह सत्यनारायण भगवान है, इनको देखूँ पर बाहर से मैं डरूँ कि बाबा के पास कैसे जाऊँ। बाबा ने बुलाया, आओ बेटी, आओ। तब भी मैं ध्यान में ही थी। बाबा के पास गई तो भी सत्यनारायण भगवान को ही देख रही थी और घड़ी-घड़ी श्रीकृष्ण भी सामने आ रहा था। ऐसा ही मैं देखती रही। घर आई तो भी ध्यान में। रात को नींद नहीं आई। फिर तो मैं छत पर अकेली बैठ जाती थी और घंटों ध्यान में चली जाती थी। मेरी माँ समझे, पता नहीं बेटी को क्या हुआ है। न खाती है, ना पीती है, ना बोलती है, बस, जब देखो, ऐसे समाधि

लगाकर बैठी रहती है। वो मुझे उठाती थी पर मेरा मन होता था, मैं बाबा के पास जाऊँ पर सत्संग में तो 10 बजे से पहले कोई जाता ही नहीं था। वहाँ भी जाऊँ तो ध्यान में बैठी रहूँ। फिर घर में आऊँ तो भी ध्यान में बैठी रहूँ। ऐसे करते, कितने दिन तो मैं ध्यान में ही रही, बस, स्वर्ग को, श्रीकृष्ण को, सत्यनारायण को, बाबा को, गोप-गोपियों को, रास को देखती रहती थी। खूब मजा आता था। खूब मस्ती में रहती थी। लगन बढ़ती रही। पापा भी पूछता था, क्या हुआ है? मैं कहती थी, कुछ नहीं, कुछ नहीं। फिर इतने में दीवाली आई, ये बातें दीवाली से दो-तीन दिन पहले की है, इसलिए मैं कहती हूँ, मेरा अलौकिक जन्म दीवाली का है। फिर दीवाली की छुट्टियाँ पूरी हुईं, मन ही ना करे स्कूल में जाने का पर स्कूल में तो जाना ही था। स्कूल में मम्मा भी आई। हमने मम्मा को बताया। उस समय मुझे मम्मा से भी ज्यादा लगन थी। मैंने घर आकर कहा, मैं स्कूल में नहीं पढ़ूँगी। पापा आँख दिखाने लगे। मैंने कहा, मै तो बनूँगी गोपिका, मुझे तो राधा-कृष्ण के साथ रहना है, मुझे स्कूल जाना नहीं है। अब वो जानते तो थे, कहा, अच्छा बेटी, जैसी तुम्हारी इच्छा। मुझे तो खुशी हो गई, अच्छा हुआ, छुट्टी मिली। दीवाली के बाद छमाही पेपर होते हैं स्कूल में। मैंने कहा, मुझे पेपर देने नहीं हैं। मेरे लिए तो बाबा, ओममण्डली, बस, यही सब कुछ हो गया।

ज्ञान की मस्ती चढ़ी

बड़ी दीदी मेरी चाची लगती थी। उनका घर हमारे मोहल्ले में था। उनको मेरे से भी ज्यादा लगन थी। वो तो मेरे से भी पहले ज्ञान में आई थीं। क्वीन मदर अपने घर में थी, दीदी अपनी ससुराल में थी। हम और दीदी बहुत मस्ती मे थी, ओम मण्डली मे साथ-साथ आती-जाती थी। अर्जुन दादा की माँ भी मेरी चाची थी। आनन्द किशोर मेरा चचेरा भाई है। हम सब एक ही मोहल्ले में रहते थे। हम सब मिलकर बाबा की बातें करते थे, दूसरी कोई दुनिया नहीं। मम्मी-पापा को भी फेथ था कि चाची (दीदी) के साथ आती-जाती है। हमारी तो लगन बढ़ती गई। फिर तो बाबा ने भाषण, गीत सब सिखाया। ज्ञान की इतनी मस्ती थी जो दुनिया की अन्य कोई बात याद ही नहीं रही।

पेंट-कोट वाले से शादी करेगी या पीताम्बरधारी से

हम छोटे थे, रंगीन कपड़े पहनते थे। सिन्धियों की लड़कियाँ जेवर भी पहनती थी। बाबा का घर नीचे बहुत बड़ा था, ऊपर छत पर जैसे बरसाती कमरा होता है, ऐसे बाबा का एकांत का कमरा था, बाबा उस कमरे में ऊपर रहते थे। एक दिन बाबा वहाँ थे और हम तीन-चार सखियाँ उधर आ रही थीं। लीला, किकनी और मैं थी। बाबा का घर बिल्कुल बाज़ार के बीच में था। दुकान वाले भी यूँ-यूँ देखते थे। हम नीचे पहुँचे तो बाबा ने कहा, बच्चियों को सीधा ऊपर भेज दो। हमें मन में आया, बाबा ने ऊपर क्यों बुलाया, हम तो डर गईं, पता नहीं क्या काम है बाबा को। बाबा के पास पहुँचे। बाबा ने पूछा, बेटी, तुमको पेंट-कोट वाले से शादी करनी है या पीतांबर वाले से? यह सीधा सवाल बाबा ने हमारे से शुरू किया। पहले तो हम समझे नहीं, पेंट-कोट क्या होता है, पीतांबर क्या होता है, शादी की बात क्यों बाबा पूछता है। फिर पूछा, मैं

पूछता हूँ, तुमको किसी लड़के से शादी करनी है या श्रीकृष्ण से? मैंने कहा, मेरी तो गिरधर से शादी हो गई, मुझे किसी लड़के से थोड़े शादी करनी है। बाबा ने कहा, फिर यह जेवर क्यों पहना है, रंगीन कपड़ा क्यों पहना है? यह वो पहनते हैं जिनको लड़कों को पसंद करना होता है। वो दिन, यह दिन, ना हमने जेवर पहना, ना रंगीन कपड़ा पहना।

बोर्डिंग खोलने की योजना

शुरूआत हुई दीवाली पर, बाबा गये कश्मीर में अप्रैल या मई में। फिर बाबा तीन मास तक आये ही नहीं। बाबा ने ज्ञान में आने से पहले लौकिक स्कूल के लिए एक बिल्डिंग बनाई थी, उसे ही ओम निवास कहा गया। स्कूल तो थोड़ा दूर बनाया जाता है ना। उन दिनों ब्रिटिश राज था, फॉरेनर्स के बंगले थे, कलेक्टर आदि के, उस तरफ यह स्कूल की बिल्डिंग थी। बाबा जब कश्मीर गया तो मम्मा को ही हेड बनाकर गया था। मम्मा हम सबसे बहुत होशियार थी, बहुत मीठा बोलती थी। बहुत अच्छा भाषण करती थी, बाजा बजाती थी। गाने में, डांस में बहुत होशियार थी। बॉम्बे की सीखी हुई थी। तो बाबा ने कश्मीर से लिखा, ओम राधे, मैं तब आऊँगा हैदराबाद में जब सत्संग में आने वाली माताओं के बच्चे-बच्चियों को, जो स्कूल बन रहा है, उसमें रहने-पढ़ने के लिए बोर्डिंग खोलने की पूरी तैयारी कर लेंगी आप। कान्ट्रेक्टर से बिल्डिंग हाथ में लो, मुझे समाचार दो, फिर मैं आऊँगा। बाबा एक मास के बदले तीन मास जाकर कश्मीर बैठ गया। हम इतने पागल कि रोएँ, हमारी रात क्या थी, दिन क्या था, बस बाबा, बाबा और बाबा। हमारे नयनों में बाबा कभी इस रूप में आता ही नहीं था। बाबा को देखना माना कृष्ण को देखना। हमारी आँखों में कृष्ण ही बसता था तो जिनकी आँखों में कृष्ण बसे, वे मस्तानी नहीं होंगी तो क्या होंगी?

बाबा ने विल की

फिर मम्मा ने पुरुषार्थ किया, मीटिंग की, मीटिंग में हम, दीदी आदि सब थे। हम लोगों ने कहा, हम स्कूल को चलायेंगे। फिर बाबा को लिखा, बाबा आया। फिर स्कूल की चीज़ें जैसे बैंच, पुस्तकें, कुर्सी, मेज़ सब खरीद किया। सन् 1937 में दीवाली के दिन बाकायदे हमने बोर्डिंग का उद्घाटन किया। बिल्डिंग में तीन हिस्से थे। दो हमारे लिए थे, एक में बाबा रहता था। लगभग 50 बच्चे थे। पाँच से दस वर्ष तक के थे। बाबा का लौकिक बेटा नारायण भी उन बच्चों में था। हम 14 वर्ष की थी, पढ़ाते थे 9-10 वर्ष वालों को। हमारी डिग्री कुछ नहीं, पढ़ाया सब कुछ। फिर एक साल के बाद बाबा ने विल किया। आठ के नाम पर किया – दीदी, अर्जुन की माँ रूक्मिणी, रूपवन्ती (मम्मा की मामी), महेन्द्र, मम्मा, प्रकाशमणि...। उस विल में जसोदा, बृजेन्द्रा, बाबा का बेटा आदि सबके साइन थे। बाबा की यह विशेषता देखो, विल में लौकिक वाले किसी को नहीं रखा।

हम सब कराची गये

बाबा एक चतुराई करते थे। हैदराबाद और कराची के बीच ट्रेन से तीन घंटे का सफर था। ओम निवास स्टेशन के बिल्कुल पास था। हैदराबाद से ट्रेन रात को दो बजे जाती थी। बाबा अपने पास पैसा नहीं रखते थे पर बाबा को पता तो होता था, पैसा कहाँ

रखा है। उस समय दो रुपये टिकट के होते थे, बाबा दो रुपये उठाते थे, हम सोये पड़े रहते थे। बाबा चुपचाप दरवाजा खोलकर चले जाते थे कराची। हम नींद से उठते थे तो बाबा है ही नहीं। अरे, कहाँ गयो हमारो गिरधर। फिर सब रोने लग जाते थे। बाबा अकेले जाते थे। कराची में शान्तामणि दादी के पिता का घर था। वो समझो अपना ही बंगला था। वहाँ से जाके चिट्ठी लिखते थे, बेटी, मैं दो दिन में आता हूँ। फिर वहीं रहकर ही बाबा ने कराची में बोर्डिंग खोलने का प्रबंध किया। पूरे एक साल के बाद हम कराची गये। फिर हैदराबाद लौटे ही नहीं। यह थी हमारे बचपन की कहानी।

******

राजयोगिनी दादी प्रकाशमणि के प्रति **राजयोगिनी दादी जानकी जी** स्नेह और सम्मान भरे उद्गार इस प्रकार व्यक्त करती हैं –

दादी जी बड़े विशाल दिल वाली, रहमदिल और स्नेह की सागर थीं। सदा सतगुरु बाबा की श्रीमत को सिरमाथे रख दादी जी संपन्न और संपूर्ण बन गई। प्यारे बाबा ने मातेश्वरी जगदंबा पर ज्ञान का कलश रखा। उन्हें पालना के निमित्त बनाया। जब बाबा अव्यक्त हुए तो दीदी मनमोहिनी और दादी जी को निमित्त बनाया। दीदी अव्यक्त हुई तो दादी ने सब पार्ट बजाया। बाबा ने दादी को मीठा नाम दिया, 'कुमारका'। यह बाबा का प्यारा नाम था। आज दादी 'जय जगजननी, सब दुखहरनी' बन गई है। जैसे बाबा ने किया, वैसे दादी ने किया। कैसे किया, यह क्वेश्चन नहीं। हम भी कर सकते हैं। करना है तो अब करना है, कल पर नहीं रखना है। वाह दादी वाह! वाह बाबा वाह! वाह हम सबका भाग्य वाह! हम सबने दादी को आँखों से देखा है, बुद्धि से समझा है, दिल से अनुभव किया है। अब जी चाहता है कि हम भी दादी जैसा बन जायें।

दादी सदा ही सच्ची, मीठी कुमारी रही, अति पवित्र कुमारी। दादी को कुछ भी भूलना नहीं पड़ा। एक सेकंड में देह सहित सबसे नष्टोमोहा बन गई। हम बाबा के थे, हैं, फिर भी होंगे, यह निश्चय करने में कोई टाइम नहीं दिया जिस कारण फाउण्डेशन मजबूत रहा। दादी को 'मुन्नी मम्मा' कहते थे। उम्र में छोटी थी पर पालना सबकी बड़ी अच्छी करती थी। सन् 1977 में जब दादी लंदन आई तो सबको ऐसे अनुभव हुआ

विदेशी भाई-बहनों के साथ दादी जी

जैसेकि बाबा आया है। उस समय 70-80 भाई-बहनें थे। दादी ने कहा, ये सब पूर्वजन्म में भारतवासी थे, सेवा अर्थ यहाँ जन्म लिया है।

मैंने आँखों से देखा, दादी का स्वयं में विश्वास बहुत था। कुछ भी बात हो गई, स्वयं में विश्वास कम नहीं हुआ। बाबा में अति विश्वास और एक-दो में भी विश्वास बहुत रखा। दादी ने सबको आगे रखा। 'पहले आप' करने में बड़ी दिल, सच्ची दिल थी। कराची में जो ऑफिस थी, उसमें मम्मा बैठती थी, उस समय बाबा विश्वसेवा का डायरेक्शन दादी को देता था। झाड़ और गोले का चित्र बना तो दादी को बाबा ने कहा, ये फलानी-फलानी यूनिवर्सिटी में जाने चाहिएँ। बाबा ने जो डायरेक्शन दिया, दादी ने उसे फौरन अमल में लाया। जो सेवा का इशारा मिला, उसमें दादी ने कुछ भी सोचा नहीं, तुरंत किया। दादी, दीदी, भाऊ– इन्होंने कभी अपना नाम नहीं लिया। सदा इन्हों के मुख से निकलता, बाबा ने करा लिया। ऐसे बहुत कुछ देखने, सीखने, अनुभव करने को मिला है। हमारे जो बड़े निमित्त रहे हैं, उनकी दुआ अभी तक काम कर रही है। हमारे पूर्वज जो जड़ों में बैठे हैं, उनसे सारे वृक्ष को शक्तियों का जल मिल रहा है।

******

दादी हृदयमोहिनी जी दादी जी के बारे में इस प्रकार लिखती हैं –

साकार बाबा इस बात पर बहुत ध्यान देते थे कि हर बच्चा, मुरली (ईश्वरीय महावाक्य) बहुत ध्यान से सुने। यदि मुरली सुनते समय किसी बच्चे को उबासी आ जाती थी तो बाबा तुरंत कहते थे कि इसको उठाओ, नहीं तो वायुमण्डल पर बुरा प्रभाव पड़ेगा। बाबा मिसाल देते थे कि जैसे सीप पर जल की बूँद गिरती है तो मोती बन जाती है, इसी प्रकार आपकी बुद्धि पर भी ये ज्ञानामृत की बूँदें पड़ रही हैं, एक-एक बूँद ज्ञान-मोती का रूप धारण करती जा रही है। अत: हमारे में इतने मोती बाबा डालते हैं, भरपूर करते हैं मोतियों से, तो हमारा इतना ध्यान होना चाहिये। बाबा के सामने मुरली सुनने बैठे बच्चों में से, यदि किसी ने बाबा की मधुर शिक्षाएं सुनकर चेहरे द्वारा प्रतिक्रिया प्रकट नहीं की तो बाबा कहते थे, यह कौन बुद्धु सामने बैठा है। इतना ध्यान बाबा बच्चों पर देते थे। बाबा का प्यार भी भरपूर था तो शिक्षायें भी भरपूर देते थे। मान लो, किसी बच्चे ने कोई ग़लती कर दी तो बाबा उसे व्यक्तिगत रूप से बुलाकर ग़लती नहीं सुनाते थे। मुरली में ही सब सुना देते थे कि महारथी बच्चे भी ऐसे-ऐसे करते हैं, बाबा के पास रिपोर्ट आती है। ग़लती करने वाला तो समझ जाता था कि यह बात मुरली में मेरे लिए आई है। मुरली के बाद बाबा के कमरे में हम मुख्य-मुख्य भाई-बहने जाते थे जिसे चैम्बर नाम से जाना जाता था। बाबा अपनी गद्दी पर विष्णु मुआफिक लेट-से जाते थे और हम सभी बच्चे पास-पास बैठ जाते थे। मान लो, बाबा ने मुरली जिस बच्चे के लिए चलाई, वह भी बाबा के सामने चैम्बर में आ गया तो उसका मन तो अंदर से खा रहा होता था कि बाबा अभी भी कुछ कह ना दें पर बाबा कभी नहीं कहते थे। जो कहना होता था, मुरली में ही कह देते थे। और यदि, वह हिम्मत करके बाबा के बहुत करीब भी चला जाये तो भी बाबा और ही प्यार करते थे। मुरली के बाद उस बात को कभी नहीं दोहराते थे कि बच्चे, तुमने अमुक ग़लती की है। फिर वह बच्चा भी भूल जाता था। इस प्रकार

बाबा बहुत प्यार करते थे, ग़लती करने वाला बेधड़क होकर बाबा के सामने जा सकता था, पर उसको स्वयं ही इतना अहसास हो जाता था कि भविष्य में उस भूल को कभी नहीं दोहराता था। बाबा हँसा-बहला कर उस बात को समाप्त कर देते थे पर वह बच्चा पूरा बदल जाता था।

दादी जी दिल में कोई बात नहीं रखती थी

ऐसा ही दादी जी का स्वभाव था। यदि किसी छोटी बहन ने दादी जी को सुनाया कि आज मुझे बहुत रोना आया, फीलिंग आई आदि-आदि तो दादी कभी भी उसकी बात बड़ी बहन को सुनाकर उलाहना नहीं देती थी कि तुमने छोटी बहन के साथ ऐसा-वैसा क्यों किया। हाँ, दादी जी उस छोटी बहन को ऐसा प्यार देती थी जो उसके मन को पूरा ठीक कर देती थी। पर बड़ी बहन को बुलाए, फिर कहे, तुमसे छोटी बहन नाराज है, क्या करती हो, कभी नहीं। दादी क्लास कराती थी, सब कायदे-कानून समझाती थी पर व्यक्तिगत मिलन में सीधा नहीं कहती थी कि तुमने ऐसा किया है। इस प्रकार, दादी भी दिल में कुछ नहीं रखती थी। क्योंकि दिल में कोई भी बात घर कर जाए तो खुशी गुम हो जाती है। बाबा ने कहा, जीवन भले जाए पर खुशी न जाए।

******

ब्रह्माकुमार रमेश शाह भाई जी, राजयोगिनी दादी प्रकाशमणि के बारे में अपने उद्‌गार इस प्रकार व्यक्त करते हैं –

दादी प्रकाशमणि जी ने मुझे तथा मेरे लौकिक परिवार को अनेक रीति से संवारा और आज मैं तथा मेरा लौकिक परिवार जो भी ईश्वरीय सेवायें कर रहे हैं, उसके पीछे उनकी पालना का महत्त्वपूर्ण स्थान है। बातें तो अनेक हैं, समझ में नहीं आता, कहाँ से शुरू करें और कहाँ अन्त करें क्योंकि लेख के रूप में लिखने की एक मर्यादा होती है, फिर भी संक्षिप्त में दादी जी के साथ के संस्मरण लिखता हूँ।

पाण्डुरंग शास्त्री जी की सेवा

सन् 1952 में जब मेरा इस विश्व विद्यालय के साथ परिचय हुआ तब से इस के सभी अनन्य रत्नों का परिचय तो था ही और कइयों के परोक्ष व अपरोक्ष रूप से संपर्क में भी आया था। जब दादी जी और रतनमोहिनी दादी जी जापान गये, तब मुझे वह समाचार मिला और मैंने दादी जी को पत्र लिखा कि श्रीमद्भगवद् गीता पाठशाला के मुखिया पांडूरंग शास्त्री जी तथा उनके एक साथी जिनके साथ मेरा पहले बहुत घनिष्ठ संबंध था तथा जो बाहर के तत्वज्ञान के बहुत बड़े विद्वान हैं, भी जापान के विश्व धर्म सम्मेलन में आये हुए हैं, तो आप उनको भोजन के लिए रोज अपने पास बुलाना और उनकी ईश्वरीय सेवा करना। मैंने शास्त्री जी को भी मुंबई में कहा था कि आप और आपका साथी दोनों अकेले जापान जा रहे हैं, वहाँ आपको खाने की दिक्कत होगी और इसलिए मैंने ब्रह्माकुमारी बहनों को लिखा है। आप भी उनसे संपर्क करना। दोनों ने मेरी बात मानी और जापान की दस दिन की कांफ्रेंस में दादी जी ने और रतनमोहिनी दादी जी ने उन दोनों को अपने हाथ से पकाया हुआ पवित्र भोजन खिलाया और साथ ही यज्ञ का इतिहास भी बहुत विस्तार से सुनाया। परिणामरूप जब शास्त्री जी मुंबई आये तब

उन्होंने मुझे कहा कि रमेश भाई, ब्रह्माकुमारी संस्था का इतिहास सुनकर जब मैंने जाना कि पुरुष प्रधान समाज ने बहनों की आध्यात्मिक उन्नति में कितनी रुकावट डाली तो मेरी आँखों में पानी भर आया। बाद में हमेशा ही शास्त्री जी के साथ विश्व विद्यालय का स्नेह भरा संबंध रहा और शास्त्री जी प्यारे ब्रह्मा बाबा तथा प्यारी मातेश्वरी जी से मिलने भी आये। इस प्रकार से अपरोक्ष रूप से दादी जी के द्वारा सेवा हुई, उसका मैं साक्षी हूँ।

प्रदर्शनी की सेवा में दादी जी का सहयोग

बाद में दादी जी जब पटना में थे तो ब्रह्मा बाबा जब मुंबई आते थे तो दादी जी भी मुंबई का चक्कर लगाते थे परंतु इतना घनिष्ठ संबंध दादी जी के साथ नहीं था क्योंकि ब्रह्मा बाबा की उपस्थिति में ज्यादा कारोबार ब्रह्मा बाबा से ही होता था। परंतु जब सन् 1964 में हम सबने प्रदर्शनी के चित्र बनाने का कार्य शुरू किया तो पहला-पहला चित्र "सच्चा वैष्णव कौन" बनाया और ब्रह्मा बाबा के पास वह चित्र लिखत सहित प्रमाणित कराने के लिए भेजा। दो दिन में ही ब्रह्मा बाबा ने उस लिखत में सुधार कर दुबारा अच्छे अक्षरों में लिखवाकर भेजा तो मैंने ब्रह्मा बाबा को पत्र लिखा कि बाबा, ये आपके अक्षर नहीं हैं, ये किसने लिखा है? तो ब्रह्मा बाबा ने लिखा कि बच्चे, कुमारका बच्ची यहाँ है, उसी ने लिखत को सुधार करके भेजा है। तो हमने ब्रह्मा बाबा को लिखा कि जब हमारे चित्रों की लिखत कुमारका बहन को ही फाइनल करनी है तो क्यों नहीं आप कुमारका बहनजी को अपने प्रतिनिधि के रूप में मुंबई भेज दें। बाबा ने हमारी बात को मान लिया और टेलीग्राम किया कि कुमारका बच्ची को रिसीव करो। इस प्रकार प्रदर्शनी के पहले चित्र से ही दादी जी का पूर्ण सहयोग प्रदर्शनी की सेवा के लिए मिला और दादी जी ने ही प्रदर्शनी के सभी चित्रों की समझानी फाइनल की। जब पहली प्रदर्शनी का उद्घाटन महाराष्ट्र के राज्यपाल मंगलदास पकवासा ने किया तब दादी जी और ऊषा ने उन्हें समझाया और उनसे ओपिनियन लिखवाया। गवर्नर ने लिखा, यह अद्भुत (Marvellous) प्रदर्शनी है। बाद में सभा में संबोधन के लिए भी गवर्नर गये। इस प्रकार से प्रदर्शनी सेवा में ओपिनियन लिखवाने की शुरूआत भी दादी जी ने की। बाद में मातेश्वरी जी का मुंबई आना हुआ और मातेश्वरी जी ने दादी जी तथा सभी महारथी भाई-बहनों को बुलाकर प्रदर्शनी की सेवा विहंग मार्ग की सेवा है, यह प्रस्तावित किया।

दादी जी का मेरे लौकिक परिवार से घरेलु सम्बन्ध

इतने में ही ब्रह्मा बाबा को ईस्टर्न जोन की सेवा के लिए अच्छे हैण्ड्स की जरूरत थी तो दादी निर्मलशान्ता ने कोलकाता जाने की ऑफर ब्रह्मा बाबा को की और ब्रह्मा बाबा ने फौरन उस बात को स्वीकार कर दादी निर्मलशान्ता को वहाँ भेजा और दादी प्रकाशमणि को गामदेवी सेन्टर (उस समय वाटरलू मेन्शन) का इंचार्ज बनाया। तब से दादी प्रकाशमणि जी के साथ हमारे लौकिक परिवार का संबंध जुटा और वह संबंध दादी के अव्यक्त होने तक इतना ही घनिष्ठ रहा। मेरी लौकिक माता को दादी जी "माताजी" कहकर बुलाते थे और मेरी माताजी भी उनके साथ

अपनी बेटी का व्यवहार करते थे। उन दिनों दादी जी को माइग्रेन की बीमारी थी और कई बार दादी जी को माइग्रेन के कारण सिरदर्द का दौरा पड़ता था और उलटी होती थी। दादी जी को माइग्रेन के अटैक का पहले से ही आभास हो जाता था इसलिए दादी जी फौरन टैक्सी पकड़कर हमारे लौकिक घर आ जाती थी। हमारी लौकिक बड़ी बहन, माताजी और ऊषा, दादी जी की सेवा करते, दवाई आदि देते। इस प्रकार दादी जी हमारे लौकिक परिवार के घरेलू सदस्य बन गये थे।

गामदेवी के दारु-उल-मुलक भवन में सेवाकेन्द्र का स्थानान्तरण

वाटरलू मेन्शन में जब सेवाकेन्द्र था, तब वहाँ से उसको स्थानांतरित करने की बात चल रही थी। हम मकान ढूँढ़ रहे थे। दादी जी, मैं और ऊषा कार में गामदेवी सेन्टर के पास ही खड़े थे। मैंने दादी जी को पूछा, आपको कहाँ पर मकान लेना है, कहाँ पर मकान के लिए कोशिश करें? उस समय गामदेवी का दारु-उल-मुलक भवन नया बना ही था, उसके प्रति दादी जी ने इशारा किया कि ऐसे मकान में अगर सेन्टर खुल जाये तो बहुत अच्छी ईश्वरीय सेवायें हो सकती हैं। ड्रामा प्लैन अनुसार उसी भवन में एक फ्लैट हमने बुक कराया था तो हमने अपने लौकिक परिवार से चर्चा करके दूसरे ही दिन दादी जी को वह फ्लैट ईश्वरीय सेवा में देने का ऑफर किया। दादी जी को वह फ्लैट बहुत ही पसंद आया और कहा कि हम आबू चलते हैं, बाबा से स्वीकृति लेकर इस फ्लैट में सेवा शुरू करेंगे। दो दिन पश्चात् हम आबू गये, ब्रह्मा बाबा से स्वीकृति ले वापिस आये और वाटरलू मेन्शन से सेवाकेन्द्र का स्थानांतरण गामदेवी में हो गया और उसी स्थान पर रहकर ब्रह्मा बाबा के अव्यक्त होने तक दादी जी ने सेवायें की। इस प्रकार सन् 1964 से 1968 तक अर्थात् पाँच वर्षों तक दादी जी से निरंतर पालना लेने और आगे बढ़ने का सौभाग्य हमें मिला।

बाबा ने कमल हस्तों से लिखा नियुक्ति-पत्र

मातेश्वरी जी 24 जून, 1965 को अव्यक्त हुए तो हम सब मधुबन आये और थोड़े दिन रहकर दादी जी के साथ वापस मुंबई गये। तब मैंने ब्रह्मा बाबा को पत्र लिखा कि बाबा अब मातेश्वरी के स्थान पर यज्ञ की मुख्य संचालिका कौन होगी, इसका निर्णय आपको करना होगा और यह निर्णय लिखित में हो तो अच्छा रहेगा। ब्रह्मा बाबा ने दिनांक 01.04.1966 को साकार मुरली के अंतिम पेज पर अपने हाथों से सिंधी अक्षरों में दादी प्रकाशमणि को मुख्य प्रशासिका तथा दीदी मनमोहिनी को अतिरिक्त मुख्य प्रशासिका के रूप में नियुक्त करने का नियुक्ति-पत्र लिखा। बाबा ने मुझे इसकी एक कॉपी भेजी और कहा कि बच्चे, आज मैंने यह नियुक्ति-पत्र लिखा है और मुरली के द्वारा सबको सूचना दे दी है। इस प्रकार 1 अप्रैल, 1966 से दादी जी की मुख्य प्रशासिका के रूप में नियुक्ति हुई और वह कार्यभार उन्होंने 25 अगस्त, 2007 तक बड़ी कुशलता से संभाला।

ट्रस्ट के प्रति दादी जी की वचनबद्धता

फिर नवंबर 1968 में मैंने ब्रह्मा बाबा को पत्र लिखा कि बाबा, आपने दादी जी को मुख्य प्रशासिका के रूप में नियुक्त तो कर दिया है परंतु वे तो मुंबई में

हैं, उन्हें यज्ञ का कारोबार संभालने का अनुभव और आपका मार्गदर्शन कैसे मिलेगा? तब बाबा ने युक्ति से मुझे और कुमारका दादी को वर्ल्ड रिन्युअल स्प्रीच्युअल ट्रस्ट के निर्माण के संबंध में आबू बुलाया। दीदी मनमोहिनी तथा दादा आनन्द किशोर आबू में ही थे। ब्रह्मा बाबा ने ट्रस्ट के बारे में राय-सलाह करने के लिए हम चार लोगों (मैं, दादी, दीदी तथा दादा आनन्द किशोर) की कमेटी बनाई। चर्चा के अंतिम दिन प्रश्न निकला कि ट्रस्ट का मैनेजिंग ट्रस्टी कौन बने? प्रकाशमणि दादी और दीदी मनमोहिनी ने आपस में राय करके रात्रि क्लास में ब्रह्मा बाबा से मुझे मैनेजिंग ट्रस्टी के रूप मे नियुक्त करने की बात की। मैं मना कर रहा था क्योंकि मुझे उसका अनुभव नहीं था तो दादी जी ने कहा, रमेश जी, आप यह कारोबार संभालो, मैं आपकी पूरी मददगार बनूँगी। दादी जी ने अपना यह वचन अंत तक निभाया और मुझे हर बात में ट्रस्ट के कारोबार में सहयोग दिया। दूसरे दिन ब्रह्मा बाबा ने मुझे तो ट्रस्ट के निर्माण का कारोबार करने के लिए मुंबई भेज दिया और दादी जी को आबू में रखा। दिसंबर 1968 से 18 जनवरी तक ब्रह्मा बाबा ने दादी जी को मुख्य प्रशासिका के रूप में कारोबार करने का गहन प्रशिक्षण देना शुरू किया। बीच में मैं भी दो बार आबू आया था और ब्रह्मा बाबा से मिली हुई शिक्षाओं का थोड़ा-सा स्वाद मुझे भी दादी जी द्वारा मिला।

दादी जी का पहला फोन

16 जनवरी, 1969 को मैं आबू संग्रहालय का मकान खरीदने की बातचीत करने के लिए अहमदाबाद आया और 17 जनवरी, 69 को मकानमालिक के साथ 95% बातें निश्चित कर रात को मधुबन में ब्रह्मा बाबा को फोन पर सारा समाचार दिया और पूछा कि मकान मालिक तो एक हफ्ते में आबू आकर मकान का एग्रीमेंट साइन करेगा तब तक मैं कहाँ जाऊँ, मधुबन आऊँ या बड़ौदा में जो प्रदर्शनी चल रही है, वहाँ जाऊँ? ब्रह्मा बाबा ने मुझे बड़ौदा जाने की श्रीमत दी परंतु दादी जी ने ब्रह्मा बाबा के हाथ से फोन लेकर मुझे सूचना दी कि मैं मधुबन आ जाऊँ और बड़ौदा ना जाऊँ। मैंने 18 जनवरी को रात 11 बजे की ट्रेन से आबू पहुँचने का तय किया। बाद में ब्रह्मा बाबा के अव्यक्त होने पर दादी जी ने पहला-पहला फोन मेरे लिए ही करवाया और उन्हें मालूम चला कि रमेश आबू आने के लिए निकल गया है।

दादी जी ने दी मुखाग्नि

19 जनवरी, 69 को मुझे आबू पर्वत पहुँचने पर, बस अड्डे से पांडव भवन जाने के रास्ते में ब्रह्मा बाबा के अव्यक्त होने का समाचार मिला। जब मैं पांडव भवन पहुँचा तो दादी जी, संदेशी दादी और ईशू दादी मेरे इंतजार में ही बैठे थे। तीनों मिलकर मुझे बाबा के कमरे में ले गई और तीन मिनट हमने ब्रह्मा बाबा के पार्थिव शरीर के सामने खड़े होकर योग किया। बाद में मैंने दादी जी को कहा कि आपने ब्रह्मा बाबा के शरीर को सारी रात अच्छी रीति संभाला है, अब आगे का काम हम भाइयों का है, हमें करने की इजाजत दीजिए। दादी जी ने मुझे पूछा कि क्या आपको यह सब करने का अभ्यास है? मैंने "हाँ" कहा और दादी जी ने मुझे अंतिम संस्कार करने की जिम्मेवारी दी। बाकी सब बातों का निर्णय करना तो मेरे लिए सहज

था परंतु मुखाग्नि कौन करे, यह प्रश्न सामने था क्योंकि सारा ही दैवी परिवार मौजूद था। ब्रह्मा बाबा का लौकिक परिवार भी मौजूद था इसलिए मैंने अव्यक्त बापदादा से संदेश पूछा कि मुखाग्नि कौन देगा तो बाबा ने यही संदेश दिया कि यह सारी मानव जाति के अलौकिक पिता का अग्निसंस्कार है और इस दैवी परिवार में तो सबसे बड़ा और मुरब्बी बच्चा दादी प्रकाशमणि ही है इसलिए दादी प्रकाशमणि ही ब्रह्मा बाबा के पार्थिव शरीर को मुखाग्नि देगी।

हमने भी दिया वचन दादी जी को

1 फरवरी 1969 को जब हमारे परिवार ने दादी जी से छुट्टी माँगी तब दादी जी की आँखों में पानी भर आया और उन्होंने हमारे परिवार को कहा कि क्या आप भी हमें यहाँ छोड़कर मुंबई जायेंगे? तब हम सबने दादी जी को वचन दिया कि हम सदैव हर समय, हर बात में दादी जी के पूर्ण मददगार रहेंगे। इस प्रकार दादी जी के साथ हमारे यज्ञ सेवा के पार्ट की शुरूआत भी दादी जी के मुखारविन्द द्वारा हुई। उसके बाद का इतिहास तो सबको मालूम ही है कि कैसे दादी जी ने गैलप करके अपनी सीट की जिम्मेवारी उठाई और अपने आप को मुख्य प्रशासिका के रूप में सबके दिलों में प्रस्थापित किया।

विदेश जाने की श्रीमत मिली

सन् 1977 में बड़ी दीदी मुंबई आये हुए थे, उस समय दादी प्रकाशमणि जी का विदेश यात्रा का कार्यक्रम बन रहा था। बड़ी दीदी ने मुझे कहा, रमेश, आप आबू चलो, दादी जी का विदेश यात्रा का कार्यक्रम बन रहा है, उसमें आपके मार्गदर्शन की जरूरत पड़ेगी। बड़ी दीदी के साथ मैं और ऊषा आबू आये। जब अव्यक्त बापदादा से दादी जी की विदेश यात्रा के बारे में संदेश लिया गया तो अव्यक्त बापदादा ने दादी जी के साथ मुझे भी विदेश जाने की श्रीमत दी। दादी जी के साथ चार मास से भी अधिक समय विदेश यात्रा पर जाने का सौभाग्य मिला। इस दौरान बहुत सी बातें दादी जी से सीखी और दादी जी से माँ-बेटे का स्नेह और मार्गदर्शन प्राप्त किया। इस प्रकार दादी जी ने हमारे दिल में अलौकिक माता का स्थान पक्का किया।

दादी जी से सेवा के लिए मार्गदर्शन मिला

मुंबई से जब ईश्वरीय सेवा पर निकले तब दादी जी ने प्लेन में ही मुझसे पूछा, आप प्लेन में क्या करते हो। मैंने कहा, ऐसे ही बैठा रहता हूँ, बाबा को याद करता हूँ तो दादी ने कहा, क्यों नहीं आप पत्र लिखते और सबको यात्रा का समाचार भेजते। उस समय फैक्स या ई-मेल तो थे नहीं, टेलिफोन बहुत महंगे थे। हमने पत्र लिखना शुरू किया। कैरो से हमारे साथ अमेरिका की बहुत बडी कंपनी का डायरेक्टर साथ में था तो दादी जी ने हमें उनकी सेवा करने के लिए कहा। मैंने उन महानुभाव से पूछा, आप परमात्मा को मानते हो? उसने मना किया। मैं सोच में पड़ गया कि नास्तिक को अपना ज्ञान कैसे सुनाऊँ? मैं दादी जी के पास मार्गदर्शन के लिए गया और पूछा। दादी जी ने कहा, नैतिकता की बातें सबको पसंद आती हैं इसलिए साकार बाबा की मुरली से सिविल आई और क्रिमिनल आई की बातें करो। मैंने उस आत्मा को ये बातें बताई और फ्रेंकफर्ट पहुँचते-पहुँचते वह नास्तिक से आस्तिक बन गया।

दादी जी की दुरांदेशी बुद्धि

अमेरिका में हम चार दिन ही थे तभी ईश्वरीय सेवार्थ अमेरिका में संस्था को रजिस्टर्ड कराने का सोचा गया तब मैंने दादी जी से पूछा, क्या हम अमेरिका में संस्था को रजिस्टर्ड करायें, तब दादी ने कहा, मैं भारत में बड़ी दीदी से फोन करके पूछती हूँ। मैंने दादी को कहा कि मुख्य संचालिका तो आप हैं, आप निर्णय करें। दादी ने कहा, नहीं रमेश, जो मधुबन में है, वही मुख्य संचालिका है क्योंकि मधुबन ही यज्ञ का मुख्यालय है तो मैं मुख्य संचालिका होते भी मुख्यालय की स्वीकृति के बिना यहाँ पर संस्था को रजिस्टर्ड कराने की स्वीकृति नहीं दे सकती। फोन पर बड़ी दीदी से स्वीकृति प्राप्त करने के बाद ही बड़ी दादी ने मुझे रजिस्ट्रेशन के लिए कागज़ बनाने को कहा। मैंने कागज बनाये और उसमे वहाँ के भाई-बहनों के नाम ट्रस्टी के रूप में लिखे तब मुझे दादी की दूरंदेशी बुद्धि का विशेष अनुभव हुआ। दादी जी ने कहा कि इसमें अपना भी नाम डायरेक्टर के रूप में लिखो। मैंने कारण पूछा तो दादी जी ने कहा, यह ट्रस्ट भले ही अमेरिका में रजिस्टर्ड है परंतु भारत के साथ इसके संबंध को कानूनी रूप देने के लिए भारत के प्रतिनिधि के रूप में ट्रस्टी मण्डल में आपका नाम होना जरूरी है। दादी जी के इस सुझाव के आधार पर मैंने अपना नाम वहाँ के ट्रस्टी मण्डल में लिखवाया। इस प्रकार विश्व सेवा प्रति भी दादी जी का दृष्टिकोण सराहनीय था। बाद में दादी जी ने मुझे जर्मनी, अफ्रीका, ऑस्ट्रेलिया, सिंगापुर, हांगकांग आदि सभी स्थानों पर ईश्वरीय सेवा को कानूनी रूप देने के निमित्त बनाया।

दादी जी ने दिए सुअवसर

मैं तो इन्कम टैक्स का वकील था, कानून की बातों को नहीं जानता था पर बापदादा की श्रीमत के आधार से मुझे यज्ञ सेवार्थ मकान खरीदने और अन्य संस्थाओं का निर्माण करने का सुअवसर भी दादी जी ने ही दिया। बाद में विदेश से भारत आकर भारत के सभी मुख्य स्थानों पर भी दादी जी के साथ मेरा जाना हुआ। दादी जी ने हर जगह जाकर विदेश यात्रा के संस्मरण सुनाए।

देवता माना देने वाला

यहाँ एक विशिष्ट अनुभव लिख रहा हूँ। जब हम दिल्ली पहुँचे तो वहाँ करीब 2,000 भाई-बहनें आये हुए थे। कार्यक्रम के अंत में टोली बाँटने का प्रसंग आया। दादी जी ने कहा, मैं बहनों को और आप भाइयों को टोली बाँटो। वहाँ करीब 1200 बहनें और 800 भाई थे। मैं तो 800 भाइयों को टोली बाँटते थक गया, हाथ दर्द करने लगा। मैंने दादी को कहा, मुझे टोली बाँटने का अभ्यास नहीं है, मेरा तो हाथ थक गया, आपका क्या हाल है? दादी ने कहा, मुझे तो कुछ नहीं हुआ, मेरा तो टोली बाँटने का अभ्यास है। देवता माना देने वाला। आपको भी देने का अभ्यास करना चाहिए।

दादी जी की कुशल वकालत

दादी जी बहुत अच्छी वकील भी थे, इसका भी मुझे अनुभव है। एक बार मैं मधुबन में आया था तो एक भाई ने मुझे आकर कहा कि आप हमारी ग़लतियों के कारण दादी जी को क्यों डाँटते हो? मेरे लिए यह डाँटना शब्द वज्रघात जैसा था तो मैंने उस भाई को

कहा कि मेरी शक्ल को देखो, क्या मेरी यह ताकत है कि मैं दादी जी को डाँटूँ, दादी जी तो कितनी महान हैं, मैं उन्हें कैसे डाँट सकता हूँ! भाई ने कहा, दादी ने खुद मुझसे कहा है कि रमेश बहुत डाँटता है इसलिए मैं आपकी बात स्वीकार नहीं कर सकता। मुझे लगा कि इसमें दादी की ही कोई युक्ति है। इसलिए मैंने उस भाई को कहा कि ठीक है, इस बारे में मैं दादी से बात करता हूँ। दादी से जब इस बारे में पूछा तो दादी ने कहा कि वह भाई मेरे पास आया था, उसे ईश्वरीय सेवा के लिए कुछ खर्च करना था, मुझे उसे मना करना था पर मैं कैसे मना करूँ इसलिए आपका नाम बोल दिया और कहा कि रमेश मुझे डाँटता है, आपकी बात अच्छी होते भी मैं छुट्टी नहीं दे सकती। मैंने कहा, यज्ञ मे इतने भाई-बहनें हैं, मेरा नाम ही क्यों लिया? तब दादी ने वकालत करते हुए कहा कि आपने शास्त्र पढ़े हैं, शास्त्रों में दधिचि की कहानी आती है कि इंद्र ने दधिचि की हड्डियों से अपना वज्र बनाया। मैंने कहा कि हाँ, मुझे मालूम है। दादी ने कहा, हम तो ईश्वरीय सेवार्थ आपकी हड्डी को हाथ नहीं लगाते, आपके नाम से ही हमारा काम हो जाता है। आप तो शुक्रिया मानो कि आपकी हड्डी सही-सलामत है। इस प्रकार से दादी ने मुझे रमणीक सांत्वना दी और मैं कुछ बोल नहीं सका। मैं जोश में दादी के पास गया था और हँसते-हँसते दादी के पास से आया। इस प्रकार दादी में वकालत करने की जन्मजात कुशलता थी।

इस प्रकार के कितने ही ईश्वरीय सेवा के अनुभव दादी जी के साथ के हैं जिनको अगर लिखें तो एक बड़ी किताब बन जाये। ईश्वरीय सेवा के कारोबार मे सक्रिय भाग लेने का मुझे और मेरे परिवार को जो भी अवसर मिला, उसके लिए दादी जी का कुशल मंगल और रूहानी पालना ही निमित्त है।

25 अगस्त, 2007 के दिन हम सब आबू में ही थे। हमें दादी कॉटेज से फोन आया और मैं और ऊषा दादी कॉटेज पहुँच गये और दादी जी को हम सबने अंतिम विदाई दी। अपने स्थूल नेत्रों से एक आत्मा को स्थूल शरीर छोड़ते देखने का यह मेरा पहला अनुभव था। इस प्रकार से दादी जी ने अंतिम श्वास तक मुझे नये-नये अनुभव कराकर अनुभवीमूर्त बनाया। दादी जी का आभार मानने के लिए मेरे और मेरे परिवार के पास कोई शब्द नहीं हैं और इसलिए ही इस पुस्तिका के अंदर इस लेख द्वारा मै अपनी श्रद्धांजली दादी जी को दे रहा हूँ।

******

ब्रह्माकुमारी मोहिनी बहन दादी जी के बारे मे सुनाती हैं –

डरना मत, यह परमात्मा पिता का अलौकिक इशारा है

यह मेरा परम सौभाग्य और पुण्य कर्मों का फल था जो प्यारे बाबा ने मुझे दिव्य दृष्टि का वरदान देकर अपने अव्यक्त स्वरूप का साक्षात्कार कराया और सूक्ष्म रूप मे इशारा दिया कि बच्ची, मैं तुझे लेने के लिए आया हूँ। बार-बार यह साज भरी आवाज़ मेरे कानों में गूँजती थी परन्तु मुझे समझ में नहीं आता था कि यह कौन है, क्यों मुझे लेने आया है। ऐसे समय में, प्यारे बाबा की आज्ञानुसार जापान मे होने वाले सम्मेलन मे भाग लेने जाते समय, चन्द घंटों के लिए प्यारी दादी जी का लखनऊ आना हुआ और मैंने उनसे उस आवाज़

का रहस्य पूछ लिया। दादी जी ने कहा, डरना मत, यह परमात्मा पिता का अलौकिक इशारा है, वह आपको अपना बनाना चाहता है, आप बहुत भाग्यवान हो जो आपको इतनी छोटी आयु (12 वर्ष) में भगवान ने पसंद किया। दादी जी जापान चली गई परंतु मेरे दिल पर अमिट छाप छोड़ गई। चंद घंटों की मुलाकात में उनके वात्सल्य, अपनत्व भरी आवाज, झील-सी गहरी आँखे जिनमें ममत्व का सागर लहरा रहा था – इन सबने मेरे दिल में सदा-सदा के लिए स्थान बना लिया। उनके ऐसे दिव्य व्यक्तित्व को मैं जीवन में कभी नही भूल सकी।

रूहानी नजर से निहाल किया

एक वर्ष बाद जब दादी जी जापान से लौटने वाली थी तो मैं मधुबन में ही थी। मैंने देखा कि प्यारे बाबा बहुत उमंग और प्यार से दादी जी के स्वागत की तैयारियाँ कर रहे थे। हर ब्रह्मा-वत्स के अंदर दादी जी के प्रति अथाह प्यार देखकर मैं बहुत खुश हो रही थी। उनके आगमन की घड़ियाँ नजदीक आती जा रही थी। बहुत ही हर्षितमुख, बेपरवाह बादशाह,

जापान से लौटने के बाद दादी जी, दादी रतनमोहिनी जी और दादा आनंद किशोर जी का स्वागत करते हुए भाई-बहनें

सेवा की सफलता से संपन्न, प्यारे बाबा से मधुर मिलन मनाती हुई दादी ने हम सबको भी रूहानी नजर से निहाल किया। मुझे देखकर बोला, आप भी आई हो? मुझे बहुत खुशी हुई कि प्यारी दादी ने मुझे पहचान लिया। तब से उनसे मिलने और पालना लेने का सिलसिला जारी है।

हर प्रकार की सेवा करनी सिखाई

तीन वर्ष के बाद जब मैं पुन: यज्ञ में आई तो प्यारे बाबा ने मुझे दादी जी के साथ देहली की अलौकिक सेवार्थ भेजा। दादी जी ने मुझे अपने साथ रखकर छोटी-से-छोटी और बड़ी-से-बड़ी सेवा करनी सिखाई। उनके संग के रंग में मैं आलराउण्डर और हर सेवा में दक्ष बनती गई। मैंने देखा, दादी जी का मम्मा-बाबा के साथ निश्छल प्यार, अटूट भावना, सेवा में समर्पण, हाँ जी का पक्का पाठ, एक बाप दूसरा न कोई की दृढ़ धारणा से सदा एकव्रता स्थिति। सत्यता और दिव्यता की प्रतिमूर्ति दादी सदा बापदादा के दिलतख्त पर विराजमान रह, निश्चिन्त भाव से परोपकार में तत्पर रहती और

अन्य आत्माओं को सेवा में साथी बनाकर, एकता के सूत्र में बाँधकर, व्यस्त भी रखती और आगे भी बढ़ाती।

बाबा मदद करेंगे

जब हम दिल्ली में सेवारत थे तो कई बार दादी जी आवश्यक कार्य से, मुझे सेन्टर पर छोड़कर, दूसरे स्थान पर चली जाती थी और वहीं से संदेश देती थीं कि आज आप क्लास करा लेना। मैं कहती थी, दादी इतने बड़े-बड़े भाई, मैं कैसे क्लास कराऊँ? पर दादी जी कहती थीं, बाबा मदद करेंगे। इस प्रकार क्लास कराने का उमंग और बल प्रदान करते-करते उन्होंने हमारा संकोच निकाल दिया। कई बार भाई-बहनें प्रश्न पूछते थे तो मैं कहती थी, सारी बातें एक ही दिन में थोड़े ही जान लेनी होती हैं। फिर मैं दादी से पूछकर अगले दिन, उन प्रश्नों के उत्तर दे देती थी। इस प्रकार दादी ने ज्ञान-योग में प्रवीण बना दिया। दादी जी मुझे बहुत प्यार करती थी। बच्चों की तरह प्यार करती थीं। प्यार से मोहनलाल कहकर बुलाती थीं।

दीदी ने बनाया दादी की सेवा-साथी

प्यारे बाबा के अव्यक्त होने के बाद जब दादी जी पर संपूर्ण यज्ञ की ज़िम्मेवारी आई तो बड़ी दीदी ने मुझे दादी जी का सेवा-साथी बनाया। दादी जी ने सारा प्रशासन सिखाया और सदा साथ में ले जाती थी। तब से दादी जी के अंग-संग रहना, उनके अव्यक्त होने तक बना रहा। अंत में भी इन नयनों ने, सब तरफ से उपराम हुई दादी को बाबा की गोद में समाते देखा। दादी जी के साथ रहते, उनके अनगिनत गुणों, विशेषताओं की साक्षी रही हूँ।

दादी जी का मुरली-प्रेम

मम्मा कई बार मुरली पढ़ती थी। वही बात मैंने दादी प्रकाशमणि जी में भी देखी। वे सुबह क्लास में जाने से पहले मुरली को बहुत अच्छी तरह पढ़ती थी। फिर शाम को चाय पीने के बाद मुरली पढ़ती थी। रात्रि को, कितनी भी देर से वे कमरे में आएँ पर मुरली पढ़े बिना सोती नहीं थीं। बाबा की मुरली से इतना जिगरी प्रेम था। कभी-कभी हम उनको कहते थे, दादी, आप मन-मन में पढ़ रही हैं, हमें भी सुनाइए, हम भी सुनेंगे। तब दादी जी बहुत प्यार से पढ़कर सुनाती थी, चाहे रात्रि के ग्यारह, साढ़े ग्यारह क्यों न बज जाएँ। दादी जी, क्लास में मुरली सुनाते समय अपनी कोई बात नहीं कहती थी। जो बाबा ने कहा, जैसे भी कहा, चाहे धारणा, चाहे सेवा के बारे में जैसे का तैसा सुनाती थीं इसलिए मुरली हम सबके अंदर छप जाती थी। जब दादी हॉस्पिटल में थीं, हम कहते थे, दादी जी, समाचार सुनोगे तो कहती थीं, नहीं। पर जब हम कहते थे, मुरली सुनोगे तो कहती थीं, हाँ। जब तक हम सुनाते थे, जागृत होकर सावधानी-पूर्वक सुनती रहती थीं। मुरली सुनते समय दादी जी नींद नहीं करती थीं।

मुरली के बिना रह नहीं सकती थी

अव्यक्त होने के सप्ताह भर पहले भी दादी जी काफी ठीक थी। मुरली में जैसे गीत की लाइन आती थी, रात के राही..। हम पूछते थे, दादी, आगे क्या है, तो कहती थीं, थक मत जाना। जब कोई सिंधी अक्षर मुरली में आता था तो हम कहते थे, दादी, इसका अर्थ क्या है, तो बड़े प्यार से अच्छी तरह समझाती थीं। जितनी मुरली सुनती थी दादी, बड़े

ध्यानपूर्वक सुनती थीं, जब थक गई होती थीं तो स्वयं कह देती थीं, बाकी शाम को सुनेंगे। मैंने देखा, अन्त तक दादी को मुरली से इतना प्यार, जो उसके बिना रह नहीं सकती थी। मुरली पढ़ने के लिए पूछते थे तो तुरंत कहती थी, चश्मा लाओ, दादी मुरली पढ़ेगी।

दादी की समदृष्टि और बाबा से अतुलनीय प्यार

भाता निर्वैर जी, सुबह-दोपहर-शाम को आकर दादी जी को मुरली सुनाते थे। कभी नहीं आते थे तो हम सुनाते थे। मानो मैं सुना रही हूँ, भ्राता निर्वैर जी भी आ गए, तो मैं पूछती थी, दादी, निर्वैर भाई सुनाये? तो दादी कहती थीं, नहीं, आप सुना रही हो ना, आप ही सुनाओ। इस प्रकार दादी की समदृष्टि और बाबा से प्यार अतुलनीय था। दादी के दोनों तरफ बाबा के चित्र लगे हुए थे। उनका सारा ध्यान बाबा में ही रहा। बाबा के सिवाय कहीं भी नहीं, न किसी चीज़ में, न व्यक्ति में, न वैभव में लगाव-झुकाव था। उनके अंदर त्याग और वैराग्य की पराकाष्ठा थी। दादी जी हमेशा कहती थीं, सिम्पल रह, सैम्पल बनो। दादी कभी भी न तड़क-भड़क स्वयं पसंद करती थी, न हम लोगों को करने देती थीं। कभी ऐसा कुछ देखती थीं तो तुरंत कहती थी, जाओ, बदल कर आओ। मर्यादा पुरुषोत्तम बाबा की बच्ची होने के नाते दादी, स्वयं मर्यादा में रहती थी और सबको यही सिखाती थीं। वे कहती थीं, न बहुत ऊपर, न बहुत नीचे, साधारण रहो।

सहज अनुकरणीय कर्म

कई बार हम कहते थे, दादी, इतने वर्ष हो गये हैं, आपका बाथरूम इतना पुराना हो गया है। दादी कहती थीं, जैसा है, वैसा ही ठीक है। दादी का हमेशा लक्ष्य रहा कि जैसा कर्म मैं करूँगी, मुझे देखकर दूसरे भी करेंगे। इसलिए दादी ने आज तक ऐसा कोई कर्म नहीं किया जो दूसरों के लिए ठीक न हो। दादी ने वो कर्त्तव्य किए जिनका सब सहज अनुकरण कर सकें। दादी ऐसी परम पवित्र आत्मा, जो दुनिया में आज तक कोई दिखाई नहीं दी। दादी के संकल्प तक में नकारात्मक भाव नहीं था। पर ऐसा भी नहीं था कि किसी की गलती देखकर दादी बताती नहीं थीं, इशारा देती थीं कि इस पर ध्यान दो। पर ध्यान खिंचवाकर चली जाती थीं और भूल जाती थीं। लौटकर आने पर बहुत प्यार से कहती थीं, चलो यह करें, वह करें, अंगुली पकड़कर उसे घर, रसोई घुमाने लगती थीं। अंदर से आता था कि अभी तो दादी इशारा देकर गईं, अभी ऐसे प्यार कर रही हैं। फिर हम दादी को पूछते थे, तो कहती थीं, ऐसा? मुझे तो याद ही नहीं है। पहले-पहले मैं सोचती थी, दादी तो कह देती हैं कि मुझे याद नहीं पर मेरे अंदर तो यादें चलती थीं। तो दो-तीन बार के अनुभव के बाद मैंने समझा कि दादी के दिल में कुछ रहता ही नहीं था। संकल्प-मात्र भी किसी के लिए कोई ऐसी भावना न हो, यह बहुत ऊँची बात है, बहुत कमाल की बात है।

कभी नहीं कहा, मेरे पास समय नहीं है

कभी दादी ने किसी को उलाहना नहीं दिया, हमेशा प्यार की भासना दी। कभी यह नहीं कहा कि मेरे पास समय नहीं है। जब क्लास करा रही होती थीं, भोजन बनाने के निमित्त भाई आता और पूछता था, दादी, कढ़ी बनाई है, आप चखकर देखेंगी? तो क्लास

में भी चखकर, उसे संतुष्ट करके भेजती थी। कहती थीं, इसको बनाना है ना, मैं अभी नहीं देखूँगी तो भोजन में देर हो जायेगी। दादी को सदा होता था कि कोई मेरे लिए इंतजार न करे। बाबा के नियम, धारणाओं पर पक्की होकर चलती थी।

करती भी थी और कराती भी थी

सारा दिन दादी योगयुक्त अवस्था में रहकर कारोबार में व्यस्त रहती थीं। दादी आदेश देकर चली जाए, ऐसा कभी नहीं हुआ। हम कहते थे, दादी, आप जाओ, हम कर लेंगे पर दादी कहती थीं, आप सेवा कर रहे हो, मुझे नींद ही नहीं आती है। बाबा मुझे सोने नहीं देता है। कहता है, जाओ, बच्चे सेवा कर रहे हैं। बैठेंगी, उमंग-उत्साह दिलायेंगी, टोली खिलायेंगी पर ऐसे ही छोड़कर नहीं जायेंगी। जब ओमशान्ति भवन बन रहा था तो सामने जंगल था, छोटी-छोटी पहाड़ियाँ थीं। जब पत्थर तोड़े जाते थे तो रात में सभी भाई-बहनों को लेकर दादी स्वयं जाती थीं और पत्थर उठाती थीं। दादी स्वयं भी उठाती थीं। हम कहते थे, दादी, बैठ जाओ, पर वो बैठती नहीं थीं, दो-चार पत्थर जरूर उठाती थीं। सारी रात हमारे साथ बैठी रहती थीं। करती भी थीं और कराती भी थीं। ओमशान्ति भवन की एक-एक ईंट में दादी की भावनाएँ समाई हुई है।

दृष्टि करती थी निहाल

दादी, अंत तक भी सेवा करती रहीं। दूर से भी उनकी दृष्टि निहाल कर देती थी। एक-एक अंग दादी का सेवा करता रहा। आज दादी साकार में हमारे बीच नहीं है पर दादी का जीवन एक ऐसा उदाहरण है जो हम कभी भी दादी को भूल नहीं सकते हैं। जो दादी ने सिखाया, उसे करके दिखाएँ, यही दादी के प्रति सच्चा स्नेह है। अंत में इतना ही कहूँगी –

जो बात तुझमें थी
वो तेरी तस्वीर में नहीं।

******

सर्व स्नेही मुन्नी बहन व्यक्त कर रही हैं 40 साल के दादी जी के सान्निध्य के पलों में से कुछ चुने हुए अनुभव –

प्यार की मूरत

सन् 1967 में जब साकार बाबा से मिलन का पुनीत अवसर मुझे मिला तो उन्होंने वरदान दिया कि इस बच्ची को बाबा मधुबन में ही रखेगा और यह बाबा का भण्डारा (स्टॉक) संभालेगी। मई, 1969 में जब कन्याओं का प्रथम प्रशिक्षण कार्यक्रम चला तो उसमें मैं शामिल हुई और इस कार्यक्रम के बाद प्यारे बाबा के वरदान को साकार करते हुए, मीठी दादी जी ने मुझे यज्ञ का स्टॉक संभालने की जिम्मेवारी सौंप दी। दादी जी प्यार की मूरत थीं। मैंने जब उनको पहली बार देखा था तभी से दिल का स्नेह बड़ी गहराई तक उनसे जुट गया था। दादी जी मुझे "लवली बेबी" कहकर संबोधित करती थीं, उनका यह लाड़-प्यार भरा संबोधन मेरे दिल को छूता था। मैं उनके करीब आना चाहती थी। इसलिए रोज रात्रि को गुडनाइट करने जाती थी। वे मुझे बाँहों में समा कर मुरली पढ़ती रहती थी और फिर कहती थीं, लवली बेबी, गुडनाइट।

सेवा ही मेवा है

दादी जी का सान्निध्य पाने के लिए मैं उनसे कहा करती थी, दादी जी, मुझे सेवा बताइए। मुझे

पहली-पहली सेवा उनके हिन्दी पत्र लिखने की मिली। वे स्वयं बोलती जाती थी और मैं वैसा-वैसा लिखती जाती थी। इस प्रकार मुझे उनके नजदीक रहने का परम सौभाग्य प्राप्त हुआ और मैं धीरे-धीरे उनकी व्यक्तिगत सेवा भी करने लगी। कहा जाता है, सेवा ही मेवा है। उनकी सेवा के बल ने मुझमें बहुत योग्यताएँ भर दीं। दादी जी ने मुझे अग्रलिखित मुख्य व श्रेष्ठ बातें सिखाईं – आज्ञाकारी, वफादार, फ़रमाँबरदार, ईमानदार, फेथफुल, एक बाप दूसरा न कोई, सदा एक्यूरेट, एवररेडी और दिल की सच्चाई-सफाई। इन श्रेष्ठ धारणाओं को मैंने दिल की तिजोरी में संभाल कर रख लिया जिससे मुझमें विशेष सामर्थ्य आता गया।

रोम-रोम खिल उठता था

एक बार दादी जी ने मुझसे कहा, जाओ, म्यूज़ियम सजा कर आओ। मैंने मन में सोचा, मैं तो स्वयं भी ठीक से कपड़े नहीं पहन पाती हूँ, तो म्यूजियम में रखे मॉडल्स को कैसे शृंगारूँगी। मैंने दिल की यह शंका दादी के समक्ष प्रकट की तो उन्होंने कहा, तुम जाओ, दादी कहती है, तुम सज़ा सकती हो। दादी का ऐसा विश्वास पाकर मेरी बुद्धि विचार चलाने लगी। एक दर्जी भाई का सहयोग लेकर मैंने म्यूजियम सजाने की सेवा पूरी की और दादी जी को दिखाई। दादी जी ने मुझे बहुत प्यार दिया। इस प्रकार दादी जी आज्ञा भी देती थीं और कार्य करने की शक्ति भी प्रदान करती थीं। जैसे छोटे बच्चे को कहा जाता है, उसी प्रकार दादी जी कहती थीं, मुन्नी, अभी यह काम करके आओ। वे बहुत ही प्यार से कहती थीं और उनकी इसी प्यार की शक्ति ने यज्ञ-सेवा का छोटे-से-छोटा और बड़े-से-बड़ा कार्य भी हमको करना सिखा दिया। उनके नयनों से प्यार बरसता था, जब वे प्यार से "मुनड़ी" कहकर बुलाती थीं तो मेरा रोम-रोम खिल उठता था।

ये नजरें दादी की नहीं, स्वयं भगवान की हैं

दादी जी के अंग-संग रहने के कारण कोई भी योग्यता पैदा करने में मुझे कोई खास मेहनत नहीं करनी पड़ी। जैसे पारस के संग रहकर लोहा भी पारस बन जाता है, ऐसे दादी जी के संग रहकर मैं भी योग्य बन गई। सुबह से सायं तक की व्यस्त दिनचर्या में सैकड़ों बार उनके सम्मुख जाना होता, उनकी प्यार भरी दृष्टि पड़ती और मेरे अंदर उमंग-उत्साह लहरें मारने लगता। उनके सामीप्य में थकान किसे कहते हैं, मैंने नहीं जाना। मुझे महसूस होता रहा कि ये नज़रें दादी जी की नहीं, स्वयं भगवान की हैं, जो मुझे निहाल कर रही हैं। उनके स्पर्श मात्र से दिव्य शक्ति का मुझमें संचार होता था। मेरा दिल सदा ही ये लाइनें गुनगुनाता था –

तुमको अपना नसीब समझा है,
सबसे ज्यादा करीब समझा है।
तुमको पाकर स्वयं से दादी जी,
सारे जग को गरीब समझा है।

ओमशान्ति भवन, ज्ञान सरोवर, शान्तिवन आदि सभी यज्ञ के बड़े-बड़े भवनों को सजाने-संवारने का पूरा प्रबंधन दादी जी ने मुझे सिखाया। दादी जी खरीदारी की चीज़ें खुद बैठकर लिखवाती थीं। दादी जी की हर आज्ञा को साकार करने में मैं दिल से जुट जाती थी, मुझे बहुत खुशी मिलती थी।

क्षमा की सागर

दादी जी बहुत ही रहमदिल और ममता की मूरत थीं। कभी कोई बात चित्त पर नहीं रखती थीं। मैं छोटी थी, तब कोई ग़लती कर देती थी तो बहुत प्रेम से समझाती थीं। क्षमा की सागर थीं, हर ग़लती को भुला कर प्रेम से आगे बढ़ाती थीं। दादी जी स्वयं सदा संतुष्ट रहती थीं और उनके बोल थे, "सभी यज्ञ-वत्स सदा खुश और संतुष्ट रहने चाहिएँ।" किसी को कुछ भी चाहिए तो बाबा के भण्डारे से उसे अवश्य मिलना चाहिए, यह उनकी भावना होती थी।

निद्राजीत और अथक सेवाधारी

दादी जी को सारे ब्राह्मण परिवार से बेहद प्यार था। जो सामने आता था, उसका मुसकराकर स्वागत करती थी। कहती थीं, आओ, आओ। वे निद्राजीत और अथक सेवाधारी थीं। जब कभी हम कहते थे, दादी, अमुक व्यक्ति आपसे मिलने आया है तो बिस्तर से उठकर भी मिलने को तैयार रहती थीं। वे तपस्वीमूर्त थीं। रात्रि को दो बजे उठकर तपस्या करती थीं। अमृतवेले का योग नियमित करती थीं। उस समय उन्हें बाबा से बहुत प्रेरणाएँ (टचिंग) मिलती थीं जिन्हें वे सुनाती भी थीं।

नजरों में अतीन्द्रिय आनन्द

यज्ञ में हज़ारों ब्राह्मण भाई-बहनें तथा अनेक वी.आई.पीज आते थे। वे हरेक से मिलती थीं। चाहे 30 हज़ार भाई-बहनें भी आ जाते थे, फिर भी लाइन में सभी उनकी नज़रों का अतीन्द्रिय आनन्द प्राप्त करते थे। हर कार्य करने में उनका उमंग-उत्साह सदा बना रहता था। वे त्याग और सादगी की भी मूरत थीं। प्यारे बाबा के स्लोगन – जो खिलाओ, जो पहनाओ, जहाँ बिठाओ, इसकी पूर्ण धारणा उनके जीवन में देखी। वे मास्टर पालनहार थीं। एक हज़ार यज्ञ-वत्सों और दस हज़ार निमित्त शिक्षिकाओं सहित सभी को बाप समान पालना देती थीं।

मेरे दिल की धड़कन

मुरली से उनका जिगरी प्यार था। दिन में तीन बार स्वयं मुरली पढ़ती थीं ही, क्लास में सुनाती थीं वो अलग। जब तक स्वस्थ रहीं, हमेशा स्वयं ही क्लास में मुरली सुनाती थीं। जब तबीयत नरम-गरम रहती थी तब भी वे देह में रहते हुए भी, देह से न्यारी फ़रिश्ता स्थिति में रहती थीं। कितनी भी तकलीफ हो, पूछने पर यही कहती थीं, मैं बहुत ठीक हूँ। एक दिन तो कहा, मैं बहुत सुखी हूँ। वे इस दुनिया में थीं ही नहीं, वो संपूर्णता की देवी बन चुकी थीं। सेवा करते महसूस होता था कि वतनवासी फ़रिश्ते की सेवा कर रही हूँ। उनके अंतिम दिनों में भाई-बहनें कॉटेज की खिड़की के शीशे में से उनके दर्शन करते थे। तब भी कहती थीं, सभी लाइन में आएँ, टोली लेकर जाएँ। हर बच्चे से उनका जिगरी प्यार था। दादी जी का मुस्कराता हुआ चेहरा और प्यार भरे नयन कभी भूलते नहीं हैं। दादी जी मेरे दिल की धड़कन हैं जो सदा मेरे साथ हैं और सदा मेरे साथ रहेंगी। अंत में इतना जरूर कहूँगी–

वो दिल कहाँ से लाऊँ
तेरी याद जो भुला दे।

******

ब्रह्माकुमार आत्म प्रकाश, संपादक, ज्ञानामृत राजयोगिनी दादी प्रकाशमणि के साथ के अनुभव इस प्रकार सुनाते हैं –

मास्टर ज्ञान सागर

प्यारी दादी जी, बाबा की अनन्य रत्न, मुरब्बी बच्चा तो थीं ही परन्तु पुरुषार्थ करते-करते, हमारे देखते-देखते वे बाप समान बन गईं। आप कहेंगे, कैसे? देखिए, प्यारे बाबा गुणों के सागर हैं। वे ज्ञान के सागर हैं। दादी जी में भी ज्ञान कूट-कूट कर भरा हुआ था। बाबा ने उनको चुना जापान में शान्ति का संदेश देने के लिए। उनमें वो योग्यता थी कि आत्माओं के प्रश्नों के उत्तर दे सके, उन्हें संतुष्ट कर सके। सारा जीवन वे ज्ञान-रत्न बाँटती रहीं। अंत में भी उनके प्रश्न-उत्तर हम सभी ने पढ़े हैं। कितने सारगर्भित उत्तर वे अस्वस्थ शारीरिक हालत में भी देती रही हैं। उनमें ज्ञान की पराकाष्ठा थी। वे मास्टर ज्ञान सागर थीं। प्यारे बाबा पवित्रता के सागर हैं तो दादी जी ने भी सारे जीवन में कभी झूठ तक नहीं बोला। यह किसकी निशानी है? असीमित पवित्रता की। झूठ भी नहीं बोला, अन्य बातें तो दूर की रही। यह बहुत बड़ी आश्चर्यकारी धारणा है।

सबके लिए सुखदायिनी

पवित्रता के बल से त्वचा और चेहरा चमकता है। दादी जी का चेहरा अंत तक प्रकाश की किरणें विकीर्ण करता रहा। प्यारे बाबा शान्ति के सागर हैं, पचास वर्षों के सान्निध्य में हमने कभी दादी को अशान्त, उदास नहीं देखा। सदा मुस्कराते हुए देखा। बाबा प्रेम के सागर हैं तो दादी जी भी प्रेम की देवी थीं। भगवान सुख के सागर हैं तो दादी जी, सदा सबके लिए सुखदायिनी थीं। कभी स्वप्नमात्र, संकल्पमात्र भी न दुख लिया, न दिया। भगवान आनन्द के सागर हैं तो दादी जी को भी हमने सदा अतीन्द्रिय आनन्द में मगन देखा। भगवान सर्व शक्तियों के सागर हैं तो दादी जी सर्व शक्तियों की अधिष्ठात्री देवी थीं। आध्यात्मिक शक्तियाँ उनके हर कर्म से झलकती थी। इन्हीं शक्तियों के बल से वे हर असंभव दिखने वाली बात को संभव बना लेती थी। इस प्रकार दादी जी गुणों की धारणा में बाप समान बन गईं।

तुम निश्चिन्त रहो

हमने मम्मा-बाबा की भी खूब पालना ली परन्तु कभी यह नहीं सोचा था कि साकार में इनसे अलग होना पड़ेगा। दादी जी निमित्त बनीं तो दादी जी से भी भरपूर पालना, प्यार, मार्गदर्शन मिलता रहा। दादी जी के संग बीते मधुर क्षण अब रह-रहकर याद आ रहे हैं। एक बार मैं दादी जी के साथ बैठा था। मैंने कहा, दादी, हम तो बाबा के बड़े भोले बच्चे है। बाबा के बड़े-बड़े महारथी बच्चे है, बड़े-बड़े भाषण करने वाले भी हैं, मैं तो नहीं कर सकता। दादी जी यह सुनकर आधा मिनट के लिए मौन-सी हो गईं, फिर बोलीं, नहीं आत्म, नहीं। तुम बहुत समझू हो। इतना बड़ा कारोबार कैसे चलता है, समझ है तभी तो चला रहे हो ना! मैंने कहा, दादी, यह तो ऊपर वाला चला रहा है। दादी ने तुरन्त कहा, यही तो समझ है। यह समझना कि सब ऊपर वाला चला रहा है, वास्तविक समझ यही है। मैंने कहा, दादी जी, जब प्रेस प्रारंभ की थी तो कई लोग कहते थे, देखना, यह समस्या आयेगी, वह

समस्या आयेगी और प्रेस के संबंध में कई बातें आती भी हैं परन्तु ऊपर वाला पता नहीं कैसे चाबी घुमाता है, सब कुछ स्वतः ही ठीक हो जाता है और छपाई का कार्य निर्विघ्न चलता रहता है। दादी ने कहा, तुम निश्चिन्त रहो। मैंने भी अपने को भाग्यशाली समझा कि इतनी महान दादी जी ने मेरे लिए ऐसा महावाक्य उच्चारण किया।

हिसाब चुक्ता होते हैं

एक बार किसी महारथी ने काफी तकलीफें अनुभव करने के बाद शरीर छोड़ा था। मैंने कहा, दादी, बाबा करे, हम ऐसी तकलीफ सहन करके न जायें, ऐसा पुरुषार्थ और सेवा करने के बाद भी तकलीफें आती हैं तो अच्छा नहीं लगता। दादी ने कहा, चुप। ये सब हिसाब-किताब यहाँ चुक्ता होते हैं। बाबा ने कहा है, पालिश होती है। जन्म-जन्म के हिसाब-किताब, लेन-देन अगर यहाँ चुक्ता हो जायेगा तो धर्मराज के सामने उसे सलाम भी करने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी, और ही धर्मराज उसको सलाम करेगा। मैंने कहा, दादी, हम तो बैठे-बैठे उड़ जाना चाहते हैं। दादी ने कहा, शरीर से न्यारे होने का पुरुषार्थ करो तो ऐसा भी हो सकता है अर्थात् यह भी संभव है।

बिन माँगे सब देने वाली

प्रेस में जो भी चीज़ें छपती थीं, उन्हें दिखाने मैं अक्सर दादी जी के पास जाता था। चित्र, पत्रिका, पुस्तकें छपती ही रहती थीं और इनके कारण बार-बार दादी जी के सम्मुख जाना होता ही था। जब पत्रिका (ज्ञानामृत) लेकर जाते थे तो चित्र, लेख आदि सब बहुत ध्यान से देखती थीं और हमेशा पूछती थी कि कितनी पत्रिकाएँ छपती हैं? उस समय संख्या एक लाख साठ हज़ार थी। जब मैं यह संख्या बताता था तो बहुत प्रसन्न होती थी। फिर एक पत्रिका का खर्च और उस पर बचत का भी पूरा हिसाब पूछती थी। इस प्रकार, साहित्य के संबंध में उनकी अमूल्य मार्गदर्शना और प्रोत्साहन मिलता रहता था। कारोबार में उनकी दिलचस्पी देखकर हमारा उमंग द्विगुणित हो जाता था। बिन माँगे दादी जी, सभी सुविधाएँ प्रदान करती थीं। हमारे पास पहले बाइंडिंग के लिए अलग से स्थान नहीं था। एक ही जगह छपाई, बाइंडिंग आदि होती थी। दादी जी एक बार मशीन का उद्घाटन करने आईं। जब दादी ने देखा कि जगह कम है और कारोबार बहुत विस्तृत, तो स्वयं ही बाइंडिंग के लिए एक पूरा हॉल प्रदान कर दिया। हमारे बिना कहे, हर सुविधा प्रदान करने में दादी जी हमेशा पूरी मददगार बनकर रहती थीं। दादी जी के वरदानी बोल आज जीवन का आधार बनकर इसे निर्विघ्न आगे बढ़ा रहे हैं और आगे भी बढ़ाते रहेंगे। दादी जी की गुणमूर्त छवि अव्यक्त होते भी साकार की भाँति दिल में समाई हुई है और प्रेरित, उत्साहित कर रही है।

******

ओ.आर.सी., दिल्ली से **ब्रह्माकुमारी आशा बहन** दादी जी के साथ का अपना अनुभव इस प्रकार सुनाती हैं –

तुम किसकी "आशा" हो?

मैं स्वयं को पद्मापद्म भाग्यशाली समझती हूँ कि आदरणीया दादी जी की पालना, मार्ग प्रदर्शना एवं सान्निध्य मुझे बाल्यकाल से ही प्राप्त हुआ। दादी जी

से प्रथम मुलाकात कानपुर में हुई जब दादी जी हमारे लौकिक घर आई थीं। उस समय मेरी आयु मात्र 9-10 वर्ष की थी। दादी जी की दृष्टि बहुत अलौकिक, मधुर, रूहानियत से भरपूर और शक्तिशाली थी। दादी जी ने उस छोटी सी आयु मे मेरे से एक प्रश्न पूछकर बाबा का बना दिया। दादी जी ने पूछा- तुम किसकी 'आशा' हो, निर्मला, पुरी (लौकिक माता-पिता का नाम) की या बाबा की? मेरे कानों में सदा ये शब्द गूँजते रहे, जिन्होंने मुझे बाबा का बना दिया। दादी जी मे इतनी पारदर्शिता थी जो किसी भी आत्मा को अपनत्व की अनुभूति कराके अपना बना लेती थी। उनमें आत्मीयता, मातृभाव और मैत्रीभाव भरपूर था।

वह दिन आज ही है

दादी जी में कुशल प्रशासन कला एवं नेतृत्व कला थी। वे किसी भी सेवा को असम्भव नहीं समझती थीं और न समझने देती थीं। कोलकाता में सन् 1974 में मेला हुआ था, तब दादी जी लगभग 15 दिन से अधिक वहाँ रही थीं। मेले में प्रेस कॉन्फ्रेंस बुलाई गई। उसकी प्रेस रिलीज़ बनानी थी। उस समय वहाँ कोई बड़े भाई नहीं थे। दादी जी ने मुझे आज्ञा दी कि प्रेस विज्ञप्ति बनाओ। मैंने कहा- दादी जी मैंने कभी नहीं बनाई है, तो दादी जी ने कहा- 'कोई तो दिन होगा जो तुम बनाओगी। ऐसा ही समझो कि वह दिन आज ही है।' दादी जी ने अपना उदाहरण देकर कहा- यज्ञ में शुरू में मैं ही लिटरेचर लिखती थी, भाई नही थे। अत: हमें सब कार्य करना आना चाहिए, आलराउण्डर बनना चाहिए। दादी जी ने मुझे उत्साह दिया, गाइडेन्स दी और दूसरे दिन वह विज्ञप्ति अखबारों में छपी।

नवीनता पसन्द

दादी जी की नेतृत्व कला की एक खूबी थी कि वे सदा नवीनता पसंद करती थीं। जब भी दादी जी से मिलते थे तो कहती थीं- क्या नया समाचार है? आपने क्या नया प्लान बनाया है, कौन से वी.आई.पी. से मिली, उन्होंने क्या प्रश्न पूछा, फिर आपने क्या उत्तर दिया? आदि-आदि। ऐसा अनुभव होता था कि दादी जी मुख्य प्रशासिका के नाते सब प्रकार की जानकारी रखना पसंद भी करती थी और ऐसा करके हमारा उमंग-उत्साह भी बढ़ाया करती थीं।

शुभ भावनाओं भरा स्नेह

दादी जी स्नेह स्वरूपा थीं। वे अपने दिव्य स्नेह से सबका मन जीत लेती थीं। अपनी कर्मातीत अवस्था की समीपता के समय एक विशेष महत्वपूर्ण बात दादी जी ने बताई। निश्चित रूप से लव और लॉ का बैलेन्स रखना प्रशासन में आवश्यक है परन्तु उनका कहना था कि अलौकिक, नि:स्वार्थ, रूहानी स्नेह प्रशासन की सर्वोच्च विधि है। दादी जी इसका प्रमाण थीं। इतना शुभ भावनाओं भरा स्नेह देती थीं जो व्यक्ति अपनी भूल स्वत: स्वीकार कर स्वयं को परिवर्तित कर लेता था।

दादी जी स्वयं आदर्श शिक्षिका थीं। उन्होंने सिखाया कि आदर्श शिक्षिका वही है जो अव्यभिचारी बुद्धि वाली, निर्मोही, पढ़ाई में प्रवीण एवं आलराउण्डर हो। यज्ञ से प्रीतबुद्धि, आज्ञाकारी, वफादार, फरमानबरदार, ईमानदार और मर्यादाओं का पालन करने वाली बहन आदर्श शिक्षिका हो सकती है।

बात सन् 1969 की है। दादी जी के साथ मैं ईशू

दादी के ऑफिस के सामने खड़ी थी। एक जीप आई, उसे गेटकीपर ने रोक लिया। वह जीप किसी ऑफिसर की थी। वे इस बात से बिगड़ गए कि जीप रोकी क्यों? दादी जी ने देखा, कुछ कहा-सुनी हो रही है, उस ओर चल पड़ीं और ऑफिसर से हाथ जोड़कर कहने लगीं- आप ख्याल न करें, इसकी ओर से मैं आपसे माफी माँगती हूँ। ऑफिसर को जब मैंने बताया कि आप ईश्वरीय विश्व विद्यालय की मुख्य प्रशासिका हैं तो वे दादी जी के पाँव में पड़ गए। इस प्रकार दादी जी ने अपनी महानता का परिचय दिया। वे सच में निमित्त भाव, निर्मान भाव एवं निर्मल वाणी की प्रतिमूर्ति थीं।

******

वाराणसी से **ब्रह्माकुमारी सुरेंद्र बहन** दादी जी के बारे में अपना अनुभव इस प्रकार सुना रही है कि परम आदरणीया दादी प्रकाशमणि जी के साथ के अनुभवों का प्रकाशपुंज सदा मेरे जीवन पथ को आलोकित करता रहता है। उनके साथ बिताये गये क्षण मेरे जीवन की सबसे कीमती धरोहर के रूप में मानस पटल पर अंकित हैं। उनकी स्मृतियों का सुखद झोका मन को दिव्यता की अलौकिक खुशबू और ज्ञान-रत्नों से तरोताजा कर देता है।

नेत्र-मिलन से गहन अनुभव

जब दादी जी अस्वस्थ थे, उन दिनों जब कभी उनके सम्मुख जाती थी और अपना नाम बताकर मिलती थी, तो दादी जी आँखें खोल देती थीं। नेत्रों द्वारा यह अलौकिक मिलन मुझे गहन आध्यात्मिक अनुभवों की दुनिया में पहुँचा देता था।

शब्दों का आध्यात्मिक संयोजन

दादी जी चार बार ईश्वरीय सेवार्थ काशी की पवित्र भूमि मे पधारी थीं। अंतिम बार वे सारनाथ में बनाए गए आध्यात्मिक संग्रहालय 'जीवन मूल्य आध्यात्मिक कला मंदिर' का उद्घाटन करने पधारी थीं। दादी जी ने उस समय बड़े स्नेह और प्यार से कहा था–'तुम्हारा नाम सुरेंद्र है और यह म्यूज़ियम भी बड़ा सुंदर है।' इस प्रकार आदरणीया दादी जी को शब्दों को सहज ढंग से आध्यात्मिक रूप से संयोजित करने में महारत हासिल थी।

प्राय: जब भी मैं दादी जी से मिलती, वे कहा करती थी कि जैसे बाबा ने कहा है– काशी से बाबा को प्रत्यक्षता होगी, वैसे ही यहाँ (म्यूज़ियम) से विशेष सेवा होगी। आज इसे हम प्रत्यक्ष रूप से देख और अनुभव कर रहे हैं।

प्रशासन के क्षेत्र में उनका प्रसिद्ध वाक्य–'स्वयं को हेड समझने से हेडेक होता है और निमित्त समझने से हेडेक (मानसिक कष्ट) दूर होता है', आज प्रशासनिक और प्रबंधन के क्षेत्र मे सफलता और कुशलता का महामंत्र बन गया है।

दादी जी वास्तव में यज्ञ माता मातेश्वरी जगदम्बा सरस्वती की वास्तविक उत्तराधिकारी थीं, जिन्होंने अंतिम श्वास तक बड़े ही प्यार और जिम्मेवारी के साथ सेवा करते हुए यज्ञ को नई ऊंचाइयों तक पहुँचाया।

बोझ हो जाता था छूमंतर

दादी जी ने प्रशासनिक क्षेत्र में आध्यात्मिक गुणों एवं शक्तियों का प्रयोग करके सम्पूर्ण विश्व को एक अनमोल उपहार दिया है। दादी जी ने अपने प्रशासनिक

कौशल द्वारा ब्रह्माकुमारीज़ संस्था को एक वैश्विक संस्था बना दिया। वर्तमान समय में मानव-प्रबंधन सबसे बड़ी चुनौती है। दादी जी में प्रत्येक मनुष्यात्मा में छिपी हुई आंतरिक शक्तियों को पहचानने की अद्भुत शक्ति थी। वे पत्थर को पारस में बदलने की दिव्य कला की साक्षात् अवतार थीं। दादी जी प्रत्येक मनुष्यात्मा में गहरा विश्वास करती थीं और हर कार्य व्यवहार को सहजता से सम्पन्न करती थी। उन्होंने कभी प्रशासनिक शक्तियों का केंद्रीकरण नहीं किया। दादी जी के सान्निध्य में आने से जिम्मेवारियों का बोझ जैसे छू-मंतर हो जाता था। व्यस्तता के बीच सहज रहने की कला मैंने दादी जी से सीखी है।

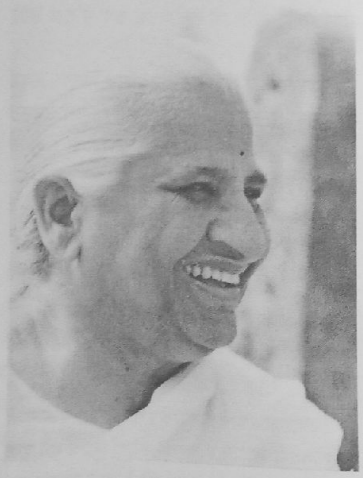

मुस्कराहट की धनी दादी प्रकाशमणि जी

कराया अपनेपन का अहसास

दादी जी के सम्पर्क में रहकर मैंने परिस्थितियों को बदलते हुए देखा है। उनकी उपस्थिति मात्र से आत्माओं में उमंग-उत्साह भर जाता था। हताश या निराश आत्माओं को भी उनके अंदर छिपी हुई विशेषताओं का बोध कराकर दादी जी उनमें नई ऊर्जा का संचार कर देती थीं। इतने बड़े संगठन के कुशल संचालन हेतु दादी जी ने हरेक के विचार और भावनाओं की कद्र करते हुए छोटे-बड़े सभी को अपनेपन का अहसास कराया। उनके सामने कोई भी बिना किसी संकोच और भय के अपनी भावनाओं, समस्याओं एवं पुरुषार्थ की गहराइयों की गुत्थी सुलझाने पहुँच जाता था। सचमुच, दादी प्रकाशमणि एक ऐसी पारसमणि थीं जिनके सम्पर्क में आने वाला हर कोई निश्छल प्रेम, आत्म-विश्वास एवं दिव्यता से निखर उठता था।

दादी की सूक्ष्म उपस्थिति देती प्रेरणा

दादी जी के सामने कोई भी जाता, दादी जी उसे निःस्वार्थ प्यार, अलौकिक खुशी और शक्ति से सम्पन्न कर देती थी। यज्ञ के बड़े-बड़े कार्यों और सेवाओं को विस्तार देने में दादी जी ने जो महत्वपूर्ण पार्ट बजाया है वह आज हम सभी के लिए अनुकरणीय बन गया है। दादी जी की दिव्य और सूक्ष्म उपस्थिति आज भी हमें प्रेरणा और नई शक्ति प्रदान करती रहती है। धन्य है हम सभी जिन्हें ऐसी दादी माँ का सान्निध्य मिला, प्यार और दुलार मिला।

******

मुजफ्फरपुर सेवाकेन्द्र की निमित्त संचालिका **ब्रह्माकुमारी रानी बहन**, दादी जी के बारे में लिखती हैं –

प्राण प्यारी, मनहरणी सम्माननीय मीठी-मीठी दादी जी की यादें कदम-कदम पर याद आती रहती हैं। दादी ने सभी के दिलों पर राज्य किया।

हर समय बाबा सम्मुख

सन् 1965 में, मुम्बई में एक वर्ष दादी के साथ रहने का मुझे मौका मिला जिसमें देखा कि दादी निरंतर बाबा को याद करती थी। एक दिन की बात है, दादी के सिर में दर्द हो रहा था, मैं बाम लगा रही थी, कमरे में और कोई नहीं था। अचानक दादी ने कहा, रानी, देखो, बाबा मेरे सामने खड़ा है। फिर कुछ समय के बाद दादी बोली, सारे दिन में कोई समय ऐसा नहीं होता जब बाबा मेरे सामने ना हो। मैंने पूछा, दादी, कौन-सा बाबा? दादी ने कहा, दोनों कंबाइंड हैं ना! दादी के ये अनुभव के बोल ऐसे मेरे अंदर समा गये कि मैं भी बाबा को हर समय सम्मुख अनुभव करने लगी, याद करने लगी।

दिलों को जानने वाली

एक बार की बात है, मुजफ्फरपुर में मकान बन रहा था। मैं अचानक ही मधुबन आ गई। सोचा था, बाबा के कमरे में बैठ बाबा को याद करके आऊँगी तो मकान सभी के सहयोग से सहज ही बन जायेगा। एक दिन नाश्ते के बाद मैं पाण्डव भवन में हिस्ट्री हॉल के बाहर बैठ गई। दादी पार्टियों से मिलती रही, जब भी बाहर आती थी, मुझे देखती थी। अचानक दादी ने मुझे बुलाया, अपने कमरे में ले गई और बोली, रानी, मैं जितनी बार बाहर आई, तुमको बैठे देखा। मैंने कहा, दादी, मैं अकेली आई हूँ, इसलिए यहाँ बैठी हूँ। दादी ने कहा, नहीं, नहीं, तुम्हारे पास मकान बन रहा है ना, तुम्हें चिन्ता हो गई है। मैंने कहा, नहीं दादी। दादी ने कहा, मैं समझ गई हूँ, अच्छा, बाबा का सहयोग तुम्हें मिलेगा, सब काम सहज पूरा होगा – ऐसे सिर पर हाथ फेरते दादी वरदानों से भरपूर करती गई और कहा, तुमने हिम्मत रखी है ना, तभी तो यह सेवास्थान बन रहा है। ऐसे दिलों को जानने वाली थी दिलाराम मीठी दादी।

योग-तपस्या में मगन दादी प्रकाशमणि जी

शान्त रहो और आगे बढ़ो

एक बार मैंने दादी से पूछा कि सहनशक्ति कैसे आए? दादी ने कहा, जैसे एक राजा अपने ही चिन्तन में मगन रहता है, इधर-उधर नहीं देखता, ऐसे ही सदा अपने पुरुषार्थ में मगन रहो तो शक्ति बढ़ती जायेगी। इधर-उधर देखने से, परचिन्तन करने से सहनशक्ति कम हो जाती है। सदा राजा की तरह रहो। मानो, हम लाइन में खड़े हैं, अगर कोई लाइन तोड़कर पीछे से आगे चला जाये, तो आगे वाले उसे जाने से रोकेंगे, बोलेंगे। इसी प्रकार आप आगे बढ़ रहे हैं, कोई बोलते हैं, निंदा करते हैं तो सहन करो, शान्त रहो और आगे बढ़ते चलो।

जब मकान बनकर पूरा हो गया तब दादी स्वयं प्रोग्राम बनाकर मुजफ्फरपुर में आई और उसे वरदानों से भरपूर कर वरदानी भवन बना दिया। महालक्ष्मी दादी के आगमन से सभी खज़ाने भरपूर हो गये। दादी की मीठी दृष्टि सदा अपने पर अनुभव होती रही है। दादी का हर बोल उमंग-उत्साह दिलाने वाला, हिम्मत की शक्ति भरने वाला तथा साथ का अनुभव कराने वाला रहा है।

******

लुधियाना की निमित्त संचालिका **राज बहन**, राजयोगिनी दादी प्रकाशमणि के प्रति अपने उद्‌गार इस प्रकार व्यक्त करती है–

रिगार्ड देने का रिकार्ड

दादी मुझे हमेशा राजी कहकर पुकारती थी। मैंने दादी की सबसे बड़ी विशेषता यह देखी कि दादी सबको बहुत रिगार्ड देती थी। बृजइन्द्रा दादी आती तो दादी-दादी कहकर बाजू में बिठा लेती। निर्मलशान्ता दादी आती तो भी, सभी दादियों को इतना रिगार्ड देती थी जो देखते ही बनता था।

संगठन बनाने का गुण

दादी के पास कोई प्लैन-प्रेरणा होती थी तो बहनों से, मधुबन निवासियों से चर्चा करने के बाद ही क्लास में सबके सामने रखती थी। ऐसा लगता था, दादी ने उस प्लैन में सबकी शुभभावना शामिल कर ली है। संगठन

मधुबन में दीदी के कमरे में दादी जी के साथ निर्वैर भाई, मुन्नी बहन, ईशू दादी, चन्द्रमणि दादी, निर्मलशान्ता दादी, गुलजार दादी, जानकी दादी, मनोहर दादी एवं शांतामणि दादी।

बनाने का उनका ये गुण मन को बड़ा भाया।

रमणीकता

दादी रमणीक थी, बहलाती थी। दादी लुधियाना में आई। एक माता ऊन की टोपी बनाकर लाई। एक बहन चांदी की सीटी लाई। दादी ने टोपी सिर पर रखी और सीटी हाथ में लेकर बजाने लगी, इस प्रकार सबको खूब बहलाया।

हलका रहना और करना

एक बार मेरा ऑप्रेशन हुआ था। मैं मीटिंग में नहीं आ सकी थी। दादी ने एक बड़ी बहन के हाथ बहुत सौगातें और विशेष याद-प्यार भेजी। कोई भी बात होती थी, दिल से सुनकर पूरा हल देती थी। एक बार मैंने एक समस्या के बारे में दादी से विस्तार से बात की। फिर दादी ने दो दिन बाद मुझे कहा, मैंने सारी पूछताछ की है, तुम इस बात को भूल जाओ। जैसे ही उन्होंने कहा, मैं उनके स्नेह में सब कुछ भूल गई। इस प्रकार वे खुद भी हलकी रहती थी, हमें भी हलका रखती थी।

जिस दिन दादी अव्यक्त हुई, उस दिन दादी के कमरे में योग का प्रोग्राम मिला। जैसे ही मैं कमरे में गई, एकदम अशरीरी हो गई। इतने हलकेपन का मैंने पहली बार अनुभव किया था।

******

कटक सेवाकेन्द्र की निमित्त संचालिका **ब्रह्माकुमारी कमलेश बहन**, दादी जी के साथ के अनुभव इस प्रकार व्यक्त करती हैं –

सन् 1966 में मैंने प्यारी दादी की एक झलक देखी, उस झलक से ही मेरा दादी के प्रति झुकाव और आकर्षण बढ़ने लगा। मुझे अनुभव होने लगा मानो दादी ने मेरे मन को मोह लिया। मुझे लगने लगा कि ये सचमुच दिव्य मूर्ति हैं, देवी स्वरूपा हैं। सन् 1969 में मैं दादी जी के बहुत नज़दीक आ गई जब दादी जी मधुबन में ही रहने लगी थी। प्यारी दादी की ममता, सरलता, नम्रता, गंभीरता, बुद्धि की विशालता का मैंने बहुत गहराई से अनुभव किया। दादी जी प्यार की मूर्ति थी। एक बार हमने कहा, प्यारी दादी, जैसे हमने बाबा की गोद ली है वैसे हम आपकी गोद में जाना चाहते हैं। फौरन दादी जी ने मीठी मुस्कान के साथ कहा, आओ, आओ और गोदी में ले लिया तथा पीठ थपथपायी। हमारी सारी थकान दूर हो गई। हमें अनुभव हुआ जैसे हम बापदादा की गोद में है।

दिव्यगुणों की खान

दादी जी दिव्यगुणों की खान थी। एक बार मै एक सेवाकेन्द्र से आई, वहाँ थोड़ा कुछ सहन नहीं हुआ था तो दादी ने बड़े प्रेम से कहा, मै यहाँ साठ सेठों का सहन करती हूँ, क्या तुम दो-चार स्टूडेन्ट का सहन नहीं कर सकती हो? सहनशक्ति से ही हमारे अंदर और भी दिव्यगुण आ जायेंगे। ऐसी मीठी शिक्षा देकर दादी जी उमंग-उल्लास से भर देती थी।

सहनशीलता और सरलता दादी जी में कूट-कूट कर भरी थी। प्यारी दादी को रोना बिलकुल पसंद नहीं था। एक बार मैं बात करते-करते थोड़ा रो पडी तो तुरंत दादी ने एक बहन को कहा, इसे बाहर ले जाओ, जब रोना बंद करे तब मेरे पास आये, तब दादी मिलेगी। मुझे तुरंत हिम्मत दी और दस मिनट के बाद जब मैं दादी के पास एकदम हँसके आई तो दादी

ने मुझे बहुत प्यार किया, गले लगाया और खुशी दी, कहा, रोता कौन है? जिसका पति नहीं। तुम्हारा पति तो सर्वशक्तिमान है और मुझे दादी जी से शक्ति प्राप्त होने जैसा अनुभव हुआ। फिर मुझे पंजाब सेवा में जाने के लिए राज़ी किया।

मन की बात जानने वाली

जब भी हमने कोई मन की बात प्रकट की, दादी उसे शीघ्र ही पूरा करती। बिना बताये ही दादी को मालूम पड़ जाता था कि हम क्या चाहते हैं। एक बार मेरे मन में आया कि दादी की सेवा करूँ तो दादी मेरे मन की बात जानकर अपनी सेवाधारी बहन को बोली कि आज कमलेश को यह सेवा दे दो। यह सुनकर मेरी खुशी का ठिकाना नहीं रहा। मन में सोचा कि दादी तो पूरी साकार बाबा हैं। बिना कहे मन की बात समझ लेना और हर खुशी दे देना दादी की विशेषता थी। दादी को देख हमारे अंदर अनेक गुण आने लगे। अनेक कमज़ोरियाँ दादी अपने स्नेह और शक्ति की दृष्टि से मिटा देतीं। दादी को देख कर हमेशा त्याग, तपस्या, वैराग्य वृत्ति जागृत होती। दादी सदा तपस्या और सेवा की तरफ ध्यान खिंचवाती थी।

पत्रों द्वारा प्रेरणा

दादी का जीवन ही शिक्षणीय था। सन् 1973 में मैं सेवार्थ कटक आई। दादी के अनेक पत्र हमारे पास आते। अनेक प्रेरणादायक, उमंग-उल्लास भरी शिक्षायें हम दादी के पत्रों से प्राप्त करते। हमारा जीवन आगे कैसे बढ़े, इस पर दादी हमेशा ध्यान खिंचवाती। छह-सात बार दादी जी का उड़ीसा आना हुआ। प्रत्येक बार कुछ न कुछ आगे बढ़ने की प्रेरणा दादी जी से प्राप्त होती रही। पहली बार दादी जी ने कहा, यहाँ बहनों के लिए एक बैंक एकाउन्ट होना चाहिए और तुरंत दादी जी ने अपने पास से पाँच सौ रुपया देकर एकाउंट खुलवाया। इतनी प्यारी दादी सभी प्रकार से हमारा ध्यान रखती। मधुबन में कभी कोई प्रोग्राम होता तो दादी कैसेट भेजती। एक बार दादी जब कटक से वापस जा रही थी तो स्टेशन पर तीस-चालीस बहनों और तीस-चालीस कुमारों का संगठन देखा। जाते-जाते दादी ने कहा कि कमलेश, इनको नज़र न लग जाये, अविनाशी टीका लगा देना।

वरदानी बोल

दादी जी हमेशा एकता का पाठ पढ़ाती। वे सत्यता और पवित्रता की देवी थी। जो बात कह देती थी वो एकदम सत्य हो जाती थी। एक बार जब कटक में ज़मीन ली, फाउण्डेशन डाला गया, प्यारी दादी जी आईं, बहुत धूमधाम से कार्यक्रम हुआ। मैंने कहा, दादी जी आपने फाउण्डेशन डाला है तो आपको ही इसका उद्घाटन करना होगा। दादी जी ने कहा, दादी एक बार आयेगी, या तो फाउण्डेशन पर या उद्घाटन पर। मैंने कहा, दादी, यहाँ तो आपको दोनों में आना होगा तो दादी ने कहा, अच्छा देखेंगे। फिर अमृतवेले मैंने दादी से कहा, दादी यह मकान कैसे बनेगा, इसका बजट सिर्फ कागज़ में है, हाथ में कुछ भी नहीं। प्यारी दादी ने मुझे ऐसा वरदान दिया, सिर पर हाथ रखकर कहा, तुम यहाँ बीस साल से सेवा कर रही हो, देखना यह चुटकियों में सबसे जल्दी बनेगा। दादी के मुख में गुलाब। वही हुआ। दादी जी जो कहती वो वरदान के रूप में हमारे सामने प्रैक्टिकल होता। दादी यहाँ से गई

और जाते ही फाउण्डेशन के लिए पच्चीस हज़ार रुपये का ड्राफ्ट भेजा और कहा, धीरज से करते चलो तो कार्य शीघ्र ही सफल हो जायेगा। ऐसे दादी जी में अपार धीरज था और सचमुच ही दो वर्ष मे मकान बनकर पूरा हो गया।

ममतामयी माँ

दो साल के बाद दादी कोलकाता म्यूज़ियम के उद्घाटन कार्यक्रम में आई। उसी समय नये भवन के उद्घाटन अर्थ दादी जी हमारे पास भी आई। जून 8, 1992 को प्यारी दादी के करकमलों द्वारा उद्घाटन हुआ। प्यारी दादी ने कहा, यह कमलेश ऐसी ममतामयी है जो मुझे दो बार खींच लिया, फाउण्डेशन में भी और उद्घाटन में भी। राजस्थान में ऐसी जगहें हैं जहाँ मैं एक बार भी नहीं गई और यहाँ चार-पाँच बार आ चुकी हूँ। ऐसी थी हमारी माँ स्वरूपा प्यारी दादी। आज भी दादी जी के साथ का अनुभव और दादी की यादों से अपना जीवन चला रही हूँ।

सन् 1976 की बात है, उस समय मेरे पास नीलम बहन थी। दादी-दीदी हमेशा हमें नीलकमल की जोड़ी कहती थी। पत्र में भी नीलकमल कहकर संबोधित करती थी। दादी जी के सारे पत्र आज भी मेरे पास हैं। जहाँ भी रहें, बीच-बीच में पत्र पढ़ते हैं और हमेशा दादी जी को अपने पास अनुभव करते हैं। जब भी मधुबन मे जाती तो प्रात: रोज़ दादी जी को गुडमार्निंग करने जाती, वह एक मिनट का मिलन, मीठे गुडमार्निंग के बोल, दादी से नैन मुलाकात हमारे जीवन में लाखों खुशियाँ भर देती जो सारा दिन खुशी में ही व्यतीत होता। हमें अनुभव होता, दादी का प्यार, दादी की छत्रछाया हमारे साथ है और सदा रहेगी। आज भी हम उसी अनुभव में रहते हैं। बाबा के साथ दादी जी का फोटो मेरे कमरे में है। मैं बाबा और दादी को याद करके कोई भी कार्य करती हूँ तो पूर्ण सफलता मिलती है। अनेक दिव्यगुणों का प्रकाश भी प्राप्त होता है। ऐसी प्रेरणा की स्रोत प्यारी दादी जी को हम कभी भूल नहीं सकते।

******

ब्रह्माकुमारी उर्मिला बहन, संयुक्त संपादिका, ज्ञानामृत, दादी जी के साथ के अनुभव इस प्रकार व्यक्त करती हैं –

ब्रह्मा बाबा के बाद छोटी मम्मा के रूप में 40 वर्ष तक यज्ञ कारोबार, सर्व की दुआओं के साथ चलाने वाली आदरणीया दादी जी के जीवन के उत्कृष्ट गुणसागर में से कुछ बूंदें प्रस्तुत कर रही हूँ।

विशाल दिल और परखशक्ति

सन् 1978 में हमारे पास के शहर में एक बड़ा मेला लगा था। उस समय हमारी माताजी ही ज्ञान में चलती थी। वे उस मेले में सेवार्थ गई थी। मेले का उद्घाटन करने दादी प्रकाशमणि तथा बड़ी दीदी मनमोहिनी दोनों आई हुई थी। हमारी माताजी देखने में बड़ी साधारण, भोली, संकोची और बांधेली थी। लगन बहुत थी, बाबा की याद में खोई रहती थी। माता जी ने सोचा, सब लोग और-और सेवायें कर रहे हैं, बर्तनों वाली सेवा पर कोई नहीं है, मैं कर लेती हूँ। वे सुबह क्लास के बाद से सारा दिन, निर्संकल्प, अथक हो यह सेवा कई दिन करती रही। दादी-दीदी के आने के बाद भी वे उसी प्रकार सेवा करती रही। जब दोपहर

खाने का समय हुआ तो दादी जी और दीदी जी – दोनों भोजन पर आईं। सब लोग उनके आगे-पीछे सेवा में लग गए। दृष्टि और वरदान बड़ों से पाने की भावना तो हरेक के मन में रहती ही है। माताजी इन सब बातों से बेखबर अपनी सेवा में तत्पर थी। पर तभी क्या हुआ, दादी ने पहली गिट्टी तोड़ी और बोली, एक माता सुबह से बर्तन साफ कर रही है, वो नहीं दिख रही, उसे बुलाओ। मेले का चक्कर लगाते दादी-दीदी ने सब सेवाओं का अवलोकन कर लिया था। माताजी को भी देख लिया था। उनके बुलाने पर माताजी आए, सामने बैठे, दादी-दीदी ने बड़े प्यार से मुख में गिट्टी खिलाई, पास बिठाया, प्यार किया, महिमा की और माताजी की आँखों से तो ऐसी गंगा-यमुना बही कि उनके जन्मों के पाप धुल गए। वे घर लौटी तो उनके नेत्रों में, उनके मुखमण्डल पर उसी प्यार की चमक फैली थी। फिर तो वे सारा दिन दादी-दीदी की महिमा गाती और हमें भी उस महिमा के रस में भिगो लेती। मेरी आयु 13-14 वर्ष की थी। मन में धुंधली-सी तस्वीर बनी कि ऐसी कौन महान आत्मा (वो भी नारी) है जिसने मेरी भोली माँ के सच्चे दिल को पहचान कर उसमें सच्चा प्यार भर दिया, अवश्य ही वो दुनिया से न्यारी और कोई अति-अति अलौकिक आत्मा है। अदृश्य रूप में दादी के विशाल दिल, परखशक्ति, निःस्वार्थ प्यार की मेरे दिल पर यह पहली छाप थी।

नम्रता की मूर्ति दादी जी सबके साथ खेलते हुए

प्रभु के प्रति अपनापन

इसके बाद साकार नेत्रों से, आदरणीया दादी जी को पहली बार सन् 1984 में देखा। मैं पहली बार बापदादा से मिलने माउंट आबू आई थी। दादी हिस्ट्री हॉल में थोड़ी-सी कन्याओं के साथ मिलन-मुलाकात कर रही थी। दादी के तनावमुक्त, निश्छल, हँसमुख, भोले चेहरे पर मेरी नज़रें गड़ी हुई थी। उन्होंने ठिठोली करते हुए हम कन्याओं को संबोधित किया, "कन्याओं, आज वो लरका (लड़का) आएगा, उसे अच्छे से देख लेना, पसंद कर लेना।" दादी का इशारा परमपिता परमात्मा की ओर था, जो गुलज़ार दादी के तन में अवतरित होने वाले थे। उनकी इस प्यारी ठिठोली ने दिल पर इस बात की अमिट छाप छोड़ी कि दादी भगवान के बारे में इस तरह बात कर रही है जैसे वो उनका अपना अति प्यारा, छोटा-सा लड़का हो। मन में आया, इतनी बड़ी सत्ता के साथ इतनी समीपता

और अपनापन! इससे हमारे मन में भी भगवान के प्रति पहले से कई गुणा ज़्यादा जिगरी प्रेम उत्पन्न हो गया।

दादी और बाबा एक लगे

सन् 1987 में जब मेरा समर्पण समारोह हुआ और दादी जी ने मुझे गले लगाया तो मुझे लगा कि संसार का सबसे बड़ा सुख यदि है तो इन्हीं नेत्रों से मिलन मनाने में, इन्हीं हाथों को स्पर्श करने में और इसी गले में बाँहें डालने में है। मैंने उसी समय मन ही मन भगवान से कहा, बाबा, मेरा समर्पण तो हो गया, मैं सेन्टर पर भी रह रही हूँ पर मुझे इस महान आत्मा की पालना का, छत्रछाया का डायरेक्ट सुख अवश्य देना। उनके स्पर्श मात्र से मुझे लगा, मै भगवान की ही गोद में हूँ, दादी और बाबा – दो नहीं, एक हैं। भगवान ने मेरी यह आश पूरी भी की। सन् 2000 से सन् 2007 तक मुझे दादी जी की डायरेक्ट पालना मिली।

अपनेपन की गहरी अनुभूति

सन् 2000 में शान्तिवन में सेवार्थ समर्पित होने के बाद भ्राता आत्म प्रकाश जी के साथ भी और अकेले भी दादी जी से कई-कई बार व्यक्तिगत रूप से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उनसे मिलने का अवसर आते ही रूह प्रफुल्लित हो उठती थी। कोई औपचारिकता नहीं। ऐसे लगता था, अपनी दादी, अपना सारा संसार। अपनेपन की ऐसी गहरी फीलिंग में मन को कहीं भी समेटना या सकुचाना नहीं पड़ता था। जो कहना होता था, दिल खोलकर बताते थे। दादी एक-एक बात ध्यान से सुनती थी, खुश होती थी, वरदानी हाथ उठा लेती थी। कई बार आत्म भाई जब मेरी सेवाओं का वर्णन करते थे तो सिर पर हाथ घुमा देती थी, गोद में ले लेती थी, माथा भी चूम लेती थी। मन में जो यह भाव था कि साकार बाबा से नहीं मिले, वो कमी दादी ने पूरी की।

नम्रता की मूर्ति

दादी कितनी निरहंकारी थी! जगदीश भाई के जाने के बाद, दादी जी के नाम से पुस्तकों के प्रारंभ के "दो शब्द" मैं आत्मा ही लिखती रही हूँ। दादी जब उन्हें पढ़ती थी तो खुश होकर कहती थी, जब तुम लिखती हो तो दादी बन जाती हो क्या? यह भी दादी का वरदान ही था कि इस छोटी-सी आत्मा को इतनी महान सेवा के लायक समझा गया। दादी जी ने एक बार लिखने के नाम पर मुझे इनाम भी दिया। मिलते समय मैं नीचे बैठना चाहती थी पर दादी हमेशा अपने साथ सोफे पर बिठाती थी।

एकानामी

जब आबू में चार साल लगातार बरसात नहीं हुई थी और पानी की बहुत कमी थी, उन दिनों की बात है। मैं दादी से मिलने कॉटेज गई थी। तभी मुन्नी बहन ने दवाई के लिए दादी को पानी दिया था। दादी ने गिलास उठाया, बोली, मुन्नी, यह पानी ज्यादा है, दवाई के लिए इससे आधे से भी कम पानी दो। दादी ने पानी कम करवाया ताकि बचा हुआ थोड़ा पानी भी फेंकना ना पड़े।

दादी की इसी बचत के संस्कार ने, करनी-कथनी की एकता ने, सभी समर्पित भाई-बहनों में भी पानी की बचत का संस्कार डाला और सूखे के वो दिन भी आराम से गुज़र गए। इससे मुझे बहुत प्रेरणा मिली, आज भी वह प्रेरणा मेरे काम आ रही है। ◈

दादी चन्द्रमणि

आपको बाबा पंजाब की शेर कहते थे, आपकी भावनायें बहुत निश्छल थी। आप सदा गुणग्राही, निर्दोष वृत्ति वाली, सच्चे साफ दिल वाली निर्भय शेरनी थी। आपने पंजाब में सेवाओं की नींव डाली। आपकी पालना से अनेकानेक कुमारियाँ निकली जो पंजाब तथा भारत के अन्य कई प्रांतों में अपनी सेवायें दे रही हैं। दीदी जी के अव्यक्त होने के बाद आप संयुक्त मुख्य प्रशासिका के रूप में नियुक्त हुई और दादी जी के साथ सहयोगी बन यज्ञ के हर कारोबार को सुचारु रूप से चलाया। ज्ञान सरोवर परिसर की आप डायरेक्टर बनी। आपने 11 मार्च, 1997 को अपनी पुरानी देह का त्याग कर बापदादा की गोद ली।

ब्र.कु. अमीरचंद भाई, दादी चंद्रमणि के साथ के अपने अनुभव इस प्रकार सुनाते हैं –

मर्यादाओं से समझौता नहीं

दादी स्वभाव की बहुत मीठी थी पर नियम-कायदों में बहुत पक्की भी थी। मर्यादाओं में किसी से समझौता नहीं करती थी इसलिए दादी प्रकाशमणि जी उन्हें कन्याओं की ट्रेनिंग कराने के लिए बुलाते थे। उनसे ट्रेनिंग प्राप्त कन्यायें आज पूरे भारत में विभिन्न जगहों पर अच्छी सेवायें कर रही हैं। चंडीगढ़ की अचल बहन, नेपाल की राज बहन, बुरहानपुर की सुधा बहन, देहरादून की प्रेम बहन – ये सभी बहनें दादी की पालना से ही निकली।

मेरा पुरुषार्थ है राजा बनाना

दादी हमेशा कहती कि जो कर्म मैं करूँगी, मुझे देख दूसरे करेंगे, इसलिए मैं कोई भी ऐसा कर्म न करूँ जिसका दूसरों पर गलत असर हो। वे हमेशा आदर्श बनकर रहीं। वे सदा अपने स्वमान में रहती। अक्सर कहती, मेरा पार्ट कोई दूसरा नहीं बजा सकता। हम हर वर्ष उनके साथ हिमाचल प्रदेश जाते, साथ में वे किसी बड़ी बहन को भी ले जाती, खुद सेन्टर पर क्लास-योग कराती और बहनों को भाषण करने के लिए बाहर भेज देती। उनके मन में कभी नहीं आया कि मैं बड़ी हूँ तो मैं ही आगे रहूँ, मेरा ही फोटो आए, लोग मेरा ही भाषण सुनें और सराहना करें। वे कहती थी कि मैं तो हूँ ही बड़ी। एक बार किसी ने पूछा कि दादी, आपका क्या पुरुषार्थ रहता है तो दादी ने कहा, मेरा पुरुषार्थ रहता है राजा बनाना, प्रजा बनाना नहीं। सच में जो खुद महाराजा होगा, वह तो राजा ही बनायेगा। दादी को अपने वर्तमान और भविष्य ऊँची स्थिति का नशा रहता था।

अपना बनाने की कला

अंत तक उनका जीवन बड़ा सादा रहा। इंद्रप्रस्थ में एक छोटे-से कमरे में रही। वही उनका बेडरूम, मीटिंग रूम, डाइनिंग रूम होता था। दादी जी की बहुत बड़ी विशेषता थी कि वे दूर-दूर रहने वाली आत्मा को भी नजदीक ले आती थी, अपना बना लेती थी। हम सोचते हैं कि इसने ओमशान्ति नहीं की तो मैं क्यों करूँ। पर दादी इतनी प्यार भरी पालना देती कि आत्मा नजदीक आ जाती और फिर दादी पर कुर्बान जाती। दादी हरेक की स्थिति को श्रेष्ठ बनाये रखने का संकल्प करती थी।

छोटे बच्चों पर विशेष ध्यान

परिवार के छोटे बच्चों के लिए दादी विशेष हर रविवार क्लास रखती, उनकी पालना करती। वे कहती, आज Sunday नहीं, Sonday है अर्थात् बच्चों का दिन है। वे कहती कि परिवार के छोटे बच्चे अगर बाबा से जुड़ेंगे तो माँ-बाप का भी ज्ञानी-योगी स्वरूप बनेगा। अगर बच्चे खुश रहेंगे तो माँ-बाप की स्थिति भी अच्छी रहेगी। उन दिनों 35-40 बच्चे हर रविवार क्लास में आते थे।

सीधा-स्पष्ट भाषण

दादी जब भाषण करती तो सीधा और स्पष्ट आत्मा, परमात्मा का ज्ञान देती थी। अपना कुछ मिक्स नहीं करती थी। अगर कोई बहन भाषण में कवितायें, कहानी, चुटकुले ज्यादा सुनाती तो दादी कहती, इसने भाषण क्या किया, तालियाँ तो बजी पर बाबा का परिचय तो दिया नहीं। वे कहती, टीचर की पहचान स्टूडेन्ट से होती है, स्टूडेन्ट अच्छे हैं तो टीचर भी अच्छी होगी।

******

दादी चन्द्रमणि अपने लौकिक, अलौकिक जीवन का अनुभव इस प्रकार सुनाती थी –

मैंने बाल्यकाल में बहुत भक्ति की। दसवीं कक्षा तक पढ़ाई पढ़ी। चंद्रमणि नाम अव्यक्त बाबा का दिया हुआ है। इससे पहले मेरा नाम मोतिल था। जब मैं बाबा के पास आई तो बाबा ने मोती नाम रखा। बापदादा ने अव्यक्त नाम गुणों के अनुसार दिये थे। मेरे जीवन में सरलता और शीतलता को देख बाबा ने उस अनुसार मेरा यह नाम रखा। बाबा के साथ मेरे लौकिक परिवार का डायरेक्ट रिश्ता नहीं था परन्तु मेरी दूसरे नंबर की लौकिक बहन की शादी जहाँ की, वे कृपलानी कुल के हैं। उस बहन की सास के देवर, इस संबंध में थे बाबा। मैंने ज्ञान में आने से पहले बाबा को कभी देखा नहीं था क्योंकि बाबा बहुत करके कोलकाता आदि दूर स्थानों पर रहते थे।

मात-पिता के संबंध से भगवान की याद

छोटेपन में मुझे योग करने का बहुत शौक था। गुरुग्रंथ साहब का भी अध्ययन किया था। रात्रि में हमेशा यह प्रार्थना करके सोती थी, "तुम मात-पिता, हम बालक तेरे", तो मात-पिता के संबंध से मैं उस परमात्मा को याद करती थी। हमारे लौकिक घर में सात बहनों के बीच एक भाई था। उसने शरीर छोड़ा

था। बहन के पति ने भी शरीर छोड़ा था, इस कारण से घर में दुख का माहौल था और घर में लोग (सांत्वना देने) भी आते रहते थे। एक बहन की सास और उसकी पड़ोसन भी आती थी। जब हमारे घर का ऐसा दुखी माहौल देखा तो उन्होंने बाबा के बारे में हमें बताया। मैं और मेरी लौकिक बहन हृदयपुष्पा दोनों बाबा के पास गये।

मैं ध्यान में चली गई

उस समय बाबा अपने ओरिजनल घर में नहीं थे। बाबा का एक चाचा था मूलचंद आजवाला, उसके घर में बाबा एक छोटे कमरे में बैठे थे। वहीं पर एक बहन भी थी, जो ध्यान में गई हुई थी। हम भी वहाँ जाकर बैठ गये। वह बहन ध्यान में बोल रही थी, विमान जा रहा है, विमान जा रहा है..। मेरे को उस समय जैसे करंट-सा लगा। मैं देह से न्यारी हो गई और विमान द्वारा उड़कर बाबा के पास चली गई। मुझे मालूम ही नहीं पड़ा कि मैं कितना समय बाबा के पास थी। जब मेरी आँखें खुली तो मैंने देखा कि कोई भी मेरे सामने नहीं था। रात्रि के दस बज गये थे। बाबा ने कहा, बच्ची, देरी हो गई है, कल आना।

मातेश्वरी जी, दादी चंद्रमणि जी, दादी प्रकाशमणि जी तथा अन्य दादियाँ

मातेश्वरी से प्रथम मुलाकात

दूसरे दिन हम बाबा के पास उनके घर में गई, तो मातेश्वरी भी वहाँ आई हुई थी। उसको मैंने स्कूल में देखा था। वह भी हमारे लौकिक पिता की कुछ संबंधी थी। उनके गुणों की सारे शहर में चर्चा थी। कम बोलती थी, मीठा बोलती थी, सबका उनसे प्यार था। वह मुंबई में रही थी, फैशनेबल थी। हमने तो उसको इसी रूप में देखा था। पर जब बाबा के पास आई तो सफेद कपड़े, बाल खुले, गहना कोई नहीं, एक योगिन के रूप में उसको देखा। उसने हारमोनियम पर अपना अनुभव गीत की रीति से सुनाया। उसका सार था कि ओम मंडली में मैंने क्या देखा। उसका स्वर भी बहुत मीठा था। उसकी बदली हुई ज़िन्दगी

देखकर हमारे पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। मेरी लौकिक बहन हृदयपुष्पा से बाबा ने कुछ प्रश्न-उत्तर इस प्रकार से पूछे कि उसको दिव्य अनुभव हो गया। पहले वह अपने को दुखी नारी समझती थी फिर जब आत्मा का अनुभव किया तो बाबा को कहा, बाबा, मैं सुखी नारी हूँ। बहन का चेहरा बदल गया। उसकी भी छाप और पिछले दिन के साक्षात्कार की छाप मेरे दिल पर लग गई।

पुनः सूक्ष्मवतन का साक्षात्कार

उसके बाद बाबा बाहर खड़े थे तो मैंने बाबा को जमीन से आसमान तक के स्वरूप में देखा और अपने को भी एक लाइट के आकार में देखा। ऐसे महसूस करती हूँ कि यह मुझे सूक्ष्म वतन का साक्षात्कार हुआ। बाबा के प्रति मेरा इतना अपनापन का संबंध जुट गया कि यह बाबा ही अपनी माँ है, पिता है और सब कुछ है। उस समय हमें शिव बाबा की प्रवेशता का ज्ञान नहीं था पर ब्रह्मा बाबा के प्रति एक आकर्षण था। उनकी अव्यक्त स्थिति और रूहानियत ने हमको खींचा। लौकिक परिवार के साथ हमने बाबा को कभी भी देह के संबंध में नहीं देखा। चाहे बाबा की युगल थी, चाहे बाबा की बहू थी, चाहे बाबा के बच्चे थे, उनसे भी बाबा ऐसे ही बात करता था जैसे कल्याण अर्थ हमसे करता था इसलिए बाबा का घर ऐसा लगा ही नहीं कि यह कोई गृहस्थी का घर है। वो हमें शुरू से ईश्वरीय परिवार दिखाई दिया।

श्रीकृष्ण जैसा बेटा मिलेगा

इसके बाद बाबा को हमने अपने घर के दुख की बात बताई तो बाबा के जो शब्द निकले, उन्होंने भी गहरी छाप लगाई। जब मैंने कहा, मेरे भाई के असमय शरीर छोड़ने के कारण मेरी माता बहुत दुखी है, तो बाबा ने कहा, बच्ची, मैं तो माताओं का सर्वेन्ट हूँ। ऐसे कहकर बाबा हमारी अंगुली पकड़कर हमारे घर आ गया और जमीन पर ही बैठ गया। मेरे माता-पिता को नष्टोमोहा के संबंध में कुछ समझानी दी और कुछ वस्त्रों के संबंध में (हमारी माताजी ने शोक वाले जो कपड़े पहने थे), कुछ रोने के संबंध में भी समझानी दी। फिर कहा, अगर आप सत्संग में रोज आयेंगी तो श्रीकृष्ण जैसा बेटा मिलेगा। यह जैसे कि बाबा ने वरदान दिया। यह वरदान मिलते ही उसको गोदी में श्रीकृष्ण दिखाई पड़ा और वह एक शिवशक्ति बन गई। फिर तो वह सबको प्रेरणा देने लगी। मेरे लौकिक पिता शराब-कबाब खाने वाले व्यक्ति थे। जब उन्होंने देखा कि मेरी पत्नी के जीवन में खुशी आ गई है, ज्ञानी बन गई है, बदल गई है तो बाबा के निमंत्रण पर वह भी बाबा के पास गया और एक धक से सब बुराइयाँ उनकी छूट गई। उनको दमे की बीमारी थी, वह भी कम हो गई। घर में जो भी आते थे, उन्हें लगने लगा कि यह घर नर्क से स्वर्ग बन गया है। जो संबंधी घर में आते थे, उनसे भी ज्ञान की चर्चा होने लगी। जिस परिवार में हमेशा ग़मी थी, उसमें खुशी आ गई। फिर तो परिवार के बहुत सारे मित्र-संबंधी भी ज्ञान में चलने लगे जो अब तक भी चल रहे हैं। हमारी पाँच पीढ़ियाँ ज्ञान में चल रही हैं। कोई समर्पित हैं और कोई प्रवृत्ति में रहते सेवा कर रहे हैं।

डीप साइलेन्स का अनुभव

हमको बाबा के घर की दीवारों से भी आकर्षण

होता था। बाबा जब ओम की ध्वनि करते थे तो हम डीप साइलेन्स में चले जाते थे। हमारे अंदर कोई छोटा-मोटा पुराना संस्कार था भी तो वह उस साइलेन्स के गहन अनुभव से बहुत जल्दी समाप्त हो गया। फिर निश्चय हो गया कि जो बाबा श्रीमत दे रहे हैं, उसी पर चलना है। जब मैं छोटी थी तो स्वतंत्र विचारों की थी, अपने विचारों का महत्त्व रखती थी कि जो कहूँ वही हो। दूसरे शब्दों में, इसे ज़िद के संस्कार कहते हैं। पर यहाँ जब बाबा की श्रेष्ठ मत को प्यार से समझा तो मैंने मनमत को ईश्वरीय मत से बदल दिया। दृढ़ निश्चय किया कि चलेंगी तो ईश्वरीय मत पर ही चलेंगी, ईश्वरीय मत ही सबसे श्रेष्ठ है। कितने भी तूफान आएँ, मुझे ईश्वरीय गुणों और शक्तियों को धारण करना ही है।

बाबा ने ही दिव्य बुद्धि दी है

जब बाबा कराची गया तो मैं भी बाबा के पीछे-पीछे पहुँच गई। बाबा ने पूछा, कैसे आई? मैंने कहा, बाबा, मुझे बहुत आकर्षण हुआ। मेरे पीछे संबंधी भी आए, पर बाबा के साथ पहले-पहले रहने का मौका हमें मिला। जब बाबा कश्मीर गया था तब भी मुझे महसूस होता था कि मैं हर घड़ी बाबा के सम्मुख हूँ, गीत लिख रही हूँ ज्ञान के पर कहाँ से प्रकट हो रहे हैं, यह मालूम नहीं है। फिर बाबा को वो गीत भेजे। बाबा ने मेरे को उनका अर्थ लिखकर भेजा ताकि वो अर्थ सभा में सुनाया जाये। बाबा हम आत्माओं को बहुत आगे बढ़ाना चाहते थे। इस प्रकार बाबा हमें दूर से भी सकाश देते थे, जिसकी छाप भी मेरे दिल पर है। दिल से निकला, यह कौन आया, जिसने हमारी ज़िन्दगी बदल दी। बाबा ने ही दिव्य बुद्धि दी, नहीं तो हमारी ऐसी बुद्धि थी थोड़े ही। स्कूल में जाती थी तो एक बार मैंने बाबा को कहा, स्कूल छोड़ दूँ, तो बाबा ने कहा, बच्ची, सेवा नहीं करनी है क्या? बच्चों को और टीचर्स को ज्ञान सुनाना है ना! सच्ची गीता का ज्ञान सबको सुनाना है। स्कूल में जो प्रार्थना होती है, उसका अर्थ करके सबको समझाओ। लौकिक पढ़ाई में हमको गीता-ज्ञान का पीरियड भी था जिसका हमको बहुत लाभ मिला। इसलिए छह मास मैं और पढ़ी। फिर बाबा ने ओम निवास खोला तो हमको बच्चों की टीचर के रूप में चुना। शुरू से लेकर बाबा ने हमसे सेवा कराई।

खुश और योगयुक्त बच्चे

स्कूल में हम, बच्चों को राजविद्या और रूहानी विद्या – दोनों पढ़ाते थे। मैं अंग्रेजी पढ़ाती थी। और बहनें भी थीं जो अलग-अलग विषय पढ़ाती थी। बाबा हमारे ऊपर ऐसे थे जैसे प्रिंसिपल होता है। बीच-बीच में आकर पीरियड लेते थे और रात्रि को हमसे सारी दिनचर्या पूछते थे। हमको सिखाते थे कि बच्चों से कैसे चलना है। बाबा कहते थे, यदि कोई रोता है तो ऐसे नहीं कि उसको डाँटना है बल्कि प्यार से समझाना है, बच्चों को दिव्य बुद्धि मिलनी चाहिए, कितनी भी चंचलता हो, प्यार से हैण्डल करने से वे जरूर पढ़ लेंगे, यही होवनहार बच्चे हैं। ये बच्चे 5 से 12 वर्ष तक के थे। पहले 50 बच्चे थे। पहले बाबा की एक बिल्डिंग थी, जिसमें बाबा रहते थे। फिर बच्चों के हॉस्टल के लिए नया भवन बनवाया। यह भवन तीन मंजिल का था। बीच की मंजिल में स्कूल था, हम भी रहते थे। ऊपर की मंजिल में बड़ा हॉल था जहाँ 50

बेड थे जिन पर सफेद चदरें बिछी रहती थी। बाबा हमें सिखाते थे, ये बच्चे घर से आये हैं, अपने-अपने घर के संस्कार लेकर आये हैं, इन सबका ब्रश, पेस्ट, टावल अलग-अलग रखना है ताकि कोई एक-दूसरे की चीज़ इस्तेमाल न करे। बच्चों को फ्रेश हवा बगीचे की मिलनी चाहिए। उनका मन के साथ-साथ तन भी दुरुस्त होना चाहिए। इन बातों की ट्रेनिंग बाबा हमें देते थे। बच्चों को सुबह – भाषा (इंग्लिश आदि), हिसाब, साइंस – ये विषय पढ़ाते थे, शाम को रूहानी विद्या पढ़ाते थे जिसमें गीत, डायलॉग आदि लिखना, उनको सिखाना, उनसे भाषण करवाना, ये सब बाबा हमको बताते जाते थे और हम करते जाते थे। बच्चों को समय पर नाश्ता, भोजन सब कुछ अपने आप मिलता था। उनको माँगने की कोई जरूरत नहीं पड़ती थी। सब बच्चे बड़े खुश और योगयुक्त रहते थे। इससे हमने प्रैक्टिकल में बच्चों की बदली हुई जीवन देखी।

ज्ञान का स्पष्टीकरण

सिन्ध-हैदराबाद में छह मास हॉस्टल में रहने के बाद जब हम कराची गये, तब शिव बाबा ने ब्रह्मा बाबा के सामने सब कुछ प्रत्यक्ष किया कि तुम (ब्रह्मा) कौन हो, मैं कौन हूँ आदि-आदि। अपना परिचय देकर संबंध का सारा ज्ञान दिया लेकिन हमारा संबंध पहले से जुटा हुआ था। शिव बाबा ने यह भी बताया कि मैं ज्योतिबिन्दु हूँ, दुख-सुख में नहीं आता हूँ, आप आत्मायें चक्र में आती हो, मैं नहीं आता हूँ। यह हमने नई बात सुनी। पहले हमने समझा था कि शिव बाबा और ब्रह्मा बाबा एक ही हैं लेकिन शिव बाबा ने ज्ञान देकर यह स्पष्ट कर दिया कि ब्रह्मा अलग है और मैं शिव अलग हूँ। यह साकार है, मैं निराकार हूँ। हमें साकार से ही परमात्मा की भासना आती थी परन्तु परमात्मा कैसा है, यह समझ में तब आया जब उसने ज्ञान दिया।

"ओम" शब्द सर्वत्र

बाबा हमको सदा ओम शब्द से बुलाते थे जैसे ओम रामा, ओम मोती, ओम मिट्ठू आदि और हम कहते थे, ओम बाबा, ओम राधे। ओम माना पहले आत्मा का परिचय आ जाता था। ओम माना मैं पवित्र आत्मा। बाबा हमेशा कहता था, आत्मा की स्मृति से एक-दो को बुलाओ और आत्मा की स्मृति से ही बातचीत करो। "जशोदा निवास" बाबा की बिल्डिंग का नाम था। यह बाबा की युगल के नाम पर था। ओम शब्द लगाने से उस का नाम ओम मण्डली पड़ गया। दूसरी बिल्डिंग जो हॉस्टल थी, उसका नाम "ॐ निवास" इसलिए पड़ा क्योंकि बिजली का एक बहुत बड़ा "ॐ" बिल्डिंग के ऊपर लगाया गया था जो सारे शहर में दिखाई देता था। बड़े अर्थ से इन दोनों भवनों के नाम रखे गये थे।

ज्ञान की मस्ती के गीत

गाने में मातेश्वरी बहुत होशियार थी। वह हमको भी गीत आदि सिखाती थी। उन दिनों हमको बहुत नशा रहता था। कोई अच्छा लौकिक गीत का रिकार्ड होता था तो हम बाबा को देते थे। बाबा दो बजे उठकर उसके शब्दों को बदलकर ज्ञान का कर देते थे। हमारे गीत भी बड़े ज्ञान की मस्ती के होते थे जैसे यह गीत है–

मैं तो हँस-हँस जन्म बिताऊँगी,
मैं तो नाचत हरि गुण गाऊँगी

लक्ष्य जोगी ने ओम बताया
आई एम आत्मा, माई मम माया
मैं तो माई को आई में समाऊँगी
मैं तो हँस-हँस जन्म बिताऊँगी।

ये सब हमारे अनुभव के गीत हैं। अनुभव से ही हम गाते थे।

निरहंकारी बाबा

शिव बाबा का तन बड़ा साधारण है। साधारण तन को देखकर ब्रह्मा बाबा के संबंधियों ने तथा और भी कइयों ने नहीं पहचाना। शिवबाबा निराकार हैं, परकाया प्रवेश करते हैं, उनको समझना भी तभी हो सकता है जब कोई योगयुक्त होता है। बाबा स्वयं भी कहते हैं, मुझ साधारण तन में आये हुए को मूढ़मति लोग पहचानते नहीं। हमने तो बाबा को आते ही समझ लिया चाहे बाबा ने साधारण रूप से हमारे साथ-साथ यज्ञ सेवायें की परन्तु हमें साधारण दिखाई नहीं पड़े। हमको तो उनके चरित्र दिखाई पड़ते थे। जब हम कराची में गुलजार भवन में थे, तब गऊ का दूध डायरेक्ट पीते थे। बाबा बड़े इकॉनामी वाले थे। हमें भी इकॉनामी सिखाते थे। कोयले के जो छोटे-छोटे महीन टुकड़े (चूरा) बच जाते थे, उसके साथ छेना (गोबर) मिलाकर गोले बनाकर बाबा रखते थे और हमें भी सिखाते थे। हम सब बड़े घरों के थे, बाबा जानता था कि ये सब, ये गोले शायद बना न सकें लेकिन बाबा खुद ही बैठ बनाते थे। बाबा को देखकर हम भी बैठ जाते थे लेकिन हम सोचते थे कि बाबा यहाँ न बैठें। बाबा ऊँचे से ऊँचे, इतना साधारण काम न करें। इससे अच्छा है कि बाबा किसी को ज्ञान समझायें। ऐसा समझकर हम कहते थे, बाबा, अचानक आपसे मिलने कोई मेहमान या जिज्ञासु आ जाये, बड़ी उत्कण्ठा लेकर, तो क्या देखेगा? बाबा ने कहा, देखेगा क्या, तीन लोक देखेगा और सचमुच एक बार ऐसा ही हुआ। एक व्यक्ति बाबा से मिलने आया। बाबा ने उसको दृष्टि दी और वह ध्यान में चला गया। ऐसे ही छोटी-छोटी बच्चियाँ बाबा के सामने खड़ी होती थी, बाबा दृष्टि देते थे तो वे अशरीरी हो जाती थी, कभी अपने को सूक्ष्म वतन में, कभी बैकुण्ठ में देखती थी। इस प्रकार, कई प्रकार की अनुभूतियाँ होती थी। हमने देखा, बाबा जितने ऊँचे ते ऊँचे थे उतने ही निरहंकारी थे। उनको सदा ध्यान मे था, जैसा कर्म मैं करूँगा, मुझे देख दूसरे करेंगे।

कर्मयोगी स्थिति

यज्ञ में तो हम लगभग 400 बहन-भाई थे। स्थूल काम बहुत होता था। भाई इतने थे नहीं। दुनिया में, कई कामों के लिए समझते हैं कि भाई ही कर सकते हैं। बाबा ने हम बहनों में फेथ रखकर वे सब काम हमसे करवाए। काम चाहे बहनों वाले थे या भाइयों वाले, हम सब कार्य अच्छे से करते थे। कर्म तो दूसरे मनुष्य भी करते हैं लेकिन बाबा ने हमें सिखाया कि किस स्थिति में रहकर कर्म करना है। बाबा हमेशा देखते थे कि ये स्थूल कार्य तो करते हैं लेकिन इनकी अवस्था क्या है? क्या ये अकालतख्त पर विराजमान होकर कार्य कर रहे हैं? इनका चेहरा कैसा है? क्योंकि बाबा चाहते थे कि मेरे बच्चे, मेरे जैसे हों। बाबा बहुत समझाते थे कि यज्ञ सेवा, यज्ञ से प्यार जुटायेगी। हम दिन-रात प्यार से मिलजुलकर हर प्रकार की सेवा

करते थे और बाबा भी हमारे साथ-साथ होते थे। लौकिक घर वालों को कैसे पत्र लिखा जाता है, वो भी बाबा हमें सिखाते थे। ऐसे लगता था कि यह एक अलौकिक परिवार है और हम सब भट्ठी के अन्दर हैं। कर्म करते भी योग में रहते थे। हमारे साथ कौन है, यह एक सेकंड भी भूलता नहीं था। ऐसी स्थिति हमारे सम्मुख कर्म करके बाबा ने हमारी बना दी।

गृहस्थ-आश्रम बनाकर दिखाया

एक बार हमने बाबा को फोटो खिंचवाने को कहा। हमारे मन में था, जिस तन में भगवान अवतरित हुआ, उस तन का फोटो घर-घर में होना चाहिए। इस शरीर की भी सबको समझानी मिले कि भगवान अनुभवी रथ में आये हैं क्योंकि प्रवृत्ति वाले भी चाहते हैं कि हम प्रवृत्ति में भी रहें और हमारा घर स्वर्ग समान बने। गृहस्थ, आश्रम बन जाये। तो यह सब प्रैक्टिकल करने के लिए बाबा ने शुरूआत भी अपने घर से की। अपना गृहस्थ आश्रम बनाकर दिखाया, प्रैक्टिकल अपना जीवन भी दिखाया। इससे हम सब भी और समाज भी बदलता गया। हमारे लौकिक पिता ने मातेश्वरी में "श्री लक्ष्मी" का साक्षात्कार किया और भी कइयों ने कई प्रकार के साक्षात्कार किये। फिर भी बाबा तो चाहते हैं कि हम साक्षात् मूरत बनें। शुरू में कोई ऐसा बना हुआ नहीं था इसलिए बाबा ने साक्षात्कार करवाये। अभी तो सैम्पल साक्षात् बन गये इसलिए वह बात नहीं रही। बाबा की आशा को बच्चे पूरा कर रहे हैं।

साइलेन्स पावर की छाप

बाबा खेलते थे तो भी हमें दिखाई देता था कि बाबा लाइट में हैं। एक बार मैं सारी पार्टी को लेकर बाबा के कमरे में गई। बाबा ने दृष्टि दी, पार्टी अव्यक्त स्थिति में स्थित हो गई। कोई भी आता था तो पहले पहले बाबा दृष्टि देते थे। दृष्टि से ही बल मिल जाता था। जब हम बाबा के सामने योग में बैठते थे तो हमारा चलता हुआ संकल्प बंद हो जाता था। मान लो किसी बात के लिए हम संकल्प करते हैं लेकिन बाबा के सामने आकर जैसे ही बैठे, संकल्प बंद हो जाता था। इतनी बाबा की डेड साइलेन्स की स्थिति थी जो हमारे में भी उसका प्रभाव आ जाता था।

बाहर कत्लेआम, हम सूक्ष्मवतन में

जब विभाजन हुआ तो अनेक प्रकार के समाचार सुनने में आते थे। पेपर आदि पढ़ने से वातावरण स्थूल और बाह्यमुखी हो जाता है। बाबा नहीं चाहते थे कि इस प्रकार की न्यूज बच्चे सुनें। बाबा ने कोई न्यूज हमें सुनाई नहीं कि बाहर क्या हो रहा है। और ही सन्देशियों को उड़ाते थे। आठ सन्देशियाँ भी एक साथ ध्यान में जाती थी। सन्देशियाँ वतन में जो देखकर आती थी, वो बाबा को बताती थी, फिर रोज शाम को प्रैक्टिकल करके दिखाया जाता था। कभी वो करके दिखाती थी कि अंत में कौन-से डिवाइन फादर बाबा के पास आयेंगे, फिर वो कैसे बाप का वरदान लेंगे, कैसे उनका उद्धार होगा। कभी प्रह्लाद की कहानी दिखाते थे कि उसे कितना उसके पिता ने सताया फिर भी वो कैसे भगवान की याद में रहा, कैसे उसने सब सहन किया। दृश्य बनाने के लिए बाबा उनको कपड़े भी देते थे। पहाड़ियाँ आदि भी बनाई जाती थी। धर्मराज का रूप कैसा होता है, यह भी दिखाते थे। सारी राजधानी का दृश्य दिखाया जाता था कि वहाँ बच्चा कैसे जन्म लेता है,

स्कूल कैसा होता है, भाषा कैसी होती है, स्वयवर कैसे होता है आदि-आदि। बाहर मनुष्य कत्लेआम कर रहे थे, हम वतन में बैठे थे इसलिए हमें ना कुछ पता पड़ा, ना हमारे मन में उस वातावरण के प्रति कोई विचार आया, इसको कहते हैं भट्ठी। जैसे अब भी बाहर संसार में बहुत कुछ हो रहा है परन्तु हम अपनी योग-तपस्या में मस्त हैं।

कभी-कभी बाबा मुरली में कहते है, कोई सन्त शरीर छोड़ता है तो डेड साइलेन्स हो जाती है। इसका अनुभव हमको बाबा ने करवाया। शरीर यहाँ है, आत्मा लाइट रूप में परमधाम में जा रही है। ट्यून भी साइलेंस की बजती थी। पहले दृष्टि देकर बाबा अपनी भी पावर देते थे। इस स्थिति में कई ध्यान में चले जाते थे। कई फिर डेड साइलेन्स में चले जाते थे।

हर कर्म की जाँच

बाबा हमारी नींद भी देखते थे कि कौन देरी से सोता है, कौन स्वयं उठता है, कौन दूसरों के उठाने से उठता है। योगी वो जो स्वत: उठे। इस प्रकार बाबा ने हमारे हर कर्म की जाँच-परख की ताकि बाबा को पता पड़े कि कौन अपने में पावर भर रहा है, कौन दूसरों के कल्याण के लायक बन रहा है।

एडजेस्ट करना ही पावर है

कुंज भवन में ऊपर में टंकी थी। टंकी को सीढ़ी लगी थी। मैं सीढ़ी चढ़कर टंकी पर जाकर बैठ जाती थी। वहाँ बैठकर मैं महसूस करती थी, मैं सबसे ऊपर हूँ, बाकी सबको छोटे-छोटे बच्चों के रूप में देखती थी। यह अभ्यास करती थी। इससे पावर आती थी, किसी में आँख नहीं डूबती थी। निर्भयता आती थी। दातापन का नशा चढ़ जाता था। नशा ऐसा न हो कि यह कौन है मेरे को ऑर्डर करने वाला। वास्तव में पावर क्या है, एडजेस्ट करना ही पावर है। यह नशा होना चाहिए कि मैं किसी को चला भी सकती हूँ और किसी से चल भी सकती हूँ।

मम्मा की सीख

यदि हमसे कोई भूल हो जाती थी तो मम्मा-बाबा डाँटते नहीं थे, समझाते थे। मम्मा के साथ हम कई बहनें रहती थी। एक बार मम्मा ने कहा, मैं आपके साथ नहीं रहेंगी, दूसरे बंगले में जाकर रहेंगी। आपको कितनी बार समझाया, फिर भी वही ग़लती। इससे तो दूसरों के साथ रहूँ तो वो कितना सीखें। मम्मा चली गई बिना बोले। फिर अंदर से हमको आया कि यह हमने ठीक नहीं किया। फिर हमने माफी माँगी और प्रण किया कि फिर नहीं दोहरायेंगे। मम्मा फिर हमारे साथ आकर रही। फिर वह ग़लती कभी नहीं हुई। तो मम्मा ने गुस्सा भी नहीं किया, बस दूसरे बंगले में चली गई, इस तरह हम समझ गये।

जिस साइलेन्स पावर में बाबा खुद रहता था उसकी छाप हमको भी लगाई। हम भी ऐसा समझती हूँ कि इस ब्रह्मलोक से आई हुई मैं आत्मा पवित्र हूँ। कभी वतन का अनुभव, कभी बैकुण्ठ का अनुभव। बाबा सैर करवा रहे हैं अलौकिक दुनिया की। इस दुनिया में तो हम निमित्त मात्र सेवा अर्थ रहते हैं।

आत्मा साफ हो रही है

एक बार मातेश्वरी ने हमसे पूछा, योग में क्या अनुभव हुआ? हमने कहा, ऐसा अनुभव हुआ कि सामने बैठे बाबा से लाइट और माइट मिल रही है।

जैसे स्नान करके व्यक्ति रिफ्रेश हो जाता है, ऐसे ही लगा कि आत्मा एकदम साफ हो रही है, पावर मिल रही है और आत्मा सतोगुणी बन रही है। कोई संकल्प नहीं, देह का या देहधारियों का। बस आत्मा और परमात्मा के मिलन की अनुभूति। आज तक भी मेरे अंदर उस साइलेन्स पावर की छाप है। हमको बाबा और मम्मा ने जोर देकर समझाया था कि सदा याद रखो, मैं कौन-सी आत्मा हूँ। वह निश्चय मेरे अन्दर है। मै पवित्र, शुद्ध आत्मा हूँ। आत्मा तो हूँ पर ऐसी आत्मा हूँ। मेरा स्वरूप है प्रेम का, डिवाइन प्रेम का। आत्मायें भाई-भाई हैं और लक्ष्य मेरा सर्वगुण संपन्न बनने का है। कोई गुण की कमी नहीं।

बाबा भुलाने से भी भूलाये नहीं जा सकते

एक बार मम्मा ने यह भी पूछा था, क्या पुरुषार्थ करती हो? उस समय हम छोटी थी, कराची में थी। मैंने कहा, मम्मा, जैसा कर्म मैं करूँगी, वैसा और करेंगे। यह मेरी बुद्धि में पक्का हो गया है। हम शुरू से सबके साथ एडजेस्ट होकर चले। कभी भाव-स्वभाव में समय वेस्ट नहीं गया है। शुरू से बाबा ने हमें ऐसा रखा। मातेश्वरी ने शुरू-शुरू में मुझे अपने साथ रखा। कुछ भी होता था तो मेरे द्वारा यज्ञ का सारा कार्य कराती थी। त्याग क्या है, मेहमान होके कैसे रहना है, यह सिखाया। किसी ग़लती करने वाले को समझाती थी तो मातेश्वरी मेरे को साथ में बिठाती थी ताकि हम भी सीखें। मातेश्वरी बहुत दिव्यगुणधारी थी। योग-योगेश्वरी, ज्ञान-ज्ञानेश्वरी थी। मुझे साथ रख वो अनुभवी बनाती रही। पहले हम कुंज भवन में मम्मा के साथ रही, फिर गुलजार भवन में दीदी के साथ रही। दीदी भी बहुत शुरूड बुद्धि थी। किसी को वायब्रेशन से पहचान जाती थी। हम सब बहनों की आपस में यूनिटी थी और दिनचर्या सारी बाबा के साथ-साथ थी। इस प्रकार मैं मम्मा की असिस्टेंट और दीदी की भी असिस्टेंट कंट्रोलर होकर रही। मैं थी तो 13-14 वर्ष की, स्कूल में पढ़ती थी, अनुभव तो मेरे पास नहीं था पर बाबा ने मेरे से बड़े-बड़े कार्य करवाये। इतनी बड़ी सेवा के कार्य कोई नहीं करवा सकता। इसलिए मेरे दिल पर बाबा के प्रति छाप है। आज कोई किसी को पानी पिला दे या समय पर मदद कर दे तो वह उसको भूलता नहीं है, बाबा ने तो हमको कदम-कदम पर ऊँचा उठाया है तो कैसे भूलूँ? भुलाने से भी भूलाया नहीं जा सकता। कई कहते हैं, हमारा योग नहीं लगता, मैं कहती हूँ, अरे बाप, टीचर, गुरु तीनों के संबंध से बाबा ने हमारा जीवन बनाया, तो कैसे उनको भूलें!

मम्मा को सदा योगयुक्त देखा

मम्मा का हर गुण मुझे अच्छा लगता था। बहुत मीठा और धैर्य से बोलती थी। किसी की ऐसी-वैसी बात सुनाओ तो सुनती नहीं थी। कभी स्थूल बातों में या कभी ग़मी वाले चेहरे में हमने मम्मा-बाबा को देखा ही नहीं। सदा योगयुक्त ही देखा। मम्मा को सदा, मीठी-मीठी शिक्षायें देकर दूसरों का जीवन बनाते ही देखा। हमारी बुद्धि सदा गुण ग्रहण करने में जाती है। मम्मा, बाबा, बहनों, भाइयों से सदा गुण ही उठाये हैं। प्यार मेरा बहुत है सबसे। किसी भाई-बहन को बहुत सेवा करते देखती हूँ तो सोचती हूँ, कितनी सेवा कर रहे हैं, अवगुण में मेरी बुद्धि जाती नहीं है। कोई सुनाता भी है तो किसी का अवगुण मेरे चित्त पर खड़ा नहीं

होता, बह जाता है। बुरी बात, कोई टाइम कान पर आयेगी भी तो पता नहीं कैसे भूल जाती हैं।

सच्चा प्यार मम्मा के प्रति यही है कि हम उन जैसे गुण धारण करें, इसलिए उनके अव्यक्त होने पर हमारी अवस्था पर कोई फर्क नहीं आया। पता ही था, शरीर तो छूटना ही है। जब मम्मा ने शरीर छोड़ा, मैं सेवाकेन्द्र पर थी, मास बाद आई थी। बाबा ने पूछा, बच्ची, आपके मात-पिता कौन हैं? मैंने कहा, मेरे सामने आप जो बैठे हैं, आप ही मेरे मात-पिता हैं।

मम्मा बहुत सहनशील थी

मम्मा की समझानी सदा बेहद में चलती थी। अनादि सृष्टि के चक्र पर ध्यान रहा सदा। इससे हदें टूट जाती हैं। कुछ भी बातें आने पर मम्मा की स्थिति पर कोई असर नहीं आता था। हमने भी मम्मा से यह गुण सीखा। अमृतसर में विरोध हुआ तो मम्मा ने कैसे धैर्य से सबको शान्त कर दिया। वह बहुत सहनशील थी, योगी थी, कर्मेन्द्रियों पर पूर्ण कंट्रोल था। छोटी आयु में ही जगत-जननी रूप धारण कर लिया। हम पूछते थे, मम्मा, आप क्या चिन्तन कर रही हो, तो कहती थी, मैं यहाँ थोड़े ही हूँ, मैं तो बैकुण्ठ की धरती पर चल रही हूँ। इस प्रकार, रोज हमको नये-नये अनुभव सुनाती थी। बाबा पूछता था, आपको अमुक बात में कितना निश्चय है? हम कहते थे, निन्यानवे प्रतिशत। मम्मा कभी नहीं कहती थी, निन्यानवे प्रतिशत, सबमें सौ प्रतिशत। मम्मा ने चारों विषयों को बहुत जल्दी कवर किया इसलिए पावरफुल बन गई। न किसी से उनकी अटैचमेन्ट थी, न विरोध था। मम्मा अमृतसर में दो बार आई सेवार्थ। रोज बड़ा सत्संग होता था। मम्मा भाषण करती थी। पार्टियों से मिलती थी। भाई-बहनों में पावर भरती थी, उनके बोल में बहुत शक्ति थी।

पहले-पहले हम शाम को 4-5 बजे अच्छे से योग करते थे। बाबा को हमें दोनों बातों में आगे बढ़ाना था। तन की दुरुस्ती में भी और मन की दुरुस्ती में भी। आपने चित्र देखा होगा, बाबा ने हमको कपड़े भी ऐसे ही पहनाये कि स्त्रीपन का भान खत्म हो जाये। बाबा हमको पैदल ले जाते थे और फिर एक स्थान पर खड़े हो जाते थे तो मैं सबको ड्रिल कराती थी क्योंकि मैं लौकिक स्कूल में, स्थूल ड्रिल में तथा खेलपाल में भी होशियार थी। अगर कोई हिन्दी इंग्लिश नहीं जानते थे तो मैं सबको इकट्ठा पढ़ाती भी थी।

बाबा कहते, तुम हनुमान हो

शुरू से बाबा मुझे पावरफुल समझते थे। मैंने कभी ऐसा-वैसा नहीं समझा अपने को। बाँधेलियों के साथ भी मेरा पार्ट था। शील इन्द्रा दादी बाँधेली थी। उसको चिट्ठी पहुँचाती थी। लौकिक घर तो हैदराबाद में था। वहाँ आती थी। बाबा कहते थे, तुम हनुमान हो, तुम सीताओं को बाबा की निशानी (पत्र) देती हो। यह भी बाबा का वरदान रहा। जहाँ भी पाँव जाता था, सफलता मिलती थी।

लौकिक परिवार की सेवा

बाबा ने मुझे लौकिक परिवार के पास सेवा के लिए भेजा तो मैंने कहा, मेरा कौन-सा कर्मबन्धन है जो मैं उनकी सेवा करने जाऊँ, बाबा मेरे को क्यों भेजता है, बाबा क्यों कहता है, इनको वाणी तुम सुनाओ। मैं नहीं चाहती थी। पर मेरा भविष्य बाबा को

बनाना था। मेरा लौकिक में लगाव भी नहीं था पर बाबा को था कि यह तो अलौकिक बन गई, अब परिवार को भी अलौकिक बनाये।

मैंने अपने लौकिक पिता को कहा था, मुझे पत्र लिखकर दो कि मैं अपनी पुत्री को ज्ञानामृत पीने-पिलाने की स्वीकृति देता हूँ। साथ-साथ यह भी कहा कि शादी के बाद जो देना है वो भी यहाँ यज्ञ में देकर सफल करो। पिता ने कहा, क्यों मैं आपको दूँ, क्यों ना मैं ही समर्पित हो जाऊँ? अब देखो इस बोल से ही कितना बड़ा कार्य हो गया। हमको तो पता नहीं था कि ये कोई समर्पित हो सकते हैं। मैंने तो उनको कहा, आप नहीं समर्पित हो सकते। हमारा तो कोई बाल-बच्चा नहीं, संबंधी नहीं पर आपका तो सब कुछ है, दुकान है, मकान सभी भाइयों के साथ है, इतनी बच्चियाँ हैं, आप कैसे समर्पित हो सकते हो? मन से हो सकते हो परन्तु जैसे बाकी सभी तन से भी हो जाते हैं, वैसे आप नहीं हो सकते हो। तो बोले, आप मेरी बात बाबा को जाकर सुनाओ। मैंने बाबा को बताया। बाबा ने कहा, क्यों नहीं, यह बच्चा नहीं है क्या? बाबा ने एकदम उस बात को स्वीकार किया कि कोई चाहता है कि मैं बंधनों से मुक्त बनूँ तो यहाँ हो सकता है। बाबा ने बात की। जैसे बाबा ने अपने मकान, दुकान का जल्दी में फैसला कर दिया, इन्होंने भी कर दिया। पर बाबा ने एक बात रत्नचन्द दादा (लौकिक पिता) को सुनाई, आप समर्पित होंगे, यज्ञ में पाँव रखेंगे, बड़ा पेपर आयेगा। हर प्रकार का पेपर – शरीर का, संबंधों का, संकल्पों का आयेगा, सामना करने की शक्ति है आपमें? बोले, है। बाबा ने कहा, तो हो जाओ समर्पण। इन्होंने भाई को सब हिसाब दिया और दुकान आदि भाई के बच्चों को दी। भाई के साथ तो बलराम-कृष्ण जैसा प्रेम था। तभी भाई ने अचानक शरीर छोड़ दिया। पेपर आ गया। फिर संबंधियों ने समझाना शुरू किया, घर में रहो। पर इनका बाबा से अटूट प्यार था। एक बल, एक भरोसे रहे। बाबा ने कराची में इन्हों को अपने साथ रखा। पिछाड़ी में जब शरीर छोड़ा तो भी एक बाबा की याद थी। उस समय पूना में थे। आँख बंद हुई और गये। सब पवित्र ब्राह्मणों के हाथ लगे अंत में। ईश्वरीय याद और टोली देकर बाबा ने मेरे को भेजा।

मुखी के पास रिकार्ड

निर्मलशान्ता के ससुर का भाई हरकिशन मुखी था। बाबा के घर के पास उसका घर था। बाबा ने एक रिकार्ड, "इस पाप की दुनिया से दूर कहीं ले चल" मुझे देकर उनके पास भेजा। बाबा ने कहा, उनको जाकर ज्ञान समझाओ लेकिन उसने सोचा, इस रिकार्ड में भी जादू है, इसलिए उस रिकार्ड को भी तोड डाला। उसने उस समय बाबा को पहचाना नहीं, बाद में पहचाना।

एक और परीक्षा

कराची में साधु टी.एल.वासवानी ने कन्याओं के लिए मीरा स्कूल खोल रखा था और वे सत्संग करते थे। एक दिन बाबा ने हम बच्चों को कहा कि आप जाकर साधु वासवानी जी को ईश्वरीय सन्देश भी दे आओ और ज्ञान-वार्तालाप भी कर आओ। उन दिनों यह मालूम हुआ था कि साधु वासवानी जी "ओम मण्डली" के विरुद्ध पिकेटिंग करने की बात सोच रहे हैं। अतः बाबा ने हमें कहा कि वासवानी जी को कहना कि पहले आप स्वयं "ओम मण्डली" को अच्छी तरह

देखिये, वहाँ आने वाले सत्संगियों के अनुभव पूछिये और यूँ ही सुनी-सुनाई बात पर कोई निर्णय न कीजिये और बिना जाने आंदोलन करने की भूल न कीजिये। अत: हम कुछेक बहनें इकट्ठी होकर उनके पास गई और ईश्वरीय सन्देश का एक ग्रामोफोन रिकार्ड भी साथ ले गई। हम लोगों से उनका ज्ञान-वार्तालाप हुआ। हमने उन्हें अपना अनुभव भी सुनाया और यह भी बताया कि अब परमपिता परमात्मा हमें क्या ज्ञान दे रहे हैं, उसका लक्ष्य क्या है, उससे हमें प्राप्ति क्या हुई है और उससे हमारे जीवन में परिवर्तन क्या आया है। यह सब सुनकर वासवानी जी बहुत खुश हुए। हमने बाबा की ओर से और "ओम मण्डली" की ओर से, "ओम निवास" में आने का निमंत्रण भी दिया।

वह कहने लगे, अच्छा, मैं आपके साथ ही चलता हूँ। चुनाँचे, वे हम सभी के साथ ही कार में बैठकर चलने लगे। ज्यों ही वे कार में बैठे त्यों ही कार के चारों ओर उनके सत्संग में आने वाले तथा प्रशंसक नर-नारी घेरा डालकर खड़े हो गये। उन्होंने कहा कि हम नहीं जाने देंगे। साधु वासवानी ने कहा कि डरिये नही, मैं एक घण्टे में वापस लौट आऊँगा। परन्तु उन लोगों को यह झूठा डर था कि यदि वे भी वहाँ चले गए और इन पर भी ओम मण्डली का ऐसा प्रभाव पड़ गया कि वहीं के हो गए तो हम सबका क्या बनेगा? अत: उन्होंने वासवानी जी को नहीं जाने दिया। आखिर वासवानी जी कार से उतर आये और बोले कि दादा से मिलने का बहुत ही मन था परन्तु अभी नहीं चल सकूँगा, फिर कभी आऊँगा।

अब साधु वासवानी जो को उनके शिष्यों तथा मुखी लोगों ने खूब भड़काया। एक दिन आया कि साधु वासवानी जी ने उन सभी के साथ मिलकर ओम निवास के बाहर पिकेटिंग की। हज़ारों लोग वहाँ इकट्ठे हो गए। सभी ने बहुत जोर से आक्रमण किया। वे दीवार तोड़कर अंदर भी घुस आये लेकिन शीघ्र ही पुलिस ने पहुँचकर सभी को भगा दिया। वासवानी जी को पुलिस वाले ले गए। ऐसी जगह भी बाबा हमको भेजते थे।

आबू है धर्माऊ स्थान

जब हम सन् 1950 में आबू में आए, आते ही बेगरी लाइफ शुरू हो गई परन्तु बाबा ने हमको पता ही नहीं पड़ने दिया बेगरी जीवन का। उस समय जो मकान था, उसमें हवा उलटी तरफ से आती थी। सामने श्मशान घाट भी था। उस हवा के कारण कई बीमार हो गये थे। तूफान भी आते थे, जो हमने कभी नहीं देखे थे।

दीदी का चाचा था मूलचंद, उसने भारत विभाजन के बाद बाबा को कराची में पत्र लिखा कि अब आप मुस्लिम देश में क्या सेवा करेंगे? हमारी कन्यायें-मातायें मुस्लिम देश में रहकर सेवा नहीं कर सकेंगी। हमको थोड़ा ख्याल है, आप आओ। आप दीदी को भेजो, भले आपके अनुसार वो मकान ढूँढ़े। आपके आने का खर्चा हम देंगे, बारह मास तक का खर्चा भी करेंगे। दीदी को बुलाया, कई शहर दिखाये। बाबा कहता था, मायावी देश ना हो, एकांत स्थान हो, हम राजयोगी हैं, मुम्बई मायावी है। फिर जब बाबा को बताया कि आबू पहाड़ है, न ज्यादा ठंड है, एकान्त है, इतने मनुष्य नहीं है, नक्की लेक है; धर्माऊ स्थान है; मीट, अण्डा, शराब नहीं है, भक्ति की भूमि है, दिलवाला मन्दिर है, तपस्वियों का वायब्रेशन है तो बाबा को

पसन्द आ गया। फिर भरतपुर की कोठी किराये पर ली। धीरे-धीरे बाबा कोठी को हमारे अनुसार ठीक-ठाक कराता गया। यहाँ सर्दी थी, बरसात ज्यादा होती थी, तूफान होते थे। यहाँ पर चीज़ें भी नहीं मिली। पोकरान हाऊस (पाण्डव भवन) में आये, तब तक खूब सेवायें हो गई और छम-छम होती गई, सब भरपूर हो गया।

बाबा की दृष्टि से तकलीफ समाप्त

जिन्होंने खर्चा देने का वचन दिया था, वो मुकर गए। वो सब हमको करना पड़ा इसलिए थोड़ी आर्थिक तकलीफ आई थी। कराची में हमने कभी डॉक्टरों से दवाई ली नहीं थी। बाबा के घर में ही छोटी-मोटी दवाइयों से ठीक हो जाते थे। कभी सन्देश पुत्रियों को बाबा बता देते थे कि बीमारी इस रीति से ठीक होगी, ठीक हो जाती थी। कभी किसी की तकलीफ बाबा की दृष्टि से भी ठीक हो जाती थी।

पता ही नहीं पड़ा बेगरी लाइफ का

बेगरी लाइफ में हमारे लौकिक माता-पिता भी हमारे साथ यज्ञ में थे क्योंकि वे भी शुरू से समर्पित थे। दोनों के शरीर कमजोर हो गये थे। हमने बाबा को कहा, इन दोनों की तबीयत ठीक नहीं है, डॉक्टर आये तो अच्छा है। बाबा ने मुसकराकर कहा, क्यों नहीं, आपका भाई लंदन में है, उसे यह-यह दवाई लिख दो, ले आयेगा। हमने लिख दिया, वह दवाई ले आया, फिर उन्हों को साथ लंदन ले गया परवरिश के लिए। बेगरी लाइफ मे बाबा सुबह-सुबह घुमाने ले जाते थे, फलों से नाश्ता करते थे। कभी कहते थे, व्रत रखना है, छोटे बच्चे भले खायें। अज्ञानकाल में व्रत रखते थे, व्रत रखने से शरीर अच्छा हो जाता है तो हमको पता ही नहीं पड़ा कि बेगरी लाइफ है। बाबा तो कहते थे, सब कुछ खुट जायेगा, ओममण्डली नहीं खुटेगी। उस समय सिन्ध में किसी ने सहयोग नहीं दिया था। वे तो कहते थे, देखें कितने दिन ये चलेंगे। पर एक बाबा थे जो अचल-अडोल रहे। और आज हम देखते हैं कि और सब डाऊन-डाऊन जा रहे है पर बाबा का सब बढ़ रहा है। उस समय के कहे हुए बाबा के कई महावाक्य आज हम प्रैक्टिकल देख रहे हैं, बाबा सदा एक बल एक भरोसे रहे।

माताओं और भाइयों के बीच दादी चंद्रमणि जी तथा दादी प्रकाशमणि जी

छोड़ने वालों ने पुनः सम्बन्ध जोड़ा

कई बच्चे जो मन से थोड़े कमजोर थे, वो उस समय किसी कारण से यज्ञ को छोड़कर गए पर बाद में उन्होंने संबंध जोड़कर रखा और पश्चाताप भी किया कि ये कितने आगे बढ़ गये। जब आडवाणी यहाँ आया था, उसने कहा, जब ओम मण्डली की शुरूआत हुई, मैं छोटा था। मैंने भी अखबार में बहुत उल्टा लिखा, डिससर्विस की। मेरी लिखी अखबारें अमेरिका तक पहुँच गई। हम तो सुनी-सुनाई पर थे, अंदर जाकर तो देखा नही। आडवाणी ने माफी माँगी और कहा, मैंने अखबार में लिखकर डिससर्विस की थी, अब अपने अखबार में सही तरीके से लिखकर सर्विस भी मैं ही करूँगा। उनका सिन्धी अखबार बॉम्बे से निकलता है।

भगवान के महावाक्य हैं, मेरे नहीं

मातायें कभी पवित्र रही नहीं, पुरुष लोग सन्यासी बनते आये हैं, उसमें माताओं ने कभी कुछ बोला नहीं। महामण्डलेश्वर आदि भी पुरुष बने। जब माताओं को भगवान ने पवित्र बनने की बात कही तो लोगों को यह नई बात लगी कि यह कैसे होगा, उन्हें समझ में नहीं आया। ब्रह्मचर्य में मातायें रही नहीं हैं। हमेशा पुरुष पवित्र रहे हैं, नारियों में इतनी शक्ति कहाँ? यह आध्यात्मिक शक्ति नारियों में कैसे आ गई? नई बात के कारण थोड़ा विरोध हो जाता है। पवित्रता को समझ नहीं सके। बाबा को भी लोगों ने कहा तो बाबा ने कहा, ये भगवान के महावाक्य हैं, मेरे नहीं। जिन्होंने समझा, वे युगल होकर भी पवित्र रहते हैं और बच्चो सहित चल रहे हैं।

ईश्वरीय सेवा की शुरूआत

बेगरी पार्ट में ही हमारा ईश्वरीय सेवा का पार्ट शुरू हुआ। सन्देश पुत्रियाँ शिव बाबा से सन्देश लेकर आती रहती थी। शिव बाबा ने ब्रह्मा बाबा के लिए सन्देश भेजा कि बच्चों को यहाँ बिठाकर रखना है क्या? उनको प्रजा नहीं बनानी है क्या? सतयुग में सब चाहिए, सारी राजधानी बननी है, इनका भविष्य बनाना है। जैसे लौकिक में भी माता-पिता बच्चों का भविष्य बनाते हैं, इनको भी भेजो सेवा पर। इस प्रकार, ईश्वरीय सेवा का हमारा पार्ट शुरू हुआ। बाबा ने हर कदम पर मुझे आगे बढ़ने का चांस दिया। मुझमें इतने गुण नहीं थे पर बाबा ने गुण भरकर हमको विश्व के सामने खड़ा कर दिया। मैं सर्विस के क्षेत्र में नहीं जाना चाहती थी। मैंने रोया, प्रेम के आँसू बहाये। इतना टाइम मम्मा-बाबा के साथ रहे, इनसे दूर कैसे जायेंगे, कौन है दुनिया में हमारा, लौकिक परिवार भी यज्ञ में समर्पित तो मैं कहाँ जाऊँगी? बाबा रोज हाथ उठवाते थे, आज कौन जायेगा, मैं हाथ समेटे बैठी रहती थी। बाबा देखते थे कि यह क्यों नहीं हाथ उठाती है, पर मेरा भविष्य बाबा को बनाना था। मैंने रोया तो एक बाँह से बाबा ने पकड़ा, एक बाँह से मम्मा ने पकड़ा और बड़े प्यार से बस में बिठाया। मैं बस में आँसू बहाते-बहाते सेवा करने पहुँची। आज दिल में आता है, बाबा ने यह ना किया होता तो आज हम कहाँ होते! बाबा कहता था, कई गउएँ दूध नही देती, उसी प्रकार जो बच्चे सेवा नहीं करते, वो भी पछड़माल है। सेवा पर न जाते तो आज हम भी पछड़माल (पीछे का बचा हुआ माल) होते। बाबा ने, मेरे ना चाहते भी मेरा भविष्य बनाया। पहले-पहले मुझे भी बाबा ने अजमेर भेजा। लौकिक

पिता का एक जज दोस्त वहाँ रहता था। पहले-पहले हृदयपुष्पा वहाँ गई थी। फिर मुझे भी उसने निमंत्रण दिया। अजमेर में सिन्धी भी होते हैं, इसलिए बाबा ने वहाँ भेजा। वहाँ सेवा की। फिर दिल्ली में तीन मास सेवा की। इसके बाद अमृतसर गई। वहाँ वेदान्त सम्मेलन था, दादी जानकी वहाँ थी। फिर अमृतसर की सेवा शुरू हुई। वहाँ रही। अमृतसर अर्थात् पंजाब की सेवा हुई, उसके बाद हरियाणा की सेवा हुई, फिर हिमाचल की सेवा हुई, इसके बाद जम्मू-कश्मीर तरफ सेवा हुई।

बाबा करे वो बच्चों को करना है

सेवा से कइयों की जीवन बनी। पचास साल से सिगरेट पीने वालों की छूट गई। ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर कई योगी बने। ऐसा देख हमको उमंग रहता था कि खूब सेवा करें। बिगड़ी को बनाने वाला वो भगवान भी है, उसके बच्चे हम भी हैं। जो कार्य बाबा करे, वो ही हम बच्चों को करना है, इस दृढ़ संकल्प से हम सेवाओं में अच्छी तरह लग गये। पंजाब सरेन्डर के संस्कारों वाला है। देश सेवा में भी पंजाब वाले आगे रहते है तो यह भी एक सेवा है। देश के लिए मर मिटते है तो जीते-जी मरना उनके लिए सहज है। हमारे अन्दर 14 साल की तपस्या का बल था जिस कारण दो शब्द भी बोलते थे तो सुनने वाले अशरीरी हो जाते थे।

विघ्न-विनाशक का पार्ट

हापुड़ में भी जब हंगामा हुआ तब मैं वहाँ 2-3 मास रही थी। वहाँ पर एक रज्जू नाम की माता थी जिसकी आयु तो बड़ी थी अर्थात् वह बूढ़ी थी लेकिन विरोधियों ने उसको 16 साल की बताया और उसके पति ने इल्जाम लगाया कि वह सारा जेवर लेकर ब्रह्माकुमारी में चली गई है। वास्तविकता तो यह थी कि यह पति-पत्नी का पवित्रता का झगड़ा था। रज्जू माता पवित्र रहना चाहती थी लेकिन पति साथ नहीं देता था। पति ने गुस्से से कहा, घर से निकल जाओ। उसके पास 5 रुपये थे, वह दिल्ली सेवाकेन्द्र पर पहुँची और बहनों को कहा, मुझे बर्तन की सेवा में रख लो, पति तो घर में रखता नहीं है। बहनो ने रख लिया। उसके बाद विरोधियों ने और कई झूठे कलंक लगाये जैसे कि ये बहनें सुरमा डालती हैं, भाई-बहन बना देती हैं आदि-आदि, जिस कारण जनता बिगड़ गई। वहाँ कई

संत-महात्माओं के साथ शिवध्वजारोहण करती हुई दादी चंद्रमणि जी, दादी जानकी जी एवं दादी प्रकाशमणि जी

गुण्डे खड़े हो गये थे, उन्होंने जनता में एलान कर दिया था कि कोई भी ब्रह्माकुमारियों को दूध आदि ना दे, जमादार साफ-सफाई ना करे। इस प्रकार उन्होंने सब कुछ बन्द करा दिया, मकान मालिक को भी डरा दिया कि अगर आपने इनको मकान में रखा तो हम आपका खून कर देंगे। वह भी डर गया। फिर विरोधियों ने कहा, हम आपको एक मकान किराये पर देंगे। अंदर उनके कपट यह था कि जब इनका सामान ट्रक में डाला जायेगा तब उसको सीधा दिल्ली भेज देंगे। लेकिन कार्य तो बाबा का था, गवर्मेन्ट हमारे साथ हो गई। उन्होंने हमको कहा कि आप इनका कुछ मत लेना, आपको ट्रक हम देंगे। विरोधियों ने वहाँ नारे लगाये। बाबा ने सन्देश पुत्री द्वारा सन्देश मँगवाया। सन्देश में यह आया कि जो निर्भय हो, वह पहले चले तो मैं सबसे पहले आगे चली। साइलेन्स पावर ने ऐसा काम किया जो लगा जैसे बाबा सामने हैं और हम चलते रहे। विरोधियों के मन में उलटा-सुलटा करने का जो भी विचार था, वह शान्त हो गया। ऐसे चलते-चलते हम नये मकान में पहुँचे लेकिन विरोधियों ने वहाँ अपना ताला लगा दिया। अब हम ऊपर कैसे जायें। हम थाने में गये। थाने वालों को तो ताकत होती है खोलने की। उन्होंने हमें ताला खोलकर रात्रि में 12 बजे अन्दर बिठाया। फिर भी विरोधीजन हमारे पास आते रहे और कहते रहे, आपको शेर खा जायेगा, आप मान जाओ, आप यहाँ से चले जाओ। हमने कहा, हमने कोई भूल की हो तो बताओ। हमारी कोई भूल थी ही नहीं। फिर हमने लखनऊ के एक मिनिस्टर को बुलाया। हमारे आठ व्यक्ति और विरोधियों के आठ व्यक्ति, यह एक सभा हुई। बीच में रज्जू माता को बिठाया, उसने बयान दिया। बयान में हमारी कोई गलती नहीं निकली। तब उन आठ लोगों को एक दिन जेल में रखा गया। इस प्रकार प्यारे बाबा ने विघ्नों के बीच रहकर विघ्न-विनाशक बनने का पाठ पढ़ाया।

बाबा ने जबर्दस्ती भविष्य बनाया

मैं हर बात में देख रही हूँ, बाबा ने जबर्दस्ती भविष्य बनाया है। मधुबन में मुझे रखा है, बैठी कहाँ थी, दादी कहती है, यहाँ रहो, भट्ठियाँ कराओ। मैं देखती हूँ, ना चाहते भी मेरा भविष्य उज्ज्वल बन रहा है। दैवी परिवार का, बड़ों का, बाबा का सबका मेरे से प्यार है, मेरा भी दैवी

ज्ञानसरोवर में दादी चन्द्रमणि जी और दादी प्रकाशमणि जी

परिवार से जिगरी प्यार है। अन्दर से मैं सबको अच्छा समझती हूँ। बाबा मेरे पास अमृतसर में कुमारियों को भेजता था, कहता था, बच्ची इनकी ट्रेनिंग हो जायेगी। सचमुच कितनी कुमारियाँ सीखकर गई हैं, कितना उनका भविष्य बना है। एक-एक कुमारी को देखो – नेपाल की राज, चण्डीगढ़ की अचल, देहरादून की प्रेम – क्या-क्या सभी ने सेन्टर सम्भाले। मैंने उन पर क्या मेहनत की है! उनके साथ रही, जीवन से सूक्ष्म बल उनको मिला। संग के रंग का कितना अच्छा असर है। हमने सदा सभी की महिमा ही की है। इसलिए उनके दिल में रिगार्ड है। मेरा पेपर भी आया। मेरे को गाँव में भेजा। निमंत्रण दादी निर्मलशान्ता को था। अचल बहन उस गाँव में रहती थी। क्या था वो गाँव! मिट्टी का था। एक छोटे-से कमरे में तीन साल रही। न बाथरूम, न लैट्रिन, भण्डारे में स्नान करो, पानी नहीं था। पर मेरे को ऐसा कुछ लगा नहीं क्योंकि सेवा बहुत थी। सारा गाँव मेरे पीछे था। मम्मा आई, 800 गाँव वाले हार उठाए खड़े थे। बाबा भी उस गाँव में आये।

सेवा के लिए कभी "ना" नहीं

मैं जिसको देखती थी, ध्यान में चला जाता था। अचल बहन सामने बैठी, उसे वैष्णो देवी का साक्षात्कार हो गया। हम तो साधारण है परन्तु अन्दर क्या बाबा ने भरा है, यह मैं सर्विस में देखती गई हूँ। निराकार, साकार, दैवी परिवार सबने मेरे को आगे रखा है, मेरा भी जिगरी सबसे प्यार है।

मुझे कोई सेवा के लिए कहे तो कभी ना नहीं करूँगी चाहे रात जागना पड़े, दिन जागना पड़े, बाबा की सेवा किसी कारण से बन्द क्यों होनी चाहिए। बाबा की बातें हैं, जो कानों में गूँजती रहती हैं, दूसरे के लिए सोचती हूँ कि वे भी सेवा में "ना" नहीं करें, मुझे अन्दर से झलकी आती है कि यह ऐसा करे, वह ऐसा करे फिर ना भी करे तो फीलिंग भी नहीं आती, कहती हूँ ड्रामा।

दृढ़ संकल्प एक महान शक्ति है, इससे आत्म परिवर्तन होती है। उसमें एकान्त चाहिए। एकान्त के लिए समय निकालें। जैसे स्टूडेन्ट अपनी पढ़ाई के लिए एकान्त में जाते हैं ताकि वार्षिक परीक्षा में अच्छे नंबर आयें। ऐसे ही हमारा भी अंत समय आकर पहुँचा है, हमें भी अपनी चेकिंग करनी है और डीप साइलेन्स में अपनी कमी पूरी करनी है। बाबा की आशा है कि बच्चे संपन्न बनें। गहन तपस्या से हमारे हिसाब-किताब सब छूट जायेंगे। उपराम वृत्ति में रहेंगे तो हम सब बाबा के साथ जायेंगे। यह मेरी आश है, हम सब इकट्ठे एक-दो के साथ-साथ चलें घर।

गंगे दादी

आपका अलौकिक नाम आत्मइन्द्रा दादी था। यज्ञ स्थापना के समय जब आप ज्ञान में आई तो बहुत कड़े बंधनों का सामना किया। लौकिक वालों ने आपको तालों में बंद रखा लेकिन एक प्रभु प्रीत में सब बंधनों को काटकर आप यज्ञ में समर्पित हो गई। सेवाओं के प्रारंभ में रान् 1952 में आप और दादी मनोहर इन्द्रा, दोनों ने ही विशेष गंगा और यमुना नदी के तट पर बैठकर सेवायें की। आपका निश्चय, त्याग और समर्पण भावना अद्भुत थी। आपका रूहानियत संपन्न चेहरा अनेक आत्माओं में रूहानियत का बीज अंकुरित करता था। आपमें प्रवचन देने की बहुत अच्छी कला थी। बाबा आपको पतित पावनी हरगंगे कहकर पुकारते थे। आपने उत्तर प्रदेश जोन की संचालिका के रूप में, कानपुर में रहकर अपनी सेवायें दी। आप धार्मिक प्रभाग की अध्यक्षा भी रही। आठ अक्टूबर, 2004 में आप अव्यक्त वतनवासी बनी।

गंगे दादी जी ने एक बार अपना अनुभव इस प्रकार सुनाया था –

मेरा जन्म सन् 1926 में हैदराबाद-सिन्ध के एक संपन्न, धार्मिक परिवार में हुआ। माता-पिता की भक्ति के प्रभाव से बचपन से ही मुझे भक्ति का शौक था। स्कूल में पढ़ते समय, जब भी समय मिलता था, मैं भागवत पढ़ती थी। जब श्रीकृष्ण और गोपियों के संबंध की बातें पढ़ती थी तो मन में संकल्प उठता था कि काश! मैं गोपी बनती तो कितनी भाग्यशाली होती! जब मेरी उम्र 12 वर्ष की थी, तब पिताश्री ब्रह्मा बाबा के यहाँ सत्संग प्रारंभ हुआ। हमारे पड़ोस में एक कमलसुंदरी बहन रहती थी, उसने हमें कहा कि चलो सत्संग में, वहाँ बहुत अच्छी बातें बताई जाती हैं। उनके आग्रह पर मैं सत्संग में गई तो वहाँ ओम की ध्वनि चल रही थी। थोड़े ही समय में मैं गुम हो गई, ध्यान में चली गई तो मुझे बहुत सुन्दर श्रीकृष्ण का साक्षात्कार हुआ, जिससे दिन-प्रतिदिन मेरी लगन बढ़ती ही गई।

ओम मण्डली का शुद्ध वातावरण

"ओम मण्डली" में जाने से मेरी खुशी दिनों-दिन बढ़ती ही जाती थी। वहाँ का वातावरण ही ऐसा शुद्ध होता था कि आत्मा को शान्ति का अनुभव होता था। अंतरात्मा में ऐसा महसूस होता था कि जन्म-जन्मांतर की प्यास बुझ रही है। ओम मण्डली में जो ज्ञान दिया जाता था, उससे मन विषय-विकारों से हट जाता था और नेकी और पवित्रता के मार्ग पर लग

जाता था। वहाँ ज्ञानामृत का प्याला पीने वाले स्वयं को देह रूपी मिट्टी का पुतला नहीं मानते थे बल्कि अविनाशी आत्मा मानते थे।

मित्र-सम्बन्धी रोक लगाने लगे

बाबा ने हम बच्चों के लिए एक स्कूल खोला था। माता-पिता की स्वीकृति लेकर मैं स्कूल में दाखिल हो गई। स्कूल में इंग्लिश, हिन्दी और गणित सिखाया जाता था। मैं पढ़ाई में बहुत होशियार थी जिससे सदा क्लास में नम्बर आगे रहता था। जैसे ही पवित्रता के व्रत की बात सामने आई तो माताओं पर रोक-टोक होने लगी। हमारे संबंधी भी सोचने लगे कि कल यह कन्या भी शादी के लिए मना करेगी, इसलिए इसको अभी से ही रोक लो लेकिन मैं उन्हों को प्यार से समझा कर स्कूल में चली जाती थी।

लगन बढ़ती गई

उसी दौरान हैदराबाद में एन्टी ओम मंडली बन गई थी। मुझे घर वाले बंधन डालने लगे। हम अपने माता-पिता को स्पष्ट शब्दों में कहती थीं कि भोजन न खाने के बिना तो हम रह सकती हैं परंतु ज्ञानामृत पिये बिना नहीं रह सकतीं इसलिए आप हमें सत्संग में जाने दिया करो। उन्होंने देखा कि यह टलती नहीं है अत: मेरे पिताजी ने एक सूरदास (जिसको आँखे नहीं थीं) को बुलाकर कहा कि दादा ने बच्ची पर जादू किया है, झाड़-फूंक कर इसे उतार दो। उसने एक महीने तक झाड़-फूंक की, कई मंत्र पढ़े और घोलकर मुझे जबर्दस्ती पिलाये। परंतु ईश्वरीय जादू के आगे मनुष्य का जादू कहाँ काम कर सकता था? आखिर उसने अपने मन में हार मान ली क्योंकि वह समझ गया कि इसकी तो प्रभु से सच्ची प्रीति लगी है। पिताजी ने मुझे छह मास तक घर से बाहर जाने नहीं दिया। पिताजी मुझसे सख्त नाराज़ थे। लौकिक संबंधियों को हम पर बहुत गुस्सा था। हम ओम मण्डली से ईश्वरीय ज्ञान के जो लिखित पन्ने ले आती थी जिन्हें कि हम वाणी या मुरली कहती थी, मुझे न पढ़ने देते। मैं शान्त-समाधि में बैठती थी तो भी वे विघ्न डालते थे और नहीं बैठने देते थे। वे मुझ पर बहुत सितम ढाते थे। परन्तु वे हम पर जितना-जितना अत्याचार करते थे, उतना-उतना हमें ऐसा महसूस होता था कि ये सब स्वार्थ के सम्बन्ध हैं। हम सोचते थे कि पता नहीं ये किस प्रकार के लोग हैं? यह कैसा जमाना है? यह कैसा संसार है? क्या इनको ज्ञानामृत अच्छा ही नहीं लगता, इन्हें विषय-विकारों की मोहिनी-माया ने इतना मोह लिया है!

हम हैं ज्ञान-गोपिकाएँ

तब हमें श्रीमद्भागवत् में गोपियों के चरित्र याद आते जो कि हम बचपन से ही सुनती चली आ रही थी। उसमें हमने पढ़ा था कि भगवान की मुरली सुनकर गोपियाँ मस्त हो जाती थी और वे भाग कर वहाँ पहुँच जाती थीं। परन्तु उनके लौकिक संबंधी, पुरुष आदि उन्हें रोकते थे। तब हम ये वृत्तांत पढ़कर सोचा करती थी – "क्या गोपियों को भगवान की बंसी सुनाई देती थी, उनके संबंधियों, पुरुषों आदि को सुनाई नहीं देती थी या रसीली नहीं मालूम होती थी?" अब हमने अपने प्रैक्टिकल अनुभव से जाना कि हम तो ज्ञान-मुरली को सुनकर अतीन्द्रिय सुख से फूली नहीं समाती हैं परंतु हमारे लौकिक संबंधी, भाई-बान्धव आदि हमें मुरली सुनाने के लिए जाने से रोकते हैं। अत: हम

स्वयं को बहुत ही भाग्यशाली समझती थी कि हम वही "ज्ञान-गोपिकाएँ" हैं। अत: स्वयं ज्ञानामृत न पीने के कारण, हमारे लौकिक संबंधी हम पर जो अत्याचार करते थे, उसे हम खुशी-खुशी सहन करती थी।

वे हममें कोई बुराई न बता पाते

हम उनको कहती थीं, "आप हमें सत्संग में जाने से क्यों रोकते हैं? अगर हमारे जीवन में कोई बुराई आई हो तो आप बताइये। हम घर का सारा काम-काज करती हैं, फैशन नहीं करती हैं, सिनेमा नहीं जाती है, माँस-मदिरा का प्रयोग नहीं करती हैं, किसी से लड़ती-झगड़ती या फालतू घूमती भी नहीं हैं। आपने हममें क्या बुराई देखी है कि आप सत्संग में जाने से हमें रोकते हैं?" वे हममें कोई बुराई तो बता न पाते। उनके मन में तो बस यही था कि यह निर्विकार बनने का पुरुषार्थ कर रही है और हमें इसका विवाह (विकारी विवाह) अवश्य कराना है।

एक दिन अचानक अफ्रीका से मेरा बड़ा भाई घर आया, जिसका मुझसे बहुत प्यार था। उसने देखा कि पिताजी ने बहन को बंधन में रखा है। उसने कहा कि सत्संग जाने में कोई बुराई तो नहीं। उसके आग्रह पर पिताजी ने मुझे थोड़ा स्वतंत्र किया जिससे मैं पुन: सत्संग में जाने लगी।

मुझे जंजीर से बाँधा गया

एक दिन मेरी लौकिक माताजी को विचार आया कि इस कन्या का विवाह कर दिया जाये ताकि इसका मन सत्संग से हटकर संसार की बातों की ओर, खाने-पीने, पहनने और भोगने की ओर लग जाये। परंतु मैं तो विकारी शादी को बर्बादी मानती थी। अत: मैंने उन्हें कहा, माता जी, मैं तो ज्ञान-मीरा हूँ, मेरा तो एक गिरिधर गोपाल ही है, दूसरा कोई नहीं है। मैं तो उसी की हो चुकी हूँ, मेरे मन की सगाई प्रभु से हो चुकी है, अब दूसरे किसी से कैसे होगी? मैंने तो मन में मोहन को बसा लिया है, अब दूसरे किसी के लिए स्थान ही कहाँ रहा है?

मेरी ये बातें सुनकर मेरे लौकिक संबंधियों को बहुत क्रोध आया। उन्होंने एक बार तो ऐसा मारा कि क्या कहूँ? वे बोले, "जब तक तुम शादी के लिए हाँ नहीं करोगी तब तक तुम्हें मारेंगे और मार-मार कर तुम्हें खत्म कर देंगे। बोलो अपने मुख से कि मैं शादी करूँगी।"

अंधेरी कोठरी भी रोशन थी

मैंने कहा, मैंने तो आपको अपने मन की सच्ची बात स्पष्ट रीति से बतला दी है कि मैं मीरा बन चुकी हूँ, मैं गिरिधर गोपाल की हो चुकी हूँ। अब मैं विकारी शादी नहीं करूँगी। परंतु हमारी पवित्रता की बातें उन्हें समझ नहीं आती थीं। अत: एक दिन उन्होंने मुझे अंधेरी कोठी में बंद कर दिया, जंजीरों में बाँध दिया और मेरे हाथों पर दस्ते (हावन वाले) मारे। परंतु मेरे लिए वह अंधेरी कोठरी भी रोशन थी। उन्होंने मुझे भोजन देना भी बंद कर दिया। दो-तीन दिन के बाद मुझे भूख तो अवश्य लगी परंतु उतनी ही प्रभु से मेरी लगन तीव्रतर हुई। अंदर ही अंदर प्रभु से कहने लगी, प्रभु, आप तो कन्हैया लाल हैं, हम कन्याओं की रक्षा करने में आपने देर क्यों लगाई? देखो तो, हम पर ये लोग कितना सितम ढाते हैं, प्रभु मेरी लाज बचा लो। प्रभु, हमें इन विकारी संबंधियों की जंजीरों से छुड़ाओ।

बंसी बजाते हुए श्रीकृष्ण दिखाई दिए

इसी बंधन में मैं एक विचित्र अनुभव करने लगी। विरह-वेदना में डूबी, मैं देह की सुध-बुध भूल गई थी। मुझे अपने सामने श्री कृष्ण बंसी बजाते हुए दिखाई दिये। बस, उस सुन्दर मूरत को देखते ही मैं तड़पती आत्मा तृप्त हो गई। मुझे मन में बहुत हर्ष हुआ। मुझे सूक्ष्म आवाज में वह कहते हुए मालूम हुए कि अब तुम्हारे बंधन जल्दी कट जायेंगे। घबराओ नहीं। अब मैं साकार हो चुका हूँ। इस अनुभव के साथ-साथ मुझे अंदर ऐसा भी अनुभव हुआ कि मुझे भूख-प्यास बिल्कुल नही है, मुझे तो सब कुछ मिला ही हुआ है। मेरा शरीर पहले भी कमजोर था और निर्बल-सा था, अब कई दिन भूख-प्यास के कारण और भी क्षीण हो चुका था परंतु इस साक्षात्कार के बाद अब मुझे आत्मिक शक्ति का विशेष अनुभव हो रहा था और देह की दुर्बलताएँ नहीं भास रही थी।

लगन की अग्नि बुझने वाली नहीं है

तीन दिनों के बाद द्वार खोलकर लौकिक संबंधियों ने फिर मुझसे पूछा, "अब बताओ, क्या सोचा है? (विकारी) शादी करोगी न? देखो, अपना हठ छोड़ो। एक बार अपने मुँह से कह दो कि मैं ओम मण्डली में नहीं जाया करूँगी और शादी भी करूँगी।"

मम्मा के साथ दादी गंगे, दादी शांतामणि, दादा हृदयमोहिनी, मोहिनी बहन, ईशू दादी आदि।

मैंने कहा, "आप यह क्या कह रहे हैं? आपने अभी तक हमें नहीं पहचाना। देखो, मेरी बात सुन लो। यह लगन की अग्नि बुझने वाली नहीं है। यह दबाने से दबने वाली भी नहीं है। हाँ, अगर मैं इस लगन में शरीर छोड़ दूँ तो मैं आत्मा तो प्रभु की स्मृति में स्थित होकर स्वर्ग के द्वारे आऊँगी ही परंतु आप एक बात कर लेना। मेरी लाश को एक बार ओम मण्डली के सत्संग के द्वार के सामने से जरूर ले जाना।"

वे आश्चर्यान्वित होकर तथा कुछ निराश, कुछ रुष्ट और कुछ क्रुद्ध होकर कहते, "तुम अभी तक भी नहीं बदली, क्या तुम नही मानोगी?"

हमारे रक्षक भगवान हैं

मैं कहती, "देखो, मैं इतनी कायर नहीं हूँ जितना आपने मुझे समझा है। हम सितम सहन करने वाली कन्यायें-मातायें हैं। अत: आप

अत्याचार कर लो, हमें उसकी कोई चिन्ता नहीं है। हमने इस ज्ञान के बल पर, प्रभु के प्रेम के लिए धीरज करना तथा अत्याचार सहना खूब सीख लिया है। परन्तु, देखो, कहीं इन अत्याचारों का परिणाम आपको न भोगना पड़े क्योंकि हमारे रक्षक स्वयं भगवान हैं। हमें आप पर इसलिए दया आती है कि आप प्रभु को नहीं पहचानते और हमें भी नहीं समझते और यूँ ही हमें मार-मार कर पाप अपने सिर पर मोल लेते हो।"

आत्मा प्रभु के पास बिक चुकी है

उन्होंने मुझे फिर जंजीरों में बाँध दिया। लगभग दो मास मेरी ऐसी हालत रही। परंतु उसके बाद भी काफी समय तक वे मुझ पर अत्याचार करते रहे। मैं अपने लौकिक संबंधियों को कहा करती थी कि आप हमारे शरीर के मालिक हैं परंतु आत्मा का मालिक तो एक परमात्मा ही है। अतः आप जब तक चाहें हमारे शरीर को बाँध दीजिये परंतु आत्मा तो ईश्वर की पुत्री है और उनके पास बिक चुकी है।

बाबा का पत्र मिला

ये सब समाचार ओम मंडली में पहुँचते ही दादी प्रकाशमणि मुझसे मिलने आई। मेरी मौसी के मकान के ऊपर किरायेदार रहते थे, उनके मकान में जाकर ऊपर से (चिमनी से) खड़ी होकर मुझसे मिली, बाबा का भेजा हुआ पत्र भी दिया। लंबे समय तक मैं ऊपर नहीं देख सकती थी क्योंकि देखने वालों को संशय आ सकता था। मुझे स्मृति आई कि ऐसे ही अनुचर सीता के पास जाकर राम का संदेश पहुँचाते थे। ऐसे दो-तीन बार कोई-न-कोई बहन छिपकर मिलने आती रही। ऐसे लगातार दो मास तक जंजीर से बँधी रही। उसी समय मेरी बहन विदेश से आई थी। मेरी यह हालत देखकर उसे बहुत दुख हुआ। उसने पिताजी को मनाकर जंजीर छुड़वाई और मुझे अपने घर ले गई।

आखिर मैं बंधनों से मुक्त हुई

एन्टी ओम मण्डली वालों ने हम सभी के घर वालों को भड़काया और कहा कि अगर आपको अपनी लड़कियाँ वापस चाहिएँ तो भूख हड़ताल करो। सचमुच उन्होंने भूख हड़ताल शुरू की। ब्रिटिश गवर्मेन्ट समझ नहीं पा रही थी कि यह क्या हो रहा है, ये लोग कन्याओं-माताओं पर इतना अत्याचार क्यों कर रहे है? इस बात का निर्णय करने के लिए उन्होंने एक बहुत बड़े लोहे के व्यापारी धनी शिवरतन मोटा को बीच में डाला। उनको कहा कि इन सबको बुलाकर पूछो कि ये वहाँ क्यों जाते हैं, इनको वहाँ क्या प्राप्त होता है आदि। तीन दिन हम बहनें और हमारे रिश्तेदार वहाँ रहे। मेरे साथ मनोहर बहन, कमल सुंदरी बहन थी। उन्होंने हमारे से सभी बातें पूछीं। हम सभी सवालों के जवाब देते गए कि हमें क्या शिक्षा मिलती है, परमात्मा स्वयं पिताश्री द्वारा ये महान कार्य कर रहे हैं आदि। ये सब बातें सुनने के बाद चौथे दिन उसका फैसला होना था। उन्होंने यह जजमेंट दी कि ये तो सच्ची देवियाँ हैं जो जन-जन का कल्याण करने के लिए निमित्त बनी हुई हैं, ऐसी देवियों की भारत को बहुत आवश्यकता है, इसलिए इन्हों को रोका न जाये। यह बात अखबारों में प्रकाशित हुई। हम सभी को हमारे माता-पिता ने दिल से छुट्टी दी ज्ञानामृत पीने और पिलाने के लिए। फिर तो हम यज्ञ में रहने लगे।

मुझे बाबा ने ज्ञान गंगा बनाया

बाबा की शुरू से ही मेरे ऊपर विशेष दृष्टि रही। बाबा हमेशा कहते थे कि कन्याओं ने भीष्म पितामह को बाण मारा, ऐसे आपको भी द्रोणाचार्य, आचार्य और पंडितों को ज्ञान-बाण मारना है। ऐसे वरदान देते हुए हमको शुरू से ही गाइड करते आये। बाबा भाषण लिखकर भेजते थे और कहते थे, आपको ये सभा में सुनाना है। मेरे शरीर का नाम गंगा था और मनोहर बहन का नाम हरि था तो बाबा कहते थे "हर गंगे, हर गंगे।" हर गंगे की जोड़ी को सेवा में जाना है, मुख से ज्ञान-गंगा बहाकर पतितों को पावन बनाना है, सबका कल्याण करना है, यही आपका विशेष पार्ट है।

बाबा ने हमें दिल्ली सेवार्थ भेजा

दिल्ली के कुछ ऑफिसर आबू घूमने आये थे, तब उन्होंने 26 जनवरी के दिन पब्लिक प्रोग्राम में प्रवचन करने के लिए निमत्रण दिया था। बाबा की आज्ञानुसार मैं और मनोहर बहन दिल्ली गई। हम लोगों ने प्रोग्राम में जो प्रवचन किए, वो बहुतों को अच्छे लगे। बाद में चांदनी चौक के गौरीशंकर मंदिर में प्रवचन का निमंत्रण मिला। वहाँ जो प्रवचन किया, उसका मंदिर के सेक्रेटरी पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। उन्होंने हमें मंदिर में रहने के लिए अच्छा स्थान दिया। कुछ दिनों तक हम वहाँ सेवा करते रहे। उसी दौरान हमें बाबा का पत्र मिला कि ऋषिकेश में स्वामी शिवानन्द जी "वर्ल्ड पीस कांफ्रेंस" कर रहे हैं, वहाँ आपको प्रवचन करने जाना है। काफ्रेंस में हमें उन्होंने आधा घंटा प्रवचन के लिए दिया, जिसमें हमने विश्व में अशान्ति के कारण, उनका निवारण, इन सभी बातों से संबंधित प्रवचन किया। प्रवचन स्वामी जी को बहुत अच्छा लगा। बाद में बाबा ने मुझे कोलकाता में दो मास के लिए भेजा। तत्पश्चात् सेवार्थ बनारस, इलाहाबाद और कानपुर जाना हुआ। कानपुर मे सेवा का बहुत विस्तार होता रहा।

बाबा ने कदम-कदम पर हमारी रक्षा की

एक बार बाबा ने मुझे और मनोहर बहन को जोधपुर सेवार्थ भेजा था। एक सप्ताह सेवा करके हम आबू वापस आ रहे थे। जैसे ही हम ट्रेन में बैठे तो दो आदमी आए और कहने लगे कि आपने हमें तो ज्ञान सुनाया ही नहीं। हम चाहते हैं कि हमारा परिवार भी आपका ज्ञान सुने। आप हमारे घर दो दिन के लिए चलो। हमने कहा कि अब तो हम जा रहे है, फिर

जापान यात्रा कर आये हुए दादी जी, दादी रत्नमोहिनी जी और दादा आनंद किशोर जी का स्वागत करते हुए दादी गंगे जी और अन्य।

कभी आयेंगे। उन्होंने कहा कि नहीं, गाड़ी खड़ी है, हम टिकट कैन्सिल कराते हैं। जबर्दस्ती हमें ट्रेन से नीचे उतारा। हमने सोचा, चलो दो दिन सेवा करके वापस चले जायेंगे। वे हमें तांगे में बिठाकर अपने घर ले जा रहे थे। चलते-चलते हमें संशय आया, हमने प्रश्न किया कि यह तो साधारण रास्ता है, आखिर आपका घर कहाँ है? कहने लगे, बस अभी नजदीक है। हमने देखा कि यहाँ तो सन्नाटा छाया है, अंधेरी कोठी है। हमने तांगे को खड़ा कराया और शक्तिस्वरूप में स्थित होकर कहा कि कहाँ है आपका परिवार, ले आओ पहले अपने परिवार को। गुस्से से हमें पिस्तौल दिखाते हुए वे बोले, ज्यादा बोलना नहीं। हमने कहा कि हम पिस्तौल से डरने वाले नहीं। हमने बाबा को याद किया और तांगे वाले को कहा कि यहाँ से बिल्कुल जाना नहीं। उन्होंने हमारा सामान उतारा लेकिन हमने तुरंत तांगे में सामान रखा। इतने में वो दोनों वहाँ से भाग गये क्योंकि उनकी दृष्टि-वृत्ति साफ नहीं थी। ऐसी कठिन परिस्थिति में बाबा ने हमारी रक्षा की, वर्ना हम उन बदमाशों से छूट नहीं सकते थे। उसके बाद जब हम बाबा से मिले तो बाबा ने कहा कि यह भी माया का एक रूप था, सदा दूरंदेशी होकर किसी भी बात का निर्णय लो तो ऐसा धोखा खाने से बचे रहोगे। ऐसे, सेवाक्षेत्र में कई विघ्नों को पार करने के लिए सदा बाबा की मदद मिलती रही।

बाबा को मैंने बेफिक्र बादशाह की तरह देखा

बाबा सदा बेफिक्र रहते थे। बेगरी पार्ट में भी समस्या आने पर सदा हल्के रहकर मनोरंजन की रीति से हमें चलाते थे। बाबा हमेशा कहते थे, यज्ञ को संभालना शिवबाबा की जिम्मेवारी है। पहले बाप भूखा होगा तो बच्चे भूखे रहेंगे। शिवबाबा कभी भूखा रहता ही नहीं क्योंकि उसको कितने भक्त और बच्चे भोग खिलाते हैं। बाबा का उठना, बैठना, चलना एकदम बेफिक्र बादशाह की तरह था। कभी बाबा खड़े होकर दृष्टि देते थे तो लगता था कोई फरिश्ता या जैसे श्रीनारायण ही नशे में खड़े हैं।

जब बाबा अव्यक्त हुए, उस समय मैं कानपुर में थी। वहाँ से मधुबन पहुँची तो एकदम साइलेन्स का वातावरण था। लगता था कि कुछ नया पार्ट शुरू होने वाला है। ऐसा महसूस नहीं होता था कि बाबा हमें छोड़कर गए लेकिन अनुभव होता था कि अपना सर्वश्रेष्ठ आदर्श जीवन, अविनाशी यादगार के रूप में सबूत छोड़कर गए। अभी भी बाबा की मदद, दुआयें, मार्गदर्शना और सुरक्षा हमारे साथ है ही।

विदेश सेवा पर जाना हुआ

सन् 1991 में, मैं लंदन और अमेरिका ईश्वरीय सेवार्थ गई थी। उस दौरान बाबा ने बहुत सुन्दर अलौकिक अनुभव कराये। ऐसा लगता था कि ब्रह्मा बाबा अव्यक्त होने के बाद विदेश में सेवा कर रहे हैं। सभी के मुख से बाबा-बाबा निकलता था, सचमुच कमाल देखी विदेश में बाबा की सेवा की।

इस प्रकार हमारी जीवन की यात्रा ईश्वर की छत्रछाया में व्यतीत होती रही। हमें अपने भाग्य को निहार कर हर्ष होता है कि हमारे भक्तिकाल में किये गये पुण्य कर्मों का यही प्रत्यक्ष फल मिला है कि इस अंतिम जन्म में भगवान के साथ रहे।

दादी हृदयपुष्पा

आपको प्यार से सभी टिक्कन दादी कहते थे। आपका अटूट निश्चय, बाबा से सच्चे दिल का प्यार और दृढ़ विश्वास बेहद सेवाओं की नींव बना। बैंगलोर में रहकर आपने पूरे कर्नाटक की सेवाओं का कार्यभार संभाला। बाबा के हजारों बच्चों की पालना करते हुए आप बहुत लाइट रहती थी। आपके अंदर उमंग-उत्साह भरपूर था। आपने बैंगलोर में एक रिट्रीट सेन्टर बनाया और वहाँ भगीरथ के मुख से कैसे ज्ञान गंगायें निकलकर सारी सृष्टि को पावन बना रही हैं, यह दृश्य मॉडल के रूप में प्रस्तुत किया। एक बड़े शिवलिंग में आध्यात्मिक संग्रहालय बनाया जो आज बैंगलोर के दर्शनीय स्थलों में गिना जाता है। आपके द्वारा निकाले हुए अनेक रत्न बाबा के यज्ञ की बेहद सेवाओं में समर्पित हैं। आप दादी चन्द्रमणि की लौकिक में बड़ी बहन थी। आप 15 जुलाई 1996 में भौतिक देह का त्याग कर अव्यक्त वतनवासी बनी।

दादी हृदयपुष्पा जी का जन्म सिंध (हैदराबाद) में हुआ। इनके पिता रतनचन्द सुरतानी, लंका देश की राजधानी कोलम्बो में कपड़े तथा बिस्तरों की दुकान के मालिक थे। माताजी का नाम सीता था। जिनके नौ बच्चे थे। पहली संतान थी बच्ची, जिसका नाम था बड़ी लक्ष्मी। दूसरी थी बम (पार्वती), तीसरी थी छोटी लक्ष्मी, चौथी थी किक्की, पाँचवी थी टिक्कन (हृदयपुष्पा जी), छठवाँ था तीर्थ, सातवीं थी मोतिल (चन्द्रमणि जी), आठवाँ था परसु (जो नवनन्द की गोद में गया था) और नौवीं थी पारी (पार्वती)। इनमें लक्ष्मी, टिक्कन, मोतिल और पारी ईश्वरीय यज्ञ में समर्पित हुई थीं।

दादी हृदयपुष्पा बचपन में, ईश्वर के ध्यान में जहाँ बैठती थी, वहाँ बैठ ही जाती थी, उठती ही नहीं थी इसलिए टिक्कन नाम पड़ गया।

दादी हृदयपुष्पा जी के शब्दों में, उनके ईश्वरीय ज्ञान में आने की कहानी इस प्रकार है –

आवाज आई, 'तुम पवित्र रहोगी'

मैं जब 18 वर्ष की हुई, तब मेरी शादी निश्चित हो गई। शादी तय होने पर मुझे बिल्कुल अच्छा नहीं लगा, बहुत दुखी भी हुई। दूसरों की शादी की बात सुनकर भी मैं दुखी हो जाती थी पर पता नहीं था कि

ऐसा क्यों होता है। एक बार मेरे कानों में आवाज आई, 'तुम पवित्र रहोगी', सुनकर प्रश्न उठा, शादी हुई तो पवित्र कैसे रहूँगी? निश्चित समय पर शादी हुई लेकिन पति, जब से शादी हुई तब से ही बीमार था। छह मास तक एक नर्स की भाँति मैंने देखभाल की, फिर विधवा हो गई। मुझे यह सोचकर भारी दुख हुआ कि कल तक तो मैं 'कन्या' थी पर आज 'विधवा' बनकर सबकी नफरत भरी नजरों का सामना करना पड़ेगा। मुझे कई बार यह शब्द भी सुनाई देता था कि 'कृष्ण मिलेगा', 'कृष्ण मिलेगा' लेकिन अभी तक कृष्ण क्यों नही मिला, यह सोचकर भी दुख होता था।

बाबा ने पूछा, क्या बिन्दी को पति होता है?

एक दिन मै जब गीता पढ़ने बैठी तो उस ग्रंथ से एक ज्योतिबिन्दु, प्रकाश फैलाते हुए ऊपर आ रहा था। उस प्रकाश में मुरलीधर श्रीकृष्ण भी दिखाई पड़ा। उसे देखकर इतनी खुशी हुई कि अपने आप को ही भूल गई। तीन दिन बाद मेरी एक मौसी घर में आई और कहने लगी कि तुम दादा लेखराज के पास जाओ, श्री कृष्ण के दर्शन होंगे। वहाँ गई तो एक साधारण व्यक्ति अर्थात् दादा लेखराज को देखा, सोचने लगी कि कहाँ हैं श्री कृष्ण। दादा ने पूछा, बेटी तुम कौन हो? मैंने कहा, मैं एक दुखी इंसान हूँ। बाबा ने पूछा, शरीर में बात करने वाला कौन है? फिर कहा, मनुष्य को जीते-जी क्यों नहीं जलाते, मरने के बाद क्यों जलाते हैं? मरने के बाद उसमें से क्या चला जाता है? अभी तुमको श्मशान में ले जाकर जलायेंगे क्या? फिर बाबा ने अपने हाथ से एक मनुष्य का चित्र बनाया और उसकी भ्रकुटि में आत्मा अंकित की। फिर मुझे समझाया कि देखो, यह शरीर तो पाँच तत्वों का पुतला है और विनाशी है, इसके अंदर जो आत्मा है वह चेतन है और अनादि-अविनाशी है। बच्ची, ये दो चीजें अलग-अलग हैं। शरीर जल जाता है, आत्मा नहीं जलती। आत्मा एक शरीर से निकलकर दूसरे शरीर में प्रवेश कर जाती है, अब बताओ, आप दोनों में से कौन हो? आप यह पाँच तत्व का शरीर हो जो कि जल जाता है या इसमें जो आत्मा है, आप वही हो। मैंने कहा, बाबा, इस स्पष्टीकरण के अनुसार तो मैं एक आत्मा हूँ, ज्योतिबिन्दु स्वरूप हूँ तो बाबा ने पूछा, क्या बिन्दी को पति होता है? तुम तो ज्योतिस्वरूप आत्मा हो, शांतस्वरूप आत्मा हो फिर अशांत कैसे हुई? अशान्ति तो प्रकृति के धर्म को अपनाने से होती है, अब बताओ, यह किसने कहा कि मैं एक दुखी इंसान हूँ। आप दुखी इंसान हो या शांत स्वरूप आत्मा हो? यह सुनते ही मेरे रोम-रोम में बिजली की तरह प्रकाश दौड़ गया और मैं देह से न्यारी हो गई। इस स्थिति में निज आत्मा का अनुभव करने लगी। आत्मा में दुख-अशांति का जो काला-सा बादल था, वह इस रोशनी से मिटने लगा। आत्मा साफ होने लगी और निज स्वरूप में टिककर खुशी में हँसने लगी। जब इस अवस्था से कुछ नीचे उतरी तब बाबा ने मुझे बुलाया और पूछा, अब बताओ कि आप कौन हो? मैंने कहा, मैं एक आत्मा हूँ। बाबा ने फिर पूछा, अब आप दुखी हो या सुखी? मैंने कहा, मैं एक शान्त स्वरूप तथा सुखस्वरूप आत्मा हूँ, मेरे जैसा सुखी कोई नहीं। बाबा ने फिर पूछा, संसार दुख रूप है या सुख रूप? मैंने कहा, सुख रूप है। तब बाबा ने कहा, अच्छा, आज का पाठ पक्का करना और फिर कल मैं दूसरा पाठ पढ़ाऊँगा।

माता ने किया विष्णु चतुर्भुज का साक्षात्कार

मैं जब बाबा के पास आई थी तो मन ही मन रोती हुई आई थी और अब हँसते हुए घर लौट रही थी। मेरी अवस्था आत्म-स्थित और हर्षमय थी। मुझे एक अलौकिक नशा-सा था। मेरी माताजी, मेरे भाई की अचानक मृत्यु के कारण और मेरे विधवा होने जाने के कारण बहुत दुखी रहती थी। मैंने घर में जाकर अपनी दुखी माता को भी यह ज्ञान-वार्तालाप सुनाया। मैंने माता जी से कहा, आप रोती क्यों हैं? प्रकृति के बने शरीर तो नाशवान हैं ही, उनके लिए क्या रोना? आत्मा तो अजर-अमर-अविनाशी है, आप तो शान्त स्वरूप हैं..। माताजी को ये बातें बहुत ही अच्छी लगी। उसने मुझसे कहा कि तुम प्रतिदिन जाकर ज्ञान सुन आया करो और मुझे भी सुनाया करो। मैंने एक दिन बाबा को स्वयं ही अपनी लौकिक माता के दुख का समाचार सुनाया। बाबा ने कहा, अच्छा, मैं उनके पास अभी चलता हूँ। बस, उसी घड़ी दयालु बाबा मेरे साथ चले मेरी दुखी माता को शान्ति देने। हम घर पहुँचे। अहा! मेरी लौकिक माता बाबा को देखते ही एक सेकण्ड में देहभान को भूल गई और विष्णु चतुर्भुज का दिव्य साक्षात्कार करने लगी। अब उनके मुख पर मानसिक शान्ति की रेखायें उभर आई और वे हाथ जोड़े, ध्यान निमग्न बैठी रही। ध्यानावस्था से नीचे उतरने पर बाबा ने उन्हें भी ज्ञानामृत पिलाकर शान्त किया।

हमारे सारे दुख दूर हो गए

जब मैं और मेरी माँ सत्संग में जाने लगे तो हमारे सारे दुख दूर हो गये। मुझे देखकर मेरे पिता जी को बहुत खुशी हुई क्योंकि हर माँ-बाप यही चाहते हैं कि उनके बच्चे खुश रहें। मैंने पिताजी से कहा, आप भी चलो दादा के पास। उन्होंने कहा, तुम लोगों को देखकर ही मुझे खुशी हो रही है। मुझे ज्ञान मिला, फिर वहाँ क्या जाना है! कुछ समय बाद एक दिन बाबा ने कहा कि आप सभी अपने लौकिक माता-पिता से या सास-ससुर से चिट्ठी ले आओ जिसमें लिखा हो कि हम अपनी बच्चो या स्त्री को खुशी से छुट्टी देते हैं कि वह ओम् मण्डली में ओम् राधे के पास ज्ञानामृत पीने और पिलाने जावे, अत: मैंने भी अपने लौकिक पिता से इसके लिए आवेदन किया। वह माँसाहारी थे, शराब खूब पीते थे तथा उनके संस्कारों का धर्म की ओर झुकाव नहीं था। वे यह सुनकर बहुत ही गर्म हो गए और बोले कि मैं ऐसा नहीं लिखकर दूँगा। मैं सोच में पड़ गई कि अब क्या होगा? बाबा चिट्ठी के बिना सत्संग में प्रवेश नहीं देंगे और पिता जी लिखकर नहीं देते। मैं तो ज्ञानामृत के बिना वैसे ही तड़प कर मर जाऊँगी जैसे मछली जल के बिना तड़प कर मर जाती है। मैं मन ही मन प्रभु को याद करके कहती थी कि प्रभु, आप ही मेरी सहायता करो। आखिर एक दिन मैंने लौकिक पिता को कहा कि आपको बाबा ने याद किया है।

पिताजी चले बाबा से मिलने

यह बात सुनते ही हमारे पिता का मन मोम की तरह पिघल गया। वे कहने लगे, दादा इतने बड़े व्यक्ति हैं, यदि वे मुझे बुलायें तो ऐसा नहीं हो सकता कि मैं न जाऊँ। मैं आज ही आपके साथ चलता हूँ। मेरे पिता

जी एक बहुत बड़े कुल के थे और मेरे ससुराल का भी हैदराबाद मे अच्छा ही मान था परंतु दादा की ओर से मिलने का संदेश सुनकर, उन्हें सम्मान देते हुए मेरे लौकिक पिता मेरे साथ चले। मैंने बाबा को जाकर समाचार दिया कि लौकिक पिता आये हैं। साथ ही यह बताया कि वे कुछ दिन पहले मुझे पत्र लिख देने से बिल्कुल इंकार करते थे। बाबा उनसे मिले।

बाबा ने उनसे कहा, क्या आप जानते हैं कि आपकी यह पुत्री यहाँ क्यों आती है? आज इसके जीवन में जो शान्ति है, वह इसे कैसे मिली? बाबा ने उन्हें थोड़ा ज्ञान दिया और फिर 'ओम् राधे' को कहा कि वह उन्हें और अधिक विस्तार से ज्ञान स्पष्ट करे।

पिताजी शाकाहारी बन गये

ओम् राधे ने उन्हें समझाया था कि आप चेतन आत्मा हैं। यह शरीर आपका एक मन्दिर है। क्या मन्दिर में कभी माँस का भोग लगाया जाता है? कभी मूर्तियों या जड़ चित्रों को शराब की भेंट करते हो? इस प्रकार ओम् राधे जी ने उन्हें ऐसे प्रभावशाली तरीके से समझाया कि उनका जीवन ही पलट दिया। उन्हें अपनी अंतरात्मा में ऐसा महसूस हुआ कि उन्होंने मॉस, शराब आदि का सेवन करके तथा क्रोध और अशुद्ध व्यवहार आदि से बहुत पाप किये हैं। साथ-साथ उन्हें इस बात का मनन करते हुए एक अनोखा आत्मिक नशा भी चढ़ा कि मैं शरीर रूपी मन्दिर में रहने वाला अपने आदि-स्वरूप में एक चेतन देवता हूँ। मन में दोनों लहरें लेकर वे घर आये और उन्होंने शराब की बोतलें उठाकर बाहर सड़क पर फेंकनी शुरू कर दी। वे विलायती शराब की बहुत कीमती बोतलें थीं। उन्हें बोतलें फेंकता देखकर उनका लौकिक भाई बोला, दादा, आप इन्हें सड़क पर क्यों फेंकते हो? हमको दे दो। मेरे पिताजी ने कहा, जो पाप का काम हमने छोड़ दिया, वह आपसे भी नहीं कराना। उस दिन से लेकर पिताजी शाकाहारी बन गये और घर में अशुद्ध भोजन का निषेध हो गया।

सारा परिवार समर्पित हो गया

जब मैंने देखा कि हमारे लौकिक पिता के मन में अब ज्ञान का रंग लगा है तो मैंने फिर वह पत्र लिख देने के लिए कहा। मेरी लौकिक बहन जो तथा माता जी भी पत्र लेना चाहती थी। हमें आश्चर्य भी हुआ और बहुत खुशी भी हुई, जो पिता जी ने कहा कि मैं आप सबको अभी ज्ञान-अमृत पीने-पिलाने की छुट्टी देता हूँ और साथ में यह भी पत्र में लिख देता हूँ कि मैं स्वयं भी ज्ञानामृत पिया करूँगा। उन्होंने हमें सहर्ष वह पत्र लिख दिया और बाद में हमारा सारा कुटुम्ब ही इस ईश्वरीय ज्ञान में तन, मन, धन सहित समर्पित हो गया।

बाबा मुझे कहते थे, बच्ची, बाबा ने आपको अच्छी तरह पहचाना है, ऐसे और कोई पहचान नहीं सकता। बच्ची, तुम मेरे दिल का अनमोल फूल हो, इसलिए मैंने तुम्हें 'दिल' नाम दिया है। ऐसे कहते-कहते बाबा ने मुझे स्वमान में स्थित किया था।

आदत, अदालत में डाल देगी

प्यारे बाबा ने मझे सुस्ती पर बड़ी युक्ति से जीत पहनाई। मैं रोज अमृतवेले उठती थी परंतु नींद के झुटके खाती रहती थी। मैंने बाबा से कहा, बाबा, आप तो कहते हो, यह सहज राजयोग है परंतु इतनी कठिनाई क्यों होती है? नींद के झुटके खाने से तो

अच्छा है, मैं जाकर सो जाऊँ।' बाबा ने बड़े रहम भाव से कहा, बच्चो चाहे झुटका खाओ या घुटका, पर उठकर जरूर बैठो। धीरे-धीरे उठने की आदत पड़ जायेगी फिर माया सामना नहीं करेगी। अगर सो जाओगी तो वही आदत पड़ जाने से फिर माया जीत पाने नहीं देगी और बड़ी आदत, अदालत में डाल देगी। ऐसे कहकर बाबा ने तीर लगाया।

मैं जागती ज्योति बन गई

एक बार मैं बड़े हॉल में सो रही थी परंतु प्रात: नींद नहीं खुली। मैं सपने में देख रही हूँ कि बाबा से लाइट की किरणें बड़े जोर से मेरी तरफ आ रही है, मैं इसी में मग्न थी। अचानक आँखें खुली तो देखा, बाबा और उनके साथ अन्य दो-तीन बहनें मेरे सामने खड़े, मुझे दृष्टि दे रहे थे। मैं शर्मसार हुई और उठकर चली गई। परंतु बाबा की उस कल्याणकारी दृष्टि ने मेरी आँखों से व्यर्थ नींद चुरा ली और मै जागती ज्योति बन गई। बाद मे पहरे की ड्यूटी के समय भी मैं निद्राजीत बनने में सफल रही। इस प्रकार बाबा ने, मुख से कुछ भी कहे बिना ही मुझे निद्राजोत बना दिया। ऐसे बाप का कितना न शुक्रिया अदा करूँ! इसी निद्राजीत की स्थिति को आगे बढ़ाते हुए, एक रात मै सारी रात्रि योग करने का संकल्प लेकर बैठ गई। मुझे समय का अहसास नहीं था। रात्रि दो बजे प्यारे बाबा की ब्राह्मणी आई। बाबा ने उसे टॉर्च देकर भेजा था कि जाओ, देखो ऐसी कौन-सी आत्मा है जो मेरी भी नींद को फिटा रही है। वह ढूँढते-ढूँढते मेरे पास पहुँची, फिर मुझे ले गई बाबा के पास। बाबा बोले, बच्ची, क्या बात है, जो मेरी नींद फिटा रही हो, बोलो, बाबा से क्या चाहिए, ऐसे कहते दृष्टि देने लगे। वह दृष्टि मुझे इतना निहाल करती रही जो उस प्यार के सागर में मैं समा गई। वे सुखद मिलन की घड़ियाँ, जिंदगी में कभी भूल नहीं सकती हूँ। जो पाना था सो सब कुछ पा लिया, ऐसे भरपूर महसूस करती हूँ।

बाबा की युक्ति

यज्ञ में एक छोटी कन्या बाबा की याद में नहीं रह पाती थी। उसको बाबा ने एक सेवा दी थी। वो कौन-सी सेवा थी, सुनकर आपको भी आश्चर्य लगेगा। वो सेवा थी हर पाँच मिनट मे बाबा को आकर पूछना, बाबा, आपको शिव बाबा याद है? वो पूछने के लिए आई। बाबा ने धन्यवाद दिया। मेरे सामने ही तीन-चार बार आकर पूछकर गई तो मुझे वंडर लगा। मैंने पूछा, बाबा, यह छोटी कन्या आपको ऐसे क्यों पूछती है? बाबा ने हँसते हुए कहा, बच्ची, यह बच्ची शिव बाबा को याद नहीं करती, इसी बहाने उसको याद आ जायेगी। इसलिए बाबा ने यह युक्ति रची है। प्यारे बाबा ने निरहंकारी हो, बच्चों के कल्याण के लिए ऐसी युक्तियाँ भी रची।

अपकारियों पर उपकार

प्यारे बाबा अपकारियों पर भी कैसे उपकार करते थे, यह सब हमने बाबा के चरित्रों से सीखा। एक यज्ञ का पला हुआ भाई, भागन्ती होकर, यज्ञ की ग्लानि करता था। उसको मेरे द्वारा बाबा ने एक पत्र भेजा, जिसमें लिखा था, आ लौटके आ जा मेरे मीत, बच्चे, आ जाओ फिर से..। मैंने जब उसे पत्र दिया तो उसने पूछा, यदि मै जाऊँ, तो क्या बाबा मुझे उसी दृष्टि से देखेंगे, जिस दृष्टि से पहले देखते थे? मैंने कहा, हाँ,

क्यो नहीं, जरा पत्र देखो तो। उसने दुबारा पत्र पढ़ा और एकदम घायल होकर बाबा से मिलने चला आया। सामने पांडव भवन में बाबा खड़े थे। बाबा ने देखते ही स्नेह की दृष्टि देते हुए, उसे एकदम गले से लगा लिया। मैं मन ही मन मुग्ध होकर सोचने लगी, वाह! बाबा वाह! आप तो कितने उपकारी हो! जिसने इतनी ग्लानि की, गाली दी, उसे भी अपनाया। वह भाई भी कहने लगा कि बाबा सचमुच भगवान है जिसने मुझ जैसे पापी, विकारी को फिर से अपना लिया..। यह था अपकारी पर उपकार करने का दृश्य।

यज्ञ के घोड़े

कराची में 14 वर्ष तपस्या करने के बाद हम माउंट आबू में आ गये। यहाँ हम 400 भाई-बहनें संगठन में रहते थे। मन-वचन-कर्म में रूहानियत थी। परमात्मा की याद के सिवाय किसी व्यक्ति, वैभव, पदार्थ की याद नहीं आती थी। एक की ही याद में मग्न थे। देवताओं जैसा सच्चा जीवन था। अपने को बहुत हल्के तथा प्रकाश की काया में अनुभव करते थे। निरंतर शांति की अनुभूति में डूबा हुआ त्यागी, तपस्वी और सेवाधारी जैसा जीवन था। बाबा ने इस यज्ञ को राजसूय अश्वमेध अविनाशी रुद्र गीता ज्ञान यज्ञ नाम दिया। जैसे प्राचीन काल में अश्वमेध यज्ञ रचते थे तो यज्ञ के एक सफेद घोड़े को चारों दिशाओं में जाने के लिए खुला छोड़ देते थे। जो कोई उस घोड़े को बाँधता था, उसे युद्ध करना पड़ता था। यहाँ भी बाबा ने रुद्र गीता ज्ञान यज्ञ के सफेदवस्त्रधारी निमित्त बहनों-भाइयों को भगवान का संदेश देने हेतु, मानो घोड़े की तरह, देश-विदेश में भेजने की योजना बनाई ताकि ज्ञान-यज्ञ की ज्वाला चारों ओर फैल सके।

एक दिन मैं पहाड़ी पर बैठी बाबा की याद में मगन थी। इसी बीच मुझे अशरीरी वाणी सुनाई पड़ी कि जाओ, सेवा के लिए निकलो। योग से उठकर यहाँ-वहाँ देखा तो कोई दिखाई नहीं पड़ा। दूसरे दिन भी जब मैं योग में बैठी थी तो वही आवाज सुनाई पड़ी कि जाओ, सेवा पर जाओ। फिर एक दिन बाबा ने मुझे कमरे में बुलाया और कहा, बच्ची, जाओ, सेवा के लिए निकलो। दक्षिण भारत में मेरे लाखों भक्त हैं, उनको मेरा परिचय दो। वहाँ मेरे भोले बच्चे हैं, जाकर उनकी सेवा करो। इस प्रकार बाबा ने मुझे सेवार्थ बैंगलोर भेजा।

जगदम्बा सरस्वती का बैंगलोर में आगमन

एक बार माउंट आबू से, जगदम्बा सरस्वती का बैंगलोर आना हुआ। मैं सोचने लगी कि वो यज्ञ माता जिनको प्यार से सभी यज्ञ निवासी मम्मा कहते हैं, आ रही हैं तो उन्हें कहाँ बिठाऊँ, कैसे स्वागत करूँ? उस समय मुझे प्रेरणा मिली कि तुम ज्वेलरी स्ट्रीट में जाओ, उसी अनुसार जब मैं वहाँ पहुँची तो वहाँ एक मकान था, उस मकान मालिक को भी कुछ प्रेरणा मिली थी। जब मैं उससे मिली तो उसी प्रेरणा अनुसार उसने सारा घर दिखाया। वह भाई जगदम्बा का पुजारी था। जब उसे मालूम पड़ा कि चैतन्य जगदम्बा आ रही है तो खुशी-खुशी अपना घर भी दिया और गाड़ी भी दी। बाबा ने निमंत्रण पत्र का सैम्पल भी भेजा था, वह भी छपाना था। छपाई के काम के लिए भी बाबा ने टर्किंग दी, कमर्शियल स्ट्रीट में एक प्रेस थी उसमें जाने के लिए। प्रेरणा मिलते ही मैं वहाँ गई। प्रेस का मालिक

भी जगदम्बा का भक्त था। उसने खुशी-खुशी छापने की सेवा करके दी। इन सब खर्चों के लिए कोई-कोई निमित्त बनता गया। बाबा ने एक माली को भी प्रेरणा दी। वह फूलों का हार देकर गया। स्वागत के लिए सारी तैयारियाँ हो गई। मम्मा को स्टेशन से ले आये और स्वागत करते हुए ज्वेलरी स्ट्रीट में ले गये। मम्मा का गला मालाओं से भर गया था। जगदम्बा सरस्वती की प्रकृति दासी हो गई थी। मकान मालिक ने मम्मा के सामने फल रखे और कहा, 'मैं आपका पुजारी हूँ, आप चेतन आई हो, स्वीकार करना। मेरी गाड़ी भी सेवा में लगाना और मेरी ग्लास की फैक्ट्री है, उसमें भी चरण रखना' लेकिन मम्मा को उस भाई का वह महल पसंद नहीं आया और मुझे कहा कि बाबा का जो सेवास्थान है, मुझे वहीं ले चलो। मम्मा को लेकर मैं सेवाकेन्द्र पर आई। सेवास्थान बहुत ही छोटा था। मुझे बहुत संकोच हुआ। अपनी चारपाई मम्मा को आराम करने के लिए दे दी। मम्मा ने कहा, बाबा ने कहा है, अगर बच्ची तकलीफ में हो तो उसे ले आना। यह सुनकर मैंने कहा, युद्ध के मैदान से कायर सिपाही भागते हैं, मैं नहीं भागूँगी, बाबा ने भेजा है, मरूँगी, जीऊँगी यहीं। एक बल, एक भरोसे पर रहूँगी। इस प्रकार कुछ दिन सेवा करके फिर मम्मा वापिस चली गई। मम्मा के इतने बढ़िया स्वागत का मुझे कभी सपने में भी ख्याल नहीं था। आज उसी स्थान पर बाबा का सेवाकेन्द्र चल रहा है जहाँ अनेक आत्मायें लाभ ले रही हैं और उस चौक (सर्किल) का नाम ही सरकार ने जगदम्बा सरस्वती सर्किल रख दिया है। पहले उस सर्किल का नाम क्वाड्रल सर्किल था।

बाबा ने अंग्रेजी में बुलवाया

एक बार सेवाकेन्द्र पर एक व्यक्ति आया। मुझसे मिला और कहा, आई वांट पीस ऑफ माइंड (I want peace of mind)। उस समय मुझे अंग्रेजी नहीं आती थी। आइ माना क्या, वांट माना क्या, पीस माना क्या, कुछ मालूम नहीं था। मैं एक सेकंड के लिए फंक हो गई फिर मन ही मन बाबा से कहा, बाबा, आपको ही सहयोग देना है, मेरी इज्जत की रक्षा आपको ही करनी है। इस आत्मा को जो चाहिये, वो आप ही मेरे मुख से कहलवाना। ऐसा संकल्प करके योग में बैठ गई। उसी घड़ी बाबा ने मेरे मुख के द्वारा अंग्रेजी में सारा ज्ञान समझाया। इस प्रकार उस भाई ने साप्ताहिक पाठ पूरा किया। वह भाई भी अंग्रेज भाई के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

जब बाबा अव्यक्त हुए...

ब्रह्मा बाबा के शरीर छोड़ने से एक वर्ष पहले मेरे लौकिक माता-पिता ने शरीर छोड़ा था। पिताजी ने यज्ञ में संपूर्ण समर्पण किया था इसलिए अंत में भी त्रिमूर्ति का साक्षात्कार करते हुए कहा, मैं जा रहा हूँ, मेरा बुढ़ापा खत्म हो रहा है, मुझे पुष्पक विमान में ले जाने के लिए त्रिमूर्ति आते हैं, इसलिए कोई रोना नहीं। यह बात 1968 की है, उसके बाद 1969 में बाबा अव्यक्त हो गये। जब बाबा अव्यक्त हुए तब मैं नेहरू नगर में थी, मन डाँवाँडोल था। चार-पाँच दिन से रोज अनुभव होता था जैसेकि बाबा बुला रहा है, बच्ची, मेरे पास आ जाओ। रात को दो बजे मैं उठकर बैठ जाती थी। साथी बहनें पूछती थी तो मैं कहती थी, मुझे बाबा बुला रहा है। ऐसा सुनने पर सब हँसी करते थे

कि क्या आप शरीर छोड़ेंगी। उस दिन इतवार था, भट्ठी रखी थी, भोग लगाने बैठी तो काफी रोना आ रहा था, बहुत दुख हो रहा था, पता नहीं, योग भी नहीं लग रहा था। फिर बाबा के कमरे में जाकर खूब रोई। फिर महसूस हुआ कि अव्यक्त बापदादा आये, मेरे सिर पर हाथ फिराते हुए कहा, बच्ची, रोती क्यों हो? आप जब पहली बार बाबा के पास आई थी और जैसी हँसी थी वैसे हँसकर दिखाओ। देखो बाबा आपके साथ है। अव्यक्त बापदादा की मीठी दृष्टि लेते-लेते वही हँसी मेरे चेहरे पर आ गई। फिर तो आबू से फोन द्वारा बाबा के अव्यक्त होने की सूचना मिली और साथ में यह भी कहा गया कि जो कुछ होता है, ड्रामानुसार होता है, ड्रामा में निश्चय रखो। फोन पर ही आबू आने के लिए कहा गया था सो मैं आ गई। फिर ड्रामा की भावी समझ अपने को संतुष्ट कर लिया।

एक दिन जब मैं क्लास करा रही थी तो एक बुजुर्ग व्यक्ति आया और बोला, मुझे भगवान ने भेजा है कुछ यादगार काम करने के लिए इसलिए मैं आया हूँ। देखने में तो वह ऐसा लग रहा था जैसे कोई भीख माँगने वाला हो। लेकिन, वो बुजुर्ग कुछ पैसा भी लाया था। उसी के हाथ से, यादगार बना हुआ वो 'शान्ति स्तंभ' माउंट आबू में आज भी खड़ा है।

बाबा द्वारा मैसूर के राजा की सेवा

भगवानुवाच सौ प्रतिशत सच होता है, इसका भी सुन्दर अनुभव हमने समय-समय पर किया। बैंगलोर के भाई-बहनों ने एक बार मैसूर के राजा को ईश्वरीय संदेश देने की योजना बनाई और मैं (मधुबन में) प्यारे बाबा से इस बारे में बातचीत करने गई। बाबा ने सेकंड में ही कहा, बच्चे, राजा तुम्हें नहीं मिलेगा।' परंतु भाई-बहनों के दो-तीन तार आ चुके थे, मुझे बुला रहे थे। बाबा ने साहित्य, टोली आदि देकर मुझे भेजा, परंतु वहाँ जाते ही अखबारों में खबर छपी कि राजा की माँ मर गई है, इसलिए राजा किसी से भी नहीं मिलेगा। इस प्रकार भगवानुवाच सच साबित हुआ। फिर बाबा ने कुछ समय बाद, राजा की सेवा का कार्यक्रम स्वयं बनाकर हमें दिया, उस अनुसार जाने पर राजा ने हमारा खूब सत्कार किया, बाबा द्वारा दिए झाड़, त्रिमूर्ति के चित्र हमने उसे सौगात में दिए, उसने भी गोल्डन तारों वाली शाल हमें सौगात में दी जो हमने बाबा को भेंट की। इस प्रकार बाबा त्रिकालदर्शी बन सेवा करवाता था।

******

डॉ. ब्रह्माकुमार नरसय्या, ज्ञानसरोवर, आबू पर्वत दादी हृदयपुष्पा के बारे में इस प्रकार बताते हैं-

बाबा से दिल-जान से प्यार

दादी हृदयपुष्पा जी त्याग, तपस्या एवं गुणों की चैतन्य मूर्ति थीं। वे बाबा को दिल-जान से प्यार करती थीं। उनके हर वाक्य में बाबा-बाबा शब्द रहता था। बाबा के महावाक्य मुरली पर उनका अथाह प्रेम और श्रद्धा रहती थी। रोज़ वे कम से कम तीन बार मुरली पढ़ा करती थीं। कोई भी आये, चाहे छोटा या बड़ा, वे ख़ुद मुरली पढ़कर सुनाती थीं। जब वे योग में बैठती थीं तब सिर्फ अपनी देह को ही नहीं सारी दुनिया को भूलकर तन्मय होकर बाबा की लगन में मगन रहती थीं।

वे भाषा से नहीं, योग-शक्ति से समझाती थी

वे कर्नाटक की राजधानी बेंगलूर में रहती थीं लेकिन उनको कन्नड भाषा नहीं आती थी। वे भाषा से नहीं, अनुभूति से, योग की शक्ति से जिज्ञासुओं को समझाती थीं, अनुभव कराती थीं। वे सात्विक अन्न, पवित्रता, योग तथा मुरली को प्रथम स्थान देती थीं।

वे कभी ख़ाली नहीं बैठती थीं। हमेशा किसी न किसी सेवा में व्यस्त रहती थीं। प्रतिदिन सुबह की मुरली वे ही सुनाती थीं। मुरली के बाद फ्री होतीं तो सबके साथ सब्जी काटने बैठ जाती थीं। अगर कपड़े सिलाई करने होते तो कपड़े कटिंग करके देती थीं।

हर संकल्प सिद्ध

दादी हृदयपुष्पा जी की एक प्रबल इच्छा थी कि बेंगलूर नगर में एक राजयोग भवन बनायें और उसके अन्दर एक बड़ा शिवलिंग रहे और उस शिवलिंग के अन्दर आध्यात्मिक संग्रहालय (म्युजियम) रहे। हमने देखा कि दादी जी कोई भी संकल्प करती थीं वो सिद्ध हो जाता था या वे उसे सिद्ध कर लेती थीं। योग भवन बनाते समय उस जमीन तक जाने के लिए, चलने के लिए ठीक रास्ता ही नहीं था लेकिन दादी जी वहीं रहकर कनस्ट्रक्शन का काम कराती थीं। उन दिनों शिवलिंग रूप का कोई भवन हमारे विद्यालय का नहीं था। क्लास में आने वालों ने तथा अन्य स्थानों पर रहने वाले कई बी.के. भाई-बहनों ने इसका विरोध किया कि यह भक्तिमार्ग है लेकिन शिवलिंग का यह म्यूजियम कैसा होना चाहिए, उसका निर्माण कैसे कराना चाहिए– यह सब बाबा ने दादी जी को साक्षात्कार में दिखाया। दादी जी ने उसी अनुसार शिवलिंग के रूप का म्युजियम उस राजयोग भवन में बनवाया।

साधन बाबा के कार्य के लिए हैं

शिवलिंग बनाते समय पैसों की कमी पड़ ग तो उनके पास उस समय दो कारें थीं। दोनों को उन्हों बेच दिया। उस पैसे से रुके हुए कार्य को आगे बढ़ाय उस समय मैंने दादी जी से पूछा, दादी, आपने दो कारें बेच दीं, अब आप कैसे आना-जाना करेंगी वीवी पुरम् सेन्टर से राजयोग भवन करीब 16 कि दूर है। तब उन्होंने कहा कि बाबा है, किसी न कि कार वाले को भेज देगा, वो आकर ले जायेंगे, ज साधन हमारे पास हैं वो बाबा के कार्य के लिए हैं, कि पर्सनल सेवा के लिए। इस प्रकार वे हमेशा बाब की सेवा को ही प्रथम स्थान देती थीं, बाद में अपने को। फिर तो रोज़ कोई न कोई भाई आकर उनको वहाँ छोड़ता था और ले आता था।

पूरे दक्षिण भारत में ईश्वरीय ज्ञान एवं राजयोग का बीज जिन्होंने बोया। उनके तपोबल, मनोबल एवं धारणा के बल के फलस्वरूप आज हज़ारों ईश्वरीय सेवाकेन्द्र पूरे दक्षिण भारत (कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु और केरल) में सेवा कर रहे हैं।

धीरज और योगबल से सफलता

सेवाक्षेत्र में कोई भी विघ्न आये या परिस्थिति आये, वे कभी घबराती या चिन्तित नहीं होती थी। उन्होंने धीरज और योगबल से काम लिया और काम किया। एक बार मधुबन से दो बसें भरके भाई बेंगलूर आये थे दूअर पर। उन दिनों राज्य भर में मिट्टी का तेल कन्ट्रोल में था। किसी भी दुकान में नहीं मिलता था। क्लास के सब भाई-बहनें चिन्ता करने लगे कि

क्या करें, सबके लिए खाना कैसे बनायें। दादी जी जाकर बाबा के कमरे में योग में बैठ गईं। भाई-बहनें आपस में मिलकर अपने-अपने घरों से मिट्टी का तेल लेकर आये। सबका इकट्ठा किया हुआ तेल इतना हो गया कि सब कार्य व्यवस्थित रूप से सम्पन्न हुए। उन्होंने हम सबको यह पाठ पढ़ाया कि कोई भी समस्या आती है या कोई भी कार्य करना है तो बाबा को साथ रखो और बाबा की याद में करो तब बाबा उस कार्य को सफल करने के लिए कोई न कोई हल निकाल देता है। बाबा पर उनका निश्चय, उनका भरोसा देखने लायक होता था।

मुख से बाबा के महावाक्य और चरित्र ही निकलते थे

हमने देखा कि सदा उनके मुख द्वारा बाबा के महावाक्य और साकार बाबा के चरित्र ही निकलते थे। यज्ञ इतिहास सुनाते-सुनाते वे खो जाती थीं। उनका अनुभव सुनते-सुनते हमें भी ऐसा लगता था कि हम भी कराची में साकार बाबा के सम्मुख बैठे हुए हैं। जब माँ सरस्वती बेंगलूर आयी थीं, उन दिनों का अनुभव जब वे सुनाती थीं, उन्हें सुनते-सुनते हम भी सुधबुध भूल जाते थे, ख़ुशी में तन-मन डोलने लगते थे।

शुरू-शुरू में क्लास में आने वाले कोई भाई-बहनें पाँच रुपये की भी सेवा करते थे तो तुरन्त दादी जी उन पैसों की डाक टिकट मँगवाकर मधुबन भेज देती थीं ताकि मुरली भेजने के काम में आयें।

पुलिस इन्स्पेक्टर हाथ जोड़कर खड़ा हो गया

एक बार बेंगलूर में कोई विघ्न आया। पुलिस इंस्पेक्टर दादी जी से इंक्वायरी करने सेन्टर पर आया। उस समय मैं भी वहीं था। वो इंस्पेक्टर आकर थोड़ी ऊँची आवाज़ में ही पूछने लगा कि कहाँ हैं आपकी दादी जी? उस समय दादी जी अपने कमरे में योग कर रही थीं। वह वहीं गया। दादी जी को देखते ही उसको क्या साक्षात्कार हुआ ,पता नहीं, वह दादी जी को दंडवत् प्रणाम कर हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। थोड़े समय के बाद बिना कुछ पूछे वहाँ से चुपचाप चल पड़ा लेकिन दादी जी ने उसको बुलाकर टोली (प्रसाद) देकर भेजा।

रक्षाबन्धन के त्यौहार पर दादी जी शाम को राखी बाँधने के लिए बैठती थी और रात 10 बजे तक लगातार योगयुक्त होकर सबको दृष्टि देते हुए राखी बाँधती थीं। हमें ऐसा अनुभव होता था कि राखी बाँधने के समय बापदादा भी वहाँ पर उपस्थित हैं। पूरा वायुमंडल अव्यक्त और योगयुक्त रहता था।

उनसे देवी का साक्षात्कार

दादी जी के सामने कोई भी आये, चाहे वो ज्ञानी हो या भक्त, सब उनसे वरदान, प्रेरणा लेकर जाते थे। कई लोगों को तो दादी जी को देखकर देवी का साक्षात्कार होता था।

इस प्रकार, दादी हृदयपुष्पा जी एक ऐसी महान् आत्मा थीं जिनमें बाबा के प्रति अटूट प्रेम और सम्पूर्ण निश्चय था। वे सत्यता, आज्ञाकारिता, ईमानदारी, वफादारी, फरमानबरदारी की सजीव मूरत थीं। दादी जी मुरली की दीवानी थीं। वे सदैव योगयुक्त रहती थीं। देखने वालों को ऐसा लगता था की वे परमात्मा की प्रेम में लवलीन हैं। वे एक महान् योगिन व तपस्विनी थीं।

भाऊ विश्वकिशोर

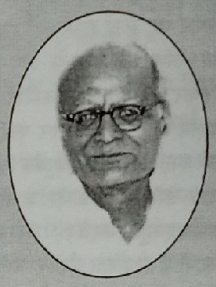

भाऊ विश्वकिशोर बाबा के पक्के वारिस, सदा हाँ जी का पाठ पढ़ने वाले, आज्ञाकारी, वफादार, ईमानदार, बाबा के राइट हैण्ड तथा त्याग, तपस्या की प्रैक्टिकल मूरत थे। आप लौकिक में ब्रह्मा बाबा के लौकिक बड़े भाई के सुपुत्र थे लेकिन बाबा ने ही आपको शुरू से पालना देकर बड़ा किया था। जब बाबा ने अपना सर्वस्व माताओं के आगे समर्पित किया तो भाऊ विश्व किशोर भी बाबा के साथ समर्पित हुए और यज्ञ रक्षक के रूप में, मैनेजर के रूप में अपनी सेवायें देने लगे। आप सदा माताओं बहनों को पूरा सम्मान देते हुए हर कार्य में आगे रहे। आप 12 मार्च, 1968 को अपना पुराना शरीर छोड़ अव्यक्तवतनवासी बने।

विश्वकिशोर भाऊ के बारे में **दादी निर्मलशान्ता जी** बताती हैं –

बाबा प्रति प्रेम और विश्वास

विश्वकिशोर दादा का लौकिक नाम भैरू दादा था, यज्ञ में सभी उनको 'भाऊ' के नाम से जानते हैं, उन्हें तो आदि से अंत तक बाबा का राइट हैण्ड समझकर, सभी यज्ञ निवासी सम्मान देते थे। भावी अनुसार व्यापार करने के लिए बाबा का कोलकाता जाना हुआ। कोलकाता में सबसे नामीग्रामी स्थान और प्रसिद्ध बिजनेस सेन्टर उस समय न्यू मार्केट ही था जिसे चार्ल्स हॉग मार्केट के नाम से जाना जाता है। लेकिन सभी के मुख से 'न्यू मार्केट' नाम ही निकलता है। उस मार्केट के ठीक सामने एक सात मंजिल की इमारत थी जिसमें लिफ्ट लगी हुई थी। उसका ठिकाना (पता) '7 ए, लिण्डसे स्ट्रीट, सुराना मेन्सन, न्यू मार्केट' है। पहली मंजिल पर बाबा ने दुकान यानि जिसे हम गद्दी कहते थे उसे हीरे-जवाहरातों के बिजनेस का स्थान बनाया। दूसरी मंजिल में हम सभी रहते थे, इसके साथ-साथ मुख्य न्यू मार्केट के ठीक बीचों-बीच हीरे-जवाहरातों के शोरूम जैसी एक बहुत बड़ी दुकान थी जिसमें सभी प्रकार के गहने थे, वह जवाहरात का जैसेकि म्यूजियम था। बहुत विदेशी भी वहाँ आकर सैम्पल (नमूना) देखकर ऑर्डर दे जाते थे। लेकिन आपको आश्चर्य होगा कि यह दुकान भी जैसे खुदरा (रिटेल) माल बेचने का बाबा का ही केन्द्र (रिटेल शोरूम) था। यह भाऊ की दुकान थी। अत: ऐसे मीठे भाऊ के पास जो भी ग्राहक होलसेल (थोक) में माल लेने आते थे, वे उन्हें बाबा के पास पहली मंज़िल वाली गद्दी में ले आते थे। कोई भी नया डिजाइन, फैशन वा

मनपसंद की ज्वैलरी चाहिए तो उसे बाबा ही बनाकर देते थे। भाऊ, बाबा के लौकिक भाई का बेटा था, अत: बाबा पर शुरू से प्रेम और विश्वास होने के कारण वह जैसेकि परिवार का ही सदस्य था। उन्हें आप बाबा का भाई समझो या बेटा समझो, वे दोनों पार्ट एक-साथ बजाते थे।

सब कार्यों में सफलता का वरदान

शुरू से जो बाबा ने कहा, वे हाँ जी, जी हाँ कहकर करते थे। इनका भी श्रेष्ठ चरित्र व दिव्य जीवनकहानी है तथा वे भी बाबा को कॉपी (अनुसरण) करके सारा बिजनेस समेटकर कराची चले गये। विश्वकिशोर भाऊ तथा सन्तरी दादी ने अपना सब कुछ बाबा को समर्पित किया। दोनों ही यज्ञ-सेवा के आधारस्तंभ होकर रहे। मकान की खरीद-बेच, कपड़े की खरीदारी, गाड़ी-बस का प्रबंध आदि-आदि सभी कार्य बाबा भाऊ से ही करवाते थे। पहला नंबर भाई यही था। बाबा का इसमें और इसका बाबा में बहुत विश्वास था। केवल बाबा से नहीं बल्कि मम्मा से भी और जितने भी यज्ञ-वत्स थे, सभी से बहुत-बहुत स्नेह था। बाबा के समान था, कोई इच्छा नहीं रखता था। अंत तक बाबा के अंग-संग रहकर, बाबा के हर आदेश का पालन कर, यज्ञ की हर प्लानिंग (योजना) को कैसे विधिपूर्वक किया जाये, उसे बाबा के आदेश वा श्रीमत प्रमाण एक्यूरेट करते रहे। उन्हें सर्व कार्यों में सफलता जैसेकि वरदान के रूप में मिली हुई थी। बारह मार्च, सन् 1968 में वे पार्थिव शरीर छोड़ एडवांस पार्टी में आज भी सेवारत हैं।

भाऊ विश्वकिशोर, बाबा, दादी संतरी, दादा आनंद किशोर, मम्मा तथा अन्य बहनें

******

संतरी दादी जी ने एक बार बताया था –

बाबा के भवन के सामने ही विश्वकिशोर जी का घर था। उनके निमंत्रण पर बाबा एक बार वहाँ गीता सुनाने गये। जब बाबा प्रवचन कर रहे थे, तब वहाँ सभा में बैठे बहुत-से व्यक्तियों को बाबा के तन में श्रीकृष्ण का साक्षात्कार हुआ। शान्ति का अनुभव तो सभी को हुआ ही परंतु अनेकानेक को दिव्य साक्षात्कार होने के कारण शहर में

धूम मच गई कि बाबा के सत्संग में जाने पर सहज ही साक्षात्कार हो जाता है।

******

ब्रह्माकुमार जगदीश भाई ने 'भाऊ' के बारे में इस प्रकार बताया है –

विश्व के मालिक का किशोर बनने जैसा पुरुषार्थ

जब शिवबाबा ने सिन्ध अथवा पाकिस्तान से 'यज्ञ' को भारत में स्थानांतरित करने का निर्देश दिया तब आबू में बृज कोठी लेने तथा ब्रह्ममुखवंशावली के आवास-निवास आदि के लिये उचित प्रबंध करने के लिए सबसे पहले एक विशेष अनुभवी ब्रह्माकुमार को भेजा गया था। वह यज्ञ-वत्सों में से एक मुख्य भाई थे जिन्हें शिवबाबा ने 'विश्वकिशोर' नाम दिया था। सचमुच जैसा उनका नाम था वैसा उनका पुरुषार्थ भी था। वे भविष्य में विश्व के मालिक (श्री नारायण) का किशोर बनने जैसा ही पुरुषार्थ किया करते थे। जब बाबा को ईश्वरीय साक्षात्कार हुए थे और उन्होंने जवाहरात के धंधे से अवकाश प्राप्त किया था, तब 'विश्वकिशोर' जी के मन में भी यह संकल्प था कि 'मैं भी बाबा का अनुकरण करूँगा।' उन्होंने बाबा से अपनी हार्दिक इच्छा प्रगट भी की थी। परंतु बाबा ने उन्हें निर्देश दिया था कि अभी थोड़ा ठहरो। कुछ समय के बाद आपको भी पूर्णरूपेण प्रभु-अर्पण होने की राय दे दी जायेगी। विश्वकिशोर जी तो हर हाल में राजी थे, जैसे बाबा उन्हें चलाये वैसे ही चलने में उनको खुशी होती थी। कुछ ही वर्षों के बाद उन्हें इस ईश्वरीय ज्ञान यज्ञ में समर्पण होने की प्रेरणा मिल गई और तब वे सपरिवार इस ईश्वरीय यज्ञ में सर्वस्व समर्पित हो गये थे। उनकी युगल जिनका नाम ब्रह्माकुमारी संतरी था, भी लगन और तन्मयता तथा त्याग से इसी ईश्वरीय विद्या के अध्ययन और सेवाकार्य में लग गई थी।

मैं मामूली ईश्वरीय सेवक हूँ

विश्वकिशोर जी भी बहुत अनुभवी, विचारवान, निश्चयबुद्धि, त्यागवृत्ति वाले, वफादार और ईमानदार थे। वे जब-कभी लोगों से यज्ञ के किसी कार्य के लिए मिलते तो लोग उनसे पूछते थे, 'आपका इस संस्था में क्या स्थान है? क्या आप यहाँ के सेक्रेटरी हैं?' तब विश्वकिशोर जी कहा करते, 'नहीं, मैं तो माताओं-बहनों का एक छोटा-सा सेवक हूँ अथवा मैं तो एक मामूली ईश्वरीय सेवक हूँ।' वे पत्र-व्यवहार में भी स्वयं को 'ईश्वरीय सेवक' लिखकर हस्ताक्षर करते थे। यों थे तो वे इस ईश्वरीय विश्व विद्यालय के एक प्रबंधक।

******

भ्राता रमेश जी 'भाऊ' के बारे में इस प्रकार बताते हैं –

दादा विश्वकिशोर बहुत ही निष्ठावान और ब्रह्मा बाबा के प्रति असीम श्रद्धा रखने वाले थे। उन्होंने हमारे जीवन में बहुत बड़ा परिवर्तन कराया।

ईश्वरीय सेवा का दरवाजा खोल दिया

एक बार मैं अपने घर में भोजन कर रहा था और दादा विश्वकिशोर बैठे थे। मैं तो बाबा को याद कर भोजन कर रहा था। मैं सोच रहा था कि दादा मेरे घर में खाना नहीं खायेंगे क्योंकि वे खाने के बारे में बहुत धारणामूर्त थे। परन्तु अचानक ही मेरे सामने

सामने खड़े हो गये और एक तरफ दादा विश्वकिशोर तो दूसरी तरफ मैं रहा। वह फोटो यादगार फोटो बन गया। जब हम ट्रेन से मुंबई आ रहे थे तब दादा विश्वकिशोर और संतरी दादी साथ में थे तो मैंने दादा से सवाल पूछा कि बाबा तो हमेशा अपना फोटो निकालने के लिए मना करते हैं, आज कैसे बाबा ने खुद चद्रहास को नींद से उठाकर फोटो निकलवाया? तब दादा विश्वकिशोर ने मुझे एक गूढ़ रहस्य बताया कि मेरी यह ब्रह्मा बाबा से अंतिम मुलाकात थी। मैंने बाबा को अर्जी दी थी कि अभी ईश्वरीय सेवा में बहुत पढ़े-लिखे भाई जैसे दिल्ली में बृजमोहन, जगदीश तथा मुंबई में निर्वैर, रमेश आदि आ गये है तो मैं समझता हूँ कि अब मेरा कार्य समाप्त हो गया है, इसलिए मैं एडवांस पार्टी में जाकर बाबा के भविष्य के कारोबार को संभालना चाहता हूँ। बाबा ने तथास्तु कहकर मेरी इस अर्जी को स्वीकार किया। इस ऑपरेशन के बाद मैं उठूँगा नहीं इसलिए मेरी इस अंतिम विदाई का फोटो स्मरण चिह्न के रूप में रखने के लिए बाबा ने अपना नियम तोड़ा। उस समय मुझे दादा विश्वकिशोर के

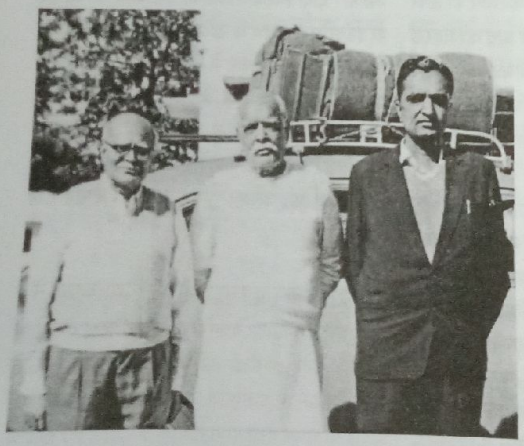

भाऊ विश्वकिशोर, बाबा तथा रमेश भाई

यज्ञ के प्रति असीम प्यार और एडवांस पार्टी में जाकर यज्ञ सेवा अच्छे से अच्छे करने के दृढ़ मनोबल का साक्षात्कार हुआ। बाद में ऑपरेशन हुआ और दादा ने देह-त्याग किया। उनकी पार्थिव देह को जब गामदेवी सेन्टर पर लेकर आये, तब अव्यक्त बापदादा की पधरामणि हुई और अव्यक्त बापदादा ने एक और रहस्य बताया कि बच्चे की इच्छा तो ऑपरेशन टेबल पर ही शरीर छोड़ने की थी परंतु यदि ऑपरेशन टेबल पर बच्चा शरीर छोड़ता तो डॉक्टर बदनाम हो जाता इसलिए बाप ने पाँच दिन की लाइफ बच्चे को एक्स्ट्रा दी, पाँचवें दिन उनके शरीर को मुक्त किया और अपनी गोद में विश्राम दिया। इस प्रकार इच्छा-मृत्यु का अनुभव हमें दादा विश्वकिशोर से प्राप्त हुआ।

बाद में हमने मधुबन फोन किया और ब्रह्मा बाबा से दादा विश्वकिशोर के पार्थिव शरीर को मुंबई से अहमदाबाद और फिर आबू लाने की आज्ञा मांगी तब मोहजीत ब्रह्मा बाबा ने कहा कि बच्चे, अभी उस आत्मा का शरीर के साथ जो संबंध था, वह तो खत्म हो गया है, अभी एडवांस पार्टी में नया कारोबार

शुरू होगा, इसलिए शरीर को आबू लाने की जरूरत नहीं है, मुंबई में ही अंतिम संस्कार कर दो। कुमारका बच्ची और संतरी (युगल) दोनों मिलकर अग्नि संस्कार करें। इस प्रकार से दादा विश्वकिशोर के पार्थिव शरीर का अंतिम संस्कार मुंबई में किया गया।

हनुमान मिसल सेवा

दादा हमें यज्ञ का आगे का कारोबार करने का सौभाग्य देकर गये और मैं आज तक यह कारोबार, दादा विश्वकिशोर का आज्ञाकारी छोटा भाई समझ कर कर रहा हूँ। मैं दादा विश्वकिशोर को हमेशा ही हनुमान रूप में देखता हूँ क्योंकि हनुमान जी राम-लक्ष्मण की सुरक्षा के लिए हमेशा चिंतित रहते थे। उसी प्रकार से दादा विश्वकिशोर भी मम्मा-बाबा के स्वास्थ्य के लिए हमेशा चिंतित रहते थे। ट्रेन से जब बाबा-मम्मा मुंबई आते तो गुजरात वेस्टर्न रेलवे के जनरल मैनेजर से मिलकर दादा ट्रेन में पुराने जमाने का फर्स्ट क्लास डिब्बा अलग से लगवाते। इस बात का भी ध्यान रखते कि बाबा की सीट के नीचे ट्रेन के पहिये ना आएँ ताकि बाबा गहन नींद का अनुभव कर सकें। दादा विश्वकिशोर को वेस्टर्न रेलवे के सभी ऑफिसर्स जानने लगे थे और इसलिए वे इस प्रकार की व्यवस्था ब्रह्मा बाबा के लिए दे देते।

यज्ञ रक्षक के रूप में सदा सेवारत

मातेश्वरी जी भी जब कैंसर के इलाज के लिए कानपुर से मुंबई आए तो ब्रह्मा बाबा ने दादा विश्वकिशोर को आबू से मातेश्वरी की तंदुरुस्ती के लिए सब प्रकार का प्रबंध करने के लिए मुंबई भेजा। दादा ने ही आकर मातेश्वरी जी के ऑपरेशन आदि का सब प्रकार का प्रबंध मुंबई में किया। मातेश्वरी जी को जब स्ट्रेचर पर लिटाकर ऑपरेशन थियेटर में ले जा रहे थे, तब दादा ने खुद आगे-आगे हनुमान बन स्ट्रेचर को पकड़ लिया और मुझे भी कहा कि आप पीछे से धक्का लगाओ, हम मातेश्वरी को थियेटर तक पहुँचाते है। दादा की प्रतिभा इतनी सौम्य और सुन्दर थी कि हॉस्पिटल का कोई भी स्टाफ मेम्बर मना नहीं करता था। दादा खुद स्ट्रेचर पर मातेश्वरी जी को थियेटर तक लेकर गये। इस प्रकार बाबा-मम्मा की तंदुरुस्ती के बारे में दादा सदा तत्पर रहते थे, ऐसे हमारे दादा ने यज्ञ रक्षक के रूप में सदा ही ईश्वरीय सेवायें की।

******

एक बार दादी मनोहर इन्द्रा ने विश्वकिशोर भाऊ के मुंबई हॉस्पिटल में जाने और उसके बाद के घटनाक्रम का इस प्रकार वर्णन किया –

ड्रामा कह सेकण्ड में बात समाप्त कर दी

भ्राता विश्वकिशोर सन् 1938 से परिवार सहित संपूर्ण समर्पित थे और आदि से अन्त तक उसने सारे यज्ञ का कारोबार संभाला था। बहुत ही निश्चयबुद्धि, समर्पित बुद्धि, हर कदम में फालो फादर करने वाले थे। पूरी तरह आज्ञाकारी और वफादार थे। वह बाबा की आज्ञा प्रमाण मुंबई हॉस्पिटल में ऑपरेशन कराने गये और ऑपरेशन ठीक होने के बाद पाँच दिन तक खुश-खैराफत का समाचार मिलता रहा। छठे दिन अचानक उसके शरीर छोड़ने का समाचार मिला। बाबा को जब यह समाचार सुनाया गया, तो बाबा के चेहरे से ऐसा लगा जैसे कुछ हुआ ही नहीं। बाबा ने कहा, बच्चा अच्छा था, आज दिन तक बाबा के पास

ऐसा बच्चा नहीं है, आगे चलकर बाबा का कोई न कोई ऐसा बच्चा निकलेगा जो उसकी सीट संभाल लेगा, बच्चा आज्ञाकारी, वफादार, फरमाँबरदार था। बाबा ने ड्रामा कहकर सेकंड में बात समाप्त कर दी और एकदम नष्टोमोहा बन गये।

मुम्बई में ही शरीर रूपी कलेवर का त्याग कर दिया

उनके शरीर छोड़ने के बाद एक संदेश पुत्री हर रोज उस आत्मा को यज्ञ का भोग खिलाने ट्रांस में जाती थी। बापदादा उनको अनेक प्रकार के दृश्य दिखाते थे। वह उन दृश्यों का विवरण हर रोज मधुबन में भेज देती थी। एक दिन बाबा से किसी बच्चे ने पूछा, बाबा, भ्राता विश्वकिशोर प्रति वतन के जो दृश्य आये हैं, उन्हें क्लास में सुनायें, सब उनके बारे में पूछ रहे हैं? इस पर बाबा बोले, बच्चे, दृश्य सुनाने की दरकार ही नहीं है,

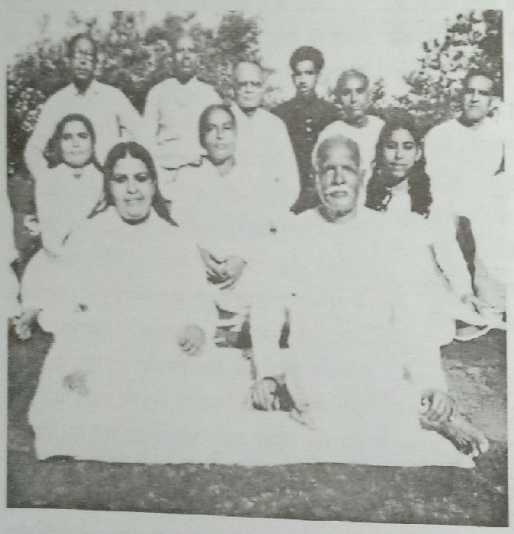

मम्मा-बाबा के पीछे योग तपस्या में बैठे हैं भाऊ विश्वकिशोर

दृश्य सुनायेंगे तो कुछ न कुछ पाप चढ़ जायेगा क्योंकि जो बच्चे विश्वकिशोर को याद करते रहेंगे हैं, उन्हें बाबा भूल जायेगा। उनका बुद्धियोग बाप से टूटकर बच्चे में लग जायेगा। इसलिए बच्चों को किसी भी देहधारी की याद नहीं दिलानी चाहिए। इस प्रकार बाबा, अनन्य से अनन्य बच्चे की तरफ भी किसी का मोह रूप बुद्धियोग नहीं लगवाना चाहते थे। बाबा का पुरुषार्थ था कि कुछ भी हो जाये पर बच्चों का बुद्धियोग शिवबाबा से दूर न जाए।

भ्राता विश्वकिशोर के शरीर छोड़ने के 13 दिन बाद जब उनकी युगल सन्तरी दादी और शीलइन्द्रा दादी मुम्बई से मधुबन आईं तो वे बहुत प्यार से भाऊ के शरीर के अंतिम समय के (शव के) अनेक प्रकार के फोटो ले आईं और बाबा को दिखाना चाहती थी परंतु बाबा की ऐसी न्यारी-प्यारी स्टेज का अनुभव हो रहा था जो उनकी हिम्मत ही नहीं हुई बाबा को फोटो दिखाने की। फिर भी बाबा के महावाक्य सुनने की इच्छा से, जानबूझकर एक बहन ने उनसे कहा, आप फोटो लाये हो, तो बाबा

को क्यों नहीं दिखाते हो? बाबा तो बड़े न्यारे-प्यारे दिव्य रूप में स्थित थे। फिर बाबा ने ही उनसे पूछा, बच्ची, ये फोटो क्यों निकाले? क्या करोगी? क्या मधुबन के बच्चों ने विश्वकिशोर को नहीं देखा? फिर उनके शव को देखकर क्या करेंगे? अब इन फोटो को यहीं समाप्त कर दो। जितना पैसा इनमें खर्च किया, व्यर्थ गया। बच्ची, तुम जानती हो, बाबा देह से प्यार नहीं करते। आत्मा से बाबा का प्यार है। बाबा जानता है कि वह बच्चा कैसा था, वह क्या कमाई करके गया और भविष्य में क्या पद पायेगा। इसलिए ये फोटो आदि देखना सब छोटे बच्चों का काम है। बाबा के इस प्रकार के बोल सुनकर अंदर में एक प्रेरणा आई कि बाबा कितना नष्टोमोहा है! बाबा का कितना लाडला बच्चा! पर बाबा का न लौकिक में मोह, न अलौकिक में मोह।

उस समय संतरी दादी और शील दादी के मन में यह भी संकल्प था कि हम बाबा को भाऊ की अंतिम स्थिति के बारे में बहुत कुछ समाचार सुनायें। जब वे दोनों बहनें बाबा के सम्मुख बैठी तो बाबा ने उनका सूक्ष्म संकल्प पहले ही कैच कर लिया। वे बाबा को भाऊ के बारे में कुछ सुनाना चाहती थी लेकिन बाबा का रूप ऐसा दिव्य था कि पास्ट की बात को सुनना ही नहीं चाहते थे। उस समय अव्यक्त अवस्था में बैठे बाबा ने दोनों को दृष्टि देकर अशरीरी अवस्था का अनुभव कराया, चारों ओर शान्ति फैल गई।

******

कटक की **कमलेश बहन** सुनाती हैं –

सन् 1965 में पहली बार भाऊ से मिली थी, उस समय यज्ञ में तीन मास रही थी। बाबा ने मुझे सुबह और शाम को भाऊ का भोजन बनाने और खिलाने की ड्यूटी दी थी। वे देसी घी नहीं खाते थे, डालडा घी खाते थे। बहुत ही शान्त स्वरूप, नम्रचित्त और सौ प्रतिशत धारणामूर्त थे। कभी किसी को आँखें ऊँची करके नहीं देखते थे। यदि भोजन में किसी भी प्रकार की भूल हो भी जाती थी तो कभी कुछ कहते नहीं थे, हमेशा अच्छा ही कहते थे। भोजन बाबा की याद में करते थे। जब वे भोजन करते थे तो महसूस होता था कि बाबा उनके साथ है। कुछ कहना होता था तो इशारे से कहते थे, आवाज में नहीं आते थे। मैंने उनको बाबा के साथ टहलते देखा बहुत ही निर्मानता से जैसे छोटा बच्चा अपने बाप के साथ टहलता है। हमें जितना बाबा से स्नेह था, उतना ही भाऊ से भी था। जब इनका भोजन बनाने की ड्यूटी मिली तो बहुत खुशी मिली कि हमारा भाग्य खुल गया जो ऐसी आत्मा की सेवा का चांस मिला। जीवन बहुत सात्विक था उनका। संतरी दादी और वे न्यारे-प्यारे नजर आते थे। उन दिनों सेवाकेन्द्र बहुत कम थे पर भाऊ को कई स्थानों पर यज्ञ के विभिन्न कार्यों अर्थ जाना होता था तो बाबा ने उनके लिए एक किट बनाकर दे रखी थी जिसमें भोजन बनाने के बर्तन और भोजन बनाने के पदार्थ होते थे। जहाँ जाते थे, स्वयं बनाकर खाते थे। यज्ञ की मर्यादा का पूरा-पूरा पालन करते थे।

******

पिछले 56 साल से मधुबन में रह रही **ब्र.कु. वीनू बहन**, विश्वकिशोर भाऊ के बारे में इस प्रकार सुनाती हैं –

विश्वकिशोर भाई का व्यक्तित्व बहुत ऊँचा था। जैसे ब्रह्मा बाबा कहीं भी जाते थे तो दूर से ही अलग

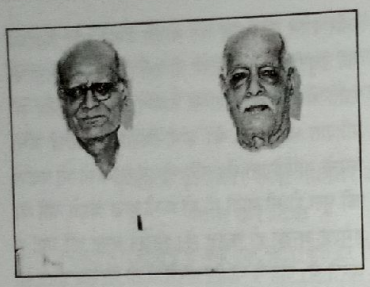

भाऊ विश्वकिशोर जी एवं बाबा

लगते थे और आकर्षित करते थे, ऐसे ही भाऊ भी कहीं भी जाते, किधर से भी गुजरते तो ब्रह्मावत्स प्यार से कहते थे, भाऊ आ रहे है, शान्ति रखो। सब लोग उन्हें देख अलर्ट हो जाते थे। कई बार कारोबार अर्थ 8 दिन बाद भी बाहर से आते थे। भोली दादी खाना बनाती थी, हम उनको खिलाती थी, तब कहते थे, खाना तो आज ही खाया है। राखी के दिन हम उसको राखी बाँधती थी। एक बार बाबा ने हँसी-हँसी में कहा, बच्ची, तुमने उसको राखी बाँधी, वह तो अपवित्र है ही नहीं, तुमने उसको राखी क्यों बाँधी? मैं उस समय 7 साल की थी। मैंने कहा, बाबा खर्ची मिलेगी। फिर बाबा मुसकरा दिए।

सन् 1968 में भाऊ को ऑपरेशन के लिए मुम्बई ले गए। डॉक्टर ने बोला, आठ दिन बाद ऑप्रेशन होगा तो भाऊ पुनः आबू आ गये। रमेश भाई भी साथ मे थे। इन आठ दिनों के दौरान बाबा ने रमेश भाई और भाऊ को अपने साथ ही खाना खिलाया। ड्रामानुसार मानो बाबा ने उसी समय भाऊ पर जी भर स्नेह और पालना लुटा दी। आठ दिन बाद जब जाने का समय आया तब बाबा अपने कमरे में गद्दी पर बैठे थे। बाबा ने कहा, बच्चे, आप जा रहे हो, भले जाओ, बाबा को कोई फिकर नहीं, आपने बाबा को बेफिकर किया है। ऑप्रेशन के समय बाबा उनके प्रति खास योग भी करते रहे। रोज रात को मुम्बई से फोन आता था। बाबा हिस्ट्री हॉल से ऑफिस में जाते थे फोन अटैण्ड करने। आबू से जाने के बाद आठवें दिन सुबह भाऊ ने शरीर छोड़ा। दादी प्रकाशमणि ने मुंबई से फोन पर सूचना दी और पूछा, बॉडी को यहाँ ले आएँ? बाबा ने कहा, नहीं, मुम्बई में ही संस्कार कर दो, केवल बाबा को इतना बताना कि संस्कार करके किस समय लौटे।

शाम को चार बजे फोन आया दादी का कि संस्कार हो गया है। उस दिन भाऊ का समाचार सुनकर बाबा ने ना नाश्ता किया, ना भोजन किया, सुबह केवल दूध पिया था। इस बीच भारत की प्रथा के अनुसार सारा भण्डारा धोया गया और संस्कार की सूचना के बाद, शाम को ही स्नान आदि करके बाबा ने भोजन किया।

बाद में शील दादी के तन में भोग के समय तीन दिनों तक उनकी आत्मा आती रही हिस्ट्री हॉल में। बाबा ने पूछा, बच्चे, कहाँ जन्म लिया है? भाऊ की आत्मा ने 'ना' में सिर हिला दिया। बाबा ने पूछा, क्या बाबा ने मना किया है, फिर 'हाँ' में सिर हिला दिया। बाबा ने रिपीट किया कि बच्चे, आप अपना कार्य संपन्न करके गये हो, बाबा को बेफिकर करके गये हो।

दादी मनोहर इन्द्रा

आपका लौकिक नाम हरि था, आप गंगे दादी की पक्की राखी थी, इसलिए बाबा दोनों को जब याद करते तो कहते 'हरगंगे'। आप त्याग-तपस्या की मूर्ति थी। सदा एक बाबा, दूसरा न कोई, इसी महामंत्र से सेवा के हर कार्य में हाँ जी करते आगे बढ़ी। पहले दिल्ली फिर पंजाब में अपनी सेवायें दी, करनाल में रहकर अनेक विघ्नों को पार करते हुए एक बल एक भरोसे के आधार पर आपने अनेक सेवाकेन्द्रों की स्थापना की। अनेक कन्यायें आपकी पालना से आज कई सेवाकेन्द्र संभाल रही है। आपकी रूहानियत, हर एक को दिव्यता का पाठ पढ़ा देती। आपने देश-विदेश में अपनी खूब सेवायें दी। दादी चंद्रमणि के बाद आप ज्ञान-सरोवर परिसर की डायरेक्टर बनी। आप महिला प्रभाग की अध्यक्षा थी। आप यज्ञ का इतिहास इतना स्पष्ट शब्दों में सुनाती थी जो बाबा के हर चरित्र को साकार कर देती थी। आपने आज्ञाकारी बन हाँ जी, हाँ जी करके सबकी दिल को जीत लिया। आप देश-विदेश के भाई-बहनों की बहुत अच्छी पालना करते हुए 17 नवंबर, 2008 को अव्यक्त वतनवासी बन गई।

दादी मनोहर इन्द्रा जी अपने लौकिक, अलौकिक जीवन के बारे में इस प्रकार सुनाती थी –

मेरा जन्म सन् 1924 में हैदराबाद-सिन्ध में एक संपन्न परिवार में हुआ था। लौकिक नाम 'हरि' था। 'मनोहर इन्द्रा' बाबा द्वारा दिया हुआ अव्यक्त नाम है। मेरे ज्ञान में आने के 25 वर्षों तक हमारे परिवार में कोई ज्ञान में नहीं चला पर अभी बहुत सारे मित्र-संबंधी स्नेही-सहयोगी हैं। लौकिक बड़ी बहन तथा उनका पति भी ज्ञान में चले, बड़ी बहन ने अब शरीर छोड़ दिया है। मेरा घर दादा लेखराज (प्रजापिता ब्रह्मा) के घर के पास ही था। उस बाल्यावस्था में मेरा दादा के घर आना-जाना, पारिवारिक समारोहों में शामिल होना चलता रहता था। बाल्यकाल से ही मैं प्रभु प्राप्ति की इच्छुक और बहुत ही सात्विक विचारों की थी। इसी कारण मुझे दादा के घर का आश्रम जैसा सात्विक वातावरण बहुत ही आकर्षित करता था। जब दादा को दिव्य साक्षात्कार हुए और वे ईश्वरीय कर्त्तव्य के निमित्त बने तब हमको भी ओम मण्डली के बारे में जानकारी मिली। गली से गुजरते हुए एक दिन मुझे बाबा के मकान के अंदर से मन को मोहने वाली ओम की ध्वनि सुनाई दी। मैंने वहाँ प्रवेश किया तो मन भाव-विभोर हो उठा। मैंने देखा,

अनेक स्त्री-पुरुष ओम की ध्वनि सुनकर प्रभु-प्रेम में मग्न हैं। बस यही दृश्य मेरे मन को इतना भाया कि मैं भी प्रभु-प्रेम में लीन हो गई।

आशाओं के दीप जगे

तब मेरी आयु 12 वर्ष की थी। मुझे सांसारिक जीवन से वैराग्य था। मैं प्रभु की होना चाहती थी। जन-सेवा करने की भावना मेरे मन में बैठी हुई थी परंतु ऐसा प्रेम कहीं से भी न मिलने के कारण मन बहुत ही निराश रहता था। ओम मण्डली से संपर्क होते ही मेरे जीवन में आशाओं के दीप जले। मुझे कोर्स कराया गया। मैं शांत समाधि में घंटों बैठी रहती थी। मुझे यह बात बहुत अच्छी लगती थी कि मैं आत्मा हूँ और शान्त स्वरूप हूँ। इस स्थिति का मैंने खूब अभ्यास किया। मेरी लगन निशदिन बढ़ती गई। कुछ ही समय बाद मेरे लौकिक पिता का देहांत हो गया। चारों ओर हाहाकार मचा परंतु मेरा चित्त शान्त था। मैं सभी को सांत्वना देती थी कि देह विनाशी है, अविनाशी आत्मा तो शान्त है। शान्ति के इस अनुभव ने मुझे भी पूर्ण शान्त रखा और सभी को भी शान्ति दी। तब मेरी इस स्थिति का सभी पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा।

सत्संग में जाने पर रोक

छह मास तक तो उन्होंने मुझे ज्ञान में जाने से मना नहीं किया क्योंकि मेरे जीवन में बहुत परिवर्तन आया। मेरी लौकिक माता को मेरा यह परिवर्तन अच्छा लगा परन्तु जैसे-जैसे हम बड़े होते गए, लौकिक संबंधियों ने माँ को भड़काना प्रारंभ कर दिया कि यदि इसी प्रकार यह ओम मण्डली के नियमों का पालन करती रहेगी तो संसार में कैसे चल सकेगी, धीरे-धीरे यह संन्यास कर लेगी। तब मुझ पर बंधन पड़ने लगे। उन्होंने मुझे सत्संग में जाने से रोका, तालों में बंद किया और कई बार मारा भी। उनको भ्रान्ति थी कि वहाँ हिप्नोटिज्म सिखाते हैं। माता जी भी भ्रांतिवश विघ्न डालती थी। आखिर एक दिन ऐसा आया जब हमारी माता ने पूछा, आपके जीवन का क्या लक्ष्य है? आपको समाज में रहना है तो शादी भी करनी पड़ेगी। शादी के लिए आप चाहो कि हमारे को ऐसा लड़का मिले, वो भी नहीं होगा इसलिए आप सत्संग में जाना बंद कर दो। हमने कहा, हमने तो भगवान से शादी कर ली है, अब हम किसी विकारी पुरुष से शादी नहीं करेंगी। आज के युग में अधिकतर खाने-पीने वाले लोग ही होते हैं इसलिए हमने भगवान को ही पति रूप में स्वीकार कर लिया है।

बाबा सितारों के बीच चन्द्रमा थे

यह सुन माताजी को थोड़ा महसूस हुआ और मुझे चारों ओर से बन्धन डाला कि अब हम आपको बिल्कुल जाने नहीं देंगी। परन्तु, जितना वो बंधन डालती थी, हमारी लगन उतनी ही बढ़ती जाती थी। इसी लगन की बदौलत हमें घर बैठे अनेक दिव्य अनुभव होते रहे। शरीर भले बंधन में था परन्तु आत्मा को अंदर से रूहानी खुराक मिलती रहती थी। कभी मौका मिलता था तो सत्संग में चले भी जाते थे। जहाँ सत्यता का अनुभव हो जाता है वहाँ विघ्न, विघ्न नहीं लगते। हमने भी अपनी माता, बहनों, भाई को शान्ति और प्रेम के बल से समझाकर, सब विघ्नों को पार कर लिया। उन्होंने फिर खुशी-खुशी स्वीकृति पत्र लिखकर मुझे इस ईश्वरीय विश्व विद्यालय में दाखिल कर दिया। मैं

1936 में आई, सन् 1937 में ओम मण्डली में समर्पित हो गई।

इसके बाद हमने बाबा को प्रैक्टिकल में देखा। पहले तो सत्संगी बहनों को ही देखा था, उनका सच्चा गीता-ज्ञान सुना, उसके कारण मुझे जीवन को महान बनाने की प्रेरणा आ गई। जब मैंने बाबा को देखा तो मुझे उनसे अपनापन महसूस हुआ। बाबा के मस्तक का तेज मुझे बहुत आकर्षित करता था और सभी के बीच खड़ा हुआ बाबा मुझे ऐसा लगता था मानो सितारों के बीच पूर्ण चंद्रमा चमक रहा हो।

सत्य को ढकने वाली भ्रान्तियाँ

निर्मलशान्ता बहन का ससुर एन्टी ओम मण्डली का लीडर था। बाबा ने दो सुन्दर रिकार्ड बनवाये थे। एक गीत था – 'इस पाप की दुनिया से दूर कहीं ले चल' और दूसरा था – 'यह धन-माल छोड़कर कहाँ जा रही हो।' ये दोनों गीत जैसे हमारे दिल की आवाज़ थे। बाबा ने कहा था, इन गीतों का सेट बनाकर अपने पेरेन्टस को सौगात दो। निर्मलशान्ता बहन ने यह गिफ्ट अपने ससुर के पास भेजा। उस घर में उस समय एक जादूगर बैठा था। रिकार्ड को लाल रिबन बंधा था। उसे देख जादूगर बोला, खबरदार, इसको हाथ ना लगाओ, इसमें जरूर कुछ जादू है। उसने खुद अपनी जादूगरी दिखाई। एक तलवार उस रिकार्ड के सुराख के अंदर डाली और वहाँ से आग निकली। फिर बोला, देखा, तुम्हारे घर को जलाने के लिए, तुम्हारे परिवार को खत्म करने के लिए यह जादू वाली चीज़ भेजी गई है। वो डर गये परन्तु कुछ समय बाद जब सामने मुलाकात हुई और हम लोगों ने उन्हें समझाया तो वे मान गये। कहने लगे, वो जादूगर की चालाकी थी, हम भी नहीं समझते थे कि आप हमारे साथ ऐसा कर सकते हैं पर समाज में फैली भ्रान्तियों के कारण हम डर गए।

छोटे बच्चों की सहनशक्ति

एक दिन हम अपनी ही बस में बाबा की मुरली सुनने जा रहे थे। दादी बृजेन्द्रा जी बस चला रही थीं तो अचानक बस गड्ढे में जा गिरी। बड़ी भारी दुर्घटना हुई। परंतु दर्दनाक सीन में भी हम वत्सों के मन शान्त थे और चेहरों पर वही मुस्कराहट थी। देखने वाले हैरान थे, डॉक्टर सोचते कि इनके पास क्या शक्ति है। उन बेचारों को क्या पता कि स्वयं सर्वशक्तिवान इनके साथ है। वे पूछते थे तो उत्तर मिलता था, मैं तो ठीक हूँ, यह दुख तो इस देह को है। छोटे-छोटे बच्चों की यह महान सहनशक्ति देखकर डॉक्टर दाँतों तले अंगुली दबा लेते थे। ब्राह्मण बच्चों की इस मनोस्थिति की चर्चा अखबार द्वारा चारों ओर फैल गई और सभी जगह बाबा की महानताओं के गुणगान होने लगे।

बाबा कहते थे, यह ज्ञान-गंगा है

मुझे इस ईश्वरीय पढ़ाई का बहुत शौक था। बाबा निबंध लिखने को देते थे तो मैं सबसे पहले लिखकर ले जाती थी। इस प्रकार मेरा मनन का अभ्यास बढ़ता गया और साथ ही साथ बाबा ने हमें भाषण करना भी सिखाया। बाबा मुझे कहा करते थे, 'यह तो ज्ञान गंगा है, यह तो शेरनी है।' इस प्रकार उमंग-उत्साह बढ़ाते हुए अथाह प्यार देकर बाबा ने मुझे आगे बढ़ाया। यज्ञ में हम 10-12 बहनों की एक पार्टी बन गई थी जिसे बाबा प्यार से 'मनोहर पार्टी' कहते थे। हम सभी बहनें

आपस में मनन करते थे, भाषण भी तैयार करते थे और हर प्रकार की यज्ञ-सेवा भी करते थे। जहाँ भी आवश्यकता पड़ती थी तो बाबा कहते थे कि मनोहर पार्टी को भेजो। तो यह हमारा परम सौभाग्य रहा कि बाबा ने हमें हर तरह से आगे बढ़ाया।

चौदह वर्ष का वनवास

शुरू में हमारे संबंधी पूछते थे कि तुम कब लौटोगी तो हमें बाबा ने कहा था कि उन्हें बताओ कि यह हमारा 14 वर्ष का वनवास है, हमारी 14 वर्ष की योग-तपस्या है। उसके बाद हम आपकी सेवा में आयेंगी। बस

दादी रतनमोहिनी जी, दादी प्रकाशमणि जी, दादी मनोहर इन्द्रा जी एवं दादी सरला जी

14 वर्ष बाबा ने हमसे पूरी तपस्या कराई। हमें अबला नारी से शेरनी शक्तियाँ बनाया, हमारे मन का भय निकाला, हमारी लज्जा समाप्त की। हमें आत्मा का इतना अधिक अभ्यास कराया जो हमारा यह भान निकल गया कि हम नारी हैं। बाबा हमें विशेष योग के प्रोग्राम देते थे। हम रात-भर जागकर, कभी-कभी आठ घंटे बैठकर योग-अभ्यास करते थे। इस प्रकार बाबा ने हमारे जीवन में तप कराया और हमने देखा कि सचमुच जीवन तप कर ही निखरता है।

कोई दुश्मन नहीं

इसी मध्य, भारत स्वतंत्र हुआ और पाकिस्तान बना। वहाँ पर नर-संहार हुआ, विनाश का तांडव-नृत्य हुआ परंतु हम सब पूर्ण सुरक्षित थे। हमें लगता था कि हम सद्गुरु की छत्रछाया में हैं। बाबा ने उस समय हमें अशरीरीपन का बहुत अभ्यास कराया। बाबा कहते थे, 'बच्ची, तुम सदा इस देह से उपराम होकर रहो ताकि यदि कोई तुम्हारे सामने आये तो उसे तुम्हारी देह दिखाई ही न दे।' तब बाबा हमसे रात-रात योगाभ्यास कराते थे। तब हमने

महसूस किया कि उस समय 1947-50 तक, जो भी मुसलमान भाई हमारे पास आते थे, बड़ी ही रूहानी दृष्टि से मिलते थे। वे हमें बहुत सत्कार देते थे तथा हर तरह से सहयोग देते थे। उनकी भावना हो गई थी कि ये सब देवियाँ खुदाई खिदमतगार हैं। उसी समय बाबा ने हमें यह पाठ बहुत पक्का करा दिया था कि तुम्हारा संसार में कोई भी दुश्मन नहीं है, इसलिए तुम निर्भय होकर रहो। इस बात ने हमारे मन में सभी के प्रति आत्मीयता की भावना पैदा कर दी थी। परिणामस्वरूप सन् 1947-50 तक हम वहाँ पूर्ण शान्ति व सुरक्षा के साथ रहे। फिर माउंट आबू में आए 1950 में। यहाँ आते ही बेगरी पार्ट शुरू हो गया।

आलमाइटी बाबा ने भेजा भट्ठी का प्रोग्राम

बेगरी पार्ट में भी बाबा सदा एक बल एक भरोसे रहा। बाबा के चेहरे पर पूर्ण निश्चिन्तता थी। बाबा आलमाइटी बाबा को सन्देश भेज देता था और पूछता था, बाबा, इन बच्चों का क्या करना है? बाबा ने संदेश भेजा, इनको एक मास भट्ठी में बिठाना है, भोजन बहुत हल्का देना है। सुबह थोड़ा दूध, शाम को थोड़ा दूध और दिन में एक चपाती देना, इस प्रकार बहुत हल्के भोजन का प्रोग्राम ऊपर से आया। हमारे शरीर भी हल्के हो गए और हमें बहुत ही अच्छे अलौकिक अनुभव हुए। आत्म-अनुभूति इतनी अच्छी हुई कि लगता था, हम परमधाम में, दुनिया से बहुत दूर वतन में बैठे हैं।

बाबा की गुप्त मदद

एक बार होली का दिन आया। बाबा का बच्चों से बहुत-बहुत प्यार था। होली पर लोग जलेबी और घेवर खाते हैं। बाबा ने मम्मा को कहा, तुम मेरे सिकीलधे बच्चों को जलेबी नहीं खिलाओगी। मम्मा ने कहा, जी बाबा, हाँ बाबा, जरूर खिलायेंगे परन्तु भण्डारे में ना मैदा, ना चीनी, ना घी था। यह मम्मा जानती थी तो भी कहा, जी बाबा, जरूर खिलायेंगे। अब देखो, कैसा चमत्कार होता है। एक माता माउंट आबू में ही रहती थी। वह श्रीकृष्ण की पक्की भक्त थी। उसका प्यार बाबा के यज्ञ से था। उसका पति भक्त था। वह कहता था, जो कुछ दान करना है, वह हरिद्वार जाकर करना है। माता चाहती थी कि मैं ब्रह्माकुमारी आश्रम में करूँ। खैर, दो-चार दिन के बाद जब एक बार पति सोया हुआ था, तब भगवान ने साक्षात्कार करवाया और उनको आवाज दी कि तुमको जो दान करना है, वह ब्रह्माकुमारी आश्रम में करो। उस व्यक्ति ने फिर अपनी पत्नी को बताया कि मुझे ऐसा अनुभव हुआ है, तुम ब्रह्माकुमारी आश्रम में जाओ, मैं तुमको यह पैसा देता हूँ, तुम यज्ञ-माता को देकर आओ। वह माता दौड़ी-दौड़ी आई और मम्मा को अपनी श्रद्धा भेंट दी और कहा, इससे आप सबको भोग खिलाओ। उसी समय बाबा ने सब सामान मँगवाया और बच्चों को जलेबी बनाकर खिलाई। बाबा ने मम्मा को कहा, देखो मम्मा, शिवबाबा ने कैसे हमारे लिए प्रबंध किया है। देखो बच्चों के लिए कैसे सब सामग्री भेज दी है। बच्चों को कहो, जी भर कर जलेबी खाओ। ब्रह्मा बाबा को सदा मन में रहता था कि जब बाबा बैठा है तो हम चिंता क्यों करें, स्कूल का मालिक वो है, स्कूल उसने खोला है, हम और मम्मा तो टीचर हैं। कई बार ऐसे अनुभव हुए। आलमाइटी बाबा कभी किसी को टच करते थे और कभी किसी को, फिर जैसे-जैसे हम बच्चे बाहर

गए, सेवाकेन्द्र खुले। बाबा के बच्चे स्नेही बने, सहयोगी बने और फिर पक्के योगी भी बन गए, फिर बाबा की सेवा में बहुत वृद्धि हुई।

बाबा ने युक्ति से सेवा पर भेजा

बेगरी पार्ट के दौरान ही बाबा ने कहना शुरू किया, 'तुम तो हर गंगे हो' क्योंकि मेरा नाम पहले हरि था और मेरी सखी थी गंगा बहन। तो बाबा हमें प्यार से कहते थे, बच्ची, तुम हर हर गंगे हो, पतित-पावनी हो। क्या तुम्हें भक्तों की आवाज़ नहीं सुनाई देती है? हम कहते थे, बाबा, हमें तो भगवान की आवाज़ सुनाई देती है, भक्तों की नहीं। बाबा, हम आपकी मधुर मुरली को छोड़ बाहर जाकर क्या करेंगे? बाहर मुरली बिना मन नहीं लगेगा। बाबा कहते थे, मुरली तुम्हारा खज़ाना है। जहाँ जाओगी वहाँ तुम्हें मुरली मिल जायेगी। जो बाबा से अखुट खज़ाने प्राप्त किये हैं, क्या उन्हें नहीं बाँटोगे? क्या तुम दानी नहीं हो? क्या तुम ज्ञान-गंगा बनकर पतितों को पावन नहीं बनाओगी? बाबा ऐसे-ऐसे उमंग वाले बोल बोलकर हमें उत्साह के पंख लगाते थे और हम बाहर सेवा पर निकलते थे। सर्वप्रथम हम गये दिल्ली में।

शिवबाबा का चमत्कार

बाबा का फरमान था, 'चेरिटी बिगिन्स एट होम', तो पहले-पहले हमने लौकिक संबंधियों की सेवा की। निमित्त उनका निमंत्रण था परंतु सेवा हर प्रकार के लोगों की हुई। कई घरों से सत्संग करने के निमंत्रण मिले। मंदिरों, गुरुद्वारों और सभाओं से भाषण करने के निमंत्रण मिले। दिल्ली में हम चाँदनी चौक के एक मन्दिर (गौरी-शंकर मंदिर) में गए। वहाँ ज्ञान सुनाया तो ट्रस्टी लोग संतुष्ट हुए। उन्होंने वहाँ ही हमें एक कमरा दे दिया। शिव बाबा का चमत्कार था कि सत्संग में आने वाले अनेक नर-नारियों को साक्षात्कार होने लगे और लोगों का आकर्षण ईश्वरीय ज्ञान की ओर बढ़ने लगा। चारों ओर धूम मच गई कि ये देवियाँ प्रभु का दीदार कराती हैं। यह बात ट्रस्टियों के कानों में भी पहुँची। उन्होंने सोचा, आज दिन तक भगवान का साक्षात्कार किसी को नहीं हुआ, जरूर इन बच्चियों के पास कोई जादू है, तो जादू ही दिखाती हैं। एक-दो मास रहने के बाद उन्होंने कहा, आप अपना रहने का प्रबंध कहीं ओर कर लें क्योंकि यहाँ की जनता में भ्रान्तियाँ पैदा हो गई हैं।

दिव्यलोक से मृत्युलोक में आने जैसा अनुभव

इसके बाद हमें जमना के कण्ठे पर एक मकान मिला। मकान में केवल दो दीवारें थी, दरवाजा दोनों तरफ नहीं था। हम तो आबू में भी और दिल्ली में भी नये-नये आये थे। इससे पहले हम 14 साल कराची में रहे थे, दुनिया को हमने देखा नहीं था। हमें तो ऐसा लगा मानो हम दिव्य संसार को छोड़ मृत्युलोक में आए हैं। हम दो बहनें थी। जमना घाट के उस मकान में एक बहन सोती थी, एक पहरा देती थी। ऐसे करते-करते हमने दो-चार दिन काटे। वहाँ पास में ही एक पहलवान का प्रैक्टिस का स्थान था। उसने सोचा, ये देवियाँ कौन हैं, यहाँ घाट पर आकर बैठी हैं, इनको डर भी नहीं लगता है! उसको मानो परमात्मा ने टच किया कि तुम्हारे घाट पर जो देवियाँ हैं, तुम्हारा काम है इनकी संभाल करना। तो वो रात्रि को रोज हमारे पर पहरा लगाता था। हम सोचते थे, यह पहरा किस पर

लगाता है, यह तो सोचा नहीं कि हमारे पर लगाता है। हमने सोचा, धन, माल आदि कुछ भी यहाँ चारों ओर कहीं नहीं है, फिर पहरा क्यों? फिर कुछ समय बाद पहलवानों की आपस में कुश्ती हुई। उस पहलवान को संकल्प आया कि मैं जिन देवियों की सेवा कर रहा हूँ, अगर ये सच्ची होंगी तो जरूर मेरी जीत होगी क्योंकि मैं निष्काम सेवा कर रहा हूँ। अगर मेरी हार होगी तो मैं समझ जाऊँगा कि इनमें कोई सत्यता की शक्ति नहीं है। ड्रामानुसार उनकी जीत हो गई। वे बहुत खुशी में आ गये। अपने साथ 10-12 पहलवानों को लेकर आये और दण्डवत् प्रणाम किया। वे दूध, चीनी, नारियल और 20 रुपये भी साथ में भेंट-भोग के रूप में लाए। हमने 14 साल किसी अन्य का अन्न खाया नहीं था। लौकिक घर में गए तो वहाँ भी अपना ही पकाया हुआ खाते थे। हमने कहा, भैया, आपकी मनोकामना बाबा ने पूरी की, यह सबसे अच्छी बात है पर आपकी ये सब चीज़ें तो हम स्वीकार नहीं करेंगे। उन्होंने कहा, हमारी भावना को ठेस लगेगी, कैसे भी करके आप स्वीकार करो। फिर हमने उस सामान से खीर बनाई, उनको खिलाई और बाबा की याद में थोड़ी खुद भी स्वीकार की। इस प्रकार ईश्वरीय सेवा होने लगी।

नेहरू जी तक गई अच्छी रिपोर्ट

जैसे-जैसे लोगों को सेवा-समाचार मिलने लगे तो कई लोग जमना घाट पर आने लगे। काफी लोग हो गए। एक माता रोज जमना घाट पर स्नान करने आती थी। वह शहर की मानी हुई माता थी। उसकी एक बहुत बड़ी धर्मशाला थी। उसने जब हमें देखा कि दो देवियाँ यहाँ अकेली रहती हैं तो प्यार से शहर के बीच ले गई। वहाँ एक कमरे में हम रहने लगे। धर्मशाला पास में थी। वहाँ सत्संग बहुत बढ़ गया। जब हम योग कराते थे, बहुत सारी मातायें-बहनें ध्यान में चली जाती थी। भगवान के पास है दिव्य दृष्टि की चाबी तो हमें लगता, भगवान बाप से हमें बहुत मदद मिल रही है। घर-घर में पता लग गया साक्षात्कारों का। बात इन्दिरा गांधी के कानों तक पहुँची। फिर उसने हम पर सी.आई.डी. लगाई। चार माताओं को हमारे पास निरीक्षण के लिए भेजा। वे वहाँ आकर चारों ओर देखती रहती थी। उनको सत्यता का आभास हुआ कि ये बहनें कोई जादू या हिप्नोटिज्म आदि नहीं करती हैं। उन्होंने माताओं-बहनों से अनुभव भी पूछा। अनुभव सुनकर उनको निश्चय हुआ कि यहाँ भगवान का कार्य चल रहा है और ये बहनें छल-कपट नहीं जानती। ये निष्काम सेवा करती हैं। इसलिए इन्दिरा गांधी तथा नेहरू तक हमारी अच्छी रिपोर्ट गई।

ऐसी सेवा करने के छह, आठ मास बाद हम पुनः लौटकर मधुबन आ गये। जिनके निमंत्रण पर गये थे, वो निमंत्रण पूरा हो चुका था और आगे का कोई विशेष निमंत्रण था नहीं इसलिए हम अपनी तपोभूमि में पहुँच गये।

108 से भी ज्यादा सेवाकेन्द्र खुलेंगे

बाबा ने जब हमें आते हुए देखा तो बहुत प्यार से बोले, बच्ची, सेवाक्षेत्र से वापस पहुँच गई, तुमने बेहद बाप के ज्ञान-रत्नों का एक भी दुकान नहीं जमाया, जरूर बच्चों में अभी योगबल की कमी है इसलिए दुकान समाप्त कर लौट आये हो। यह सुनकर मैंने बाबा को बोला, बाबा, धर्म की स्थापना में अनेक

कठिनाइयाँ आईं, नया निराला ज्ञान सुन लोगों में बहुत भ्रांतियाँ फैल गई हैं, विघ्न बहुत पड़ते हैं, मकान देने वाले भी हिम्मत नहीं रखते है, आखिर वो हमसे मकान खाली करवा लेते है इसलिए हम लौट आये। बाबा बोले, बच्ची, धैर्य रखो, अभी तो लोग विघ्न डालते हैं, आगे चल तुम देखना अनेक सेन्टर खुलेंगे, 108 से भी ज्यादा खुलेंगे। गली-गली में, देश-विदेश में शिव बाबा का झण्डा लहरायेगा, वो दिन भी आने वाला है। बाबा के ये शब्द सुनकर एक ओर बेहद हर्ष हुआ लेकिन दूसरी ओर अद्भुत आश्चर्य भी कि कैसे देश-विदेश में सेन्टर खुलेंगे, कौन वहाँ सेवा करेगा? एक सेन्टर में इतने विघ्न, तो अनेकों में क्या हाल होगा? परंतु यह हमें अटल निश्चय भी था कि बाबा ने कहा है तो टल नहीं सकता, अवश्य ही होकर रहेगा इसलिये निमंत्रण मिलने पर उमंग-उल्लास के पंखों से हम पुनः देहली पहुँच गये और चारों ओर निश्चय के साथ सेवा की धूम मचाई। जहाँ-जहाँ मौका मिला, हम गये और बाबा का संदेश सुनाया।

लखनऊ में सेवा की धूम

देहली में फिर अन्य शहरों से निमंत्रण मिलने लगे और हम ज्ञान-योग से अनेक दुखी, अशांत, भिखारी, दीन-हीन आत्माओं की सेवा कर उन्हें बाप के पास ले आते रहे। इसी प्रकार जब हम लखनऊ में गई तो वहाँ भी एक धर्मशाला में प्रतिदिन सत्संग रखा गया। वहाँ भी लोगों को साक्षात्कार होने लगे। वही धूम वहाँ भी मची। तो धर्मशाला की मालकिन माता हमसे बहुत आग्रह करने लगी कि मुझे श्रीकृष्ण का दीदार कराओ। हमने उसे बहुत समझाया कि यह तो शिवबाबा की शक्ति है परंतु वह न मानी, आखिर उसने तीन दिन व्रत किया और शिवबाबा ने उसकी इच्छा पूर्ण की। वह ध्यानस्थित हुई और श्रीकृष्ण का साक्षात्कार किया।

रहमदिल और गरीब निवाज बाबा

एक बार जब हम लखनऊ में थे, तब एक वर्ष पूरा होने को आया तो भी एक भी आत्मा माउंट आबू आने को तैयार नहीं हुई। हमें तो अपने प्यारे मधुबन और बाबा के पास आने की बहुत कशिश हो रही थी। इसलिए सोचा, कोई तैयार नहीं है तो हम दोनों (गुलज़ार दादी और मैं..मनोहर दादी) ही मधुबन चले। जिस समय हम ट्रेन में बैठे तो एक गाँव की साधारण माता (उसने सुन लिया था कि ये माउंट आबू जा रहे है) भी हमारे साथ चल दी। हम माउंट आबू पहुँचे और बाबा से मिले। वह माता तैयार होने अपने कमरे में चली गई। बाबा ने हमसे पूछा, बच्ची, क्या अकेली आई हो, कोई को फूल बनाकर बाबा के सामने गुलदस्ता नहीं लाई? हम बोली, बाबा, इस समय ऐसी कोई आत्मा तैयार नहीं थी, इसलिए हम दोनों ही अपने बाप से मिलने आ गये हैं। फिर बाबा बोले, वह माता कहाँ है, उसे बुलाओ। वह माता बाबा के सामने आकर बैठी। वह बहुत ही स्नेह भरी रूहानी मुलाकात कर रही थी, बाबा ने उसको देख कहा, यह साधारण आत्मा नहीं है, यह कोई विशेष आत्मा है, बिछुड़ी हुई आत्मा है जिसने फट से बाप को पहचान लिया है। बाबा ने पूछा, बच्ची, तेरा नाम क्या है? माता ने धीरे से कहा, शान्ति देवी। बाबा ने कहा, बच्ची का जैसा नाम है, वैसा ही गुण है।

बाबा ने फिर पूछा, बच्ची, पहले तुम बाबा से मिली थी? माता ने कहा, हाँ बाबा। मैं आपसे पाँच हजार वर्ष पहले इसी स्थान पर मिली थी। फिर बाबा ने पूछा, बच्ची, तुमको कितने बच्चे है? वह बोली, बाबा, एक ही बच्चा है। बाबा बोले, बच्ची, वह क्या करता है? वह बोली, मेरा तो शिव बाबा ही बच्चा है जो विश्व का कल्याण करता है। तब बाबा ने कहा, बच्ची, यह बड़ी निश्चयबुद्धि आत्मा है, शांतमूर्त है, बाबा इसको डायरेक्शन देता है, हर रोज भंडारे में जाकर भोजन को योग की दृष्टि दो और सबको बाप की स्मृति दिलाओ। बाबा की ये बातें सुन प्यार के सागर, रहमदिल बाप की रहमदिली का अनुभव हुआ। बाबा कितना गरीबनिवाज है जो गरीब बच्चों को इतना ऊँचा उठाते हैं। इससे मुझे भी गरीब और साधारण आत्माओं की सेवा करने की प्रेरणा मिली।

विचित्र अलौकिक प्रश्न

एक बार पटना से कुछ नये-नये भाई-बहनों का ग्रुप बाबा से मिलने आया। सुबह की क्लास में सबके साथ वे भी बाबा की मुरली सुनने लगे। मुरली के अंत में बापदादा ने कहा कि आज सभा में टोली बाँटने के लिये वो बच्चे आवें जो कहें, हम नष्टोमोहा हैं, नष्टोमोहा बच्चे, हाथ उठाओ। किसी ने भी हाथ नहीं उठाया। पुराने बच्चे बाबा के राज़ को समझ गये थे कि बाबा का यह प्रश्न किन्हीं नये बच्चों के प्रति है। सभी एक-दो की तरफ देखने लगे। बाबा भी मुसकराते हुए सभी बच्चों की तरफ देखने लगे।

बाबा फिर बोले, क्यों बच्चे, क्या कोई भी ऐसा बच्चा नहीं है? फिर बाबा ने आये हुए बच्चों में से एक नये बच्चे को अपने समीप बुलाया और कहा, व बच्चे, तुम टोली नहीं बाँट सकते हो, नष्टोमोहा हो बड़ी बात है क्या? क्या तुम्हारा अपनी स्त्री में मोह है अगर तुम्हारी स्त्री शरीर छोड़ दे तो क्या तुम रोओगे भाई दो मिनट खामोशी में रहा, फिर बोला, नहीं, नहीं रोऊँगा, मेरी पहली स्त्री ने जब शरीर छोड़ा थ तो भी मैं रोया नही था, अब भी नहीं रोऊँगा। फि बाबा की दृष्टि उनकी स्त्री पर पड़ी। बाबा ने उनसे यह विचित्र प्रश्न पूछा, बच्ची, तेरा लौकिक पति अग शरीर छोड़ दे, तो तुम रोयेगी? स्त्री बाबा की ओ देखकर गंभीर रूप से मुसकराती रही, बाबा की रूहान दृष्टि जैसे कि उसमें बल भरती जा रही थी। उस धीमे स्वर में बोला, बाबा, बेहद का बाप मिला तो स कुछ मिला, अब क्यों रोयेंगे? ज्ञान का तीसरा ने मिला अब अज्ञानवश क्या रोना? आपने हमें रोने से छुड़ा दिया। इतना सुन बाबा बोले, अच्छा, मेरे महावी बच्चे जाओ, सभी को टोली बाँटो।

अपने सेवाकेन्द्र पर लौटकर उन दोनों ने क्लास में अपना अनुभव सुनाया कि हमें बाबा से मिलकर संपूर्ण निश्चय हो गया कि यह ज्ञान देने वाला स्वय भगवान है, किसी मनुष्य की यह पढ़ाई नहीं है क्योंकि इस प्रकार के विचित्र अलौकिक प्रश्न कोई मनुष्य पूछ ही नहीं सकता। कोई साधु-महात्मा भी अपने शिष्यो से ऐसा नहीं कह सकता। अगर कोई गुरु किसी शिष्य से ऐसा पूछे तो वह संशयबुद्धि हो जाये। देहधारी गुरु तो और ही कहते है, आयुष्वान भव, पुत्रवान भव, संपत्तिवान भव। लेकिन यह तो कालों का काल स्वयं भगवान है जिसके लिए जन्म-मरण शब्द ही नहीं है, जो अजन्मा, अकालमूर्त है, वही पूछ सकता है।

एक बार बाबा ने पूछा, बच्ची, तुम अभी घर (परमधाम) चलना चाहती हो? मैंने कहा, बाबा, अभी हम नहीं जाना चाहते हैं क्योंकि जो सुख, जो खजाना अब ले रहे हैं, वो वहाँ नहीं मिलेगा इसलिये मैं नहीं जाना चाहती हूँ। इस पर बाबा गंभीर रूप से मुसकराते रहे। उस समय तो बाबा ने कुछ नहीं कहा परंतु रात्रि क्लास में मुरली में कहा, बच्ची ने ठीक बोला क्योंकि यह जो समय है, बड़ी भारी कमाई का है, इस समय का सुख न परमधाम में है, न सुखधाम में। उस समय बाबा की पावरफुल स्टेज का साक्षात्कार करते हुए दिल में अत्यंत स्नेह भर आया और पुरुषार्थ का एक तीव्र उमंग आया कि बाबा कैसे उड़ते जा रहे हैं, बाबा कितना साक्षीपन का अनुभव कर रहे हैं, ड्रामा पर बाबा कितने अचल-अडोल हैं, जो पास्ट हो गया, उस पर फुलस्टॉप लगाने की कितनी शक्ति है! इससे हमको अपनी लाइफ में फुलस्टॉप लगाने और विस्तार को सार में लाने की विशेष प्रेरणा मिली।

बाबा का अथाह प्यार

बाबा हमें जहाँ भी भेजते थे, हम वहाँ निर्संकल्प होकर चली जाती थी। इसलिए बाबा मुझे 'बहुरूपी' और 'चक्रवर्ती' कहा करते थे। बाबा तो ज्ञान सागर है। उनके पास हरेक के संस्कार और भाग्य की पहचान है। बाबा कहते थे, बच्चे, मेरे इस उच्चतम ज्ञान को मेरे भक्तों को ही देना। मैं भक्तों का उद्धार करने आया हूँ, उन्हें भक्ति का फल अब संगम पर मिलने वाला है, तुम्हें भक्तों की पहचान रखनी है। भक्तों को पहचानने की बाबा ने निशानियाँ भी बताई कि जब वे बच्चे ज्ञान सुनेंगे तो उन्हें यह ज्ञान बहुत अच्छा लगेगा और वे महसूस करेंगे कि हम बेहद बाप के वर्से के अधिकारी हैं। इस प्रकार कई पार्टियाँ आती रही और बाबा से जन्मसिद्ध अधिकार ले वापस अपने स्थान पर जाती रही। हम हर साल पाँच-छह आत्माओं को कलम से फूल बनाये बागवान के पास ले आते थे। सेवाकेन्द्रों पर रहते हुए मुझे ध्यान रहता था कि बाबा के वारिस बच्चे तैयार किये जायें। मैं आने वाली कन्याओं की पूर्णतया ज्ञान-योग से पालना करती थी, उन्हें बाबा के समीप लाती थी, उन्हें योग्य टीचर बनाने का संकल्प रखती थी तो बाबा के बहुत ही प्यार व उमंग भरे पत्र मुझे मिलते थे। बाबा के प्यार की याद आते ही मन की कलियाँ खिल उठती हैं और मन गाने लगता है - इतना प्यार करेगा कौन ...!

छोटे बच्चों की ज्ञान द्वारा कमाल

एक बार मैं कोलकाता से भाई-बहनों का एक ग्रुप मधुबन लेकर आई थी, उस ग्रुप में एक माता और उसकी दो बच्चियाँ भी थीं। बच्चियों की आयु 10 और 12 वर्ष की थी और वे दोनों पांडिचेरी में आश्रम पर रहती थीं। उनको छोटा समझ मैंने उनके साथ ज्ञान-चर्चा नहीं की। जब वे बाबा के पास आईं तो बाबा ने पूछा, 'बच्ची, माँ से तो तुम्हारा बहुत प्यार है, लेकिन तुम्हें पता है आत्मा का बाप कौन है? यहाँ तुम्हें बाप का परिचय मिलेगा।' ऐसे दो-तीन दिन में बाबा ने उनको योग, त्रिमूर्ति तथा गोले के चित्र के बारे में समझाया। मैं रोज़ देखती थी कि बाबा इन छोटी बच्चियों पर बहुत मेहनत कर रहे हैं। बाबा ने उनको 'ज्ञानी तू आत्मा' बना दिया। अपने साथ उनको भोजन भी खिलाते थे। उनमें ज्ञान तथा स्नेह का संस्कार पड़ गया था।

वापस जाते समय वो बच्चियाँ मेरे साथ ट्रेन में थीं, तो एक साधु 'परमात्मा सर्वव्यापी है' – इस बात पर बहस कर रहा था। यह सुनकर बच्चियाँ उस साधु से पूछने लगीं, महात्मा जी, अगर आप में परमात्मा है और सर्व में परमात्मा है तो आप प्रश्न किससे पूछ रहे हैं? ऐसा वार्तालाप देर तक चलता रहा। अंत में उस साधु ने पूछा, आपको यह ज्ञान किसने सिखाया? उनका जवाब था, माउंट आबू में ईश्वरीय विश्व विद्यालय में यह ज्ञान सुना। उस समय मैंने सीखा कि छोटे बच्चों में ज्ञान का संस्कार डालने से वे बाबा की कितनी सेवा करते हैं।

बाबा धर्मराज भी है

दिल्ली में बाबा मेजर की कोठी में हम बच्चों से रूहरिहान कर रहे थे। तब बाबा ने पूछा, 'बच्चे, बाबा को किस-किस रूप में याद करते हो?' किसी ने कहा, बाप के रूप में; किसी ने कहा, टीचर के रूप में; किसी ने कहा, सतगुरु के रूप में। बाबा गंभीरता से सुन रहे थे। लगता था कि जो जवाब बाबा चाहते हैं वह किसी ने नहीं दिया। तो मैंने कहा, धर्मराज के रूप में। बाबा ने कहा, 'बच्ची ने ठीक उत्तर दिया है। बाबा के धर्मराज के रूप को कभी मत भूलना। मात-पिता के रूप से बच्चों को प्यार मिलता है, टीचर के रूप से पढ़ाई पढ़ाते हैं, सतगुरु रूप से पावन बनने के लिए महामंत्र मिलता है और धर्मराज के रूप से कर्मों में श्रेष्ठता आती है। धर्मराज के रूप को भूलने से बच्चे, भूलों के ऊपर भूलें करते रहेंगे।' इसी तरह बाबा हमारी बुद्धि चलाते थे और चेक करते थे कि बच्चों का योग कहाँ तक है, पढ़ाई पर ध्यान कहाँ तक है, बच्चे विचार-सागर मंथन कहाँ तक करते हैं?

अन्त मति सो गति

एक बार हमारी सखी 'हृदयमणि' गुड़गाँव में ईश्वरीय सेवार्थ गई हुई थी। वह बहुत गुणमूर्त बहन थी। वहाँ उसको बुखार आया तो उसे हॉस्पिटल में दाखिल किया गया। वहाँ वह हर रोज मुरली सुनकर योग करती थी। एक दिन अचानक उसने हॉस्पिटल में ही शरीर छोड़ा। समाचार बाबा के पास आते ही बाबा उसकी महिमा करने लगे, 'बच्ची, बहुत आज्ञाकारी, सच्ची सेवाधारी थी। अब वह एडवांस पार्टी में सेवार्थ चली गई है।' तो मैंने बाबा से कहा कि उसने तो शरीर हॉस्पिटल में छोड़ा जबकि आप हमेशा कहते हैं, 'हरि का द्वार हो, ज्ञानामृत मुख में हो, दैवी परिवार का साथ हो, मधुबन का तट हो तब तन से प्राण निकले।' तो बाबा ने समझाया, 'बच्ची, ज्ञान गंगा तो वह खुद ही थी। उसके मन में, मुख में ज्ञान ही था। वह दैवी परिवार के बीच में ही थी और सेवा पर उपस्थित थी अर्थात् सेवाकेन्द्र हरि का द्वार था और बाबा की याद में शरीर छोड़ा तो वह अवश्य सद्गति को प्राप्त करेगी, जरूर अच्छे घर में जन्म लेगी।' ऐसे जो बाबा ने राज़ बताया वो मेरी बुद्धि में बैठ गया।

बाबा उपराम स्थिति के प्रेरणास्रोत थे

एक बार बाबा मधुबन के आंगन में खड़े थे। छोटा हॉल बन चुका था। तो हमने बाबा से कहा, बाबा, आपका कमरा पुराना हो गया है, उसे तोड़कर नया बनाओ तो अच्छा होगा। बाबा ने मुसकराते हुए कहा, बच्ची, यह लॉ नहीं कहता कि बाबा नये मकान में रहे। शिवबाबा जो मालिक है, विश्व पिता है, वो हो

पुराने तन में आया है तो उसका तन नये मकान में कैसे रह सकता है। नये तन के लिए नया मकान चाहिए। यह लॉ तुम बच्चों के लिए नहीं है। बाबा तो तुम्हें स्वर्ग का सुख यहाँ देता है।' बाबा को देखकर ऐसा लगता था कि संसार से बाबा का बुद्धियोग हट चुका है और एकदम उपराम हो चुके हैं।

******

ब्र.कु. अमीरचंद भाई जी, मनोहर दादी के साथ के अनुभव इस प्रकार बाँटते है –

सन् 1959 में मैं पहली बार करनाल सेवाकेन्द्र पर गया। उस समय मनोहर दादी ने ही मुझे पहले दिन का कोर्स कराया, उसके बाद दादी ने मुझे मेडिटेशन के लिए अपने सामने बिठाया। दादी से दृष्टि लेते-लेते मैं अशरीरी हो गया। मुझे गहन आत्मिक शांति की अनुभूति हुई। मैं वहीं लेट गया। दादी ने आसपास के सेवाकेन्द्रों के पाँच-छह भाई-बहनों को बुलाया यह दिखाने के लिए कि यहाँ सिर्फ बहनें ही नहीं, भाई भी ध्यान में जाते हैं। कुछ समय बाद जब मैं उठा तो देखा कि तकिया मेरे सिरहाने रखा है। दादी ने अनुभव पूछा तो मैंने कहा कि जब आप योग करा रही थी तो मेरी आँखें बंद हो गई और मुझे सफेद रोशनी दिखाई दी। कहीं दूर से धीमी आवाज भी सुनाई दे रही थी कि आप शरीर नहीं, आत्मा हो। आपने जो आज लेसन कराया, वही ऊपर भी सुनाई दे रहा था। इस प्रकार सात दिनों तक यही सिलसिला चलता रहा। दादी मुझे कोर्स का लेसन कराती, उसके बाद जब योग कराती तो मैं ट्रांस में चला जाता, वहाँ मुझे उस लेसन का प्रैक्टिकल अनुभव होता।

व्यक्ति-वैभव से लगावमुक्त

इस प्रकार मनोहर दादी हमारी पहली टीचर थी। दादी का किसी भी व्यक्ति, वैभव या पदार्थ में लगाव नहीं था। उन्होंने कई सेन्टर खोले पर किसी सेन्टर से लगाव नहीं। उस समय मनोहर दादी और गंगे दादी भाषण करने वाली बहनें थी। बाबा उन्हें भाषण के लिए इधर-उधर भेजते रहते थे। इसलिए दोनों हमेशा अपना बैग तैयार रखती थी। उनमें पालना के संस्कार विशेष थे। साकार बाबा से अति स्नेह था। किसी भी तरीके से दो-तीन आत्माओं को भी तैयार कर पंडा

योग-तपस्या में मगन दादी मनोहर इन्द्रा जी

बनकर बाबा से मिलाने ले आती थी।

मनोहर दादी को फालो करो

मनोहर दादी सुनाती थी कि जब मैं मधुबन जाती तो बाबा मुझे दर्पण की तरह दिखाई देता। बाबा को देखते ही मुझे अपना चार्ट नजर आता। एक बार मैंने मम्मा से पूछा कि मम्मा, सच्चा ब्राह्मण किसको कहेंगे? उस समय मनोहर दादी भी पास में बैठी थी। मम्मा ने मनोहर दादी की तरफ इशारा करते हुए कहा कि मनोहर दादी को फालो करो। दादी श्रीमत का एक्यूरेट पालन करती थी। कभी भी अपनी मनमत मिक्स नहीं करती थी।

******

ब्रह्माकुमारी शशि बहन (माउंट आबू), मनोहर दादी के बारे मे इस प्रकार सुनाती हैं –

जब दादी मनोहर करनाल में सेवार्थ आई, वहाँ एक परिवार ज्ञान में निकला, भाई का नाम था राजकुमार और उनकी युगल का नाम था राजकुमारी। वे टीचर थे, उन्हें सब मास्टरजी कहते थे। उन्होंने अभी नया मकान बनाया था। वे ईश्वरीय ज्ञान से इतने ज्यादा प्रभावित हुए कि उन्होंने अपना मकान सेवाकेन्द्र के लिए दे दिया और स्वयं एक छोटे-से कमरे में रहे। उस मकान के सामने बहुत बड़ा ग्राउंड था, एक तरफ बगीचा था, नई कॉलोनी थी। उस मकान में तीन कमरे, तीन बरामदे, किचन आदि सब सुविधायें थी।

विरोध शांत होने लगे

जब भी बड़ा प्रोग्राम होता था, उस ग्राउंड में टेंट लगाते थे। शिवजयंती पर काफी संख्या मे लोग वहाँ आते थे। आस-पास के बहुत सारे परिवार के परिवार ज्ञान में आने लगे। बहुत सारी कुमारियाँ भी क्लास आती थी। लगभग 20-25 कुमारियाँ थीं। कुछ बंधन थे। कुमारियों के कारण सारा समय सेन्टर रिमझिम लगी रहती थी। मनोहर दादी उन्हें बहुत हँसाती बहलाती थी, उनकी पालना करती थी। जब भी आती थी, उन्हें कुछ न कुछ खिलाती थी। वे कहते थी, आज हमको कढ़ी-चावल खाना है या इस प्रकार की चपाती खानी है तो दादी कहती थी, खूब खाओ। बांधेली कुमारियाँ छिप-छिप कर गुप्त रीति से मधुबन, सेन्टर और दादी के लिए बहुत कुछ करती थी। जैसे दादी का बाबा से प्यार था, उन्हें देख कुमारियों का भी बाबा से वैसा ही प्यार हो गया। कैथल की पुष्पा बहन आर्यसमाजी परिवार की है। उस समय आर्यसमाजी, ब्रह्माकुमारियों के बिल्कुल विरोधी थे। इसका परिवार बहुत रॉयल था और इसे बहुत बंधन था। यह रात को आती थी, एक बार तो रात को एक बजे आई। दादी ने दरवाजा खोला और इसे रात को प्यार से अपने पास ही रखा। दादी की पालना का परिणाम यह निकला कि धीरे-धीरे सभी विरोध शांत होने लगे और लोग ज्ञान को भी थोड़ा समझने लगे।

जीवंत इतिहास वर्णन

जब दादी करनाल में थे, तब उनके पास मम्मा, बाबा, जानकी दादी, रमेश भाई, ऊषा बहन आदि सब महारथी आये। जब बाबा आये थे तो कन्याओं को इतना निश्चय था जो गोपियों की तरह से कहने लगी कि बाबा को हम जाने नहीं देंगी। सभी कन्यायें सांस्कृतिक कार्यक्रमों में बहुत रुचि लेती थी। करनाल की कुमारियाँ गीत, ड्रामा, डांस आदि के प्रोग्राम देने

अंबाला, जालंधर आदि शहरों के सेन्टरों पर जाती रहती थी। भारतमाता नाम से एक ड्रामा था। उसमें मैंने भी कई स्थानों पर भाग लिया था। दादी स्वयं भी कन्याओं को ज्ञान-योग से बहुत ऊँची पालना देती थी और दूसरे स्थानों की बहनों को बुला-बुलाकर पालना दिलवाती थी। मनोहर दादी घंटो-घंटो बैठकर यज्ञ का इतिहास सुनाती थी। गर्मी के दिनों में हम शाम को आ जाते थे और वे रात के 10-11 बजे तक यज्ञ का इतिहास सुनाती रहती थी। बाबा के प्यार की बातों में हम खो जाते थे। उस समय सुबह की क्लास में भी बाबा की ऐसी मदद होती थी कि योग के समय आधी क्लास सेमी ट्रांस में चली जाती थी और अव्यक्त रास करने लग जाती थी। क्लास के बाद अनुभवों की लेन-देन होती थी। हर एक से पूछा जाता था कि आज तुमको बाबा ने क्या दिखाया। ये अनुभव इतने गहन होते थे कि घर में जाकर भी उनका नशा चढ़ा रहता था। स्कूल में जाते थे तो भी मम्मा-बाबा सामने खड़े हैं, ऐसा महसूस होता था।

रहम भावना थी

राखी के त्योहार पर भी, बहनें ध्यान में चली जाती थी और ध्यान में ही एक-एक को पंद्रह-पंद्रह मिनट लगाकर राखी बाँधती थी। मनोहर दादी को देखते ही मातायें गोपियों की तरह नाचने लगती थी, उन्हें अलौकिक अनुभव होने लगते थे। भारत-पाकिस्तान विभाजन के समय कई परिवार अपने धन को खोकर या मित्र-संबंधियों को खोकर भारत में आये थे। किसी घर में कमाने वाला ही नहीं रहा था, मातायें-बहनें मेहनत करके अपना जीवन चलाती थी। उन परिवारों पर दादी को बहुत रहम आता था। उनको प्यार देकर दादी ने उठाया, कइयों को समर्पित कराया। नागपुर की पुष्पा बहन का पूरा परिवार ही समर्पित हुआ। कई ऐसे भी थे जो शारीरिक रूप से बीमार रहते थे, ज्ञान सुनकर उनमें शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक परिवर्तन आ जाता था।

दादी ने कभी 'ना' नहीं कहा

मैं सन् 1959 में ज्ञान में आई। मैं बहुत कम बोलती थी। दादी का पुरुषार्थ रहता था कि मैं कुछ बोलूँ, अपनी बातें शेयर करूँ। दादी ने मुझे बाबा से दिल्ली में मिलने के लिए भेजा। दादी सन् 1967 में मुझे अपने साथ आबू लेकर आई। सफर के दौरान, ट्रेन में भी मैंने देखा, दादी सबके साथ ऐसे बातें करने लगी जैसे सबको जानती हो। दादी कहती, आओ बैठो, खाओ और हमें महसूस होता कि हम सेन्टर में ही बैठे हैं। तब आबू में पहली प्रदर्शनी म्यूजियम के सामने विश्राम भवन में लगी थी। दादी मुझे रोज बाबा के पास लेकर जाती थी। दिन में हम तीन बार बाबा से मिलते थे। सुबह चेंबर में भी बाबा के साथ बैठने का मौका मिला। बाबा ने मेरी ड्यूटी लगाई प्रदर्शनी समझाने की। उन दिनों एक युगल बाबा से मिलने आया, बहुत भावना वाला था, कहता था, मुझे आपके गुरु से मिलना है। बाबा ने पहले मनोहर दादी को मिलने भेजा। दादी हर एक की भावना को देखती थी। दादी ने बाबा को बताया कि यह तो बहुत भावना वाला है। बाबा ने कहा कि उसे कोर्स कराओ। दादी ने कोर्स कराने की ड्यूटी मेरी लगाई। कोर्स करने के बाद वह गुरु के बजाय बाबा-बाबा कहने लगा। इससे मैंने यह सीखा कि मनोहर

दादी हर एक के अंदर को जानती थी, केवल बाहरी रूप नहीं देखती थी। जब बाबा अव्यक्त हुए, दादी को कहा गया कि आप मधुबन में आकर रहो। दादी ने अपने जीवन में कभी भी, किसी भी बात के लिए ना नहीं कहा। मनोहर दादी ने यहाँ रहकर हर प्रकार की ट्रेनिंग देने में अपना अमूल्य सहयोग दिया। बड़ी दीदी, मनोहर दादी को कहती थी कि तुम यहाँ टीचर हो, सतयुग में भी कृष्ण की टीचर बनोगी।

मोल्ड होने की शक्ति

दादी का मन एकदम स्वच्छ था। कभी किसी की कमजोरी को चित्त पर नहीं रखा। दादी किसी में कोई कमी होती भी थी तो उसे अलग ले जाकर बता देती थी और उसी समय उससे घुलमिल जाती थी। सुनने वाले को भी कभी ऐसा नहीं लगता था कि दादी ने मुझसे मेरी कमजोरी की बात की है। दादी का यज्ञ से अटूट प्यार था। दादियों के प्रति बहुत रिगार्ड, एकमत और एकता का पाठ पक्का था तथा ज्ञान का अटूट निश्चय था। दादी में मोल्ड होने की शक्ति बहुत ज्यादा थी। हँसने-हँसाने का संस्कार बहुत था। दादी ने बहुत वारिस निकाले। अंत में दादी की कर्मातीत स्टेज भी देखी हमने। एकदम न्यारी और प्यारी अवस्था थी।

******

ब्रह्माकुमार रघुवीर, जालंधर दादी मनोहर के बारे में अपनी यादगारें इस तरह व्यक्त करते हैं –

चार वर्ष पूर्व की बात है। डायमण्ड हाल में टोली वितरण चल रहा था। एक तरफ मनोहर दादी जी टोली दे रहे थे, दूसरी तरफ एक वरिष्ठ बहन जी टोली दे रहे थे। मैं बहन जी से टोली लेने वाली पंक्ति में था। मेरा मन हुआ कि दादी जी से भी टोली ल जाए। जब दादी जी की तरफ गया तो उन्होंने य कहकर मना कर दिया कि आपको टोली मिल चुक है। मेरे मन में कुछ-कुछ हुआ कि दादी जी ने मुझ मना क्यों कर दिया। उसी दिन हमारी वापसी यात्र थी। रास्ते भर विचार चलते रहे कि दादी जी ने टोली क्यों नहीं दी। लगभग आधी यात्रा पूरी होने को थी, मुझ से रहा नहीं गया। मैंने निमित्त (गाइड) बहन के सामने दिल खोला, देखो बहन जी, दादी जी से टोली माँगी थी ..। इतना ही कह पाया था कि बहन जी ने कहा, ओह रघुबीर भाई, आपकी टोली दादी जी ने मुझे दी है और टोली मेरे हाथ पर रख दी। मेरी आँखों से अश्रुधारा बहने लगी। मेरे से कुछ बोला नहीं गया। बहन जी ने कहा, बड़े समय तक अपने पास संभाल कर रखी है यह टोली। मुझे समझ में आ गया कि दादी जी ने उस समय इसलिए मना किया था ताकि नियम न टूटे और बहन जी के पास इसलिए टोली भेज दी कि भाई का दिल न टूटे। ऐसे स्टील की तरह नियम-मर्यादा के पक्के व मक्खन की तरह नर्म थे दादी जी। जब भी कभी इस घटना की याद आती है तो आँखें नम हो जाती हैं और दादी जी के आगे नतमस्तक हो जाता हूँ।

दादी मनोहर इन्द्रा की विशेषतायें

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के आदि स्थापना काल की आदि रत्न, यज्ञ की वफादार नेत्री, यज्ञ इतिहास को शब्दों द्वारा प्रत्यक्ष को न्यायी दिखा देने वाली, स्नेही व्यवहार से सबके मन को हरकर उसे परमात्मा से जोड़ देने वाली, मिलनसारिता के गुण

को धनी, राजयोग रूपी महातपस्या में रत रहते हुए देश-विदेश की लाखों आत्माओं को आध्यात्मिकता के मार्ग पर उड़ाने वाली राजयोगिनी दादी मनोहर इन्द्रा जी के गुणों और विशेषताओं का वर्णन करना जैसे सूर्य को दीपक दिखाना है। यज्ञ पिता, यज्ञ माता की सदा लाडली रही। ईश्वरीय महावाक्यों में जब भी कभी सर्विसएबुल बच्चों के नामों का वर्णन आता है आपका नाम पहले नम्बर पर होता है।

त्याग-तपस्या की जीवंत मिसाल

कम साधन होते हुए भी आप साधना की धनी थीं, त्याग और तपस्या की जीवंत मिसाल थीं। यमुना के कंठे पर बैठकर बिना किसी साधन-सुविधा के आपने ईश्वरीय सेवाओं का प्रारंभ किया। पतित-पावनी बन अनेक आत्माओं का उद्धार किया। ईश्वरीय नियम और मर्यादाओं के पालन में सदा तत्पर थीं। कड़ी से कड़ी परिस्थितियों को भी योगबल से जीत लेती थीं। चाहे यज्ञ का 'बेगरी पार्ट' (अभाव का समय) रहा, चाहे नए-नए स्थानों पर ईश्वरीय संदेश देने का चुनौतीपूर्ण कार्य, सभी में आप हिम्मत के साथ सफलता का परचम लहराती रहीं। आपके कदमों के निशां देख-देख चलने वालों का एक लंबा काफिला है।

अलौकिकता तथा रूहानियत से सदा संपन्न

पिताश्री के प्रति आपके मन में अटूट, अगाध श्रद्धा थी। उनके द्वारा उपदेशित हर अभियान के प्रति आपका सदा हाँ जी का पाठ रहा और उसे सफल बनाने में आप सदा सक्षम रहीं। आपकी दृष्टि में अलौकिक जादू था। योग कराते समय आपकी दृष्टि पड़ने पर भाई-बहनें ध्यान में चले जाते थे। ऐसी रूहानियत और अलौकिकता से संपन्न थीं आप। पंजाब और हरियाणा में विभिन्न स्थानों पर और विशेष करनाल में बहुत समय तक आपने सेवायें दीं। अनेक कुमारियां आपके स्नेह की पालना से खिंचकर ज्ञान में आईं, आदर्श ब्रह्माकुमारियाँ बनीं और अब भारत के विभिन्न स्थानों पर ईश्वरीय सेवायें दे रही हैं।

नम्रता की मूर्त

आप सदा निमित्त और नम्रचित्त बन कर रहीं। अपने सरल स्वभाव को छाप हरेक के दिल पर डाली। आपसे मिलना बहुत सहज था। कोई भी सरल भाव से आपके पास पहुँच सकता था। आप हरेक पर स्नेह लुटाती और वरदानी दृष्टि, वरदानी बोल से भरपूर कर देती थीं। आप न कभी किसी से टकराव में आईं और न ही प्रभाव में आईं। 'एक बाबा दूसरा न कोई' इस महामंत्र में सबका विश्वास बिठाया। आप बहुत ही रमणीकता से हरेक से बातचीत करती थीं। कभी भी आपको उदास, चिंतित या सोचने के मूड में नहीं देखा। आप यज्ञ के इतिहास का ऐसे वर्णन करती थीं जो सुनने वाले के मन के पर्दे पर सारे चित्र क्रमवार उभरने लगते थे। आपकी स्मृति इतनी अच्छी थी कि यज्ञ की स्थापना कैसे हुई, यज्ञ आगे कैसे बढ़ा, कौन कब यज्ञ में समर्पित हुआ, बाबा और मम्मा की क्या-क्या लीलाएँ चलीं – वे सब तिथि-तारीख सहित सुनाती थीं। आपके शब्द मानो नये-नये भाई-बहनों के लिए नेत्र बन जाते थे जिनसे वे बाबा और मम्मा का साकार अनुभव करते थे।

निश्चिन्त और निर्भय

आपके प्रवचन में सदा ही एक लय और मिठास

रही जो सुनने वाले के हृदय पर छप जाता था। आप यज्ञ के पुराने गीत बहुत रमणीकता से गाती थीं। किसी भी परिस्थिति में आपके चेहरे पर कभी भी प्रश्नवाचक चिन्ह नहीं आया। 'बाबा बैठा है, सब ठीक होगा', इस अटूट विश्वास से सदा निश्चिन्त और निर्भय रहीं। आपने कभी किसी की बात को दिल पर नहीं रखा, कोई कुछ बोल भी जाता था तो भी आप उसे निर्दोष भावना से ही देखती थीं। कभी भी कटु और कठोर वचन आपने नहीं उच्चारे। आपकी निश्छल भावनाओं का प्रभाव चारों ओर वायुमण्डल में फैला रहता था इसलिए किसी को आपसे भय नहीं लगता था।

अपनेपन की भासना

आप जितनी बापदादा की, दादियों की प्रिय थीं उतनी ही सारे ब्राह्मण परिवार की भी प्रिय थीं। आपसे सभी को अपनेपन की भासना आती थी। हरेक को रूहानी प्यार की अनुभूति कराते भी आप सदा न्यारी रहती थी। हरेक की विशेषताओं को देख उन्हें सेवा में लगाती थीं। उनकी प्रशंसा करके बाबा के कार्य में मददगार बना देती थीं। कोई में कोई कमी भी होती थी तो उसका वर्णन नहीं करती थी बल्कि और ही स्नेह देकर गुणवान बना देती थीं।

सदा हर्षितमूर्त

आप सदा सर्व के प्रति कल्याण भावना से भरपूर और हर्षितमूर्त थीं। आपके स्नेही बोल और सहयोग की भावना हर आत्मा को सदा निश्चिंत बना देती थी। आपने सर्व ब्रह्मावत्सों का तथा अन्य संपर्क वालों का दिल, अपने प्यार और सत्कार-भाव से जीता। सेवा में सदा अथक रहीं। निमित्त दादियों के साथ मिलकर यज्ञ-सेवा के हर कार्य में आपका सदा अमूल्य योगदान रहा। बाबा के नए-नए फूलों में उमंग भरकर उन्हें आगे बढ़ाने की कला में आप सिद्धहस्त थीं। एकनामी और इकानामी के पाठ में आप स्वयं भी बहुत पक्की थीं और दूसरों में भी यह धारणा भर देती थीं। भूलों को भुलाकर गले से लगाने वाली आप मास्टर क्षमा का सागर थीं। ईश्वरीय रत्नों को पालना देकर आध्यात्मिक मार्ग पर समर्थ बना देने की सेवा आप अहर्निश करती रहीं।

दिल्ली, पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश तथा भारत के विभिन्न अन्य भागों की सेवा कर, सन् 1970 में आप मुख्यालय निवासी बनीं। मुख्यालय में रह आपने अनेक जिम्मेवारियाँ संभालीं। आप महिला प्रभाग की राष्ट्रीय अध्यक्षा रहीं। राजयोग शिविरों की भी आप मुख्य निदेशिका रहीं। टीचर्स ट्रेनिंग में आपका सक्रिय योगदान रहा। आप ब्रह्माकुमारीज़ की मैनेजमेंट कमेटी की मेम्बर थीं। ब्रह्माकुमारीज़ एज्युकेशनल सोसायटी के गवर्निंग बोर्ड की मेम्बर थीं। राजयोग एज्युकेशन एंड रिसर्च फाउण्डेशन की मेम्बर ऑफ गवर्निंग बॉडी थीं। सन् 1997 से आप ज्ञान सरोवर अकादमी की निदेशिका रहीं। आपने अनेक विदेश यात्राएँ कर अनेक देशों के बहन-भाइयों को आध्यात्मिकता से सींचा।

जब भी कोई आपके समक्ष गया, आपकी ममता भरी मुस्कान के स्पर्श से तन-मन में उमंग भरकर ही लौटा। किन शब्दों में वर्णन करें आपकी महिमा का! आप जीवंत मुस्कान और प्रभु का वरदान थीं।

यह श्रद्धानत लेखनी आपकी अनन्त महिमा के सागर में दो बूंद श्रद्धांजलि के भेंट करने की कोशिश में लगी है। भावनाओं का सागर थामे नहीं थम रहा।

आपके महान, श्रेष्ठ, दिव्य कर्मों की यादों का ज्वार हिलोरें मार रहा है। आपने मन, वचन, कर्म से जो अमूल्य देन मानवता को दी है, वह स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य है। आपकी आभा पर पड़ा भौतिक आवरण हट चुका है। आप में समाहित सत्य, प्रेम, पवित्रता, दिव्यता का प्रकाश धरती और गगन को प्रकाशित करता हुआ तीनों लोकों में फैल रहा है। आप हमारी थीं, हमारी हैं और हमारी रहेंगी। आवरण को उतार आप ससीम से असीम हो गई हैं। अब अव्यक्त वतन में, अव्यक्त रूप में आपकी छवि निहारा करेंगे और आपकी अविस्मरणीय साकार यादों की अमूल्य धरोहर को हृदय से लगाए आपके चरण-चिन्हों का अनुकरण करते रहेंगे।

हे विश्ववंदनीय दादी माँ,
आपको शत् शत् नमन!

दादी गुलजार जी द्वारा अव्यक्त वतन का सन्देश

आज अमृतवेले बाबा के पास गई थी। सदा के मुआफिक जब बाबा से मिलन मना रही थी तो उसी समय मनोहर दादी भी वहाँ पहुँच गई। तो बाबा की बाँहो में हम दोनों समा गए और बाबा हम दोनों को बाँहों के झूले में झुला रहा था। तो मनोहर दादी ने कहा कि आज तो मैं आपके समान वतन में पहुँच गई हूँ। हमने कहा, हमें भी खुशी है कि आप हमारे समान अनुभव कर रही हो। तो बाबा ने कहा, मैंने इस बच्ची की सब आशायें पूरी कर दी है क्योंकि इसमें एक विशेषता रही है, तो मैं भी इन्ट्रेस्ट से सुनने लगी। बाबा ने कहा, एक तो बच्ची की विशेषता है कि जब भी बाबा सेवा के लिए कहता तो पहले नम्बर में यही तैयार होके जाती, चाहे कोई स्थान छोटा हो या बड़ा हो। दिल्ली में भी जो फाउण्डेशन के समय बच्चियों ने जमुना किनारे तपस्या की, उसमें भी यह पहुँची थी। तो यह बच्ची आलराउण्ड भी रही और एवररेडी भी रही। मनोहर दादी को देखकर बाबा ने कहा कि तुमको याद है, कैसे बाबा ऑर्डर करता था। तो दादी ने कहा, हाँ बाबा, याद है। तो बाबा ने कहा, बच्ची ने सदा ऑर्डर मिलते ही जी हाजिर किया है, तो हजूर भी हाजिर है। बच्ची हर एक के साथ, हर स्थान पर एडजेस्ट होने में भी नंबरवन रही। जैसे आलू सब सब्जियों में मिक्स हो जाता है, ऐसे बच्ची भी सबसे मिक्स हो जाती। बच्ची रमणीक रहती थी, सूखा नहीं रहती थी। भले बीमार भी रही

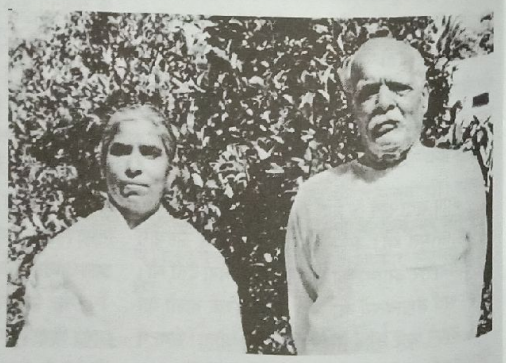

बाबा के साथ दादी मनोहर इन्द्रा जी

लेकिन दर्द की शक्ल नहीं थी, वह फीलिंग नहीं रही। अंत तक बच्ची ने अपना पार्ट बहुत अच्छा बजाया। तो मनोहर दादी मुसकरा रही थी। फिर बाबा ने कहा कि बाप भी बच्ची के लिए जी हाजिर है। बच्ची लास्ट समय जब बेहोशी में रही तो वतन में मैं बुलाता था। इसकी दिल थी बाबा आप ऐसे अनुभव कराओ जो किसी ने नहीं किया हो। तो बाबा ने इतने दिन इसको रखा और जी हाँ किया। देश-विदेश में जो बच्ची ने नहीं देखा था वो सब बाबा ने दिखाया, घुमाया, खूब खुश किया।

फिर बाबा ने कहा, बच्ची से सभी का प्यार था लेकिन जो उनकी विशेषतायें हैं, उन विशेषताओं को देखकर विशेष बनो तो सारे कल्प में विशेष पार्ट बजाने वाले रहेंगे। ऐसे बाबा उनकी महिमा कर रहा था और वह भी बाबा के स्नेह में कभी बाबा के गले लग जाती तो कभी बाबा का हाथ पकड़ लेती।

तो मनोहर दादी ने कहा कि बाबा, आपने पहाड़ी पर ले जाकर बहुत अच्छा अनुभव कराया। तो मैंने कहा, बाबा, आपने क्या दिखाया? तो बाबा ने कहा, तुमको भी दिखाता हूँ। तो हम दोनों को बाँहो में लिया और एक लाइट की पहाड़ी पर लेकर गया। उस पहाड़ी से दुखी, अशान्त दुनिया को सकाश कैसे दो, वह दृश्य दिखाया। तो बाबा ने कहा, संदेश तो सबको देना है, लेकिन जहाँ मुख से संदेश नहीं पहुँचा सकते, वहाँ मनसा द्वारा सकाश देना, इससे बहुत जल्दी काम पूरा हो जायेगा। जैसे साइंस के साधन टी.वी. द्वारा सहज सभी देख सकते है, सुन सकते हैं, ऐसे आपके साइलेन्स पावर की सकाश बहुतों को सहज मिल जायेगी और सभी बाबा की तरफ आकर्षित होकर आयेंगे। जैसे शुरू में घर बैठे साक्षात्कार होते थे, ऐसे सफेद वस्त्रधारी लाइट रूप में दिखाई देंगे और आपकी सकाश मिलेगी। तो मनोहर दादी कहती थी, मैंने तो इतने दिन खूब मौज मनाई, मुझे कुछ भी बीमारी फील नहीं हुई, बाबा ने मेरी रिक्वेस्ट पूरी की। मैंने कहा, अभी तो आप जन्म लेंगी फिर कैसे सकाश देंगी। तो बाबा ने कहा, जो भी एडवांस पार्टी में गये हैं, उनमें जिसे अमृतवेले का अभ्यास है, भले उन्होंने जन्म लिया है लेकिन अमृतवेले उनको ऐसे वायब्रेशन आता है जैसे हम वतन में हैं। जब उनके परिवार वाले सब सोये होते हैं तो वे लेटे-लेटे भी वतन में आकर अभ्यास होने के कारण सकाश देने की सेवा करते हैं। फिर हम दोनों बाबा की पहाड़ी से नीचे उतरे और बाबा के कमरे में गद्दी पर बाबा के साथ बैठ गये। फिर बाबा ने कहा, अच्छा बच्ची, अभी अपना पार्ट बजाने जाओ। तो मैं साकार वतन में आ गई।

दादी शान्तामणि

ब्रह्मा बाबा के बाद यज्ञ में सबसे पहले समर्पित होने वाला दादी शान्तामणि का लौकिक परिवार था। उस समय आपकी आयु 13 वर्ष की थी। आपमें शुरू से ही शान्ति, धैर्य और गंभीरता के संस्कार थे। बाबा आपको 'सचली कौड़ी' और 'हर की पौड़ी' कहते थे। बोर्डिंग के निमित्त पाँच चिड़ियाओं में आप भी एक थी। कम से कम साधनों में आप सदा साधनामूर्त रही। कभी भी यह ऐसा, वह वैसा, इन बातों में नहीं आई। बाबा और मुरली के अलावा जीवन-भर आपके दिल में और कुछ रहा ही नहीं। पिताव्रत और सतीव्रत का सच्चा पालन किया। झाड़ के चित्र में मम्मा-बाबा के साथ तपस्यारत अष्ट रत्नों में आप भी विराजमान हैं। शान्तिवन निर्माण में आपकी मनसा सेवा का विशेष योगदान रहा। बीमारी में भी आपके चेहरे पर शान्ति और मुसकराहट झलकती रही। 87 वर्ष की आयु में 15 जून, 2010 को आप देह के हद-बंधन से मुक्त हो बापदादा की गोद में समा गई।

जैसे समुद्र ऊपर से धीर-गम्भीर होते हुए भी अपने अंदर विशाल सामुद्रिक सम्पदा समाए रहता है, इसी प्रकार का व्यक्तित्व था दादी शान्तामणि का। शान्ति और शीतलता की चैतन्य मूर्ति बन, शान्तिवन के बेहद प्रांगण में वरदानी भवन में सदा वरदान लुटाती हुई दादी के अंदर प्रेम, सत्यता, करुणा, मिलनसारिता, सहनशीलता, नम्रता जैसे अनेक गुणों की अपार संपदा समाहित थी। आपका चेहरा ही चैतन्य म्यूजियम बन सदा सबको आकर्षित करता रहा। आपका मौन निमंत्रण ऐसा था कि कोई भी आत्मा निःसंकोच आपसे मिलकर तृप्त हो जाती थी। कम शब्दों में, मुसकान भरे चेहरे से दृष्टि-मिलन करते हुए आप हर मिलने वाले के दिल पर गहरी छाप छोड़ देती थीं। चेहरे का नूर और वाणी का ओज – आपकी बढ़ती आयु को सदा ही झुठलाते रहे। आपका कद, चेहरा और स्वर मातेश्वरी जगदम्बा से काफी समानता रखता था। आपसे मिलकर मातेश्वरी जगदम्बा से मिलने का अनुभव हो जाता था।

यज्ञ के आदिकालीन समर्पित परिवार की सदस्या

सिंध-हैदराबाद के एक प्रभावशाली तथा प्रतिष्ठित

सखरानी परिवार में आपका जन्म हुआ। आपके दादा जी का नाम था प्रताप सखरानी जो बहुत ही भद्र, सरल और आस्तिक थे। पिताजी का नाम था रीझूमल सखरानी और माताजी का नाम था सती सखरानी। लौकिक माता-पिता का जीवन बहुत सुखमय था और उनको देख सब कहते थे कि ये तो जैसे कि श्रीलक्ष्मी और श्रीनारायण की जोड़ी है। आपके पिताजी कठोर परिश्रमी और बुद्धिमान थे। उनका व्यवसायिक केन्द्र श्रीलंका में था, जो बहुत सफल था इसलिए लौकिक परिवार की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी थी। आप पाँच बहनें और एक भाई थे। भाई सबसे बड़े थे, उनका नाम था जगूमल सखरानी। बहनों के नाम थे – देवी, कला, लीला (दादी शान्तामणि), लक्ष्मी (दादी सन्देशी) और भगवती (अलौकिक नाम ज्योति)। आपकी एक मौसी थी जिसका नाम था रोचा (रुक्मिणी) जो असमय ही विधवा हो गई थी। उनकी तीन बच्चियाँ थी। बड़ी बच्ची पार्वती जिसकी शादी हो चुकी थी, फिर थी राधे (जगदम्बा सरस्वती) और फिर थी गोपी। इस प्रकार, आप जगदम्बा सरस्वती की मौसेरी बहन थी। आपकी दूसरी मौसी का नाम था ध्यानी, वह भी शुरू से यज्ञ में समर्पित थी। ध्यान में जाने के कारण उनका नाम ध्यानी पड़ा। बाबा उन्हें मिश्री कहते थे क्योंकि वे बहुत मीठी थी। इस प्रकार आप, यज्ञ के आदिकालीन पूर्ण समर्पित परिवार की एक विशेष समर्पित सदस्या थीं।

एक साक्षात्कार से परिवार की दिशा परिवर्तन

लौकिक जीवन में आपके पिताजी बड़े गुरुभक्त थे। मकान में एक विशेष कोठरी को गुरुघर कहा जाता था। रोज़ शाम को पिताजी के निर्देशानुसार सभी बच्चे उस कमरे में प्रार्थना करते थे और प्रार्थना के पश्चात् माँ प्रतिदिन 'गुरुमुखी ग्रंथ', 'जप साहेब', 'सुखमणि' आदि धर्म पुस्तकें पढ़कर समझाती थी। इस प्रकार छोटी आयु से ही आप सत्संग प्रेमी और धर्म-प्रेमी थीं। ब्रह्मा बाबा के साथ आपके पिताजी का बहुत अच्छा संबंध था। हैदराबाद में सत्संग की शुरूआत के बाद ब्रह्मा बाबा जब एकांतवास के लिए कश्मीर गये, तब वहाँ आपके पिताजी की मुलाकात ब्रह्मा बाबा से हुई। ब्रह्मा बाबा ने उनको 'बेटा' शब्द से संबोधित किया। यह संबोधन सुनकर उन्हें आश्चर्य हुआ क्योंकि वे दोनों ही समान उम्र के थे। वास्तव में ब्रह्मा बाबा के तन में अवतरित परमात्मा शिव ने उन्हें 'बेटा' कहकर संबोधित किया था। उसके बाद बाबा की दृष्टि द्वारा आपके पिताजी ने दिव्य धाम का साक्षात्कार किया। इस साक्षात्कार के बाद आपके पिताजी के साथ-साथ आपके सारे परिवार की दिशा ही पूर्णतः बदल गई और तन-मन-धन सहित आपका संपूर्ण परिवार 'ओम मण्डली' में समर्पित हो गया।

बाबा को श्रीकृष्ण रूप में देखा

सन् 1936 में जब आपने अपनी लौकिक माँ के साथ ब्रह्मा बाबा को देखा तो आपको जन्म-जन्म के सच्चे पिता के मिलने की अनुभूति हुई और बाबा को स्थूल नेत्रों से ही श्रीकृष्ण के रूप में देखा। फिर तो आप रोज़ स्कूल से लौटते हुए, बाबा के पास जशोदा निवास में जाती रहीं। बाबा ने ही आपको आत्म-अनुभूति कराई। बाबा ने कहा, आत्मा ही शरीर को चलाती

है। मन, बुद्धि, संस्कार की मालिक आप आत्मा हैं। बाबा ने शरीर रूपी बाजे की तुलना हारमोनियम से करके समझाया। बाबा ने अच्छे-बुरे संस्कारों का ज्ञान दिया। बाबा ने अपने हस्तों से एक कागज़ पर देवलोक, मनुष्य लोक और पाताल लोक का चित्र बनाया और पूछा, अभी आप मनुष्य लोक में हो, बताओ, कहाँ जाना चाहते हो? देवलोक में या पाताल लोक में? आपकी बुद्धि ने फौरन निर्णय दिया कि देवलोक में जायेंगे। बाबा ने कहा, अगर देवलोक में जाना है तो देवी-देवताओं जैसा बनना है और दैवी गुण-संस्कार धारण करने हैं, पढ़ाई पढ़नी है। आपका उसी दिन से ईश्वरीय पढ़ाई से बहुत प्यार हो गया और नियमित बाबा के पास जाती रहीं और बहुत ही लगन से ईश्वरीय पढ़ाई पढ़ती रहीं।

पाँच चिड़ियाओं में से एक

ईश्वरीय ज्ञान की शुरूआत से पहले ब्रह्मा बाबा ने लौकिक स्कूल के लिए एक बिल्डिंग बनाई थी। बाद में उसे ही ओम निवास कहा गया। बाबा ने कश्मीर में रहते ही उस भवन में बोर्डिंग खोलने की तथा सत्संग में आने वाली माताओं के बच्चे-बच्चियों को रूहानी तथा जिस्मानी दोनों प्रकार की शिक्षा देने की योजना बनाई। सन् 1937 में दीवाली के दिन बाकायदे बोर्डिंग का उद्घाटन हुआ। बच्चों को पढ़ाने के निमित्त जिन पाँच दादियों को नियुक्त किया गया, उनमें से एक आप भी थीं। बाबा आपकी टीम को पाँच चिड़ियायें कहकर संबोधित करते थे। तब आपकी आयु 14 वर्ष की थी।

सचली कौड़ी और हर की पौड़ी

झाड़ के चित्र में मम्मा-बाबा के साथ तपस्यारत अष्ट रत्नों में आप भी विराजमान हैं। आप कराची में यज्ञ कारोबार भी संभालती थीं। आपका शुरू-शुरू में ध्यान-दीदार का भी पार्ट रहा। बाद में वह पार्ट हल्का हो गया। बाबा कहते थे, इस बच्ची ने जब से यज्ञ में कदम रखा है, अपने शान्त स्वरूप के द्वारा अपनी अनेक विशेषताओं को प्रकट किया है। आपके गुणों को देख बाबा आपको सचली कौड़ी (बहुत सच्ची और साफ़ दिल) कहा करते थे। आप बहुत ही मिलनसार तथा गुणग्राही होकर यज्ञ में चलीं। हर बात में संतुष्ट रहना और संतुष्ट करना, आपका विशेष गुण रहा। बाबा आपको 'हर की पौड़ी' भी कहते थे। यूँ तो गंगा बहती जाती है और भक्तों की भावना पूर्ण करती जाती है परंतु गंगा का एक ऐसा हिस्सा भी है जो 'हर की पौड़ी' कहलाता है। वहाँ गंगा स्थिर रहती है, दूर-दूर से, दिशा-दिशा से भक्तजन वहीं आकर डुबकी लगाते हैं और अपनी प्यास बुझाते हैं। आप भी मधुबन महातीर्थ पर, विश्व के कोने-कोने से आने वाले ब्रह्मावत्सों को, 'हर की पौड़ी' बन ज्ञान-डुबकी लगवाती रहीं, शान्ति और शीतलता के वरदान लुटाती रहीं।

लखनऊ में सेवा

यज्ञ के माउंट आबू स्थानांतरित होने के बाद, अन्य दादियों की तरह आप भी लखनऊ में सेवार्थ गईं और अनेक परीक्षाओं को पार करते हुए, एक बल एक भरोसे रह 17 वर्षों तक आप वहाँ सेवारत रहीं। बाबा ने एक बार आपको कोलम्बो (श्रीलंका) भी सेवार्थ

भेजा था जहाँ आप ईश्वरीय सेवा का बहुत अच्छा बीज बोकर आईं। प्यारे बाबा के अव्यक्त होने के बाद आप मधुबन में ही स्थाई रूप से निवास करने लगीं।

कर्त्तापन के भान से परे

शान्तिवन निर्मित होने के बाद, पिछले 15 वर्षों से आप विशाल शान्तिवन प्रांगण में निरंतर सेवारत रहीं। आप कभी भी – यह ऐसा, वह वैसा – इन बातों में नहीं आईं। किसी को देख यह भी नहीं सोचा कि उसको यह मिला, मुझे क्यों नहीं। कम से कम साधनों में सदा साधनामूर्त रही। कभी क्यों, क्या, कैसे नहीं कहा। कोई भी समस्या लेकर आता तो अपने शान्त स्वरूप द्वारा उसे हल्का कर देती थीं और कहती थीं, बाबा सदा साथ है। आपने याद और सेवा के द्वारा सबके दिलों में अपना यादगार बनाया। बाबा और मुरली के अलावा, जीवन भर आपके दिल में और कुछ रहा ही नहीं। पितावत और सतीव्रत का पक्का पालन किया। आपमें समाने की शक्ति बहुत थी। जो बात आपको बता दी, वह आपके सिवाय आगे कहीं नहीं जाती थी। बाबा को सुनाने के अलावा आप किसी की बात को इधर-उधर नहीं करती थी। किसी ने आपको कभी कड़वा या जोर से बोलते नहीं देखा। कभी किसी को आँख नहीं दिखाई। सबको प्यार दिया, शान्ति दी और कारोबार ऐसे किया जैसे कुछ भी कर नहीं रही हैं। कर्त्तापन के भान में न होने के

मम्मा के पास बैठी हैं दादी शान्तामणि जी। साथ में खड़ी हैं दादी प्रकाशमणि जी और अन्य।

कारण हरदम शान्ति की शक्ति से भरपूर रहीं। एक बार आपकी बाजू में तकलीफ थी पर कोई घबराहट नहीं। आप सहनशीलता की देवी थी। इस पुराने शरीर को कई बार टांका-चत्ती लगे पर आप सदा शान्ति की एकरस अवस्था में साक्षीद्रष्टा बन पार्ट बजाती रही।

पिछले एक वर्ष से आपका स्वास्थ्य ऊपर-नीचे रहता था परंतु चेहरे से कभी नहीं लगा कि आपको कोई तकलीफ है, कभी मुख से नहीं कहा। पेशेन्ट होते भी आप अद्भुत पेशेन्स में रहीं। सारे ब्राह्मण परिवार को दुआयें आपको सदा ही मिलती रहीं। पंद्रह जून, 2010 को आप देह के हद-बंधन से मुक्त हो बापदादा की गोद में समा गई। आप 87 वर्ष की थीं। अब आप बेहद सेवा में उपस्थित हो शान्तिवन सहित सारे विश्व को सकाश देती रहेंगी। आपके दिव्य कर्त्तव्यों की स्मृतियाँ, रूहानी नूरानी नज़रें, धरती जैसा धैर्य और सहनशीलता सदा हमारा मार्गदर्शन करते रहेंगे। यह श्रद्धानत लेखनी आपके गुण-स्तंभ जैसे जीवन को कोटि-कोटि प्रणाम करती है।

******

शान्तिवन के **ब्र.कु. किशन दत्त भाई**, दादी शान्तामणि जी के बारे में इस प्रकार लिख रहे हैं –

शान्ति की चुम्बक

दादी शान्तामणि जी महातपस्विनि थी। उस चैतन्य मणि के सानिध्य में मैंने कई बार गहन शान्ति के प्रकम्पन अनुभव किये। मैंने यह अनुभव किया कि कर्मक्षेत्र में उनकी उपस्थिति से कठिन से कठिन कार्य भी आसान हो जाता था। दादी शान्तामणि जी 'यथा नाम तथा गुण स्वरूपा' थी। उनका अलौकिक व्यक्तित्व 'शान्ति के चुम्बक' के समान था।

बाबा बैठा है

जिनकी आस्था प्रगाढ़ होकर सम्पूर्ण समर्पणता में परिणत हो जाती है, वे वास्तव में शक्तिशाली आत्मायें होती हैं। निराकार अदृश्य शक्ति परमपिता परमात्मा के प्रति उनका अटल विश्वास था। शान्तिवन के उनके निर्देशन काल के लगभग 15 वर्षों में मैंने यह देखा कि उनके सामने जो भी जटिलताएँ या समस्याएँ आती थीं, उन्हें वे यह कहकर हल्का कर देती थी कि 'कोई बात नहीं, बाबा बैठा है।' ऐसी समर्पण भावना से मैंने देखा कि वे सबके मन को हल्का कर देती थी। सभी के मन में नई आशा का संचार हो जाता था, परमात्मा के प्रति गहरी आस्था का जन्म हो जाता था, विस्मृत चेतना में स्मृति का दीपक जल उठता था।

समाने की शक्ति

समाने की शक्ति की उपमा सागर से की जाती है। हमने यह कई बार देखा कि दादी शान्तामणि जी का व्यक्तित्व सागर के समान था। उनमें समाने की अद्भुत शक्ति विद्यमान थी। दिव्य बुद्धि की विशालता अपने साथ कई दिव्य शक्तियों को समाये हुए रखती है। जब भी उनके सामने कोई बात आती थी, वे उसे स्वयं में ऐसे समा लेती थीं जैसे सागर अपने अन्दर सभी प्रकार की चीजों को समा लेता है। देखते ही देखते यह अनुभव होता था कि बात कुछ भी है ही नहीं। सब कुछ स्वत: ही सरल हो जाता था।

योगी बनने की प्रेरणा

उनके साथ कई बार ज्ञान चर्चा करने का भी

सौभाग्य प्राप्त हुआ। उनका विशेष निष्कर्ष रहता था कि बिन्दु बन बिन्दु बाप को याद करना है, इसमें ही सब सार आ जाता है। ज्ञान से बड़ा है योग, ऐसा कहकर वे योगी बनने की प्रेरणा देती थी। मुझे सेवा के लिये कई बार बाहर जाना होता था। जब उनके पास छुट्टी लेने जाता था तो वे रूहानी दृष्टि देते हुए मुस्कराते हुए यह कहकर छुट्टी देती थी कि अच्छा है, सेवा के लिये छुट्टी है, कोई मना नहीं है। आपको सेवा निमित्त बन कर करनी है और बाबा का नाम बाला करना है।

अनासक्त भाव

दादी जी को मैंने सदा ही अनासक्त भाव में स्थित देखा। कई बार कई प्रकार से ऐसी परिस्थितियाँ बनी कि ऐसा लगता था कि वैचारिक या भावनात्मक स्तर पर आसक्ति की स्थिति निर्मित हो जायेगी। लेकिन क्या देखा कि उनके अन्त:स्थल को आसक्ति तनिक भी स्पर्श नहीं कर पायी। वे सदा ही सर्व प्रकार के विरोधाभासों से अप्रभावित रहीं। अपने अन्दर ऐसा धैर्य धारण किये हुए रहती थी कि उनके द्वारा कभी भी कैसी भी बात में प्रतिक्रिया का आभास नहीं होता था। एक बार मैंने उनके पास जाकर कहा कि दादी जी फलां व्यक्ति यह-यह कहता है। उन्होंने मुझे समझाया कि वह तो छोटे और बड़े सबको ही ऐसा कहता है। यह तो उसका संस्कार है। आपका संस्कार क्या है? आप अपने स्वमान में रहो और एकरस रहो। उनके ऐसा कहते ही वह बात हल्की हो गयी। वह बात मेरी बुद्धि से ऐसे भूल गयी कि जैसे कभी थी ही नहीं। इस प्रकार मैंने देखा कि उनकी स्थिति सदा ही निन्दा-स्तुति, मान-अपमान, हानि-लाभ, जय-पराजय में एकरस रहती थी।

आत्म-जाग्रत स्थिति

दादी शान्तामणि जी देह त्याग के अन्तिम दिनों तक भी आत्म-जाग्रत स्थिति में रहीं और सर्व मिलने वालों को आत्मिक दृष्टि देती रहीं। उन्हें देखने से ऐसा लगता था कि उनकी देह और देह की दुनिया (प्रकृति) की चेतना (स्मृति) लगभग विस्मृत हो चुकी है। ऐसा लगता था कि वे "सम्पूर्ण आत्म-जागृति" के बहुत निकट थी। यह उनकी योग तपस्या का ही फल था।

दादी शान्तामणि जी वैसे अब साकार रूप में हमारे बीच नहीं है, लेकिन उनके जीवन के उज्ज्वल चरित्रों की कल्याणकारी स्मृतियाँ सदा हमारे साथ रहेंगी। वे सदा हमारे लिए आध्यात्मिक प्रेरणा की सरिता थीं, हैं और रहेंगी। ईश्वरीय कार्य की योजना अनुसार वे जहाँ भी होंगी वहाँ अपनी सम्पूर्ण पवित्र वृत्ति से अनेक आत्माओं में पवित्र भावनाओं का संचार करने के निमित्त बनेंगी। आप अपनी अलौकिक आभा के प्रकाश की उपस्थिति से लाखों आत्माओं के जीवन में जीवन्तता का अनुभव कराती रहीं है और भविष्य में भी कराती रहेंगी। आप सतयुग स्थापना के पुनीत कार्य को सम्पन्न करने में अपनी अद्वितीय भूमिका निभाने के निमित्त बनेंगी, आपके प्रति हमारे हृदय की अथाह गहराइयों से निकली यही शुभभावना और शुभकामना है। ऐसी आध्यात्मिकता की मशाल और सम्पूर्ण सृष्टि रूपी कल्पवृक्ष की आधार स्तम्भ अलौकिक आत्मा को हमारी भावभीनी श्रद्धान्जलि और कोटि-कोटि नमन!

******

दादी शान्तामणि जी के निमित्त विशेष भोग तथा वतन का दिव्य सन्देश

(शशि बहन)

आज सर्व ब्राह्मण परिवार का यादप्यार लेकर जैसे ही मैं वतन में पहुँची तो वतन का नज़ारा बहुत ही सुन्दर दिखाई दे रहा था। चारों तरफ बहुत सुन्दर सजावट थी। सजावट देख रही थी, तो मन में संकल्प उठा, दादी जी कहाँ हैं? इतने में देखती हूँ कि एक बहुत ही सुन्दर रंगबिरंगा चमकीला पर्दा है, पर्दा धीरे-धीरे खुलता है, पर्दे के पीछे एक चबूतरा था, चबूतरे पर दादी जी बैठी हुई थी। दादी जी का रूप बहुत सुन्दर सजा हुआ था। चबूतरे के चारों तरफ सजे-सजाये कुछ एंजिल खड़े थे, जिनके हाथों में मालाएँ थी और एक-एक दादी के सामने आते दादी को मालाएँ पहना रहे थे, जिससे दादी का बहुत सुन्दर श्रृंगार हो रहा था। माला से बहुत सुन्दर लाइट निकलकर चारों तरफ रिफलेक्ट कर रही थी। दादी जी का रूप शीतला देवी जैसा दिखाई दे रहा था। कुछ सेकेण्ड के बाद बाबा सामने आये। बाबा ने कहा, बच्ची, देखा दादी को। मैंने कहा, हाँ बाबा, दादी तो बहुत सुन्दर ... है। बाबा ने कहा, मालूम है आज दादी का श्रृंगार कौन कर रहे ... ने ही सुनाया कि आज दादी का श्रृंगार वतन में बाबा, दादी ... जो भी भाई-बहनें एडवान्स पार्टी में गये हैं, वो कर रहे हैं। ... गुणों का वर्णन कर रहा है। मैंने कहा, बाबा, एडवान्स पार्टी ... रही है लेकिन साकार में भी जो भी हमारी दादियाँ और ब्राह्मण ... हैं, बच्चे से लेकर बड़े तक सभी दादी जी को बहुत प्यार करते ... मैंने कहा, बाबा, आपने हमारी दादी जी को अपने पास बुला लिया ... बाबा मुस्कराये और कहा, बुलाया नहीं है, ड्रामानुसार जो दादी ... है, उस विशेष कर्त्तव्य, विशेष सेवा के निमित्त यहाँ बुलाया है।

मैंने दादी जी को कहा कि दादी, आप क्यों चली आईं ... मुस्कराई और कहा, मैं बाबा को कह रही थी, बाबा, मुझे ... तो बाबा कुछ दिनों से मुझे अनेक स्थानों पर ले जाता था। मैं ... दादी, आप कहाँ-कहाँ गई? बाबा ने कहा, इस बच्ची को मैंने देश ...

बापदादा से मुलाकात करती हुई दादी शान्तामणि जी

के अनेक स्थानों का सैर कराया है, यह बच्ची अपने चेहरे द्वारा मम्मा का साक्षात्कार कराती थी। साथ-साथ अपनी धारणा के द्वारा एक-एक बच्चे को अनुभव कराये हैं, वो बच्चे याद करते हैं। कुछ दिनों से विदेश की जो गुप्त सेवायें हो रही हैं वो भी बाबा इनको दिखा रहा था। दादी तो बहुत ही शान्त बैठी थी।

इतने में क्या देखती हूँ कि दादी के पीछे एक लाइट हाउस की तरह कुछ है। लाइट हाउस के ऊपर एक बहुत सुन्दर चमकती हुई लाइट दिखाई दे रही थी। उसमें शिवबाबा का रूप नहीं था, एक शक्ति रूप दिखाई दे रहा था। उसमें से लाइट निकलते आधे चन्द्रमा की तरह सर्किल बन रहा था। जैसे मोर के पंख धीरे-धीरे खुलते हैं, उसी डिजाइन में छत्रछाया का रूप भी था और डिजाइन भी था, उस डिजाइन में एक-एक स्टार बना हुआ था। उस स्टार से लाइट चमकती थी जिसमें दादी जी की एक-एक विशेषता दिखाई दे रही थी। जैसे वो लाइट आती थी तो दादी जी का रूप उस विशेषता के अनुसार बनता जाता था। बाबा ने कहा, इस बच्ची ने जबसे यज्ञ में कदम रखा है, अपने शान्त स्वरूप के द्वारा अनेक विशेषताओं को प्रकट किया है।

दादी जी ने कभी भी क्यों, क्या, कैसे नहीं कहा। अपने शान्त स्वरूप द्वारा कोई भी समस्या लेकर आता तो उसको भी हल्का कर देती थी और कहती थी, बाबा साथ है। इतने में बाबा ने कहा कि आज वतन में भी सब याद कर रहे हैं। एडवान्स पार्टी वाले और दादियाँ सभी ने दादी को घेर लिया और सर्कल बनाया, जो बहुत सुन्दर लग रहा था। मैंने कहा, आपको दादी जानकी जी बहुत याद कर रही हैं। तो कहा, मैं भी याद कर रही थी, मैंने दादी जानकी जी से मिलन मनाया। जहाँ-जहाँ दादी जी सेवा पर थी, बाबा मुझे भी वहाँ-वहाँ सूक्ष्म में ले जाता था। बाबा ने, दादियों ने बहुत स्नेह से हमें पाला है। फिर दादी जी शान्त हो गई। बहुत मुस्कराता हुआ चेहरा था।

मैंने कहा मधुबन, ज्ञानसरोवर, शान्तिवन में सब आपको याद कर रहे हैं। कहती है, मैं भी तो सबको याद करती हूँ। बाबा की कमाल है, बाबा ने ऐसे रत्न चुने हैं, जो विशेष सेवा कर रहे हैं। मेरा एक विशेष शुभ संकल्प है कि ये रत्न ऐसी सेवा करें जो इनके चेहरे और हर कर्म द्वारा बाबा की प्रत्यक्षता हो।

फिर जैसे सामने भोग रखा तो दादी बाबा को देख रही थी, बाबा दादी को देख रहे थे। बाबा दादी को भोग स्वीकार कराने लगे, तो कहती है कि मेरी सखियाँ कहाँ हैं! तो बाबा ने एडवान्स पार्टी की सभी सखियों को इमर्ज किया। फिर बाबा ने भोग स्वीकार कराया। सब सखियों को देखते दादी बहुत मुस्कराई और बोली, बाबा, अब तो कमाल हो जायेगा। फिर दादी जी ने सभी दादियों को और सभी भाई-बहनों को याद देते कहा, मधुबन का हर रत्न विशेष रत्न है, यह सब बाप की प्रत्यक्षता का स्वरूप बनें, यही मेरा शुभ संकल्प है। फिर बाबा ने सेवा करने वालों को भी इमर्ज करके कहा कि इन्होंने सेवा से बहुत पुण्य कमाया है। महारथियों की सेवा में जो इनके पुण्य का खाता जमा होता है, भाग्य मिलता है इससे बढ़कर और कोई सेवा नहीं है। दादी तो बहुत डिटैच बैठी थी। मैंने कहा, दादी, कुछ कहना है। तो कहा, बस, सभी सेवा कर रहे हैं ना। ऐसे ही सेवा करते आगे बढ़ते रहें। ऐसे कहते दादी ने सबको बहुत याद दी और मैं वापस आ

गई।

******

दादी शान्तामणि जी के निमित्त भोग तथा वतन का दिव्य सन्देश (मोहिनी बहन)

आज आप सबका यादप्यार लेकर जब वतन में पहुँची तो क्या देखा कि दादी शान्तामणि बाबा को ऐसा पकड़े हुई थी जैसे छोटा बच्चा पकड़ता है और छोड़ता नहीं है। ऐसे बाबा की गोद में समाई हुई थी। तो जैसे मैं पहुँची, बाबा ने देखा और इशारे से पास बुलाया कि आओ बच्चो, आओ। मैं गई तो बाबा ने कहा, देखो बच्चो, कौन आया है? मैंने कहा, दादी, मैं शान्तिवन से आई हूँ, सबकी याद-प्यार लेकर। तो दादी ने बाबा की गोद में ही बैठे ऐसे एक बार देखा और फिर से चिपक गई। फिर मैंने बोला, दादी, मैं बाबा की गोद नहीं लूगी, आप गोद में ही रहना, पर देखो तो सही। फिर दादी ने सिर ऊंचा करके देखा। मैं बोली, दादी, जो भी मधुबन में, शान्तिवन में आये हैं उन सबने आपको बहुत-बहुत याद-प्यार भेजी है, तो दादी सुनती रही और मुस्कराती रही। बाबा ने बोला, बच्ची, बाबा को बहुत याद करते-करते आई है ना, तो अब बाबा को छोड़ना नहीं चाहती है। मैंने कहा दादी, आपको छुड़ाने के लिए थोड़ेही आई हूँ। मैं तो आपसे मिलने आई हूँ, आपको सभी की याद-प्यार देने आई हूँ और आपके लिए यज्ञ का ब्रह्माभोजन लाई हूँ। आप उठो, सबका याद-प्यार स्वीकार करो, यज्ञ का ब्रह्माभोजन स्वीकार करो। दादी, आप यह भी सुनाओ ना, आप बाबा के पास कैसे आ गई? तो दादी ऐसे बैठ गई जैसे बाबा की गोद में ही हो और कहा, अच्छा सबने याद-प्यार भेजा है। तो मैंने कहा, हाँ, सबने याद-प्यार भेजा है। तो बोला कि देखो, मैं मधुबन में होते हुए भी समझती थी, मैं बाबा के पास में हूँ, बाबा की गोद में हूँ। लेकिन कभी-कभी बाबा मुझे छोड़कर चला जाता था, तो मेरे को बहुत अकेलापन लगता था।

फिर मैंने बाबा को कहा, बाबा, सभी कहते हैं, दादियों के शरीर का इतना हिसाब-किताब क्यों? तो बाबा मुसकराये और कहा कि गुड़ जाने, गुड़ की गोधरी जाने। यह बच्चे बाबा के आदि रत्न हैं। इस बच्ची की तो विशेषता यह थी कि इसका सारा का सारा परिवार यज्ञ में आदि से आ गया और सबने खूब सेवा की। लेकिन यह बच्ची सारे परिवार में सबसे न्यारी थी। इस बच्ची में शुरू से शान्ति, धैर्यता और गम्भीरता के संस्कार थे और दूसरी विशेषता इसकी यह थी कि इस बच्ची को कुछ भी कहते थे, तो कहती थी, जी बाबा और सबके साथ प्रेम, प्यार से मिलजुल कर यह बच्ची रही है। कभी भी इस बच्ची की शिकायत, कोई भी कमजोरी बाबा के पास नहीं आई है। जो कहा गया उसको सम्पूर्ण रीति से किया। फिर मैंने पूछा कि बाबा हमने जो पूछा उसका क्या हुआ? तो बाबा ने कहा, देखो यह आदि से अब तक पवित्र आत्मायें हैं, बाकी जो कुछ इनके पिछले जन्मों का हिसाब-किताब है, वह अभी पूरा होता है। लेकिन इन्हें जरा भी शारीरिक दुःख का, अशान्ति का अनुभव ना हो इसलिए बाबा इनको गुम कर देता है। अन्त तक इनका चेहरा देखेंगे शान्त, धैर्यवत् और गम्भीर होता है। कोई भी हिसाब-किताब, बन्धन यह अपने साथ में

लेकर नहीं जाती हैं और यह पवित्र आत्मायें, निमित्त बनी हुई आत्मायें बहुत बड़ा काम करती हैं नई दुनिया की स्थापना में। ये जैसे फाउण्डेशन हैं, जो समय आने वाला है, जो कार्य चलने वाला है उसमें साधारण आत्मायें नहीं चाहिए, उसमें शक्तिशाली सम्पूर्ण पवित्र आत्मायें चाहिए, जो यह कार्य कर सकती हैं। तो जल्दी-जल्दी यह कार्य सम्पन्न हो इसलिए महारथियों को बाबा समय-समय पर भेजता रहता है। इस बच्ची की विशेषता तो सारा यज्ञ जानता है। इस बच्ची ने जो कुछ भी परीक्षा पास की वह हंसते-हंसते पास की। कभी कोई शिकायत नहीं की, कभी यह नहीं कहा कि यह क्या है! एकदम निश्चिन्त। तो बाबा ने इसको एकदम पवित्र बनाके, सारा हिसाब-किताब पूरा कराया। यह नई दुनिया का पिल्लर है। यह ऐसा कार्य करने वाले हैं जो आप अन्त के समय देखेंगे कि यह क्या-क्या कर रहे हैं। इसलिए बाबा ने कहा, गुड़ जाने गुड़ की गोधरी जाने। बच्चे तो सोचेंगे कि दादियों को क्यों इतनी तकलीफ होती है! क्यों इतनी भोगना होती है! यह तो उनकी दृष्टि है, उनकी वृत्ति है, उनकी सोच है लेकिन बाबा जानता है कि बच्चियां यहाँ रहते हुए भी यहाँ के वातावरण से, यहाँ के संकल्प से न्यारी रहती हैं। बाबा की गोद में रहती हैं, बाबा को भूलती नहीं हैं। बाबा अपनी गोद में लेकर सारा हिसाब-किताब यहीं पूरा कराके साथ में ले जाता है। तो बच्ची का भी सारा हिसाब-किताब पूरा हुआ, एकदम 100 परसेन्ट पवित्र और कर्मबन्धन मुक्त, प्रकृतिजीत बच्ची बनके गई है। आप सबने देखा कि प्रकृतिजीत आत्मा थी इसलिए सब तरफ पानी की बरसात थी लेकिन पाण्डव भवन में नहीं थी, श्मशान तक कुछ भी नहीं था। फिर मैंने कहा, दादी, आप कुछ कहेंगी, इतने सारे लोग आये है, सभी ने याद दिया है। तो कहा कि दादी जानकी को मेरी याद देना और कहना, चलो समय पर तो पहुँच गई। उनके द्वारा मेरा शृंगार हुआ, उन्होंने मुझे विदाई दी, कम से कम एक बड़ी दादी तो थी। तो मेरा बहुत-बहुत याद-प्यार देना। मेरी सखियों को भी मेरी याद-प्यार देना। रतनमोहिनी, मुन्नी, निर्मलशान्ता दादी .... ऐसे ऐसे नाम गिना रही थी, सबको हमारी बहुत-बहुत याद प्यार देना। मैंने कहा, शान्तिवन वाले! तो कहा कि शान्तिवन वाले तो अच्छे हैं। मैंने कहा, कुछ कहना है? तो कहा कि थोड़े-थोड़े अलबेले हैं ना, इनको कहो कि समय बहुत थोड़ा है, अभी अलबेलेपन से न्यारे हो जाओ। जो बाबा कहे, जैसा बाबा कहे उस पर अमल करो। हम तो यही चाहते हैं कि यह शान्तिवन जो नाम है, जो बाबा ने मुझे निमित्त बनाया, कम से कम मेरा नाम तो बाला करें। शान्ति तो रखें। ऐसे कह रही थी जैसे बहुत रहम आता हो ना, उस रीति से। फिर कहा कि अस्पताल में भी सबने मेरी बहुत सेवा की। सभी डॉक्टर्स ने, सभी नर्सेज ने बहुत प्यार से मेरी सेवा की, तो दिल से उनके लिए दुआयें निकलती हैं। साथ ही साथ त्रिमूर्ति कुमारियाँ जिन्होंने मुझे प्यार से इतना समय सम्भाला, इतना प्यार से रखा, तो उनको भी बहुत-बहुत याद-प्यार देना और दुआयें देना और कहना, सदा आगे बढ़ती रहें, अभी सदा विश्व सेवा पर तत्पर रहें क्योंकि अभी समय है कमाई करने का। तो यह कमाई करें। मैंने कहा, ट्रेनिंग में आई हुई कुमारियों ने भी आपको याद दी है। ये क्या करेंगी दादी? तो दादी हसती है, कहती है कि एक-एक करके हमारे से सबके लिए पूछ रही हो।

यह कुमारियाँ तो कुमारियाँ है, कुमारियाँ कमाल कर सकती है लेकिन इनके अन्दर दृढ़ता चाहिए। जो भी आज्ञा दी जाए, दृढ़ता से उसका पालन करेंगी तो कमाल करके दिखलायेंगी। तो कुमारियों को मेरी तरफ से कहना, दृढ़ता धारण करके कुछ कमाल करके दिखाना है।

फिर इतने में क्या देखते है कि दादी आ रही है, दादी के पीछे दीदी आ रही है, दीदी के पीछे चन्द्रमणि दादी आ रही है, ऐसे करके 5-6 दादियाँ आ गई और शान्तामणि दादी ऐसे उठकर खड़ी हो गई, जैसे मेरी सखिया आ गई हैं। दादी को कहती है कि दादी मै आ गई हूँ आपके पीछे-पीछे। शुरू से साथ-साथ सेवा की है ना, अभी भी हम साथ-साथ सेवा करेंगे। खूब मिलकर सेवा करेंगे। बाबा को भी देखती है, सखियों को भी देखती है। तो कहा, बाबा, आज मैं अपनी सखियों को देखकर बहुत खुश हुई हूँ। हम सब मिलके यज्ञ का ब्रह्माभोजन करेंगे। बाबा के सामने सुन्दर सजा हुआ थाल रखा हुआ था, तो कहा कि दादी, आप पहले बाबा को खिलाओ। तो दादी मुस्कराई और बाबा को खिलाने लगी तो बाबा ने बोला कि पहले बच्ची को खिलाओ, क्योंकि बच्ची के निमित्त आया है। मैंने कहा, बाबा, दोनों के निमित्त आया है। बाबा ने बोला, पहले बच्ची। पहले आप, पहले आप करते रहे। फिर दादी ने अपने हाथ से बाबा और दादी को खिलाया। फिर तो महफिल जुट गई, आपस में लेन-देन करने लगे, तुम क्या कर रही हो, कहाँ हो, कैसे हो, मैं भी अभी आ गई, आप सबके साथ मिलकर मैं भी सेवा करूंगी, तो दादी ने कहा, फिर चलो मेरे साथ, तो बोली, मैं अभी नहीं जाऊंगी। अभी मैं कुछ दिन बाबा के पास रहूंगी, फिर आपके साथ सेवा में चलूगी। ऐसे कहके बाबा को देखा तो बाबा ने कहा, हाँ बच्ची, तुम कुछ दिन बाबा के पास में रहो।

फिर बाबा सभी दादियों को दृष्टि दे रहा था, दादी ने पूछा कि नीचे सब ठीक-ठाक चल रहा है। ज्ञानसरोवर, पाण्डव भवन, शान्तिवन, हॉस्पिटल सब ठीक है? मैंने कहा, हाँ दादी, सब ठीक है। फिर पूछा, सब पुरुषार्थ कर रहे है? मैंने कहा, दादी, यथा शक्ति, यथा योग सब पुरुषार्थ कर रहे है, सबके अन्दर उमंग-उत्साह बहुत है, सब यह सोचते है कि हम उड़ता पंछी बनके उड़ती कला में उड़ते जल्दी-जल्दी आपके पास आयें, आपसे मिलें, आप सबके साथ मिलके सेवा करें। तो दादी मुस्कराई, दादी ने कहा, सारा काम ऊपर थोड़ेही होगा। आपको नीचे भी ऐसा वातावरण बनाना है, जो ऐसा लगे कि यहाँ रहते हुए भी हम अव्यक्त वतन में हैं। अव्यक्त वतन का अनुभव ऐसा नहीं कि यहाँ आके ही करना है, वहाँ भी करना और कराना है। मेरी सबको बहुत-बहुत दिल के प्यार भरी याद-प्यार देना और कहना कि आप दादी को याद करते हो, तो दादी भी आपको याद करती है और बाबा कभी-कभी सब जगह का चक्कर लगवाता है, मैं देखती हूँ कि क्या पुरुषार्थ करते है, किस बात में अलबेले रहते हैं! कहना कि अलबेला नहीं रहना है। अभी अच्छी तरह से मेहनत करके साथ आना है। अभी बाबा वतन में कब तक इन्तजार करेगा! फिर बाबा ने और सभी दादियों ने सबको याद-प्यार दिया और जैसे बाबा ने सबको इमर्ज किया था वैसे मर्ज कर दिया। फिर बाबा ने मुझे भी दृष्टि देते नीचे भेज दिया।

दादी पुष्पशान्ता

आपका लौकिक नाम गुड्डी मेहतानी था, बाबा से अलौकिक नाम मिला 'पुष्पशान्ता'। बाबा आपको प्यार से गुड्डू कहते थे। आप सिन्धी के नामीगिरामी परिवार से थी। आपने अनेक बंधनों का सामना कर, एकधक से सब कुछ त्याग कर स्वयं को यज्ञ में संपूर्ण रूप से समर्पित किया। आप बहुत ही गम्भीर, शान्तमूर्त, धारणा-स्वरूपा थी। आपमें पालना के विशेष संस्कार थे। शुरू से ट्रांस मैसेन्जर भी रही। मुंबई में कोलावा सेवाकेन्द्र पर रहकर महाराष्ट्र की सेवाओं में अपना योगदान दिया। आप 7 फरवरी, 1983 को पुराना शरीर छोड़ अव्यक्त वतनवासी बनी।

ब्रह्माकुमार भ्राता रमेश शाह जी दादी पुष्पशान्ता के साथ का अनुभव इस प्रकार सुनाते हैं –

ईश्वरीय सेवार्थ प्राण प्यारे ब्रह्मा बाबा ने दादी पुष्पशान्ता जी को पहले अहमदाबाद भेजा था और अहमदाबाद में, मुंबई के एक व्यापारी के निमंत्रण पर दादी पुष्पशान्ता जी और दादी बृजेन्द्रा जी मुंबई गये। मुंबई में दादी पुष्पशान्ता उस व्यापारी के गेस्ट हाऊस में ठहरे हुए थे, वहीं हमने उनको देखा और वहीं हमारा उनके साथ पहली बार संपर्क हुआ। दादी पुष्पशान्ता एक बहुत ही धनवान और प्रतिष्ठित परिवार से संबंधित थी और पाँच बच्चों की माँ भी थी। पहले उनका परिवार योकोहामा (जापान) में रहता था जहाँ उनके पति की समृद्धि इतनी थी कि हरेक बच्चे के लिए आया रखकर बच्चों की पालना होती थी। बाद में जब दादी जी भारत आये तो ईश्वरीय ज्ञान के संपर्क में आये और अपना जीवन ईश्वरीय सेवार्थ समर्पित कर दिया।

बाबा के महावाक्यों पर सौ प्रतिशत विश्वास

सन् 1957 में जब मेरे निमंत्रण को ब्रह्मा बाबा ने स्वीकार किया और ब्रह्मा बाबा मुंबई पधारे तब मैं और मेरा परिवार दादी पुष्पशान्ता के घनिष्ट संपर्क में आए। ब्रह्मा बाबा और मातेश्वरी जी के रहने के लिए योग्य प्रबंध ढूँढने में उन्होंने मेरी बहुत सहायता की। दादी जी बाबा के महावाक्यों में सौ प्रतिशत विश्वास रखती थी। जब बाबा-मम्मा के रहने के लिए मकान किराये पर लेना था तब मैंने कहा कि मकान साढ़े चार मास के लिए किराये पर ले लेते है पर दादी ने कहा कि नहीं, बाबा ने कहा है कि चार महीने के लिए लेना

है। तब मैंने दादी जी को अपने विचार सुनाये, तब दादी पुष्पशान्ता मेरे विचार से सहमत हुई और फिर हमने साढ़े चार मास के लिए मकान किराये पर लिया। बाद में यह 15 दिन की अतिरिक्त अवधि कारोबार में बहुत ही मददगार बनी।

ईमानदारी सीखी

उन दिनों मैं पुष्पशांता दादी जी की ईमानदारी से बहुत प्रभावित हुआ। मैंने दादी पुष्पशान्ता को कहा कि बाबा-मम्मा मेरे निमत्रण पर मुंबई आए हैं तो मेरी जिम्मेवारी है कि मैं बाबा-मम्मा के माउंट आबू से आने, यहाँ रहने और वापस आबू जाने का खर्च वहन करूँ इसलिए आप इस खर्च के लिए समय प्रति समय मुझे बतायें तो मैं आपको सहयोग देता रहूँगा। दादी पुष्पशान्ता ने ईमानदारी से कहा कि नहीं रमेश, जिन्होंने भी बाबा-मम्मा के यहाँ आने, रहने के खर्च के लिए धन का सहयोग दिया है, मैं वह धन मम्मा-बाबा के यहाँ रहने के खर्च में ही उपयोग करूँगी। आपसे मैं जितनी जरूरत पड़ेगी, उतना ही धन लूँगी। तब मैंने दादी को कहा कि ऐसी कोई बात नहीं, मम्मा-बाबा के लिए जो धन आपको मिले, आप उसे इकट्ठा करना और वह मधुबन भेज देना। अभी आप मेरे से पूरा ही धन का सहयोग लीजिए तब भी दादी ने मेरी बात नहीं मानी और कहा कि नहीं रमेश, जो भी धन मिलता है वो मैं यहाँ ही खर्च करूँगी, बाद में ही मैं आपसे खर्च के लिए धन मांगूँगी। दादी जी की इस बात के आधार पर मैंने ,यज्ञ कारोबार तथा ईश्वरीय सेवा में ईमानदारी क्या चीज है और मम्मा-बाबा को ईमानदार बच्चे कितने प्यारे हैं, यह बात जानी और सीखी। तब से अपने लौकिक और ईश्वरीय कारोबार दोनों में संपूर्ण ईमानदारी से दादी पुष्पशान्ता को फॉलो करता आ रहा हूँ। इस प्रकार ईमानदारी का गुण मुझे दादी पुष्पशान्ता से सीखने को मिला।

विचार सागर मंथन की शिक्षा

बाद में उनके लौकिक रिश्तेदारों द्वारा कोलाबा का फ्लैट मिला और परिणामरूप गामदेवी सेन्टर से कोलाबा सेवाकेन्द्र खुला और दादी पुष्पशान्ता कोलाबा सेन्टर की मुख्य संचालिका बन गई। दादी जी ने मेरे से वचन लिया कि मैं हर रविवार को कोलाबा सेन्टर पर क्लास कराऊँगा और ज्ञान के विचार सागर मंथन से सबको लाभान्वित करूँगा। इस प्रकार विचार सागर मंथन करने की शिक्षा भी मुझे दादी पुष्पशान्ता से मिली और इसी बात के आधार पर दादी जी ने मुझसे वचन लिया कि मैं हर मास एक लेख ज्ञानामृत में लिखने का प्रयत्न करूँ और यह वचन मैं आज तक पालन कर रहा हूँ।

दादी जी की तबीयत ठीक नहीं रहती थी। उनको दिल का दौरा पड़ता था। दादी प्रकाशमणि जी ने, उनको आराम मिले, इस दृष्टिकोण से दादी बृजेन्द्रा को महाराष्ट्र जोन की मुख्य संचालिका नियुक्त किया, तब तक दादी पुष्पशान्ता ने मुख्य संचालिका के रूप में महाराष्ट्र में ईश्वरीय सेवा का कारोबार बहुत ही अच्छी तरह से संभाला था।

इच्छा-मृत्यु

दादी जी से बहुत-सी बातें सीखने को मिली परंतु उनमें से एक बात जो मुझे बहुत ही अच्छी लगती है, वह है उनका अपने पर नियंत्रण। शास्त्रों में तो हमने

पढ़ा था कि महाभारत में भीष्म पितामह को इच्छा-मृत्यु का वरदान प्राप्त था परंतु इच्छा-मृत्यु क्या है और स्वेच्छा से कोई कैसे शरीर छोड़ सकता है, उसका मेरे पास कोई सबूत नहीं था।

दादी जी के अंतिम समय पर एक रात उन्हें फिर से दिल में दर्द हुआ और इसलिए हमारी बड़ी बहन ने उन्हें अस्पताल में एडमिट कराया। दादी जी ने मना किया कि मुझे अस्पताल नहीं भेजो, यहाँ सेन्टर पर ही शरीर छोड़ना है परंतु सभी डॉक्टर्स के कहने पर रात को दादी मुंबई अस्पताल में एडमिट हो गये। दूसरे दिन सुबह दादी जी ने स्नान-पानी किया, मुरली सुनी और अपनी साथी मोहिनी बहन से पूछा कि घड़ी में कितना समय हुआ है। उन्होंने कहा, 7.45 बजा है तो दादी पुष्पशान्ता ने मोहिनी बहन को अस्पताल के सभी डॉक्टर्स की सेवा के लिए भेजा कि उनको कहो कि दादी पुष्पशान्ता 8.30 बजे शरीर छोड़ेगी। मोहिनी बहन सभी को यह समाचार सुनाकर 8.15 बजे वापस आई तो दादी जी ने कहा, अभी भी 10 मिनट बाकी हैं, अन्य सभी की भी सेवा करो, 10 मिनट बाद मेरे पास आना। इसके बाद सुबह 8.25 बजे मोहिनी बहन तथा अस्पताल के सभी मुख्य डॉक्टर्स हाजिर हो गये। दादी जी ने गीत बजवाया और जैसे गीत के स्वर के आधार पर संदेशी वतन में जाती है, वैसे ही गीत के स्वर पर इच्छा-मृत्यु के बल के आधार से दादी जी ने अपनी देह का त्याग किया। अस्पताल के स्टाफ सदस्य दादी की इस इच्छा-मृत्यु को देख आश्चर्य में पड़ गये और उन्हें अनुभव हुआ कि कैसे एक राजयोगी आत्मा इच्छा-शक्ति के आधार पर शरीर छोड़ती है।

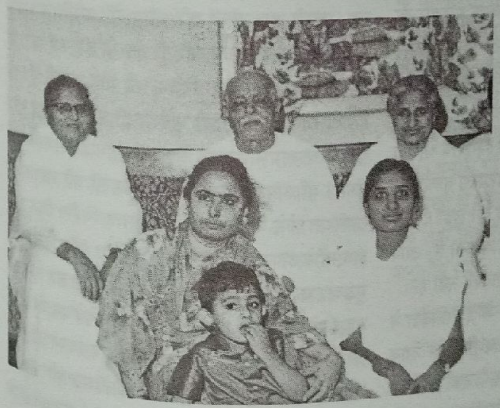

दादी पुष्पशान्ता, बाबा और दादी प्रकाशमणि जी

धन से धारणाओं का निर्माण

दादी पुष्पशान्ता को शरीर निर्वाह अर्थ पैसे एवं कपड़े लौकिक रिश्तेदारों से मिलते थे और दादी निर्मलशान्ता दादी, जो ब्रह्मा बाबा की लौकिक सुपुत्री हैं, को भी अपने लौकिक भाई नारायण दादा से धन आदि का संपूर्ण सहयोग मिलता था। मैंने ब्रह्मा बाबा से पूछा कि अपने लौकिक रिश्तेदारों से धन, कपड़े आदि का सहयोग एक समर्पित ब्रह्माकुमारी बहन कैसे और कहाँ तक ले सकती है? मैंने यह भी ब्रह्मा बाबा को बताया कि दोनों दादियों की इच्छा यही है कि इसी बहाने उनके लौकिक का धन सफल हो

और वे अलौकिक कारोबार में सदा मददगार बने रहें। तब ब्रह्मा बाबा ने मुझसे पूछा, बताओ, तुम्हारी मत के मुताबिक अपने लौकिक का धन कौन इस्तेमाल कर सकता है और कौन नहीं? मैंने कहा, दादी निर्मलशान्ता का भाई नारायण तो बाबा का बच्चा है ही इसलिए दादी निर्मलशान्ता अपने लौकिक भाई से मिले धन का उपयोग कर सकती है परंतु दादी पुष्पशान्ता के रिश्तेदार तो ईश्वरीय परिवार के सदस्य नहीं है इसलिए उनसे धन का सहयोग दादी पुष्पशान्ता नहीं ले सकती। तब ब्रह्मा बाबा ने मुझे एक बहुत ही गुह्य रहस्य बताया कि आत्माओं के दृष्टिकोण से आपका जवाब सही है परन्तु बाप तो त्रिकालदर्शी है और त्रिकालदर्शी बाप की श्रीमत के आधार पर ही दोनों बच्चियाँ लौकिक के धन और कपड़े का उपयोग अपने लिए कर रही हैं। उसमें भी बाबा ने पुष्पशान्ता बच्ची को खास छूट दी है क्योंकि आगे चलकर दादी के इस प्रकार के धन के उपयोग के आधार पर उनके लौकिक परिवार के मन में ईश्वरीय सेवा करने की प्रबल इच्छा उत्पन्न होगी और यज्ञ-सेवा में उनके परिवार का बहुत ही सुन्दर सहयोग मिलेगा। पुष्पशान्ता बच्ची के लौकिक के धन के सहयोग से उनके परिवार में ईश्वरीय धारणा बढ़े, इसलिए त्रिकालदर्शी बाप ने पुष्पशान्ता बच्ची को धन से धारणा बढ़ाने का प्रयोग करने की छुट्टी दी है। यह प्रयोग करने की छुट्टी बाप ही दे सकता है, आप बच्चे नहीं क्योंकि आप बच्चे त्रिकालदर्शी नहीं हो।

ब्रह्मा बाबा के द्वारा शिवबाबा के इस निर्देश ने आगे चलकर इतना महत्त्वपूर्ण पार्ट बजाया कि आबू के ग्लोबल हॉस्पिटल आदि के लिए उनकी बेटी के ससुराल वाडूमल परिवार द्वारा सहयोग दिया गया और आज यह हॉस्पिटल एक वटवृक्ष की तरह अनेक आत्माओं की सेवा कर रहा है और इसका कारोबार आगे बढ़ता ही जा रहा है। इस प्रकार दादी पुष्पशान्ता द्वारा, धन से परिवार की धारणायें कैसे बढ़ सकती है, सीखने को मिला और इसी बात के आधार पर मैंने पवित्र धन के नाम से अनेक लेख लिखे।

ऐसी हमारी दादी पुष्पशान्ता को मैं 'हमारे पूर्वज' किताब के अंदर इस लेख के माध्यम से अपनी श्रद्धांजली अर्पित करता हूँ।

******

दादी पुष्पशान्ता की चौथे नंबर की संतान (सुपुत्री) **'माता विष्णु प्रिया'** के नाम से अपने मठ में जानी जाती हैं। वे अपनी माता पुष्पशान्ता के प्रति हार्दिक भावनायें इस प्रकार व्यक्त करती हैं –

पीछे मुड़कर कभी भी नहीं देखा

आज 80 साल की आयु में, स्मृति को उस समय की ओर ले जा रही हूँ जब मैं छह वर्ष की थी और उस भविष्यसूचक दिवस को याद करती हूँ जब हमारी परमप्रिय माँ दादी पुष्पशान्ता ने घर छोड़ा था। दोपहर के लगभग 3 बजे थे, सूर्य आग उगल रहा था। हमारी माँ अपनी दैनिक ओम मण्डली की क्लास में उपस्थित होने के लिये गई। यही वह विशेष दिन था, जब माँ ने अपना घर-संसार छोड़ दिया और फिर पीछे मुड़कर कभी भी नहीं देखा। उन्होंने अपना यह फैसला बहुत सोच-विचार कर और आत्म-विवेचन के बाद लिया था। निश्चित रूप से उस अन्जान स्थान पर चले जाना आसान नहीं रहा होगा। उन्होंने घर और बच्चों पर अपने को पूर्णत: समर्पित किया था; उनको पीछे

छोड़ना, जिन्हें उन्होंने जाना और प्यार किया, निश्चित रूप से बहुत कठिन और वेदना से परिपूर्ण रहा होगा। उन्हें इस प्यार के बंधन को, दिल की तार से झटके से खींचना पड़ा होगा। पांच छोटे बच्चों को भगवान् के भरोसे छोड़ना, जिनकी आयु 12, 8, 7, 6 और 3 थी, कोई मज़ाक नहीं था।

सारा विश्वास सर्वशक्तिवान पर कायम रखा

उन्होंने बाद में मुझे बताया, उन्होंने यह तर्क दिया था कि यदि उनकी मृत्यु हो जाती तो निश्चित रूप से भगवान् ही उनके बच्चों की देखभाल करेंगे और उस स्थिति में हरेक को अपनी नियति का पालन करना होता है। अत: उन्होंने अपना सारा विश्वास सर्वशक्तिवान पर कायम रखा, और उस 'अज्ञात मार्ग' पर कूद पड़ीं। भगवान ने उन्हें बुलाया था, उन्होंने वह पुकार सुन ली थी, इसलिये उन्हें तो जाना ही था। हम चार छोटे बच्चे (सबसे बड़े भाई की पालना जापान में हो रही थी) – माँ से लिपटे हुए उनकी साड़ी खींचते रहे; हम नहीं चाहते थे कि वह हमें छोड़ कर जाये। हम सबमें सबसे छोटी, सती, जो तीन साल की थी, बहुत ज़ोर से रोई और उसने अपनी नन्हीं बाँहें उनकी ओर कर दीं। परन्तु, माँ ने हल्के से अपने आपको उसकी नन्ही बांहो से बन्धनमुक्त किया, जिनसे उसने कसके पकड़ा हुआ था, फिर तेजी से सीढ़ी उतर कर नीचे सड़क पर चली गईं और हमारी नजरों से ओझल हो गईं। वह वर्ष 1938-39 था। बहुत साल बाद, माँ ने मुझे बताया कि उस नन्ही सती का जोर से रोना उनके कानों में बार-बार गूजता रहा और उनको उस भविष्यसूचक दिन को भूलने में तीन साल लगे। एक ममतामयी माँ के लिये उसके बच्चों को छोड़ना कोई मज़ाक नहीं था परन्तु उन्हे मजबूरन ऐसा करना पड़ा। वह हमको अपने साथ ओम मण्डली में रखना चाहती थी परन्तु पिता जी सबको वापस ले आए। इस प्रकार लौकिक जीवन से मरकर ब्रह्माकुमारी दादी पुष्पशान्ता के रूप में उन्होंने पुनर्जन्म लिया। उनकी हिम्मत और सामर्थ्य को मेरा सादर नमन।

सत्रह वर्षों तक सम्पर्क नहीं हुआ

माँ ने यज्ञ-भट्ठी के आरम्भ के वर्ष बाबा के निरीक्षण और मार्गदर्शन में, आध्यात्मिक अनुशासन का अभ्यास करते हुए बिताये। सत्रह वर्षों के लम्बे काल तक, हमारी माँ और हमारे बीच कोई सम्पर्क नहीं हुआ। इस बीच, हम बच्चे बड़े हो गये थे और अपनी धनी जीवनशैली – पूर्वी और पश्चिमी संस्कृतियों के सम्मिश्रण में अच्छी तरह रम चुके थे।

फिर वह समय आया जब बाबा ने हमारी माँ को बॉम्बे के कोलाबा क्षेत्र में पहला सेवाकेन्द्र खोलने के लिये भेजा। मैं उनकी वो पहली सन्तान थी, जो अपने परिवार (ससुराल) के सदस्यों सहित उनके सम्पर्क में आई। हमारी माँ और मैं एक ही लिफ्ट में एक-दूसरे के सामने थे और दोनों ने एक-दूसरे को पहचाना नहीं जब तक कि मैंने परिचय नहीं कराया। यह काफी नाटकीय था।

आन्तरिक अच्छाई और स्नेही स्वभाव

मेरे वाडूमल परिवार ने माँ को बड़े विशाल दिल के साथ प्यार किया। बड़े गर्व के साथ मुझे याद है, हमारे साथ-साथ, जो कोई भी उनके सम्पर्क में आया

उसे उनसे तुरन्त ही स्नेह हो गया और बड़े आकर्षण के साथ उनकी ओर खिचा चला आया। उनकी आन्तरिक अच्छाई और स्नेही स्वभाव प्रशसनीय थे। सदा मुस्कराती हुई वे सभी को अपने आकर्षण मे बाँध लेती थी, एक सच्ची स्वाभाविक दाता के गुण थे उनमे। जब मैने उनके गुज़र जाने की खबर सुनी, तब मैने हर किसी को यह कहते हुए सुना कि दादी ने हमे बहुत प्यार दिया था।

उच्च विचार भरे

मुझे एक स्नेही, ध्यान रखने वाली माँ के रूप मे भी उनकी याद आती है। वह हम बच्चो की हर बात पर विशेष ध्यान देती थी। वह एक शानदार कुक (खाना पकाने वाली) थी। वह हमे चुनिदा भोजन खिलाती थीं। एक महान अनुशासक के रूप मे उन्होंने हमे अच्छी आदतें और आचरण सिखाये। उन्होंने हममे उच्च विचार भरे थे, जिनसे बाद मे हमे अपनी ज़िन्दगियों को आकार देने में सहायता हुई। एक असाधारण व्यक्ति के रूप मे उन्होंने हम सब बच्चो पर अविस्मरणीय छाप छोड़ी।

विलासिता की गोद में भी शून्यता का अहसास

उन्होंने एक धनवान घर में एक सुखपूर्ण जीवन जीया था। उन्होंने अपना ज़्यादा समय जापान में बिताया जहाँ मेरे दो बड़े भाइयों का और मेरा भी जन्म हुआ था। हमारी एक आया थी जो जापान में हमारा ध्यान रखती थी – यह कुछ ऐसा था जो उन दिनों मे आसामान्य था। विलासिता की गोद में रहने के बावजूद, माँ ने एक बार मुझे बताया कि उन्हें उनके भीतर एक महान शून्यता की महसूसता उस समय से अनुभव हो रही थी, जब वे अपने पैतृक घर मे थी और यह शून्यता भौतिक पदार्थों से भरी नही जा सकी। घर मे सबसे बड़ी सन्तान होने के कारण, उनके अभिभावकों और भाई-बहनों की देखभाल की ज़िम्मेदारी उनके नाज़ुक कन्धो पर आ गई थी। आतरिक भूख के कारण, वह अपना कुछ समय निकालकर शास्त्रो और धर्मग्रन्थों का गहन अर्थ समझने मे लग गई और अपने आपको भक्ति से सराबोर कर दिया। फिर भी उन्हे किसी विशेष बात की कमी महसूस होती ही रही; उन्होंने मुझे बताया कि उन्हें भक्ति से अधिक किसी और चीज़ की आवश्यकता थी, जो उन्हे बाद में निराकार शिव परमात्मा द्वारा प्रचुर मात्रा में मिल गई। यह तब की बात है, जब उन्होंने अन्ततः अपने आपको भरपूर अनुभव कर लिया था। अवश्य ही यही उनके लिये आदेश था।

माँ अपनी सर्व बहनों को यज्ञ में ले आईं। परन्तु वह जो अन्त समय तक माँ के साथ रहीं, जो 13 वर्ष की अल्प आयु मे इस मार्ग में माँ के साथ जुड़ गई, वह बाल ब्रह्मचारिणी हमारी मौसी दादी आत्म मोहिनी थी। जब कोलाबा सेवाकेन्द्र आरम्भ हुआ, हम बच्चे हमारी माँ और मौसी से मिलने जाया करते थे।

बाबा अपने हाथों से खिलाते थे

उन दिनों (ओम मण्डली के समय) मै छः साल की एक नन्हीं लड़की थी; माँ ने मेरा दाखिला बाल निवास में करवा दिया था, जहाँ मैं अन्य आश्रम निवासियों के साथ रहने लगी। मुझे याद है, बाबा प्यार से मुझे अपनी गोदी में ले लेते थे या स्वयं अपने हाथों

से मुझे खिलाते थे। कुछ समय बाद, जब हम अपनी आँखें खोलते थे तब बाबा पूछते थे कि हमने क्या देखा था। इस पर मेरा स्थिर रूप से जवाब होता था – 'मैंने श्रीकृष्ण को देखा।' तब बाबा ने भविष्यवाणी की और माँ को बताया – 'तुम्हारी इस बच्ची का बहुत अनोखा पार्ट रहेगा।'

ऋषि-मुनियों की कहानियाँ सुनाती थी

माँ अपनी शादी होने से पहले से ही काफी आध्यात्मिक थीं, अतः यह स्वाभाविक था कि वह यह चाहती थी कि हम भी उन महापुरुषों के गुणों और विशेषताओं को धारण करें जिनके महान् कर्मों से हमारे धर्म-शास्त्र भरे पड़े है। वह हमे महाभारत, रामायण और श्रीमद्भागवत से सन्त, ऋषि-मुनियों की कहानियाँ सुनाया करती थीं, विशेष रूप से रानी मदालसा की जिन्होंने अपने राजकुमार-पुत्रों में त्याग के संस्कार भरे थे। इन बातों ने निश्चित तौर पर, हमारे पहले से ही ग्रहणशील मन पर एक भिन्न छाप छोड़ दी थी।

जब मैंने वादूमल हाउस छोड़ा और श्रीकृष्ण की नगरी वृन्दावन में गई, तो माँ ने सबसे अधिक मिलनसारिता के साथ मुझे कोलाबा सेन्टर पर रहने के लिये स्थान दिया (बालकनी में एक पलंग) ताकि मेरे बॉम्बे आगमन के दौरान मुझे मेरे लौकिक परिवार वालों के पास जाने की आवश्यकता महसूस न हो।

योग्य और माननीय आत्मा

यह हम बच्चों के लिये विशेष बात थी कि हमारी माँ को इतना सम्मान मिला और वह पहली आठ दादियों में से एक थीं जो बाबा और मम्मा के पास आईं थीं। वह सचमुच में भरपूरता के साथ सबसे अधिक योग्य और माननीय आत्मा थी जिनका सबसे अधिक अभिनन्दन हुआ। वह वास्तव में एक महान् आत्मा थी, जो शिव बाबा के प्यार के प्रति लालायित होकर अन्य आत्माओं को ज्ञानवान बनाने और उनका मार्गदर्शन करने आई थी।

मै हमारी माँ दादी पुष्पशान्ता जी को अपने हृदय से अभिवादन और श्रद्धांजलि अर्पित करती हूँ। हम इस धरती पर उन्हे अपनी माँ के रूप में पाकर धन्य-धन्य हो गये।

******

ब्रह्माकुमारी मोहिनी बहन (कोलाबा) जो छह साल दादी पुष्पशान्ता के साथ रहीं, उनके साथ का अनुभव इस प्रकार सुनाती है –

प्रदर्शनी के चित्रों को ट्रांस में देखा

दादी जी पाँच बहनें थी – पुष्पशान्ता, आत्ममोहिनी, केवल, कोयल, धनी। इनमे से दादी पुष्पशान्ता तथा आत्ममोहिनी यज्ञ मे समर्पित हुई। दादी जब यज्ञ में आई तो बच्चों को साथ लेकर आई लेकिन पति बच्चों को वापस ले गया। पति ने दूसरी शादी कर ली। पति ने कहा, तुम्हे जो कुछ चाहिए, ले जाओ परंतु दादी ने कुछ नही लिया, गले में पहनी सोने की चेन भी निकाल कर दे दी। एकधक से त्याग कर दिया। माता होने के कारण दादी में पालना के संस्कार बहुत थे। उम्र में बड़ी और अनुभवी होने के कारण छोटी बहनों को पालना देने में नंबरवन थी। दादी चारों धारणाओं को युक्ति से पक्का करवाती थी। उनमे भी विशेष पवित्रता की धारणा पर अटेन्शन खिचवाती थी।

कुछ समय मुंबई वाटरलू मेन्शन में रही फिर कोलाबा सेन्टर खुला तो वहाँ जाकर रही। कोलाबा सेन्टर का फिर आगे विस्तार किया जिससे कल्याण, मुलुड, दहिसर आदि सेन्टर खुले। सन् 1970 में जब पहली प्रदर्शनी 'विश्व नवनिर्माण प्रदर्शनी' बनी, उस समय दादी कोलाबा सेन्टर पर थी। दादी ट्रांस में जाकर सारे चित्र देखकर आई और उस आधार पर प्रदर्शनी के सारे चित्र बने। जन्माष्टमी पर दादी के तन में कृष्ण की आत्मा का पार्ट चलता था।

पालना देने का विशेष संस्कार

दादी साधारण आत्मा में भी उमंग-उत्साह भरकर योग्य बना देती थी। योग्य आत्मा को और भी योग्य बना देती थी। परखने की शक्ति जबर्दस्त थी। आलराउंडर सेवाधारी थी। जिन आत्माओं को दादी ने पालना दी, उन्हें भी आलराउण्डर बनाया। दादी का सरल स्वभाव था। छोटे, बड़े, युवा सबको कैसे चलाना है, यह कला दादी में थी। मुंबई का पुराना कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं जिसने दादी की पालना न ली हो। चंद्रिका बहन, महादेव नगर (अहमदाबाद) वेदान्ती बहन (अफ्रीका), हेमलता बहन (ट्रिनिडाड), सुषमा बहन (जामनगर) जैसी कुमारियों को पालना देकर दादी ने सेवा के क्षेत्र में उतारा और आज ये बहनें ब्राह्मण परिवार में नक्षत्र की न्यायी चमक रही हैं। निर्वैर भाई, रमेश भाई, डॉ. निर्मला बहन, शीलू बहन – इन अमूल्य रत्नों ने भी दादी से पालना ली है।

देने में दिलदार

दादी जी के पाँच बच्चे थे जिनमें दो लड़कियाँ और तीन लड़के थे। एक लड़की संन्यासिनी बन गई। दादी के दामाद खूबा वाटूमल को दादी के प्रति बहुत भावना थी। उन्हीं ने दादी की याद में माउंट आबू के ग्लोबल हॉस्पिटल का निर्माण कराया। दादी के बेटे और दामाद ने मिलकर कोलाबा में सेन्टर खुलवाया। दादी को हार्ट की तकलीफ थी। उन्होंने 7 फरवरी, 1983 को मुंबई में पुरानी देह त्याग की, उस समय माउंट आबू में पहली अंतर्राष्ट्रीय कांफ्रेंस चल रही थी। जब दादी ने शरीर छोड़ा तो अलमारी में सिर्फ 8 साड़ी और एक जोड़ी चप्पल थी। दूसरों को देने में दिलदार थी परंतु खुद के लिए कभी कुछ नहीं रखा।

******

मुलुण्ड सेवाकेन्द्र की संचालिका **ब्र.कु. गोदावरी बहन** जो सन् 1958 में दादी जी के संपर्क में आई और उनसे पालना ली, दादी जी की विशेषताएं इस प्रकार सुनाती हैं –

समर्पित कराने के निमित्त

आदरणीया पुष्पशान्ता दादी जी हमारे लौकिक घर में सप्ताह में तीन बार क्लास कराने आती थी। उस समय हमें बाबा की तथा यज्ञ इतिहास की बातें सुनाती थी। लौकिक घर के कुछ सदस्य इतना समझते नहीं थे। दादी जी और बाबा की प्रेरणा से जब हमें ट्रांस का पार्ट मिला तो धीरे-धीरे सारे घर का वायुमण्डल परिवर्तित होने लगा। घर के सभी सदस्यों को ऐसी अलौकिक शक्ति प्राप्त हुई जो निश्चयबुद्धि बनकर हमें इस यज्ञ में समर्पित कर दिया।

दादी जी हमेशा कहती थी कि योगबल के द्वारा ही संपूर्ण विजयी बनना है और मौन की भाषा से कर्मबंधनों से निर्बन्धन बनना है। दादी जी द्वारा दी गई

ऐसी अनेकानेक सूक्ष्म शिक्षाओं ने हमें लौकिक स्वभाव-संस्कार, संबंध-संपर्क परिवर्तित करने में बहुत मदद की।

सदा आगे बढ़ाया

दादी जी की सरलता, सहयोग, स्नेह, बाबा के समीप ले जाने की उत्कंठा ने ही हमें बाबा के समीप लाया। उन्होंने ही बाबा से हमें मिलाया। हम ज्ञानमार्ग में आगे बढ़ते रहें, उसके लिए दादी जी ने दिन-रात सहयोग दिया। हर पल, हर घड़ी दादी जी चाहती थी कि चारों ही विषयों में इस आत्मा को मैं बहुत ही आगे बढ़ाऊँ जो बाबा का नाम बाला करे। सेवा के हर कार्य में तथा मनसा, वाचा, कर्मणा से आगे बढ़ाने में अग्रसर रहती थी। ईश्वरीय नियमों की पालना में भी दादी जी हमें निश्चयबुद्धि बनाकर आगे बढ़ाती रही।

दुआओं का सहयोग

दादी जी सिखाती थी कि आने वाली आत्माओं को बाबा का परिचय देकर कैसे उनकी पालना करनी चाहिए। जब ब्रह्मा बाबा मुंबई में आये तो दादी जी ने ब्रह्मा बाबा से हमारा परिचय कराया। ब्रह्मा बाबा ने दृष्टि दी और कहा कि कल्प पहले वाली बिछुड़ी हुई बच्ची है, सेवा में और योगशक्ति में बहुत ही आगे बढ़ेगी। उस समय बाबा ने हमें विजयी भव का वरदान दिया। वह दिन और आज की घड़ी दादी पुष्पशान्ता जी का आत्मीय प्यार, अलौकिक स्नेह, साथ में ब्रह्मा बाबा का अनमोल दिल व जान का प्यार, दुलार और वरदानों की दृष्टि मैं कभी भी भूल नहीं सकती। दादी पुष्पशान्ता का साथ जीवन में अधिक मिलने से लगता है कि जैसे मेरे भाग्य का सितारा जग गया। उनकी सूक्ष्म दुआयें, स्नेह और सहयोग का साथ और शक्तियों का हाथ अभी तक भी अनुभव होता है। उनकी दुआओं से लगता है कि मैं दिन दुगुना, रात चौगुना ईश्वरीय यज्ञ में आगे बढ़ती जा रही हूँ।

******

जामनगर से **ब्र.कु. सुषमा बहन** दादी पुष्पशान्ता के बारे में लिखती हैं –

मैं दादी जी के साथ मुंबई में चार साल सेवासाथी बनकर रही। दादी जी अपने लौकिक जीवन के बारे में कई बार सुनाती थी – 'मैं अपने बच्चों को रुई में लपेट कर रखती थी, सिले हुए कपड़े भी नहीं पहनाती थी इसलिए कि कहीं सिलाई बच्चों को चुभ न जाये। घर में बहुत पैसा था।'

बचत का संस्कार

एक बार दादी जी की एक बहू जापान से खास दादी जी से मिलने आई थी। उसके मन में यह प्रश्न था कि इतनी अमीर घर की मेरी सास, इतनी अमीरी को छोड़कर क्यों इतनी त्यागमूर्त बन गई। वह कोलाबा सेन्टर पर आई, एक थाली में पूजा की सामग्री रखकर उसने दादी जी की पूजा की। दादी जी से मिलकर वह बहुत खुश हुई और उसे अपने प्रश्न का जवाब भी मिला।

जिन दिनों मैं वहाँ थी, तब दादी पुष्पशान्ता कंप्लीट बेडरेस्ट में थी। अमृतवेले का गीत बजाने की मेरी ड्यूटी थी। गीत बजाकर मैं दादी के कमरे का दरवाजा थोड़ा बंद-सा कर देती थी ताकि दादी की नींद डिस्टर्ब ना हो लेकिन दादी मना करती थी और बेड रेस्ट में होते भी अमृतवेला अवश्य करती थी। बीमारी में भी

क्लास रूम में बैठकर प्रतिदिन मुरली भी सुनती थी और सप्ताह में एक बार मुरली भी अवश्य सुनाती थी। यज्ञ की बहुत बचत करती थी। अरबपति घर की होते भी दादी अपने लिए व्यक्तिगत कभी कुछ नहीं रखती थी।

धर्मराज की सजा से मुक्त

सिखाने का बहुत शौक था। टोली बनाना, खाना बनाना, यह सब मुझे सिखाया। मेरी कोई बात चित्त पर नहीं रखी। इशारा देती थी और फिर नॉर्मल हो जाती थी। दिसंबर 1981 मे दादी जी के साथ पार्टी लेकर मैं मधुबन आई थी, तब मेडिटेशन हॉल में, व्यक्तिगत मुलाकात में बाबा ने उनसे कहा था, 'बच्ची, तुम्हारा सारा कर्मों का हिसाब-किताब पूरा हो चुका है, अब तुम्हें धर्मराज की सज़ा नहीं मिलेगी।'

******

महादेवनगर, अहमदाबाद सबजोन की निमित्त संचालिका ब्र.कु. चन्द्रिका बहन दादी जी के साथ बिताए अनमोल पलो को याद करते हुए कहती हैं –

दादी का बाबा में अटूट निश्चय था। ससुराल में उनको संभालने के लिए 7-8 नौकरानियाँ रहा करती थी। लौकिक जीवन में इतने धनी परिवार की होते हुए भी यज्ञ में जीवन समर्पित करने के बाद उन्होंने बहुत साधारण जीवन व्यतीत किया। मैं सन् 1969 से 1973 तक दादी पुष्पशांता जी के साथ रही हूँ। उस समय वे 78 वर्ष की थी। दादी जी का मुझमे बहुत विश्वास था और मेरा भी दादी जी के प्रति बहुत श्रद्धाभाव था जिस कारण दादी जी ने मुझे अपने साथ अपनी पर्सनल सेवा में रखा हुआ था। दादी जी की दिनचर्या बहुत नियमित और योगी जीवन के अनुकूल थी।

भोजन बनाने-खिलाने में रुचि

दादी जी को कैंसर, डायबिटीज, बी.पी., हृदयरोग, टी.बी. आदि कई तकलीफें थीं। फिर भी कभी उनके मुख से बीमारी का वर्णन नहीं सुना और न ही चेहरे से कभी दुख की फीलिंग महसूस हुई। उन्हें कई प्रकार की ट्रीटमेंट लेनी पड़ती थी लेकिन फिर भी ब्रह्ममुहूर्त में ठीक 3.30 बजे उठती थी और बाबा के साथ अपनी लगन लगाती थी। दादी जी का सभी को पालना देने का ढंग बड़ा निराला था। वे छोटे-बड़े सभी को अपनी बाजू में बिठाकर, हाल-चाल पूछती थी। बाबा के घर का भोजन, नाश्ता, टोली बड़े प्यार से खिलाती थी। बड़ी उम्र की होते भी दादी भोजन बनाने में, बाबा को नया-नया भोग बनाकर खिलाने में रुचि लेती थी।

सन्देश पुत्री

यज्ञ स्थापना के कार्य मे कई प्रकार की मुसीबतों को झेलते हुए भी आपका परमात्म निश्चय और सेवा-भावना अविरत रूप से चालू रहे। आप महाराष्ट्र जोन की जोन इंचार्ज दादी थी। आपके साथ होने के नाते आपकी सारी पोस्ट लिखने का सौभाग्य मुझे मिला था। आप संदेश-पुत्री भी थी। बाबा को भोग लगाना, दिव्य संदेश ले आना और ईश्वरीय सेवा कार्यों के प्रति स्पष्ट मार्गदर्शन देना – यह आपका विशेष पार्ट रहा। मुंबई के कोलाबा एरिया में रेडियो क्लब के पास गीतांजलि बिल्डिंग में सेवाकेन्द्र था, जो 'गेटवे ऑफ इंडिया' से बिल्कुल पैदल की दूरी पर ही था। दादी हमें पैम्फलेट देकर गेटवे ऑफ इंडिया पर सेवार्थ भेजती

थी। वैसे दादी बहुत कम और आवश्यकता प्रमाण ही बोलती थी।

विशेष स्नेह और विश्वास

मेरे व्यक्तिगत जीवन की दादी के साथ की एक घटना अविस्मरणीय है। मुंबई मे रहते, समुद्र की हवा ने धीरे-धीरे मेरे स्वास्थ्य को खराब असर पहुँचाया और स्किन एलर्जी, दमा, कान में पस आदि बहुत तकलीफे होने लगी। काफी इलाज और दवाइयों के बावजूद भी कोई असर नहीं हो रहा था। डॉक्टर ने कहा, इनको वेदर चेंज कराओ। दादी ने कहा, नहीं, इनको अच्छी से अच्छी ट्रीटमेंट दो, जितना भी खर्च हो, मैं करने को तैयार हूँ लेकिन इनको अपने पास से कहीं जाने नहीं दूँगी। बाद मे दादी जी ने डॉक्टर की राय से थोड़े समय के लिए वेदर चेंज करने मुझे अहमदाबाद भेजा और वहाँ मेरा स्वास्थ्य तीव्र गति से ठीक होने लगा। फिर भी दादी जी के आग्रह पर मुझे वापस मुंबई आना ही पड़ा। मुंबई आने के बाद फिर स्वास्थ्य खराब होने लगा। आखरीन स्वयं बाबा ने और दादी प्रकाशमणि जी ने यही फैसला लिया कि मुझे मुंबई छोड़ना है। जब मैं मुंबई छोड़ रही थी, तब दादी जी गद्‌गद होकर कहने लगी, 'चन्द्रिका, तुम बाबा की दुकान की बहुत अच्छी मैनेजर हो। जब मैंने घर छोड़ा था तब भी मुझे इतना कष्ट नहीं हुआ था जितना आज तुम्हें विदाई देने पर महसूस कर रही हूँ।' मैं महसूस करती हूँ, आज मैंने जो कुछ भी सीखा है और जीवन में जो भी विशेष प्राप्तियाँ की है, वो दादी जी के मुझमें विश्वास, प्रेमभाव तथा उनके आशीर्वाद वरदान के रूप में मिले है। मै अपने को बहुत ही भाग्यशाली समझती हूँ कि मेरे इस जीवन के प्रारंभकाल में मुझे ऐसी ममतामयी दादी माँ मिली जिससे सद्‌गुणो को जीवन में मैं सहज ही उतार पाई। दादी पुष्पशान्ता जी के साथ ही उनकी छोटी बहन दादी आत्ममोहिनी जी भी रहते थे, उनका भी मेरे साथ इतना ही स्नेहपूर्ण व्यवहार रहा।

दादा आनन्द किशोर

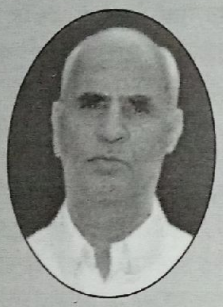

आप यज्ञ के आदि रत्नों में से एक थे। आपका लौकिक नाम लक्ष्मण था, बाबा की दुकान के साथ ही कोलकाता में आपकी हीरे-जवाहरात की दुकान थी। आप लौकिक में दीदी के देवर थे और बाबा के भाई की पुत्री के युगल थे। आपने भी बाबा को फालो किया और परिवार सहित अपना सब कुछ वेहद यज्ञ में समर्पित किया। आपने उस समय लौकिक में बी.ए.पास किया हुआ था। पहले-पहले विदेश सेवा में भी आप दादी जी (दादी प्रकाशमणि) के साथ जापान यात्रा पर गये और चारों ओर सेवा में सदा तत्पर रहे। आपकी अंग्रेजी भाषा पर बहुत अच्छी पकड़ थी। आपने जो पत्र-व्यवहार किये, उन पत्रों को गवर्मेन्ट के सभी आफिसेज में आज भी याद किया जाता है। आप 2 सितंबर, 1998 को अपना पुराना शरीर छोड़ अव्यक्त वतनवासी बने।

दादा आनन्द किशोर ने अपने अलौकिक जीवन का अनुभव इस प्रकार सुनाया है –

बाबा ने 14 वर्ष तक कराची में हमसे तपस्या कराई क्योंकि जब तक हम अपनी जीवन उच्च नहीं बनायेंगे तब तक दूसरों की सेवा करना मुश्किल होगा। चौदह वर्ष तक योग सिखाकर बाबा ने हमको प्रवीण बना दिया। जब हम भारत में आये, पाकिस्तान का विभाजन हो गया था। भारत में माउंट आबू में रहना शुरू किया। यह स्थान बाबा को अच्छा लगा। यहाँ पहले-पहले बृजकोठी में आकर रहने लगे। यहाँ का वायुमण्डल कराची से बहुत भिन्न था। इस कारण यहाँ आने पर कई बहन-भाइयों की तबीयत ठीक नहीं रही। मेरे को बाबा ने अहमदाबाद भेजा था जहाँ रहकर, डॉक्टरों से संपर्क करके, बीमार बहन-भाइयों को वहाँ बुलाकर मैं उनकी दवा करता था। बाबा ने हमको समझा दिया था कि बच्चे, यह ईश्वरीय ज्ञान का यज्ञ है। यहाँ बहुत उच्च पद पाने का है। जहाँ उच्च पद पाना होता है, उच्च इम्तिहान पास करना होता है, वहाँ बीच-बीच में बहुत रुकावटें आती हैं, उनका फिकर नहीं करना। ये रुकावटें आयेंगी। माउंट आबू आने के बाद पैसे की थोड़ी समस्या आई थी क्योंकि जिन्होंने निमंत्रण देकर इंडिया में बुलाया था, उन्होंने बाद में मना कर दिया। उनका बाबा के इस यज्ञ के प्रति फ्रेंडली तरीका नहीं था। भरतपुर के महाराजा की जो कोठी थी, उसका किराया बहुत ऊँचा था। उन दिनों रेन्ट एक्ट था, उसके आधार पर उनका रेन्ट ऊँचा होने के

कारण हमने रेन्ट नहीं दिया, उसने केस कर दिया। उन दिनों विश्व किशोर दादा, बाबा का राइट हैण्ड था। उन्होंने केस को डील किया। हममें से बहुत-से भाई-बहनों को बाबा ने सेवार्थ दूसरे-दूसरे शहरों में भेजा था जैसे दिल्ली, बॉम्बे, कलकत्ता, लखनऊ, कानपुर आदि में।

जापान से सेवा का निमंत्रण

यज्ञ-वत्सों के संबंधियों ने, विभाजन के बाद भारत में आकर, यज्ञ-वत्सों को लिखा कि हम भारत में आकर दुखी हो गये हैं। विभाजन से पहले तो उनका जीवन बहुत अच्छा था। यहाँ आकर रेफ्यूजी होम में रहने लगे थे, बहुत दुखी हो गये थे। ऐसे संबंधियों के निमंत्रण पर ही यज्ञ-वत्स भिन्न-भिन्न शहरों में सेवा के लिए गये थे। दीदी, गंगे दादी तथा सन्तरी बहन के साथ हमको, एक बार बाबा ने कहा, भारत का चक्कर लगाओ। हम चक्कर लगाने निकले, हमारा लक्ष्य था कि हम महात्माओं के कनेक्शन में आएँ। हम गये ऋषिकेश, हरिद्वार। ऋषिकेश में स्वामी शिवानन्द का बड़ा आश्रम था। वहाँ उन्होंने एक कांफ्रेंस की थी, उसमें

जापान में धर्म सम्मेलन के डैलिगेट्स के साथ दादी प्रकाशमणि जी तथा दादा आनंद किशोर जी

गंगा बहन ने बहुत अच्छा भाषण किया और ज्ञान समझाया। वहाँ एक भाई था जो जापान की पहली रिलीजियस कांफ्रेंस से होकर आया था। अब जापान में दूसरी कांफ्रेंस होने वाली थी। उसने जापान के आयोजकों को लिखकर भेजा कि भारत में ब्रह्माकुमारी संस्था बहुत अच्छी है, इसको आप निमंत्रण भेजो। उन्होंने निमंत्रण भेजा जिसे बाबा ने स्वीकार किया और सन् 1954 में बाबा ने मुझे, दादी प्रकाशमणि तथा दादी रतनमोहिनी को जापान भेजा। हम लोगों ने जापान में बहुत अच्छी सेवा की।

जापान, हांगकांग तथा सिंगापुर में सेवा

हम गये थे केवल 15 दिनों के लिए लेकिन वहाँ के लोगों को यह ज्ञान बहुत अच्छा लगा। फिर भिन्न-भिन्न संस्थाओं ने हमको निमंत्रण दिया कि हमारे पास आओ, आकर ज्ञान दो। कोई 15 दिन के लिए, कोई 10 दिन के लिए बुलाते रहे, बुलाते रहे। हमने बाबा से पूछा, बाबा ने कहा, यह तो बहुत अच्छा है, तुम सर्विस में बिजी हो जाओ। हम बिजी हो गये। हमारे सिन्धी

मित्र-संबंधी बड़ी संख्या में वहाँ बिजनेस में है। सरदार लोग और गुजराती भी हैं। उन सबके साथ जब संपर्क हुआ तो उन्हें भी बहुत रुचि हुई। उन्होंने समझा था कि यह (ब्रह्माकुमारी) संस्था खलास हो गई होगी क्योंकि हम लोग विभाजन के बाद भी तीन साल तक पाकिस्तान में रहे थे। उन्होंने समझा, मुसलमानों के राज में ये कैसे रह सकेंगे। जब हम जापान में उनसे मिले तो उनकी आँखें खुल गई कि इनमें इतनी शक्ति है जो इन्होंने पाकिस्तान में, हमारे बाद भी रहकर दिखाया है। उन्हों का हमारे साथ बहुत प्यार रहा। गुजराती तथा सरदार भाइयों का भी बहुत स्नेह रहा। ऐसा करके हम लोग जापान में ही छह मास रह गये क्योंकि इतनी सर्विस फैल गई। लौटते समय हमको हांगकांग से निमंत्रण मिला। हांगकांग में दो मास ठहर गये। वहाँ भी सर्विस फैल गई। फिर हमको सिंगापुर से निमंत्रण मिला। सिंगापुर में मित्र-संबंधी बहुत थे, वहाँ भी थोड़ा समय ठहरे, उनकी सेवा की। इसके बाद हम पानी के जहाज के द्वारा सिंगापुर से मद्रास आये। हमारी इतनी सेवायें देखकर बाबा ने मद्रास में दादी जानकी तथा जगदीश भाई को खास हमको रिसीव करने के लिए भेजा था। इनके आने से वहाँ अखबार वालों तथा दूसरे सिन्धी लोगों की बहुत सेवा हुई। कइयों का कनेक्शन दादी जानकी से था, उनके पास हम रहे और खूब सेवा हुई।

बाबा ने उमंग-उत्साह से स्वागत किया

वहाँ से बाबा ने डायरेक्ट आबू नहीं बुलाया। साधुओं का एक सम्मेलन था चित्रकूट में। अक्टूबर महीने में जो शरद पूर्णिमा होती है, वो चित्रकूट की मशहूर है, वहाँ पर मेला लगता है। कानपुर में गुप्ता जी थे, उनको भी निमंत्रण मिला था। वो आये थे हमको मद्रास में लेने के लिए। इस प्रकार चित्रकूट में सेवा हुई। वहाँ से सेवा करते हुए हम बॉम्बे, लखनऊ, कानपुर और फिर दिल्ली में आये। दिल्ली में भी बहुत अच्छी सेवा हुई। फिर हम माउंट आबू में आए। तब तक बृजकोठी से निवास चेंज हो चुका था, बाद में कोटा हाऊस और धौलपुर हाऊस मिला था। वहाँ हम आकर बाबा से मिले थे। बाबा ने बहुत उमग-उत्साह से हमारी खातिरी की और दादी कुमारका को गिनियों का हार पहनाया और बहुत

जापाना यात्रा से लौटने के बाद दादी जी, दादी रतनमोहिनी जी एवं दादा आनंद किशोर जी का स्वागत करते हुए दिल्ली के भाई-बहनें

खुशियाँ मनाई।

भारत के विभिन्न शहरों में सेवा

जापान की सेवा के बाद भारत में भी काफी सेवा फैल गई। ब्रह्माकुमारीज़ का नाम ऊँचा हो गया कि ये जापान से होकर आये हैं। उसके बाद बैंगलोर में सेन्टर खुला। इलाहाबाद कुंभ के मेले में हम सेवार्थ गये। वहाँ से कानपुर नजदीक पड़ता है। कानपुर के एक भाई ने निमंत्रण दिया। कानपुर पहुँचने पर वहाँ के एक बड़े व्यापारी ने अपने घर में निमंत्रण दिया और बोला, यहाँ सेन्टर खोलो। उसकी कोठी में एक अलग हिस्सा था, वहाँ सेन्टर खुला और सेवा हुई। लखनऊ में दादा राम और सावित्री रहते थे। उनका बाबा के साथ लौकिक में कनेक्शन था। उन्होंने शुरू-शुरू में अच्छी सेवायें की। फिर राजस्थान में सेवा शुरू हुई। मैं तो अधिकतर टूर पर ही रहा। आखिर एक सेन्टर अहमदाबाद में खुला। फिर सन् 1955 में, भारत में पहला म्यूजियम किशनपोल बाज़ार, जयपुर में खोला। बाबा ने मुझे अहमदाबाद से वहाँ भेजा। जहाँ-जहाँ नई सर्विस शुरू होती थी, बाबा मेरे को वहाँ भेजता था।

कुछ समय बाद हमारा मुख्यालय कोटा हाऊस और धौलपुर हाऊस से बदली होकर पाण्डव भवन में आ गया। बाबा के अव्यक्त होने के बाद, सन् 1970 से हम और निर्वैर भाई पाण्डव भवन में रहने लगे। अव्यक्त होने के पहले बाबा ने माउंट आबू में बड़ा स्प्रीच्युअल म्यूजियम खोलने का विचार बनाया था। बॉम्बे वाले रमेश भाई को बुलाकर बाबा ने कहा, म्यूजियम बनाओ। उसी समय वर्ल्ड रिन्युअल स्प्रीच्युअल ट्रस्ट बना और उसी के नाम से म्यूजियम बनाने का डायरेक्शन बाबा ने दिया। मकान ले लिया गया। उसमें मुख्य रूप से बनाने का काम निर्वैर भाई ने किया। वह म्यूजियम एक मॉडल के रूप में बना जिससे अभी भी बहुत सेवायें हो रही हैं।

विदेश में सेवाकेन्द्र खुला

बाबा ने बताया था, मेरा अव्यक्त होना जरूरी है। अव्यक्त होकर मैं शरीर की हदों से परे रहूँगा। शरीर की हदों के कारण मैं बाहर के लोगों की सेवा नहीं कर सकता हूँ, इसलिए अव्यक्त स्वरूप द्वारा बहुत लोगों को साक्षात्कार कराकर बहुत पहचान दूँगा और पहचान के आधार पर बहुत लोग यहाँ आयेंगे। इसके थोड़े समय बाद आबू में बहुत फॉरेनर्स आने लगे। म्यूजियम देखने भी बहुत आते थे। उनको म्यूजियम देखकर मन में आता था कि इतना ऊँचा ज्ञान और हमको अभी तक पता ही नहीं है! पहले-पहले दो भाई आए, चार्ली और केन, दोनों ऑस्ट्रेलिया के थे, लंदन में नौकरी करते थे। लंदन में उन दिनों सेवाकेन्द्र नहीं था।

जयन्ती बहन पहले माउंट आबू में पढ़ती थी। बाबा के संपर्क में आती रहती थी। बाबा ने उसको वरदान दिया था, बच्ची, तुम फॉरेन में बहुत सेवा करेगी। पढ़ाई पढ़के और ज्ञान लेकर वह लंदन गई। लण्डन में ही उनका परिवार रहता था। वहाँ ब्रिटिशर्स का एक स्प्रीच्युअल सेन्टर था। वहाँ हर हफ्ते उसे लेक्चर करने का चांस मिलता था जिसे सुनने के लिए कई लोग आते थे। वहीं चार्ली तथा केन भाई ने यह ज्ञान सुना और जयन्ती बहन से छुट्टी लेकर वे आबू में आये। वे पहले विदेशी थे जो मधुबन में आए। फिर उन्होंने

ऑस्ट्रेलिया में सेन्टर खोला।

अमेरिका की एक योग संस्था ने सन् 1972 में आबू में निमंत्रण भेजा। हमने उसे स्वीकार कर रतनमोहिनी दादी का, निर्वैर भाई का, मेरा तथा एक-दो और का बायोडाटा भेज दिया। फिर दादी की राय प्रमाण चार बहनें तथा दो भाई गये। पहले ये लोग लंदन में गये, वहाँ छोटा सेन्टर खुला। जगदीश भाई और रमेश भाई भी उस टूर में थे।

माताओं को आगे रखना है

कराची में हम 300 बहनें-मातायें तथा 75 भाई थे। यहाँ आये तो कम हो गये थे कुछ कारणों से। बाबा ने हमको ट्रेनिंग दी थी कि माताओं को आगे रखना है क्योंकि माता मदालसा है, माताओं का हृदय कोमल होता है। उनका सेवा करने का ढंग लोगों को अच्छा लगता है। हमने बाबा का वह डायरेक्शन आशीर्वाद के रूप में माना। हमने अपना अभिमान कि हम बड़े है और मातायें छोटी हैं, यह बदली करके अपना सिद्धांत बनाया कि माताओं को आगे रखना है। भारत में आने के बाद हमने महसूस भी किया कि माताओं के ज्ञान देने पर भाई सुनते थे पर भाइयों द्वारा दिये जाने पर वे बात नहीं मानते थे। माताओं की जल्दी मान लेते थे। हमारा सतगुरु परमात्मा है। उसके बाद कोई गुरु नहीं पर कारोबार के लिए दादी को हैड बनाया गया। यज्ञ के शुरूआत में दीदी कंट्रोलर थी क्योंकि वह माता थी, अनुभवी थी। आबू में भी उन्होंने उसी प्रकार सेवा की। हम यहाँ भी उसे कट्रोलर कहते थे पर बाबा जानी जाननहार है। उन्हे पता था, इसके बाद फॉरेन की सर्विस चालू हो जायेगी, उसमें दादी प्रकाशमणि का रोल बेहतर रहेगा, उसमें छोटाई-बड़ाई का सवाल नहीं था। दीदी और दादी का तरीका ऐसा था जैसे दो शरीर एक आत्मा। बाद में दादी जानकी एडिशनल हैड बनी। उनका भी दादी के साथ संबंध वैसा ही रहा जैसा दीदी का था।

******

दादा आनन्द किशोर के बारे में दादी निर्मलशान्ता जी बताती है –

दादा आनन्द किशोर का बाबा के साथ घनिष्ठ संबंध था। भावी अनुसार व्यापार करने के लिए बाबा का कोलकाता जाना हुआ। कोलकाता में सबसे नामीग्रामी स्थान और प्रसिद्ध बिजनेस सेन्टर उस समय न्यू मार्केट ही था जिसे चार्ल्स हॉग मार्केट के नाम से जाना जाता है लेकिन सभी के मुख से 'न्यू मार्केट' नाम ही निकलता है। उस मार्केट के ठीक सामने एक सात मंजिल की इमारत थी जिसमें लिफ्ट लगी हुई थी। उसका ठिकाना (पता) '7 ए, लिण्डसे स्ट्रीट, सुराना मेन्सन, न्यू मार्केट' है। पहली मंजिल पर बाबा ने दुकान यानि जिसे हम गद्दी कहते थे उसे हीरे-जवाहरातों के बिजनेस का स्थान बनाया। दूसरी मंजिल में हम सभी रहते थे, उसी मार्केट में आज भी वह मकान बहुत ऊँचा है तथा ठीक उसके पास ग्लोब सिनेमा हाल है।

ब्रह्मा बाबा को पूरा फालो किया

ग्लोब सिनेमा हाल से एक मकान छोड़कर उसी फुटपाथ पर रामलक्ष्मण एंड कंपनी थी जो आज भी उसी नाम से सोने व हीरे का व्यापार करती है। दादा आनन्द किशोर का लौकिक नाम लक्ष्मण था तथा

उनके साझीदार का नाम राम था। दोनों के नाम से यह रामलक्ष्मण एंड कंपनी थी। दादा आनन्द किशोर ने भी ब्रह्मा बाबा का पूरा अनुसरण किया। जैसे बाबा सारा बिजनेस समेट कर कोलकाता से हैदराबाद (सिन्ध) आये, उन्होंने भी ऐसे ही किया। बाबा ने अपना बिजनेस, पार्टनर सेवकराम को दिया तथा दादा आनन्द किशोर ने अपने पार्टनर राम को सारा बिजनेस दिया और अपने हिस्से का धन लेकर बाबा के पास चले आये। यज्ञ में समर्पित भाइयों में, उस समय सबसे ज्यादा पढ़ाई सिर्फ आनन्द किशोर दादा की ही थी। अंग्रेजी में ज्ञान की सभी बातों को लिखना, अनुवाद करना, मुरली अंग्रेजी में लिखना, अंग्रेजी में देश-विदेश में पत्र-व्यवहार करना – दादा आनन्द किशोर का ही काम था। इसके अलावा, बाबा के ऑफिस का कार्य कराची से लेकर मधुबन (माउंट आबू) में अपने अंतिम समय तक संभाला जिसे अभी निर्वैर भाई निमित्त बन संभाल रहे हैं।

******

दादा आनन्द किशोर जी के बारे में **ब्र.कु. रमेश शाह**, मुंबई अपने अनुभव इस प्रकार सुनाते हैं –

शिवबाबा के दैवी परिवार में अनेक भाई-बहनें अनेक संबंधों से आए जैसे दादा आनंद किशोर, ब्रह्मा बाबा के पारिवारिक दामाद (बड़े भाई के दामाद) थे। यज्ञ में वे पहले-पहले पढ़े-लिखे ग्रेजुएट थे। शुरू-शुरू का अंग्रेजी में ईश्वरीय साहित्य लिखने में उनका बहुत बड़ा योगदान रहा। जापान में भी विश्वधर्म सम्मेलन में, दादी प्रकाशमणि तथा दादी रतनमोहिनी के साथ ब्रह्मा बाबा ने उन्हें भेजा। पूर्व एशिया के देशों जैसे हांगकांग, सिंगापुर, मलेशिया आदि में इन्होंने ईश्वरीय सेवायें की और वहाँ से लौटने के बाद मुंबई में रहे। मेरा उनके साथ विशेष परिचय सन् 1957 में हुआ। मेरी लौकिक माताजी की इच्छा थी कि हम ब्रह्मा बाबा और मातेश्वरी जी को मुंबई आने का निमंत्रण दें और हमने हमारी माताजी को कहा कि भले आप निमंत्रण भेजो। ब्रह्मा बाबा ने माता का निमंत्रण स्वीकार नहीं किया और कहा कि बच्चा (रमेश) अगर निमंत्रण देगा तो उसे स्वीकार कर मुंबई में आयेंगे। मेरे लिए मीठी समस्या खड़ी हो गई कि मैं कैसे निमंत्रण भेजूँ।

सुन्दर शब्दों में निमंत्रण-पत्र लिखा

दादी पुष्पशान्ता उस समय वाटरलू सेन्शन सेवाकेन्द्र की इंचार्ज थीं। उन्होंने कहा कि आप निमंत्रण भेज दो। मैंने कहा कि मैं कैसे निमंत्रण दूँ, मुझे आपकी भाषा नहीं आती। दादी ने पूछा कि क्या नहीं आता। मैंने कहा कि आपके ज्ञान में कई शब्द नये है और ब्रह्मा बाबा जैसे महान प्रतिभाशाली व्यक्तित्व का निमंत्रण-पत्र भी उतना ही गौरवशाली होना चाहिए। तब दादी पुष्पशांता ने कहा कि आप दादा आनन्द किशोर से मिलो, वह बहुत ही अच्छे शब्दों में ब्रह्मा बाबा और मम्मा के लिए आपको निमंत्रण-पत्र लिखकर देगा। उन्होंने दादा आनन्द किशोर से मेरा परिचय कराया और उन्होंने बहुत ही सुन्दर शब्दों में ब्रह्मा बाबा और मम्मा की प्रतिभा के अनुरूप निमंत्रण-पत्र लिखकर दिया और उसी निमंत्रण को पढ़कर ब्रह्मा बाबा ने फौरन टेलिग्राम भेजा कि ब्रह्मा बाबा और मम्मा निमंत्रण को स्वीकार कर मुंबई आयेंगे। तब मैंने दादा आनन्द किशोर का दिल से धन्यवाद माना कि आपने बहुत सुन्दर निमंत्रण-पत्र लिखकर दिया, फलस्वरूप बाबा-मम्मा

चार मास के लिए मुंबई आये। इस प्रकार दादा आनन्द किशोर के साथ हमारा घनिष्ठ संबंध जुटता गया।

जब प्रदर्शनी के चित्र बनाने का कार्य मुंबई में चल रहा था तब भी दादा आनन्द किशोर द्वारा हमें अच्छा मार्गदर्शन मिला। भ्राता निर्वैर, भ्राता आनन्द किशोर, भ्राता अर्जुन तथा अन्य साथियों का एक ग्रुप बना और प्रदर्शनी की सेवायें अच्छी हुई।

विराट प्रतिभा के धनी

बाद में दादा आनन्द किशोर मधुबन में रहने लगे। सन् 1968 में जब ब्रह्मा बाबा ने दादी प्रकाशमणि तथा मुझे ट्रस्ट के निर्माण के लिए मधुबन में बुलाया तो हम दोनों के साथ दीदी मनमोहिनी तथा दादा आनन्द किशोर भी ट्रस्ट के निर्माण कार्य में बहुत मददगार बने। ब्रह्मा बाबा के अव्यक्त होने के बाद निर्वैर जी को मधुबन की ईश्वरीय सेवा पर बुलाया गया और तब से दादा आनन्द किशोर और निर्वैर जी की युगल जोड़ी ने ईश्वरीय सेवा में अनेक प्रकार के कार्य किये। दोनों ने मिलकर ऑफिस का कार्य संभाला। पांडव भवन में भ्राता निर्वैर जी की ऑफिस हमें दादा आनन्द किशोर की याद दिलाती है कि कैसे दादा कुर्सी पर बैठकर ईश्वरीय सेवा का कारोबार करते थे और अनेक भाई-बहनों को ज्ञान, योग और सेवा के संबंध में मार्गदर्शन देते थे। ऐसे विराट प्रतिभा के धनी हमारे दादा आनन्द किशोर ने बाद में बीमारी के कारण माउंट आबू में ही शरीर छोड़ दिया।

अन्तिम दिनों में बीमारी के दौरान दादा कुछ समय के लिए हॉस्पिटल में रहे, उस समय की उनकी स्थिति बहुत प्रेरणादायी थी – आई एम ओके (I am OK, मैं अच्छा हूँ) या फिर आई एम बेटर देन यू (I am better than you, मैं आपसे अच्छा हूँ) – जब-जब किसी ने दादा से उनकी तबीयत के बारे पूछा तब-तब उसे यही जवाब सुनने को मिले। हर समय अपने मुखमंडल पर एक अलौकिक मुस्कान छलकाते दादा (दादा आनन्द किशोर जी) कभी किसी को यह एहसास ही नहीं होने देते थे कि उनकी तबीयत खराब है। और तो और स्वयं डॉक्टर भी हैरान हो जाते थे जब उनके पूछने से पहले ही दादा उनसे पूछ बैठते थे- हैलो डॉक्टर, हाऊ आर यू?

जिस किसी ने भी दादा के साथ एक पल भी गुजारा हो वे उनके जिंदादिली, खुशनुमा मिजाज और बेफिकर बादशाह वाले अंदाज को कभी भी नहीं भुला सकता। दादा 89 साल की उम्र में भी कहते थे - आई एम वेरी यंग। अस्पताल में सभी दादा के लिए फिक्रमंद होते थे और दादा अपनी वही चिरपरिचित मुस्कान लिये सबका स्वागत करते थे और कहते थे, मैं तो यहाँ एकांत में बाबा (परमात्मा) को याद करने के लिये आया हूँ। अपने हर कर्म में फालो फादर, सी फादर करने वाले आदि रत्न, त्यागी, तपस्वी, अथक सेवाधारी, संपूर्ण निश्चयबुद्धि, बाबा के हर इशारे को अमल में लाने वाले, मधुबन बगिया के शृंगार, हम सबके स्नेही, मिलनसार दादा आनन्द किशोर जी 2 सितंबर, 1998, बुधवार को बाबा के साथ मीठी बातें करते, रात्रि 8.20 पर बाबा की गोद में उड़ गये।

ऐसी महान आत्मा, जिन्होंने यज्ञ के स्थापना से लेकर अथक और दिल व जान से यज्ञ की सेवा की तथा हम सबके लिए एक मिसाल बने, हम उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। ◈

दादा विश्वरत्न

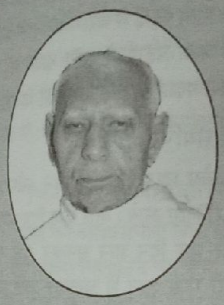

आपका जैसा नाम वैसे ही आप यज्ञ के एक अनमोल रत्न थे। आप ऐसे पक्के ब्रह्मचारी, शीतल काया वाले योगी, आलराउण्ड सेवाधारी कुमार थे जिनका उदाहरण बाबा भी देते कि बाबा को ऐसे सपूत, सच्चे, पक्के पवित्र कुमार चाहिए। दादा की वृत्ति सदा उपराम, सदा अनासक्त, सदा त्यागी थी। आपने यज्ञ की हर छोटी-बड़ी सेवा बड़े दिल से एक्यूरेट की और हर एक को अपने कर्म द्वारा गुणों का दान करके सब कुछ सिखाया। आप बाबा के वफादार, ईमानदार और फरमाँबरदार, आज्ञाकारी बच्चे थे। आपने यज्ञ के एकाउन्ट विभाग में अपनी अनमोल सेवायें दी, आप तपस्वी कुमार थे। आपको एकाग्रता का बहुत अच्छा अभ्यास था। आप विशेष जब योग कराते तो सभा में सन्नाटा छा जाता। आपने अंत तक सेवायें देते हुए 26 फरवरी, 2007 को पुराना शरीर छोड़ बापदादा की गोद ली।

दादा विश्व रत्न ने अपने अलौकिक जीवन का अनुभव इस प्रकार सुनाया है –

तारीख 18.03.1918 को मेरा जन्म हुआ, नाम वरियल पड़ा। मेरे माता-पिता बड़े अच्छे स्वभाव-संस्कार वाले थे। पिताजी प्राइमरी स्कूल में हेडमास्टर थे। मेरा एक बड़ा चचेरा भाई कराची में स्कूलों का सुपरवाइजर बना था। उसने मेरे पिताजी के लिए एक स्कूल में टीचर बनने का प्रबंध किया और मेरे पिताजी को कराची में आने के लिए कहा। परिवार के सभी सदस्य कराची में आ गये, वहाँ पिताजी प्राइवेट स्कूल में टीचर बनकर रहे। मैं उस समय मैट्रिक में पढ़ता था।

ओम मण्डली से संपर्क

जब मैं इंटर साइंस में पढ़ रहा था, तब सुना और पेपर में भी पढ़ा कि 'ओममण्डली' हैदराबाद से शिफ्ट होकर कराची में आ गई है और कोई भी वहाँ जाकर उनसे ज्ञान प्राप्त कर सकता है परंतु वहाँ जाने के पहले पत्र लिखकर उनसे टाइम निश्चित करना होगा। पहले ओम मण्डली के विषय में अखबारों में बहुत कुछ ऐसा उल्टा-सुल्टा लिखा हुआ था, जो कोई भी पढ़े तो उसका माथा ही खराब हो जाये। मैंने भी ऐसा अखबारों में पढ़ा था। मैंने सोचा कि हैदराबाद से कराची में आये हैं तो रूबरू जाकर देखूँ कि ये कौन है, क्या है और क्या समझाते हैं। मैंने उनको एक कार्ड लिखा कि मैं आपका ज्ञान समझना चाहता हूँ। दूसरे दिन ही उसका उत्तर आया कि इस टाइम पर, इस स्थान पर भले आ सकते हो। मैं उसी टाइम पर वहाँ गया। तभी एक कार वहाँ आई। उसमें से बाबा उतर कर अंदर चले गये।

मैंने बाबा की पर्सनैलिटी देख सोचा कि क्या इनके लिए लोग ऐसे लिखते है। ये ऐसे हो नहीं सकते। फिर तो मुझे भी अंदर बुलाया गया और मुझे जसु बहन, जो शान्तामणि दादी की भाभी थी, ने ज्ञान समझाया। उस दिन आत्मा का पाठ पक्का कराया कि तुम आत्मा हो, शरीर नहीं हो। शरीर की सभी कर्मेन्द्रियों को चलाने वाली तुम मालिक आत्मा हो। सारा घण्टा ही उस एक प्वाइंट पर समझाया। मुझे बहुत अच्छा लगा। फिर उसने कहा कि आप कल आना।

शान्ति, आनन्द और खुशी की अनुभूति

ऐसे मैंने रोज जाकर सात दिन का कोर्स पूरा किया। कोई भी बीच में प्रश्न नहीं पूछा। सब कुछ ठीक समझ में आ रहा था। फिर मुझे एक परमिट कार्ड मिला कि आप अब सुबह को रेग्यूलर क्लास में आ सकते हो। फिर मैं रोज सुबह को निश्चित समय पर क्लास में आने लगा। मुझे अंदर में शान्ति, आनन्द और खुशी की अनुभूति होने लगी। साथ-साथ यह भी देखा कि वहाँ ओम् मण्डली की कन्यायें-मातायें कितनी मोठी, पवित्र दृष्टि वाली हैं। बाहर वाली दुनियावी कन्याओं और यहाँ की कन्याओं में रात-दिन का अन्तर देखा। बस, उनके चेहरों और आँखों में पवित्रता की झलक और पवित्र दृष्टि-वृत्ति को देखकर मैं समझ गया कि यही सच्चा परमात्म-ज्ञान है और इन बहनों को परमात्मा स्वयं ही आकर ज्ञान देता है जिससे ये ऐसा पवित्र, सुख-शान्तिमय जीवन बना रही हैं।

मैंने बाहर में जो कुछ अखबारों में पढ़ा था, वह सब उड़ गया। समझा कि वह शत-प्रतिशत गलत है। बस, मैंने तो अंदर में प्रतिज्ञा कर ली कि मैं इस ज्ञान को कभी नहीं छोड़ूँगा, रेग्यूलर आता रहूँगा। ऐसे ही कहे कि मै बुद्धि से सरेण्डर हो गया, परमात्मा का बच्चा बन गया अथवा इस परिवार में आ गया। मैं जो इण्टर साइंस पढ़ रहा था, उस से भी मेरी रुचि खत्म हो गई। ज्ञान की रूहानी पढाई में जैसे-जैसे रुचि बढ़ती गई, वैसे-वैसे लौकिक पढ़ाई से रुचि खत्म हो गई और आखिर में उस पढ़ाई को भी छोड़ ही दिया।

मैं समर्पित हो गया

कराची में ओम मण्डली को देखने और ज्ञान सुनने के लिए हजारों लोग आये। कोई एक दिन आकर चले गये, कोई दो-चार दिन ज्ञान सुनकर चले गये, कोई-कोई एक-दो मास ज्ञान में चलकर चले गये। कोई-कोई छह-आठ मास भी ज्ञान में चलकर छोड़कर चले गये। बाकी थोड़े ऐसे रहे जो आते रहे। इन बाहर से आने वालों में से तीन भाई – कृष्णा, विष्णा और वरियल (मैं) रोज़ ज्ञान सुनने के लिए क्लास में तो आते ही थे लेकिन शाम को भी यज्ञ-सेवा अर्थ ओम मण्डली में जाते थे। बाबा की जो मुरली चलती थी, उसमें से प्वाइंटस निकालते थे, फिर उनको अंग्रेजी में ट्रांसलेट करते थे, टाइप भी करते थे, लिथो भी करते थे, छोटी-छोटी किताबें बनाते थे और बड़े-बड़े लोगों, मंत्रियों आदि को देकर आते थे। ये हम त्रिमूर्ति भाइयों की ड्यूटी थी। धीरे-धीरे एक मूर्ति निकल गई। बाकी दो मूर्ति रहीं। एक दिन कृष्णा और मैंने सोचा कि अब हम दोनों अपने को पूर्ण रूप से समर्पित करके ओम मण्डली में जाकर ही रहें अथवा इस ब्राह्मण परिवार में आ जायें। यह बात हम दोनों ने मम्मा को जाकर बताई। मम्मा ने सारा समाचार पूछकर हमारी अर्जी को स्वीकार

किया और आज्ञा दी कि आप बगले में जाकर रहो। सन् 1939 में क्रिसमस की छुट्टियों के वे दिन थे, जब हम दोनों को अंदर रहने को छुट्टी मिली। मैं तन और मन सहित बापदादा के पास समर्पित हो गया अर्थात् नरजीवा जन्म ले लिया और अंदर में यह प्रतिज्ञा कर ली कि बापदादा हमको जैसे चलावे, जहाँ भेजे, जो भी सेवा देवे अथवा जो भी आज्ञा करे अर्थात् जो भी श्रीमत हो, वह मैं पूर्ण रूप से पालन करूँगा।

भिन्न-भिन्न जिम्मेवारियाँ मिलीं

मम्मा की आज्ञा प्रमाण जिस बंगले में हम जाकर रहे, वह बंगला क्लिफ्टन पर बाबा के बंगले के पास ही था। दोनों के बंगलों के बीच में सिर्फ 2-3 बंगले और थे। नजदीक होने के कारण बाबा से हमारा कनेक्शन अधिक होने लगा। घर से आकर ज्ञान सुनते हुए एक वर्ष के दौरान बाबा को देखा था और बाबा की मुरली भी सुनी थी लेकिन कभी भी बाबा के साथ बातचीत करने का अवसर नहीं मिला था। यहाँ बाबा के पास रहने के कारण और ड्रामानुसार कार्य-व्यवहार के कारण बाबा से भी बातचीत शुरू हो गई।

इस बंगले में ज्ञान में चलने वाले तीन-चार शिकारपुरी परिवार रहते थे। उनमें से एक माता सवेरे उठकर स्नान के लिए गर्म पानी तैयार करती थी। लेकिन वह गर्म पानी थोड़ा देरी से मिलता था। मैंने सोचा, मैं तो जल्दी ही उठता हूँ, तो क्यों नहीं यह गर्म पानी मैं ही तैयार कर लूँ। मैंने उस माता को कहा, माता जी, आप निश्चिन्त रहें, गर्म पानी मैं तैयार कर दूँगा। फिर रोज मैं गर्म पानी तैयार करता रहा। इस बात का बाबा को मालूम पड़ गया। मुझे बाबा ने अपने बंगले पर बुलाया और पूछा, सवेरे कितने बजे उठते हो? मैंने कहा, बाबा, साढ़े तीन बजे उठता हूँ। बाबा ने पूछा, उस समय क्या करते हो? मैंने कहा, बाबा, उस समय गर्म पानी करता हूँ और जिसको चाहिए उसको पानी पहुँचा कर भी आता हूँ। बाबा ने कहा, अच्छा, मैं एक ड्यूटी दे दूँ? मैंने कहा, हाँ बाबा, दे दीजिये। फिर बाबा ने कहा, तुम भले पहले गर्म पानी करना, फिर स्नान-पानी करके, सीनियर सिस्टर्स के बंगले में जाना, वहाँ से साइकिल पर दो बड़े डिब्बे ले जाना और सदर बाजार में जाकर 80 पाउण्ड मिल्क क्रीम खरीद करके सीनियर सिस्टर्स के बंगले पर पहुँचा देना। मैंने कहा, जी बाबा, ऐसे ही करूँगा। ऐसे ही रोज यह ड्यूटी करता रहा। बाबा मेरी रिपोर्ट रोज सीनियर सिस्टर्स से पूछता रहा कि यह बच्चा रोज आपके पास आता है तो ठीक टाइम पर आता है, ठीक टाइम पर मिल्क क्रीम लाता है, चीज़ अच्छी लाता है, ठीक दाम देकर आता है और इसका बहनों से बातचीत करने का ढंग, लेना-देना कैसा है? बाबा को बड़ी बहनों की तरफ से इन सभी बातों की रिपोर्ट अच्छी मिली। तो बाबा ने थोड़े दिनों के बाद फिर मुझे बुलाया, कहा, दूसरी ड्यूटी दे दूँ? मैंने कहा, हाँ बाबा, दे दीजिये। बाबा ने कहा, वह मिल्क क्रीम बड़ी बहनों के बंगले पर पहुँचाने के बाद, फिर वहाँ से ही होलसेल सब्जी बाजार में जाना, वहाँ से सब्जियाँ खरीद कर ले आना। मैंने कहा, हाँ बाबा, ले आऊँगा। हमारा बंगला, बड़ी बहनों के बंगले से दो मील दूर था, वहाँ से सदर बाजार और आगे दो मील दूर था। होलसेल सब्जी मार्केट बड़ी सिस्टर्स के बंगले से दूसरी तरफ चार मील दूर थी।

वह दूसरी ड्यूटी भी आरंभ कर दी। एक ट्राई

साइकिल थी (साइकिल को साइड में एक कैरियर था और उसका तीसरा पहिया था), उसमें 5-6 बोरियाँ भरकर सब्जियाँ ले आता था, उसके बाद क्लास चालू हो जाता था। हमेशा कोशिश यही करता था कि क्लास में ठीक टाइम पर पहुँच जाऊँ लेकिन कभी-कभी सब्जियाँ ठीक नहीं होती थी तो कुछ समय अधिक लग जाता था। लेकिन कोशिश यही करता था कि चीज़ भी अच्छी से अच्छी लाऊँ क्योंकि शिवबाबा के बच्चे खाने वाले हैं और चीज़ सस्ती भी हो। तो सभी दुकानों से अच्छी तरह भाव पूछकर अच्छी चीज़ लेता था। किसी दिन अच्छी चीज़ नहीं होती थी, तो चुन-चुनकर थोड़ी-थोड़ी करके कई जगह से निकाल कर लेता था। तो उसमें थोड़ा समय अधिक लग जाता था और क्लास में 15-20 मिनट कब-कब देरी से पहुँचता था। लेकिन मेरे दिल में सदा यह संकल्प रहता था कि मैं अगर बाबा का सपूत बच्चा हूँ, हर आज्ञा अथवा श्रीमत को पूर्ण रूप से पालन करता हूँ तो क्लास में देरी से आने के कारण मैंने जो क्लास में ज्ञान की प्वाइंट मिस की, वह मिस नहीं हो सकती है। वह प्वाइंटस जरूर बाबा कभी न कभी मेरी बुद्धि में भर देगा क्योंकि मैं बाबा की आज्ञा अनुसार, बाबा की ही अथवा यज्ञ की ही सेवा पर गया था।

पुलिसमैन की ड्यूटी

एक वर्ष इस तरह कार्य करते रहने के बाद मेरी ड्यूटी बदल गई। एंटी ओम मण्डली वालों की अपोजिशन चलती थी जिस कारण सोचा गया कि बाबा के बंगले पर कोई पुलिसमैन का पहरा होना चाहिए। भाऊ विश्व किशोर, जिनका लौकिक नाम भेरूमल कृपलानी था, ने बाबा से पूछा कि किसको पुलिसमैन बनायें? क्योंकि यह भी सोचा गया कि पुलिसमैन कोई बाहर वाला नहीं होना चाहिए। बाहर वाले हमारे खिलाफ हैं, इसलिए उन्हों पर विश्वास नहीं रख सकते, अत: अपने ही किसी भाई को पुलिसमैन बनाया जाये। बाबा का मेरे में बहुत विश्वास हो गया था, जिस कारण भाऊ विश्वकिशोर को कहा कि इसको (मुझे) साथ ले जाओ और पुलिसमैन (रामोशी पुलिस) बनाकर ले आओ।

ऐसे मैं रामोशी पुलिसमैन बनकर बाबा के बंगले पर ड्यूटी देता रहा। गेट के सामने कंपाउंड में एक टेबल-कुर्सी रख दी। वहाँ बैठ कर लिटरेचर का कार्य (मुरलियों से प्वाइंटस निकालना) भी करता रहा और पहरे की ड्यूटी भी संभालता रहा। रहने का प्रबंध भी बाबा के उस बंगले में ही मिला। गेट के सामने ही मोटर गैरेज थी, उसके ऊपर एक कमरा था, उसमें रहने लगा।

एक बार क्या हुआ कि भोली दादी के पति ने केस किया था कि मेरी पत्नी अपनी छोटी बच्ची (मीरा) को साथ लेकर भागकर यहाँ ओम मण्डली में आई है। उसका वारण्ट बाबा के ऊपर निकलवाकर पुलिस इंस्पेक्टर साथ लेकर आ रहा था। बाबा को पता पड़ गया कि ये लोग हमारे बंगले पर आ रहे हैं, तो फौरन भाऊ विश्वकिशोर को कोर्ट में भेजा कि जाकर वहाँ से स्टे ऑर्डर ले आओ। थोड़े ही समय में ये लोग पुलिस इंस्पेक्टर के साथ आ गये। मैं गेट पर खड़ा था, उन्होंने आकर मुझे वारण्ट दिखाया और कहा कि बाबा को कोर्ट में ले जाना है। मैंने उन्हों को कहा कि आप यहाँ ठहरो, मैं ऊपर जाकर आपका मैसेज देकर

आता हूँ। मैं ऊपर फर्स्ट फ्लोर पर, जहाँ बाबा रहते थे, गया और बाबा को सुनाया कि ये लोग वारण्ट लेकर आ गये है। बाबा ने कहा कि तुम युक्ति से उन्हों को ठहराओ, जब तक विश्वकिशोर आ जाये। मैंने नीचे आकर उन्हों को कहा कि बाबा जी तैयारी कर रहे है, थोड़ी देर में नीचे उतरेंगे। पंद्रह-बीस मिनट के बाद पुलिस इंस्पेक्टर कहने लगा कि अभी तक बाबा जी नहीं उतरे हैं, हम कब तक यहाँ ऐसे ठहरेंगे। मैंने उन्हों को कहा कि मैं जब ऊपर गया था, तब भोजन खाने की तैयारी में थे, अब तो भोजन खा चुके होंगे। अब चलने की तैयारी करते होंगे। अब थोड़ी देर में आ जायेंगे। इस तरह से आधा घण्टा ठहरा दिया। इतनी देर में भाऊ विश्वकिशोर भी आ गये। जब भाऊ ने गेट पर इन सभी पुलिस वालों को देखा और पुलिस इंस्पेक्टर के हाथ में वारण्ट देखा तो स्टे ऑर्डर निकाल कर उनके हाथ में दे दिया। वह स्टे आर्डर देखकर वे बिचारे हैरान हो गये, सभी का मुँह ही पीला पड़ गया। मेरी तरफ देखकर अंदर में गुस्से में आ रहे थे कि इसने हमको बहुत समय बाहर ही गेट पर ठहरा दिया। फिर तो वे सभी वापस चले गये। दूसरे दिन पेपर में समाचार आया कि कल पुलिस इंस्पेक्टर क्लिफ्टन पर गया था और बाबा जी (दादा लेखराज) के लिए वारण्ट लेकर गया था, वहाँ गेट पर एक रामोशी पुलिसमैन खड़ा था, वह इतना कड़ा था जो पुलिस इंस्पेक्टर को अंदर जाने ही नहीं दिया। सबको बाहर ही ठहरा दिया। एक घंटे तक उनको अंदर जाने ही नहीं दिया। वह रामोशी पुलिसमैन इतना कड़ा था। बाद में सबको स्टे ऑर्डर दिखाकर रवाना कर दिया। इस प्रकार पहरे पर यह एक ही अनुभव हुआ बाकी तो बिल्कुल शान्ति से ड्यूटी बजाता रहा। धीरे-धीरे एन्टी ओम मण्डली की सभी हंगामें आदि खत्म हो गये। फिर तो ये रामोशी पुलिस की ड्यूटी भी खत्म हो गई।

बच्चों का टीचर बना

उसके बाद बाबा ने मुझे बच्चों का टीचर बनाकर उन्होंकी संभाल के लिए रखा। 'ब्वाय भवन' नाम का बंगला था, जहाँ पर छह वर्ष से बारह वर्ष की आयु के बच्चे रहते थे। वहाँ मैं और भगवान भाई – दोनों बच्चों को संभालते थे। उन्हों को राजविद्या भी पढ़ाते थे और ज्ञान की प्वाइंटस भी सुनाते थे। बंगले के सामने एक बड़ा मैदान था, वहां उन बच्चों को शाम को क्रिकेट आदि का खेल कराते थे। कभी-कभी उन्होंको पिकनिक स्पॉट पर घुमाकर भी ले आते थे। ऐसे इन 20-25 बच्चों को संभालते रहे। यह ड्यूटी भी एक-डेढ़ वर्ष रही।

धोबीघाट की ड्युटी

उसके बाद मुझे धोबीघाट संभालने के लिए कहा गया। पहले तो एक कांट्रेक्टर था जो रोज कपड़े ले जाता था और धुलाई करके ले आता था। लेकिन फिर अपना ही धोबीघाट बनाने का विचार आया। कुंज भवन (बड़ी बहनों का बंगला) के थोड़ा पास, बीच में एक-दो बंगले छोड़कर एक बंगला था, जिसका नाम गुलजार भवन रखा गया था। उसमें अपने ही कई भाई-बहनें रहते थे, उसके कंपाउंड में यह धोबीघाट खोला गया। मैं उस धोबीघाट का हेड बना। एक बड़ी टिन शीट की टंकी, जो लगभग 8 फुट बाई 4 फुट की बनाई गई थी, में पानी डालते थे। उसके नीचे लकड़ियाँ डालकर आग जलाता था। जब पानी खूब गरम हो

जाता था, तब साबुन और सोडा डालकर उसमें मैले कपड़े डालकर एक मोटी लकड़ी से कपड़ों को अंदर दबा देता था। ये सब मैं अकेला ही रात को 7-8 बजे करता था। फिर सवेरे 4-5 बजे आकर गर्म-गर्म कपड़े एक लकड़े से बाहर निकालता था। इस टंकी के पास ही 10 फीट व्यास की एक गोल टंकी बनाई थी जिसमें रोज़ सवेरे पानी भरते थे। इसके चारों ओर कपड़े सटने की 3-4 स्लेब्स बनाई हुई थीं, जिन पर मैं और दो-तीन दूसरे भाई, गर्म-गर्म कपड़े सटते और धुलाई करते थे। बंगले के कंपाउंड में कपड़े सुखाने के लिए रस्सियाँ लगाई गई थी। उन रस्सियों पर चार-पाँच भाई कपड़े सुखाते थे। यह सारा कार्य हम लोग क्लास से पहले ही करते थे और बाद में स्नान आदि करके क्लास में जाते थे। दिन में फिर कपड़े प्रेस आदि का कार्य करते थे। मैं रहता भी उस गुलजार भवन में ही था। धोबीघाट का कार्य डेढ़-दो वर्ष चलने के बाद एक पूरन नाम का धोबी था, उसने यह सारा कार्य अपने ऊपर उठा लिया। बाकी कपड़े प्रेस करने का कार्य हम लोग करते थे। थोड़े समय के बाद फिर कपड़े प्रेस करने का कार्य भी बाहर के लोगों ने ले लिया। मैं फिर अन्य कई प्रकार की ड्यूटीज में लग गया।

अव्यक्त नामों की सूची

कुंज भवन में जो बहनें रहती थीं, उनमें से कई बहनों को शिवबाबा सूक्ष्म वतन में खींचकर (बुलाकर) साक्षात्कार कराकर कई प्रकार के दृश्य दिखाते थे। कुछ बहनें तो रोज़ ही साक्षात्कार में चली जाती थीं। एक बार एक बहन को शिवबाबा ने एक दृश्य में सभी ब्रह्माकुमार-कुमारियों के अव्यक्त नाम बताये। उस बहन को वहाँ सूक्ष्म वतन में एक बोर्ड दिखाई पड़ा, जिस पर हरेक ब्रह्माकुमार-कुमारी के व्यक्त नाम के सामने अव्यक्त नाम भी लिखे हुए थे। वहाँ अव्यक्त बाबा ने उस बहन को कहा कि आज से सभी ब्रह्माकुमार-कुमारियों को इन अव्यक्त नामों से ही बुलाया जाये। फिर तो उस बहन ने अपने हाथ से ऐसा इशारा किया जो सामने बैठी हुई बहनें समझ गईं कि यह कापी और पैन माँग रही है। साक्षात्कार वाली बहन के आगे कापी और पैन रखे गये। कापी और पैन उठा कर वह बोर्ड पर लिखे नाम कापी पर लिखती गई। जब सभी व्यक्त, अव्यक्त नाम लिखकर पूरे किये, तब वापस इस साकार वतन में आ गई और आकर साकार ब्रह्मा बाबा को सूक्ष्म वतन का समाचार सुनाया और वे नाम भी दिखाये। फिर तो सभी व्यक्त और अव्यक्त नाम लिखकर बोर्ड पर लगाये गये और सभी ने अपने पास नोट करके भी रखे। उस दिन से लेकर सभी को अव्यक्त नाम से बुलाया जाता है। मेरा नाम विश्वरत्न पड़ा और उस दिन से लेकर मुझे भी इसी नाम से ही बुलाया जाता है।

झाड़ और गोला बनाने की सेवा

हर रोज़ सवेरे को साकार ब्रह्मा बाबा कुंज भवन (बड़ी बहनों के बंगले) में आकर मुरली चलाता था। हम सभी भाई-बहनें, जो अन्य बंगलों में रहते थे, वे भी सभी वहाँ ही जाकर बाबा की मुरली सुनते थे। एक दिन जब बाबा आकर संदली पर मुरली चलाने के लिए बैठे तो बैठते ही कहा कि आज मैं (साकार ब्रह्मा बाबा) सूक्ष्म वतन में गया था। वहाँ अव्यक्त बाबा ने

मुझे एक बड़ा सुन्दर झाड़ (वृक्ष) दिखाया, जो मनुष्यों का झाड़ था। बाबा (अव्यक्त बाबा ने साकार बाबा को) ने कहा कि विश्वरत्न को कहो कि इसकी डिजाइन बनावे। मैं क्लास में ही बैठा हुआ था। उसी समय ही साकार बाबा ने मेरे से पूछा कि कैसे बच्चू! ये डिजाइन बनायेंगे? मैंने कहा, हाँ बाबा।

झाड़ के बारे में विचार मंथन

फिर साकार बाबा ने मम्मा को कहा कि मम्मा, इस बच्चे से सभी ड्युटीज छुड़वाकर अन्य बच्चों को बाँट कर दे दो। आज से इसको यही कार्य करना है। वह मोस्ट इंपारटेन्ट कार्य है। मम्मा ने भी कहा, जी बाबा। मुरली पूरी होने के बाद मम्मा ने मुझको बुलाया, मेरे से सभी ड्युटीज छुड़वाकर अन्य भाइयों को बाँट कर दे दीं और मुझे कुंज भवन में ही आउट हाऊस का कमरा दे दिया कि यहाँ ही बैठकर यह कार्य करना है, साथ में टेबल-कुर्सी, पेन्सिल आदि जो मुझे चाहिए था, वह भी दे दिया गया। मैं भी सोचने लगा कि मुझे आज से यही कार्य करना है। बाबा ने पहले झाड़ का ज्ञान तो दिया ही था कि यह सृष्टि एक उल्टा झाड़ है जिसका बीज ऊपर में शिवबाबा है। उस बीज से यह देवी-देवताओं का तना निकलता है, सतयुग-त्रेता दो युगों के बाद डाल-डालियों के रूप में अन्य धर्म निकलते हैं। अब यह झाड़ जड़-जड़ीभूत अवस्था को पहुँच गया है, अब नया झाड़ स्थापन हो रहा है। यह ज्ञान तो बाबा ने पहले से सुनाया ही हुआ था, बाकी उसकी डिजाइन बनानी थी। अब सोचने लगा कि इसे कैसे बनाऊँ। पहले सोचा कि झाड़ में कोई डाल आगे होगी, कोई पीछे होगी, कोई टेढ़ी होगी और डाल के आगे पत्ते भी आयेंगे, तो उस पर लिखत कैसे लिखेंगे कि वह किस धर्म की डाल है। क्योंकि यह झाड़ लोगों को समझाने के लिए बना रहे हैं तो लिखत जरूर चाहिए कि यह डाल इस्लाम धर्म की, यह बौद्ध धर्म की आदि-आदि। यह सोचते-सोचते आखिर में यही विचार आया कि सभी डालें दोनों तरफ सीधे ही बना देता हूँ, पत्ते डालों के सामने नहीं दिखाता हूँ बल्कि डालों के ऊपर और नीचे बना देता हूँ। ऐसे विचार करके बनाना शुरू किया।

एक सीधी लाइन लगाई, ये धरनी है। फिर ऊपर से, नीचे धरनी तक दो लाइनें लगाई, यह तना है। फिर उस तने के चार बराबर भाग किये, ये चार युग हैं। सतयुग और त्रेता के बाद द्वापर से इब्राहिम द्वारा इस्लाम धर्म की स्थापना होती है तो तने के दो भाग छोड़कर उसके बाईं ओर एक डाल निकाली, उसके बाद उस डाल की शाखायें-प्रशाखायें भी दिखाई। उस डाल पर लिख दिया, इब्राहिम का इस्लाम धर्म। अब सोचा कि दूसरी डाल दाईं और निकालनी चाहिए। अगर दूसरा डाल भी बाईं ओर ही निकालता हूँ तो बैलेन्स नहीं रहेगा, झाड़ ही गिर जायेगा। इसलिए दूसरी डाल दाईं ओर होनी चाहिए और यह भी सोचा कि बौद्ध धर्म इस्लाम धर्म के 250 वर्ष के बाद में स्थापन होता है तो बौद्ध धर्म की डाल थोड़ी ऊपर करके बनानी चाहिए। ऐसे-ऐसे अंदर विचार आते रहे। ऐसे विचार करके दूसरी डाल दाईं ओर निकाली और उस पर लिख दिया, बुद्ध द्वारा बौद्ध धर्म। अब सोचने लगा कि लेफ्ट अर्थात् वेस्ट और राइट अर्थात् ईस्ट। इसके बाद नंबर है क्राइस्ट का, वह वेस्ट में है। तो लेफ्ट साइड में डाल निकाल कर उस पर लिखा क्राइस्ट का क्रिश्चियन

धर्म। फिर नंबर है सनातन धर्म का तो वह डाल निकाली, फिर मुस्लिम धर्म की डाल निकाली। फिर गुरु नानक साहब के सिख धर्म की डाल निकाली। फिर देखा कि लेफ्ट-राइट अर्थात् वेस्ट-ईस्ट नंबरवार धर्म आते गये। जैसे बाबा ने झाड़ का ज्ञान समझाया था, उसी अनुसार ही बिल्कुल नंबर पर डाल आते गये। फिर छोटी-छोटी डालियाँ आदि निकाली। फिर बाहर से एक गोल लाइन लगाई, उसके बीच में डालों के आस-पास पत्ते निकाले। तो देखा धरनी से इतना ऊँचा मोटा-सा अच्छा झाड़ दिखाई पड़ रहा था। वह पेन्सिल से बनाया हुआ झाड़ ही बाबा के पास ले आया और बाबा को सुनाया कि बाबा ऐसे बनाया है। डाल के आगे पत्ते नहीं बनाये हैं क्योंकि लिखत भी लिखनी है और डाल भी ऐसे ही सोधे बनाये हैं। बाबा ने कहा, बिल्कुल ही ठीक है यह तो समझाने के लिए है, ऐसे ही होना चाहिए।

अब इस पर बाबा का मंथन चलने लगा। बुद्धि बाबा की, अंगुली मेरी चलने लगी। फिर तो बाबा जो रोज़ डायरेक्शन देते रहे, उसी अनुसार ही मैं बनाता रहा। बाबा ने कहा कि इसमें तुमने चार युग तो बनाये हैं लेकिन पाँचवां युग कहाँ है? मैंने कहा, बाबा अभी बनाकर ले आता हूँ। फिर झाड़ के नीचे थोड़ी जगह रखकर, उसमें जड़ें बना दी कि यह संगमयुग है। फिर बाबा के पास ले आया। बाबा ने कहा, हाँ, ठीक है, अब इस जगह में बाबा ब्रह्मा का चित्र बना दो। मैंने कहा, हाँ बाबा, बनाकर ले आता हूँ। तो वहाँ तने के नीचे संगमयुग में ब्रह्मा बाबा का चित्र (पेन्सिल से) बनाकर फिर बाबा के पास लेकर आया। बाबा ने कहा, हाँ ठीक है। फिर बाबा ने थोड़ा सोचने के बाद कहा, हमारा तो प्रवृत्ति मार्ग है, इसलिए यहाँ संगमयुग में ब्रह्मा बाबा के साथ मम्मा का चित्र भी बनाओ। मैंने कहा, हाँ बाबा, बनाकर ले आता हूँ। फिर बाबा को चित्र जो बीच में बनाया था, उसको रबर से मिटाकर बाबा और मम्मा दोनों का चित्र बीच में बना दिया। फिर बाबा के पास लेकर आया। बाबा ने कहा, हाँ ठीक है। सोचते-सोचते बाबा ने फिर कहा, मम्मा-बाबा कहने वाले कौन? बच्चे ही तो मम्मा-बाबा कहेंगे। इसलिए यहाँ बच्चों के भी चित्र बनाओ। मैंने कहा, हाँ बाबा, बनाता हूँ। फिर मैंने बाबा को कहा, बाबा, बच्चे तो बहुत हैं, यहाँ कितने बच्चों को बिठाऊँ? बाबा ने कहा, देखो बच्चू, आठ रत्नों की माला गाई हुई है, इसलिए तुम यहाँ आठ बच्चों के चित्र बना दो, वे सभी बच्चों का प्रतिनिधित्व करेंगे। मैंने कहा, हाँ बाबा। फिर मैंने कहा, बाबा, आठ बच्चों के नाम आप हमको बता दीजिए, उनके फोटो लेकर मैं यहाँ लगा दूँगा। बाबा ने कहा, हाँ, ये बात तुम्हारी ठीक है। अच्छा, आज नहीं, कल मैं तुमको बताऊँगा।

झाड़ में, मम्मा-बाबा के संग बच्चे

फिर बाबा ने संतरी दादी को बुलाया। संतरी दादी संदेशी थी, ध्यान में अव्यक्त बाबा के पास जाया करती थी। उसको बाबा ने कहा, जाओ बाबा के पास और सुनाओ कि यहाँ यह झाड़ बन रहा है, उसमें आठ बच्चों के चित्र बनाने हैं तो कौन-से बच्चे यहाँ बिठायें, उनके नाम आप बता दीजिये। फिर संतरी बहन अव्यक्त बाबा के पास गई और बाबा से आठ बच्चों के नाम ले आई और साकार बाबा को बताया। दूसरे दिन बाबा ने मुझे वे आठ नाम दिये। वे थे - दादी मनमोहिनी, दादी प्रकाशमणि, दादी बृजइन्द्रा, दादी

ध्यानी, दादी शान्तामणि, दादी बृजशान्ता, भाऊ विश्वकिशोर और विश्वरत्न। मैंने फिर तीन दादियाँ और एक भाई के फोटो बाईं तरफ और तीन दादियाँ और एक भाई के फोटो दाईं तरफ वहाँ संगम पर लगा दिये। ऐसे आठ बच्चों के फोटो लगा दिये। ऐसे रोज-रोज बाबा नई-नई बातें बताता रहा, बाबा की बुद्धि चलती रही और मेरी बुद्धि को भी बाबा टच करते रहे और मेरी अंगुली में शक्ति भरते रहे। ज्ञान में आने से पहले यह आर्ट का काम मैंने कभी किया ही नहीं था, ब्रश भी कभी अपने हाथ में नहीं उठाया था। एक गाँव का छोरा था लेकिन करन-करावनहार बाप हर बच्चे की जन्मपत्री को जानते हुए मुझ आत्मा द्वारा यह आर्ट का कार्य कराते रहे, शक्ति भी भरते रहे जिससे इस कार्य में सफलता मिलती रही।

झाड़ के बारे में बाबा के डायरेक्शन

फिर बाबा ने कहा, मम्मा-बाबा के पीछे से कंबाइंड स्वरूप चतुर्भुज का चित्र बनाओ। मैं वह चतुर्भुज का चित्र बनाकर ले आया। फिर बाबा ने कहा, नया झाड़ जैसे उत्पन्न होता है तो पहले दो पत्ते निकलते हैं, ऐसे यहाँ इस चतुर्भुज से दो पत्ते अर्थात् राधे-कृष्ण निकलते हैं, ऐसे दो पत्ते बनाओ। फिर वह राधे-कृष्ण का चित्र बनाया। फिर बाबा ने कहा कि सतयुग की सीन बनाओ, गोल्डन महल बनाओ। त्रेता की भी सीन बनाओ, जिसमें राम-सीता को बिठाओ। सतयुग-त्रेता की वह सीन भी बनाई। फिर बाबा ने कहा, द्वापर से भक्ति-मार्ग शुरू होता है, तो भक्ति मार्ग के चित्र बनाओ। पहले शिवलिंग की पूजा होती है, फिर देवताओं की। फिर आगे चलकर कलियुग में झाड़ की भी पूजा होती है। ये सभी चित्र भी बनाता गया। फिर बाबा ने कहा, सृष्टि के अंत में ब्रह्मा बाबा का खड़ा चित्र बनाओ। वह भी बनाया। फिर बाबा ने कहा, हर धर्म की डाल की आदि में उनके डिवाइन फादर, उनके मस्जिद, गिरजाघर आदि पूजा के स्थान बनाओ। वे भी बनाये। फिर कहा, हर डाल से लटके हुए फल, उन्हों के फालोअर्स के निकालो। वह भी जिस-जिस धर्म की डाल थी, उन्हों के ऐसे-ऐसे फालोअर्स (मनुष्य के रूप में) के चित्र फल के रूप में लटकते हुए दिखाये। फिर बाबा ने कहा, कलियुग की छोटी डालियों में से भी एक डाली में गांधी का चित्र बनाओ, एक में जिन्ना का चित्र बनाओ। वे भी बनाये। फिर बाबा ने कहा, एटामिक वर्ल्ड वार का चित्र बनाओ और दोनों तरफ उन्हों को बिल्लों के रूप में दिखाओ अर्थात् दो बिल्ले लड़ रहे है और माखन (नई सृष्टि की राजाई) कृष्ण के हाथ में दिखाओ। आत्मायें कैसे मच्छरों सदृश्य अपने घर मुक्तिधाम में जा रही हैं, वह भी दिखाओ। प्राकृतिक आपदायें और गृहयुद्ध आदि सब दिखाओ। तो ये सभी चित्र भी बनाये। वर्ल्ड वार में बिल्लों के रूप में एक तरफ रूजवेल्ट का चित्र बनाया और दूसरी तरफ स्टालिन का चित्र बनाया क्योंकि उन दिनों में एक-दूसरे के सामने यही थे। झाड़ के चित्र के दोनों तरफ इसकी समझानी की लिखत भी लिखी गई। ऐसे एक मास तक झाड़ के चित्र में सुधार होता रहा। प्यारे बाबा मुझको डायरेक्शन्स देते रहे और मै उस अनुसार झाड़ का चित्र बनाता गया।

मम्मा ने सब सुविधायें प्रदान की

एक मास के बाद बाबा ने कहा कि अब इस झाड़ में सारा ज्ञान समाया हुआ है। अब मुझे ऐसे बहुत

चित्र चाहिएँ जो मैं सभी मंत्रियों को भेजूँ और ये मुझको जल्दी ही चाहिएँ। फिर जल्दी-जल्दी में कह दिया कि बस मुझे दस दिन के अंदर एक दर्जन चित्र तैयार करके दे दो। मैंने कहा, हाँ बाबा, बना देंगे। मैं बाबा को कभी ना तो करता ही नहीं था। बाद में मैंने सोचा कि बाबा को मैंने हाँ की है तो दस दिन के अंदर 12 झाड़ के चित्र तैयार करने ही है लेकिन अंदर में यह भी सोच रहा था कि कैसे बनाऊँ, क्या करूँ क्योंकि एक-एक झाड़ का चित्र तैयार करने में कम से कम चार-पाँच दिन लग जायेंगे तो 12 चित्र तैयार करने में तो बहुत दिन लग जायेंगे। लेकिन अंदर में दृढ़ संकल्प था कि तैयार करना ही है। ये दृढ़ संकल्प रखकर मैं मम्मा के पास गया और कहा, मम्मा, बाबा ने यह कार्य दिया है कि दस दिन के अंदर 12 झाड़ के चित्र बना दो जो मंत्रियों आदि को भेजेंगे। मम्मा ने कहा, हाँ भले बनाओ, तुमको इसके लिए क्या चाहिए? मैंने कहा, मम्मा, मदद चाहिए। मम्मा ने कहा, मदद करने वाले भाई तो थोड़े ही हैं, वे सभी बाहर की खरीदारी आदि के कार्यों में बिजी हैं, वे तो तुमको मदद नहीं कर सकेंगे, बाकी यहाँ बहनें हैं, वे डिजाइन आदि का कुछ भी नहीं जानती हैं, वे तुमको कैसे मदद कर सकेंगी? मैंने कहा, मम्मा, आप मुझको केवल 5-6 हैण्डस दे दीजिये, फिर मैं उनको डिजाइन बनाना सिखाऊँगा भी और उन्हों से कार्य भी कराऊँगा। फिर तो मम्मा ने 5-6 बहनों को बुलाया और उन्हों को कहा कि विश्व रत्न को इस कार्य में मदद करो। जैसे वह कहे, वैसे करते रहना।

झाड़ डिपार्टमेन्ट बन गया

मम्मा ने एक बड़ा कमरा भी उसी कुंज भ... दे दिया और बड़े तीन-चार टेबल भी रखवा दिये। ... उन 3-4 टेबल के ऊपर की लकड़ी के पाटिये निकल... दिये और उनकी जगह मोटे शीशे रखवा दिए। ... पर एक-दो बने हुए चित्र रखे, उसके ऊपर ड्राइंग पे... रखा। नीचे से टेबल लैम्प रखकर लाइट ऑन करते तो ऊपर से पेपर पर वह डिजाइन दिखाई पड़ने लगा। इस प्रकार बहनों को ट्रेसिंग करना सिखाया। एक बहन को कहा कि ये जो सभी लाइन्स हैं, आप सिर्फ ... पेन्सिल से लगाती जाओ। दूसरी बहन से कहा कि ... ये पत्ते दिखाई पड़ते हैं, इन्हें आप हरी स्याही से भर... जाओ। ऐसे-ऐसे सभी बहनों को कार्य दे दिया। बाकी जो चेहरे आदि थे, वे मैं बनाता गया। फालोअर्स के फीचर्स भी मैं बनाता गया। ऐसे रोज़ 8-10 घंटा कार्य करते दस दिन में 12 चित्र तैयार कर बाबा के हाथ में दे दिये। बाबा देखकर बड़े खुश हुए। मुझे इस पर शाबाशी दी। फिर तो बाबा ने कहा, और भी चित्र बनाते जाओ। फिर मैंने अन्य बहनों को भी ये चित्र बनाना सिखा दिया। ऐसे ये दस-बारह बहनों की 'झाड़ डिपार्टमेन्ट' बन गया।

चक्र के चित्र का डिजाइन

थोड़े ही समय के बाद बाबा ने क्लास में मुरली चलाते समय कहा, 'जैसे झाड़ में यह समझानी दी जाती है कि यह सृष्टि कैसे आदि से अंत तक चलती है अर्थात् सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग चलते हैं और फिर रिपीट होते हैं, ऐसे ही यह सारा ज्ञान चक्र के रूप में समझाना चाहिए। फिर बाबा ने कहा कि मैं आप

सभी बच्चों को लेख (Essay) देता हूँ। आप सभी ऐसे चक्र की डिजाइन बनाकर कल यहाँ ले आना जिसमें सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग दिखाना और फिर रिपीट कैसे होते हैं, वह भी दिखाना। फिर तो सभी भाई-बहनें, अपनी-अपनी रीति से डिजाइन बनाकर दूसरे दिन क्लास में ले आये। मैंने जो डिजाइन बनाई थी, उसमें चक्र उल्टे तरफ अर्थात् बाईं तरफ घूमता हुआ दिखाया था। चंद्रहास भाई ने मेरे जैसा ही डिजाइन बनाया लेकिन चक्र राइट की तरफ घूमता हुआ दिखाया। बाबा ने सभी का डिजाइन देखा और कहा कि दो डिजाइन ठीक बने हुए हैं, एक चन्द्रहास बच्चे का और दूसरा विश्वरत्न बच्चे का। लेकिन विश्वरतन के डिजाइन में चक्र उल्टा चल रहा है, इसलिए वह डिजाइन ठीक नहीं है। बाकी चन्द्रहास का डिजाइन ठीक है और चक्र भी सुल्टा चलता हुआ दिखाया है, इसलिए चन्द्रहास पास हो गया है।

फिर तो बाबा ने मुझे कहा कि अब तुम इस चन्द्रहास के डिजाइन को ठीक रीति से बनाकर, गोल्डन, सिल्वर, कॉपर, आयरन आदि सभी युगों में ऐसे रंग देकर अच्छा चित्र बनाओ। उसमें लक्ष्मी-नारायण, सीता-राम के चित्र भी बनाओ और फिर धर्मपिताओं के चित्र भी दिखाओ। मतलब ऐसे सारा डिजाइन ठीक रीति से बनाओ। फिर तो मैंने वह चक्र का डिजाइन बनाना शुरू किया। उसमें भी बाबा डायरेक्शन देते रहे, रिफाइन कराते रहे। उसमें धर्मशास्त्र गीता, बाइबिल आदि भी दिखाया। संगमयुग भी दिखाया गया। अंत में आत्मायें कैसे उड़ती हुई अपने घर वापस जा रही हैं, फिर चक्र कैसे रिपीट होता है – ये सब राज़ उस चक्र के रूप में दिखाये गये। इस प्रकार, चक्र का डिजाइन भी थोड़े ही दिनों में अच्छा तैयार हो गया।

बृजकोठी में बाबा के अंग-संग रहने का सौभाग्य

माउंट आबू में जब हम सभी आये, तब सभी एक ही बृजकोठी (राजा बृजेन्द्र सिंह, भरतपुर का बंगला) में रहने लगे। कराची में तो हमारे 7-8 बंगले थे। आरंभ में तो 350 के लगभग भाई-बहनें थे। पाकिस्तान होने के बाद धीरे-धीरे कोई-कोई अपने सम्बन्धियों के पास मुंबई में चले गये। माउंट आबू में आने के बाद फिर अन्य और भी अपने संबंधियों के पास चले गये। बाकी हम 200 के लगभग रह गये जो बृजकोठी में रहने लगे। बाबा भी इसी बृजकोठी में अलग कमरे में रहते थे। एक ही बंगले में बाबा और बच्चों का साथ में रहना, सभी बच्चों को सारा दिन बाबा के साथ का अच्छा अनुभव होता रहा। बाबा रोज़ सवेरे क्लास में मुरली चलाने आते थे। फिर क्लास के बाद बाबा के साथ 50-60 भाई-बहनें घूमने जाते थे। बाबा कहते थे, जो भी घूमने चलें, वे शर्ट एण्ड शॉर्ट पहन कर चलें और टेनिस शू पहन कर चलें। चप्पल पहन कर चलने की आज्ञा नहीं थी। इसलिए सभी भाई-बहनें इसी ड्रेस में चलते थे। ड्रेस भी यूनिफार्म बनाई थी। शर्ट सफेद और शॉर्ट नीली थी। सभी इस यूनिफॉर्म में चलते थे। बाबा स्वयं भी शर्ट एण्ड शॉर्ट पहन कर ही चलते थे लेकिन बाबा की शॉर्ट सफेद थी। उन दिनों में माउंट आबू में ये बृजकोठी शहर से थोड़ा दूर, लास्ट बंगला था यानि इस बंगले के बाद में आबादी नहीं थी। जो रास्ता नीचे आबू रोड जाता है, वही रोड है। हम सभी घूमने शहर की तरफ नहीं जाते

थे, लेकिन पहाड़ों की तरफ जाते थे। कभी कोई पहाड़ पर, कभी कोई पहाड़ पर। ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों पर भी चढ़ जाते थे। सवेरे बाबा तेज चलते थे। अन्य भाई-बहनों को कब-कब दौड़कर चलना पड़ता था। शाम को भी बाबा और हम भाई-बहनें घूमने जाते थे। लेकिन शाम को शर्ट एण्ड शॉर्ट पहन कर नहीं जाते थे। साधारण ड्रेस में जाते थे और तेज नहीं चलते थे लेकिन धीरे-धीरे चलते थे। पहाड़ों पर नहीं जाकर, सीधे रास्ते पर जाते थे। टोल टैक्स तक जाकर वापस आ जाते थे। बाकी सवेरे तो बाबा हमको कभी किस पहाड़ी पर, कभी किसी पहाड़ी पर ले जाते थे। कभी वाटर वर्क्स की पहाड़ी पर, कभी अपर गोदरा डेम पर भी जाते थे। कभी अच्छी-सी पहाड़ी पर बैठकर बाबा क्लास भी कराते थे।

पहाड़ों की सैर

एक पहाड़ी जो समतल थी, उस पर कभी-कभी फुटबॉल, किक्रेट आदि भी खेलते थे। ऐसे बाबा के साथ सभी बहुत खुशी का अनुभव करते थे। जब किसी नये पहाड़ पर जाते थे, तब बाबा मुझे कहते थे कि तुम आगे-आगे चलो, गाइड बनो, रास्ता निकालो कि कहाँ से रास्ता ऊँची चोटी पर जाता है। तो मैं आगे-आगे चलकर रास्ता निकालता था और फिर सब मेरे पीछे आते थे। फिर लौटते समय बाबा मुझे कहता था, अब गार्ड बनो, सभी के पीछे अंत में आओ, तो मेरी गइयाँ (मातायें-बहनें) कहाँ पीछे पहाड़ों में रह न जायें, गुम न हो जायें। तो फिर मैं सभी के पीछे-पीछे आता था। ऐसे हम बाबा के साथ सवेरे सैर करते माउंट आबू की सभी ऊँची-ऊँची पहाड़ियों पर गये। वहाँ पर कभी-कभी चेरी-करौदा, केरी (कच्चे आम) झाड़ों से तोड़कर खाते भी थे और साथ में भी ले आते थे, घर में बैठे भाई-बहनों को खिलाने के लिए।

रोड आदि बनाने की सेवा

ऐसे रोज़ एक-डेढ़ घण्टा या कभी दो घण्टे बाद लौटकर नौ-साढ़े नौ बजे नाश्ता करते थे। नाश्ता करने के बाद बाबा मुझे कहते थे, बच्चू, अब ले आओ अपनी सेना (ग्रुप) को। मै जैसेकि मॉनीटर था। मैं जाकर इशारा करता था कि चलो, अब बाबा बुलाते है। तो 20-25 भाई-बहनों की पार्टी उसी शर्ट एण्ड शॉर्ट की ड्रेस में बाहर आ जाते थे। बाबा रोज़ कोई न कोई कार्य देता था। फिर सभी मिलकर वह कार्य करते थे। कभी बाहर के कंपाउंड में बाथरूम बनाते थे। कोई ईंट, कोई सीमेन्ट ले आते थे, कोई मिस्त्री बनकर दीवार उठाता था। कोई फिर बाथरूम के दरवाजे टिन शीट के बनाते थे। ऐसे बाथरूम आदि तैयार करते थे। कभी बाबा हमारे से रोड आदि बनवाता था। हर वर्ष बरसात के कारण रोड (मेन रोड से बंगले तक) खराब हो जाता था तो उसे हम ही हर वर्ष अपने हाथों से बनाते थे। बाबा भी उसी ड्रेस में वहाँ खड़े होकर देखभाल करते थे। ऐसे सारा दिन यह कार्य पार्टी (सेना) कोई न कोई कार्य करती थी। कार्य करते बाबा को भी सदा साथ देखते अंदर ही अंदर खुशी में जैसे कि नाचते थे।

आबू से बाहर बहनों का सेवा पर जाना

एक-डेढ़ वर्ष के बाद यहाँ इकानॉमी का पार्ट शुरू हो गया, तो बाबा ने बहनों को कहा कि अब जाओ ईश्वरीय सेवा पर, यहाँ बैठ कर क्या करोगी।

इनसे तो बाहर जाकर लोगों का कल्याण करो। यह अविनाशी ज्ञान सुनाकर उन्हों का भाग्य बनाओ। फिर तो बहनें धीरे-धीरे ईश्वरीय सेवा पर बाहर निकली। पहले दिल्ली में जाकर ईश्वरीय सेवा शुरू की। धीरे-धीरे सेवा बढ़ती गई, पंजाब और उत्तर प्रदेश की तरफ भी सेवा चालू हो गई। सेवा बढ़ने के कारण अन्य बहनों को बुलाना शुरू हो गया। तो बाबा बहनों को बाहर भेजता गया। एक दिन मिट्ठू बहन, जो बाबा की डिस्पेन्सरी संभालती थी, को भी बाबा ने कहा, तुमको भी ईश्वरीय सेवा पर बुला रहे हैं, तुम भी जाओ, मैं तुम्हारी यह डिस्पेन्सरी संभालूँगा। फिर तो बाबा ने मुझे बुलाया और कहा, बच्चू, यह डिस्पेन्सरी तुम संभाल लेना। यह (मिट्ठू बहन) जा रही है सर्विस पर। मैंने कहा कि हाँ बाबा, संभाल लूँगा। फिर मिट्ठू बहन ने मुझे डिस्पेन्सरी में जाकर सभी दवाइयाँ दिखाई और बताया कि जिसको बुखार हो, उसे यह गोली देना। जिसको सिर दर्द हो, उसे यह गोली देना। जिसको पेट में दर्द हो, उसे यह गोली देना। ऐसे सभी दवाइयाँ बताईं। इंजेक्शन कैसे सिरिंज में भरा जाता है और कैसे फिर इंजेक्शन लगाया जाता है, वह भी तरीका बताया। फिर तो मिट्ठू बहन के सामने ही एक-दो को मैंने इंजेक्शन लगाया। ऐसे सीख गया।

डिस्पेन्सरी की सेवा

मिट्ठू बहन के जाने के बाद मैंने दवाइयाँ देना आरंभ कर दिया। जो भी पेशेन्ट आता था, उसको प्यार से पूछता था कि बहन जी, भाई जी, बताइये क्या तकलीफ है? वे बीमारी बताते थे। मैं उनको कहता था, बस, अच्छा, यह गोली ले लो, शाम तक ठीक हो जायेंगे। सचमुच बाबा की ऐसी मदद मिलती रही जो शाम तक वह पेशेन्ट ठीक हो जाता था। सवेरे मैं उनसे पूछता था, कैसी तबीयत है? वे कहते थे, नहीं, अब जरूरत नहीं है। ऐसे डिस्पेन्सरी को चलाता रहा। यदि ऐसा कोई पेशेन्ट आता था जिसको कोई बड़ी बीमारी होती थी तो उसको सरकारी अस्पताल ले जाता था और वहाँ के डाक्टर को दिखलाकर उनसे दवाई लिखवाकर बाजार से वे दवाइयाँ खरीद कर उनको दे देता था। वह पेशेन्ट संतुष्ट रहता था। इस तरह मैं भी डाक्टरों के कनेक्शन में आते-आते डाक्टर बन गया। कई दवाइयाँ बुद्धि में रहती थी और हजारों इंजेक्शन लगाये। इस प्रकार लगभग 25 वर्ष तक यज्ञ का डाक्टर बनकर रहा।

विभिन्न विभागों के अनुभव

माउंट आबू में आने के बाद कई भाई-बहनें अपनी तबीयत आदि के कारण या ईश्वरीय सेवा अर्थ मुंबई की तरफ चले गये और वहाँ ही अपने मित्र-संबंधियों के पास रहना आरंभ कर दिया। यहाँ माउंट आबू में वापस ही नहीं आये। ऐसे ही कारपेन्टरी डिपार्टमेन्ट वाले भाई भी मुंबई चले गये तो बाबा ने मुझे कहा, यह डिपार्टमेन्ट भी तुम संभालो। मैं तो सदैव हाँ जी, हाँ जी ही करता था। कोई बिजली डिपार्टमेन्ट वाला चला गया तो भी बाबा ने कहा कि यह भी तुम संभालो। ऐसे अनेक कार्य मिलते रहे। रात को पहरा भी देता था। आधा समय मैं पहरा देता था और आधा समय सरदार सोहन सिंह (जो बाद में पंजाब से आकर समर्पित हुए थे) पहरा देते थे। यहाँ माउंट आबू में भी सवेरे स्नान के लिए गर्म पानी करने की ड्यूटी भी करता रहा। ऐसे

अनेक प्रकार के कार्य मिलते रहे और मैं सदैव हाँ जी, हाँ जी का पार्ट बजाते हुए करता रहा। दिन में आराम नहीं करता था। प्यारे बाबा का मेरे में विश्वास हो गया था कि इस बच्चे (मुझे) को जो कुछ कहता हूँ, सदैव हाँ जी करता है, कभी ना नहीं करता है और कार्य भी अपनी बुद्धि अनुसार ठीक ही करता है। सच्चाई-सफाई से भी करता है, आज्ञाकारी-ईमानदार बच्चा है। इसलिए जो भी नया कार्य होता था तो मुझे ही बुलाकर कहते थे कि यह कार्य तुमको करना है। मुझे कार्य देने के बाद बाबा खुद निश्चिन्त हो जाते थे। इसके साथ चित्र बनाने का कार्य भी करता रहा। रोज़ पोस्ट डालकर आना, बाज़ार से खरीदारी करके आना आदि-आदि ड्युटी भी करता रहा।

बर्तन सफाई

यहाँ बृजकोठी में घर के कमरों आदि की सफाई भी अपने ही भाई-बहने करते थे। एक बाहर की माता कमरों के बाहर की सफाई आदि करने के लिए रखी हुई थी और एक नौकर भाई भण्डारे के बड़े-बड़े बर्तन सफाई करने के लिए रखा हुआ था। एक दिन वह नौकर बीमार हो गया, आना ही बंद कर दिया। बाबा ने मुझे बुलाया और कहा, बच्चू, ये भण्डारे के बर्तन तुम ही साफ कर देना। मैंने कहा, हाँ बाबा, मैं साफ कर दूँगा। मुझे बड़ी खुशी हुई कि बाबा का मेरे में कितना विश्वास है। बाबा जरूर दिल में समझता होगा कि ऐसे कार्य के लिए इस बच्चे (विश्वरत्न) को कहूँगा तो इसको अंदर में फीलिंग नहीं आयेगी, खुशी-खुशी से दिल लगाकर कार्य करेगा। मेरे से सच पूछो तो उस दिन मुझे बहुत खुशी हुई। अंदर में सोचता ही रहा कि किसने मुझे यह कार्य दिया है, स्वयं बापदादा ने दि कितना भाग्यशाली हूँ जो स्वयं बापदादा का इतना में विश्वास है! बस, यही सोचते सारा दिन बापदा की ही याद आती रही। यह तो मेरा शुरू से ही स्वभा था कि हर कार्य में टाइम अधिक लगाता था, फि कार्य करता था लेकिन कार्य बहुत अच्छी रीति संपन्न करता था। तो बर्तन साफ करने का कार्य हाथों से अच्छी रीति होता रहा लेकिन बुद्धि को क्योंकि बर्तन साफ करने में बुद्धि इतनी नहीं लगा पड़ती थी इसलिए बुद्धि से बापदादा को बड़ी अच्छी रीति से याद करता रहा और बापदादा को अपने साथ अपने सामने देखता रहा। जैसे कहावत है, 'हाथ का में और दिल यार में' अर्थात् हाथ से कार्य को और दिल बाबा की तरफ लगी रहे। सारा दिन इस ड्यूटी को बजाते हुए जैसेकि एकांत में योग में ही बैठा रहा। ऐसे एक मास वह नौकर नहीं आया और मैं एक मास तक इस ड्यूटी पर रहा। सच तो यही है कि आज दि तक जो भी ड्यूटी बजाई हैं और अब तक बजा रहा हूँ, उन सबमें सबसे अच्छा अनुभव इसी ड्यूटी में रहा और बहुत अच्छी अतीन्द्रिय सुख की अनुभूति हुई। वहाँ किचन में पीछे की ओर एकांत में ही बर्तन सफाई करने होते थे, वहाँ किसी का आना-जाना नहीं होता था इसलिए अच्छे से बापदादा को याद करता रहा।

दिल्ली में सेवा के लिए जाना

थोड़े समय के बाद दिल्ली में ईश्वरीय सेवा बढ़ गई, वहाँ बहनों ने कमला नगर में एक फ्लैट किराये पर लिया और सेवा करने लगे। बड़ी दीदी मनमोहिनी जो भी उन दिनों वहाँ ही थी। जैसे-जैसे सेवा आगे

बढ़ती गई तो बहनों को बाज़ार से सामान आदि खरीद करने, कहीं संदेश देने आदि के लिए एक भाई को साथी बनाने की आवश्यकता हुई। बाबा ने मुझे बुलाया और कहा, दिल्ली में बहनों को सेवा में मदद करने के लिए एक भाई चाहिए, इसलिए तुम दिल्ली में जाओ और उनको मदद करो। फिर मैं दिल्ली गया, वहाँ बाहर आना-जाना, सेवा करना शुरू कर दिया। दिल्ली में उस समय एक ही कमला नगर का सेन्टर था, वहाँ जाकर रहा। वहाँ साइकिल पर सब्जी मार्केट में जाकर सब्जियाँ खरीदकर ले आना, अन्य भी चीज़ें बाज़ार से खरीद कर लाना शुरू कर दिया। हमारे सेन्टर पर जो बाहर के जिज्ञासु ज्ञान सुनने के लिए आते थे, उन्हों को सप्ताह का कोर्स भी कराता था। ऐसे बहनों को हर प्रकार की मदद करता रहा। एक भाई – अविनाश चन्द्र सेन्टर पर आता था। उससे मेरी अच्छी पहचान हो गई। कभी-कभी उसको साथ में लेकर साइकिल पर गाँव में जाते थे और खेतों में जाकर सब्जियाँ भी खरीद कर ले आते थे और कभी गुड़ बनाने की फैक्ट्री से गुड़ खरीद कर बोरियाँ भरकर ले आते थे जो माउंट आबू भेज देते थे।

सन् 1955 में हम लोगों ने बृजकोठी का मकान छोड़ दिया और शहर की तरफ दो बंगले कोटा हाऊस और धौलपुर हाऊस किराये पर लेकर रहने लगे। दोनों बंगलों के बीच में एक कच्चा रास्ता था जिससे एक बंगले से दूसरे बंगले में आते-जाते थे। दोनों बंगले साथ-साथ थे। मैं फिर वहाँ रहने लगा और वहाँ भी सवेरे पानी गर्म करने की ड्यूटी, डिस्पेन्सरी में दवायें देने आदि की ड्यूटी और चित्रों का कार्य संभालता था।

सन् 1957 में माउंट आबू में गवर्मेन्ट ने हमारे दोनों बंगलो का अधिग्रहण किया क्योंकि उन्हों को ये दोनों बंगले ऑफीसर्स आदि के रहने के लिए चाहिए थे। इसलिए उन्होंने कहा कि आप दूसरा कोई रहने का स्थान ढूँढो और वहाँ जाकर रहो, ये दोनों बंगले हमको चाहिएँ। तब बाबा ने यह पोकरान हाऊस (पांडव भवन) लिया और हम लोग यहाँ आकर रहे। मैं तो उन दिनों दिल्ली में था।

डिस्पेन्सरी को संभालते हुए मैं एक घरेलू डॉक्टर बन गया। तो बाबा को भी इंजेक्शन लगाता रहा। बाबा रोज़ दो बार स्नान करते थे। एक बार सवेरे क्लास में आने के पहले और दूसरी बार दिन में भोजन के पहले। पहले बाबा की मालिश तथा स्नान आदि कराने का कार्य भी मै करता था परंतु बाद में यह ड्यूटी चन्द्रहास भाई ने ले ली।

जब हम लोग कराची में थे, उस समय जो भाई थे, उन सभी ने मिलकर सोचा कि हमारे सिर के बाल बाहर का कोई नाई क्यों काटे। क्यों नहीं हम लोग बाल काटना सीखकर एक-दो के बाल काटें। यह निश्चय करने के बाद बाल काटने की मशीन मंगाई गई और चार-पाँच भाई बाल काटना अच्छी तरह से सीख गये। उन भाइयों में से एक मैं भी था। हम चार-पाँच भाई सभी भाइयों के बाल काटते थे। धीरे-धीरे वे भाई अपने इस ब्राह्मण परिवार को छोड़कर अपने मित्र-संबंधियों के पास चले गये, बाकी मैं ही अकेला रह गया। यह भी मेरा एक सौभाग्य ही रहा जो बाबा के बाल काटने का शुभ अवसर भी मुझे ही मिला।

ऐसे बापदादा के साथ यह मेरा अलौकिक नया जीवन चलता रहा और मैं बापदादा की हर श्रीमत को

सच्चाई और सफाई से पूर्ण रूप से पालन करने की कोशिश करता रहा जिस कारण बापदादा की हर प्रकार से मदद भी मुझे मिलती रही और इस कारण सफलता भी मिलती रही।

मातेश्वरी जी का देह-त्याग

24 जून, 1965 में प्यारी मम्मा ने अपनी पुरानी देह का त्याग किया। उसके बाद 12 फरवरी, 1968 को मुंबई में भाऊ विश्वकिशोर ने देह का त्याग किया, उनका अंतिम संस्कार मुंबई में हुआ।

बाबा अव्यक्त हुए

अठारह जनवरी, 1969 को प्यारे ब्रह्मा बाबा सवेरे क्लास में नहीं आये। शाम को बाबा ने आधा घण्टा बहुत अच्छी मुरली चलाई और फिर अंत में याद-प्यार नमस्ते कहने के बाद कहा, अच्छा, अब छुट्टी। यह 'छुट्टी' पहले बाबा कभी नहीं कहते थे। उस दिन यह 'छुट्टी' अक्षर बोलकर क्लास के बाहर आये। उस समय लगभग रात्रि के नौ बजे थे। मैं भी क्लास से उठकर बाहर आया। बाबा ने मुझे देखकर कहा, बच्चू, डॉक्टर को बुलाओ, मुझे चेक करके जाये। मैंने उसी समय जमुनाप्रसाद भाई को साइकिल पर भेजा (उन दिनों हमारे पास एक भी कार नहीं थी) और उसको कहा कि जल्दी ही अभी-अभी डॉक्टर को यहाँ ले आओ, बाबा को चेक करके जाये। जमुनाप्रसाद भाई उसी समय साइकिल पर गया और डॉक्टर को चलने के लिए कहा। उन दिनों सिविल हॉस्पिटल के डॉक्टर अरोड़ा जी थे। उस समय वे घर में ही थे। डॉक्टर ने कहा, हाँ, बस सिर्फ चाय पीकर चलता हूँ। इधर बाबा आकर अपने पलंग पर लेट गया। बाबा के कमरे में दादी प्रकाशमणि और अन्य थोड़ी बहनें और मैं बैठे थे। मैं बाबा को देखता रहा। मैंने देखा कि बाबा अपना एक हाथ हार्ट पर रखकर कभी लेट जाते थे और कभी बैठ जाते थे। मैंने ऐसे अनुभव किया कि बाबा को बहुत दर्द है और रेस्टलेस फील कर रहे हैं। मैं जल्दी-जल्दी कमरे से बाहर आया कि जमुनाप्रसाद को फोन करूँ कि जल्दी डॉक्टर को ले आओ। मैंने हॉस्पिटल में फोन किया परंतु वहाँ किसी ने फोन नहीं उठाया। उस समय डॉक्टर के घर में फोन नहीं था। फिर मैंने सरदार नेवन्द सिंह की दुकान पर फोन किया जो हॉस्पिटल के सामने ही थी। वहाँ सरदार जी का बच्चा दयाल सिंह बैठा था, उसको कहा कि आप जाकर जल्दी ही डॉक्टर को भेजो, बाबा को अधिक तकलीफ है। वह तुरंत ही डॉक्टर के पास गया। उस समय डॉक्टर चाय पी चुके थे और तुरंत अपने स्कूटर पर यहाँ आये। मैंने इसके बीच ही कोरामिन की इंजेक्शन निकाल कर रखी और सिरिंज भी उबाल कर रखी थी। मैंने सोचा कि शायद डॉक्टर को इस इंजेक्शन की आवश्यकता हो। फिर आकर बाहर गेट पर खड़ा हो गया, उसी समय डॉक्टर आ गया। मैंने डॉक्टर को कहा, आप जल्दी ही अंदर चलिये, बाबा को बहुत दर्द हो रहा है। डॉक्टर अंदर आया, कमरे में अंदर आते ही बाबा की तकलीफ को देखकर डॉक्टर डर गया। डॉक्टर सवेरे भी बाबा को चेक करके गया था, उस समय ऐसा कुछ नहीं था। मैं भी डॉक्टर के साथ ही था तो क्या देखा कि बाबा का बायाँ हाथ अपने हार्ट पर है और दायाँ हाथ दादी प्रकाशमणि के हाथों में है, आँखें बंद हैं। ऐसा दृश्य देखकर डाक्टर ने तुरंत मेरे से कोरामिन इंजेक्शन लेकर बाबा को इंजेक्शन

लगाया लेकिन बाबा तो पहले ही देह का त्याग कर ऊपर सूक्ष्म वतन में चले गये थे। फिर तो बाबा को पलंग पर लिटा दिया। डॉक्टर को भी बड़ा दुख हो रहा था कि मैंने आने में देरी की। अगर थोड़ा जल्दी आ जाता तो ऐसा नहीं होता। तो वह 'सॉरी' बोलकर चला गया। डॉक्टर अरोड़ा के पहले इस हॉस्पिटल में लेडी डॉक्टर थी, जिसने रिटायर होकर अपनी प्राइवेट हॉस्पिटल खोली थी। फिर उस लेडी डॉक्टर को बुलाया गया कि वह भी चेक करे कि सचमुच बाबा ने देह का त्याग किया है या श्वास कहाँ रुका हुआ है। उसने भी ककर्म किया कि बाबा ने शरीर छोड़ दिया है।

फिर तो सारे बंगले में यह सूचना फैल गई और सभी के चेहरे और दिलों में दुख की लहर आने लगी। बाबा नौ बजे क्लास के बाहर आये और साढ़े नौ बजे शरीर छोड़ दिया।

फिर दादी प्रकाशमणि जी सभी सेन्टर्स पर यह सूचना देने के लिए फोन करने आई। उसी रात को ही कोई भाई इलाहाबाद गया और जाकर बड़ी दीदी को समाचार दिया। बड़ी दीदी ने उसको कहा, यह हो नहीं सकता, तुम हमारे से मजाक करते हो। दीदी को थोड़ा शक पड़ा, इसलिए उसी समय मधुबन में फोन किया। पता लगने पर तुरंत इलाहाबाद से दिल्ली में पहुँची और वहाँ भी यही बात सुनी। दीदी ने वहाँ यह भी सुना कि कई भाई-बहनें पहले से ही मधुबन चले गये हैं। फिर दीदी दिल्ली से पहली ट्रेन से ही आबू में आकर पहुँच गई। दीदी 20 तारीख को आकर पहुँची और पहुँचते ही सीधी छोटे हॉल में गई, जहाँ बाबा के शरीर को रखा हुआ था। बाबा के शरीर को पहले दिन तो बाबा के कमरे में ही रखा था परंतु दूसरे दिन छोटे हॉल में रखा था, जिससे सभी भाई-बहनें बाबा के शरीर को देख सकें। वहाँ बाबा के शरीर को देखकर, दीदी जो काफी देर खड़ी होकर पता नहीं क्या-क्या सोचती रही जैसे कि अपने शरीर से न्यारी होकर, अशरीरी होकर खड़ी थी।

उन्नीस जनवरी को सभी तरफ की बहनें और भाई आने लगे। एक हजार से अधिक भाई-बहनें इकट्ठे हो गये। इतने लोगों के रहने की जगह तो थी नहीं। उन दिनों ट्रेनिंग सेक्शन बन रहा था। नीचे वाले कमरे बन गये थे, बाकी ऊपर वाले कमरों की दीवारें उठ चुकी थी, छत पड़ना बाकी था। तो भाई-बहनों को जहाँ भी थोड़ी जगह मिलती थी वहीं बैठ जाते थे और सो जाते थे। उस समय ठंडी भी बहुत थी लेकिन थोड़ी-सी जगह में भी संतुष्ट थे।

उन्नीस तारीख को सन्तरी दादी के तन में अव्यक्त बापदादा की प्रवेशता हुई और मुरली चलाई और बच्चों को सांत्वना दी कि मैं कहीं चला नहीं गया हूँ, मैं तो आपके साथ हूँ और सदा आपके साथ ही रहूँगा, साथ में ही हम सभी वतन में चलेंगे। मैंने सिर्फ ये व्यक्त पार्ट बदलकर अव्यक्त पार्ट बजाना शुरू किया है।

अव्यक्त बापदादा ने दादियों से भी अलग बैठकर उन्हों को डायरेक्शन दिये कि इसके बाद कैसे-कैसे कारोबार चलानी है, कौन-कौन इसके लिए निमित्त बनेंगे आदि-आदि। ब्रह्मा बाबा की देह के अंतिम संस्कार के लिए भी डायरेक्शन दिये कि लौकिक बच्चा नारायण और अलौकिक बच्चा विश्वरत्न दोनों मिलकर अंतिम संस्कार करें।

यह तो मैंने पहले भी सुनाया है कि इस मकान के कंपाउंड में दो टेनिस कोर्ट थे। एक टेनिस कोर्ट पर

छोटा हॉल और कमरे आदि बने। दूसरा जो टेनिस कोर्ट था, उस पर बाबा ने कंस्ट्रक्शन नहीं करने दिया था। बाबा ने बोला, यह टेनिस कोर्ट ऐसे ही रहने दो। बाकी इसके साइड में भले कमरे बनाओ। तो उसके पास ही यह ट्रेनिंग सेक्शन बनाना आरंभ किया था। बीच में यह टेनिस कोर्ट की जगह खाली थी। तो अब सोचा गया कि इसी टेनिस कोर्ट के बीच में बाबा के शरीर का अंतिम संस्कार किया जाये और यहाँ ही स्मृति के रूप में यादगार बनाये। यहाँ बंगले के अंदर अंतिम संस्कार करने की छुट्टी सिरोही में पुलिस सुपरिन्टेंडेंट से ले ली गई। फिर तो उस टेनिस कोर्ट के बीच में एक थल्ला बनाया गया और अन्य सभी तैयारियाँ की गई।

जनवरी की 21 तारीख को अंतिम संस्कार के लिए एक अर्थी बनाई गई और बाबा के शरीर को तैयार करके टेनिस ग्राउंड के पास अर्थी पर लाकर रखा गया। अर्थी को खूब फूलों से सजाया गया था। चारों तरफ बड़ी दादियाँ और बड़ी टीचर्स आदि बैठ गईं। सभी आये हुए भाई-बहनें भी खड़े हो गये। कुछ समय सभी बापदादा की याद में बैठे। फिर कुछ भाइयों ने मिलकर अर्थी को कंधे पर उठाया, आगे-आगे नारायण भाई और मैं (विश्वरत्न) था। अर्थी को उठाकर पोस्ट ऑफिस, बाज़ार आदि चक्कर लगाकर, नक्की लेक से होते हुए वापस आकर पांडव भवन पहुँचे और उस थल्ले पर लाकर रखा। थल्ले पर पहले से संस्कार के लिए लकड़ियाँ आदि रखी हुई थी। फिर ऊपर से लकड़ियाँ रखी गई। टेनिस कोर्ट के चारों तरफ उन दिनों दीवार आदि नहीं थी, इसलिए रस्सियाँ चारों तरफ लगाई गई थी और डायरेक्शन दे दिया था कि रस्सी के अंदर कोई नहीं आये। सभी भाई-बहनें रस्सी के बाहर ही खड़े थे। सभी भाई-बहनें नंबरवार आकर चंदन की लकड़ी डालकर बाहर जाकर खड़े होते जाते थे। फिर चंदन की लकड़ी और घी आदि डालकर मुखाग्नि दी गई।

बाहर से जो भाई-बहनें आये थे, उनमें से कोई-कोई उसी दिन ही वापस चले गये और कोई दूसरे दिन वापस चले गये क्योंकि यहाँ आबू में ठण्डी बहुत थी और रहने की जगह भी इतनी नहीं थी, इसलिए सब जाते रहे। तीन दिन के बाद बाबा की राख वहीं ही थल्ले पर फैला कर रखी। बाद में समाधि की डिज़ाइन बनाई गई और मार्बल आदि मँगाकर उन पर बाबा के द्वारा उच्चारे गये विशेष महावाक्य लिखवाकर एक यादगार बनाया गया, जिसका नाम रखा गया 'शांति स्तम्भ (Tower of Peace)'। ऐसे यह सर्व प्रिय यादगार हमारे ब्राह्मण परिवार के भाई-बहनों के लिए तो क्या परंतु बाहर के लोगों के लिए भी एक तीर्थ स्थान बन गया।

संतरी दादी के तन में इन तीन दिनों में रोज़ बापदादा की प्रवेशता होती रही और बापदादा की मुरली रोज़ चलती रही। बड़ी दादियों को भी बापदादा विशेष डायरेक्शन देते रहे। बाद में तो बापदादा समय प्रति समय गुलजार दादी के तन में प्रवेश कर मुरली चलाते रहे और आज तक भी चलाते रहते हैं। ऐसे ही बापदादा हम सभी बच्चों के साथ हैं और साथ ही हम सभी को वापस ले जायेंगे।

बापदादा के डायरेक्शन अनुसार बड़ी दीदी और दादी प्रकाशमणि ईश्वरीय कारोबार और ईश्वरीय सर्विस की जिम्मेवारियाँ अच्छी रीति संभालती रहीं।

साथ में बड़ी दादियाँ, बड़े भाई, बड़ी टीचर्स बहनें मददगार रहे और हैं भी। बापदादा सभी बच्चों को सहकार देते श्रेष्ठ पालना देते रहते हैं, जिससे ईश्वरीय सेवा वृद्धि को पाती जा रही है और देश-विदेश में नये-नये सेन्टर्स खुलते रहते हैं।

रमेश भाई चार्टर्ड एकाउंटेंट थे और मुंबई में उनका अपना ऑफिस था, जो कई बड़ी-बड़ी कंपनियों आदि का ऑडिट करते थे। सन् 1973 में एक दिन रमेश भाई ने दादी जी को आकर कहा कि गवर्मेन्ट का कायदा निकला है कि इंस्टीट्यूशन को भी अपने आय-व्यय का हिसाब रखना है और वर्ष के अंत में सरकार के पास देना है। तो सभी सेन्टर्स को भी यह हिसाब-किताब रखना ही है। हर मास का पोतामेल फार्म भरकर सभी सेन्टर्स वाले यहाँ मधुबन में भेजें। फिर यहाँ हम सभी सेन्टर्स का ऑडिट करके इकट्ठा हिसाब बनायेंगे। रमेश भाई ने दादी जी को कहा कि ऑडिट तो मैं कर लूँगा लेकिन मधुबन का कोई एक हेण्ड चाहिए, जो सभी सेन्टर्स के पोतामेल यहाँ आयें, उनको चेक करके भूलें आदि ठीक करा लेवे। उन दिनों में पक्के सेन्टर्स केवल 200-250 थे। हर मास में करीब 250 पोतामेल आयेंगे तो औसतन 10 पोतामेल प्रतिदिन चेक करने होंगे। यह केवल 15-20 मिनट का ही काम है। कोई ऐसा हेण्ड हो जो रोज़ 15-20 मिनट यह कार्य करे। दादी जी ने उनको कहा, विश्वरत्न को कहो, वह यह कार्य करेगा। फिर तो सन् 1973 में यह एकाउंट्स का कार्य मेरे को मिला और मैंने शुरू किया।

एकाउंटस का कार्य बढ़ता ही गया तो मुझको डिस्पेन्सरी आदि का कार्य छोड़ना पड़ा और वह कार्य अन्य डॉक्टर्स आदि संभालने लगे। वर्ष के अंत में रमेश भाई और मैं सभी सेन्टर्स के जोनल हेड क्वार्टर्स में चक्कर लगाते हुए उस जोन के संबंधित सेन्टर्स की ऑडिट वहीं करते थे। ऑडिट के लिए आवश्यक पेपर्स आदि सभी साथ में ले जाते थे।

बाकी एक ड्यूटी जो मैं 15-20 वर्ष से करता आया था, वह है अमृतवेले संदली पर बैठकर योग कराने की। यह ड्यूटी जब से प्राण बापदादा ने मीठी दीदी-दादी के द्वारा मुझे दी थी, वह अच्छी तरह से पूर्ण रीति से बजाता रहा परंतु कुछ वर्ष से यह ड्यूटी अन्य भाई-बहनें संभाल रहे हैं।

******

दादी जानकी, दादा विश्वरत्न के बारे में इस प्रकार सुनाती हैं –

दादा विश्व रत्न को मैं बचपन से जानती हूँ कि कैसे यज्ञ में समर्पित हुआ। कॉलेज में पढ़ने वाला कुमार था। यह एक ही भाई था जिसके लिए बाबा ने कहा था, बच्ची, यह सुखदेव है। हम सब कुमारियाँ, मम्मा के साथ कुंज भवन में रहती थी, यह भाई बीच में रहता था हमारे साथ। बाबा कहता था, इसका कभी ख्याल नहीं करना। इतनी इसकी पवित्र दृष्टि, वृत्ति थी, कभी चंचलता नहीं देखी। देह-अभिमान नहीं देखा। कभी हँसते हुए बोलते नहीं देखा। सदा योगयुक्त मुसकराते हुए देखा। ये प्रेरणा देने वाली बातें हैं। जब झाड़ बनाया, दादा डिजाइन करता था। सारा झाड़ उसकी इन्वेंशन है। बाबा मुरलियाँ चलाता था, उस अनुसार यह बनाता जाता था। हम सबको बिठाता था, एक-एक पत्ते में हम रंग भरते थे। यह योगी था, हम भी इसके संग से योगी बनेंगे, बहनों को ऐसे मन में

आता था। रात भर झाड़ बनाने की सेवा करते, विश्व रत्न दादा के संग में योग लगाने का हम बहनों को बड़ा अच्छा चांस मिला।

हर प्रकार की सेवा में 'हाँ जी'

बाबा की मुरली एक्यूरेट लिखने में हैन्डराइटिंग बड़ी अच्छी थी। जब हम आबू में आये, इसने हर प्रकार की यज्ञ-सेवा की होगी। रोटी पकाने वाला कोई नहीं है, दादा हाजिर हो जायेगा। फटाफट रोटी पकाएगा। पहले मैं नर्स थी, फिर विश्व रत्न ने ड्यूटी उठाई। किसी को कुछ भी बीमारी आये, इसके पास जाता था। इंजेक्शन लगाना सीख गया। हाथ इतना साफ था, बाबा को भी इंजेक्शन लगाता था। हर बात में एक्सपर्ट था। एकाउंट संभालता था, लास्ट तक भी उसके साइन से सारे बैंक का कारोबार चला। कुछ समय पहले से ऐसा हो गया था कि साइन नहीं कर सकता था, अंगूठे से अपना काम उतार देता था। इतना सच्चा और समझदार, रात को दो बजे, तीन बजे उठकर गर्म पानी करता था। हम बहनों को गर्म पानी की बालटी देता था। तब नलके में गर्म पानी नहीं आता था। बाबा पोस्ट लिखता था, विश्व रत्न लिफाफे पर एड्रेस डालता जाता था। स्टैम्प लगाता था एक्यूरेट। फिर साइकिल पर पोस्ट ऑफिस जाकर पोस्ट डालकर आता था। एक्यूरेसी दादा में देखी। कभी खाने पर बोलते नहीं देखा। शान्ति से थाली लेकर कोने में बैठेगा, खाना खायेगा।

स्वच्छताप्रिय और यज्ञ रक्षक

एक ही यह भाई था जो बाबा की तरह टांग पर टांग चढ़ाकर हिस्ट्री हॉल में अमृतवेले योग कराता था। अन्तिम समय में, खाना नहीं खा सकता था, बहुत शरीर ऐसा ढीला हो गया था पर कैसी भी कंडीशन में क्लास में जरूर बैठता था। एक बार पांडव भवन में मैं इसके कमरे में गई थी, इसकी अलमारी को देखा, कपड़े इतनी अच्छी तरह से रखे हुए, इतनी स्वच्छता, ऐसी खटिया, ऐसा जैसे बाबा का रूम देखते हैं। ऐसे गुण, विशेषतायें हैं, लगता है जैसे बाप के कदम पर कदम रखने का दृढ़ संकल्प रखा है कि जो बाप करता है, वही मुझे करना है। कभी इसने नहीं कहा होगा, मुझे खाना यह चाहिए, यह नहीं चाहिए। कभी इसने बाहर जाकर सेवा नहीं की। बाबा को था कि विश्व रत्न बैठा है ना तो यज्ञ का रक्षक बैठा है। बाबा बॉम्बे, दिल्ली जाता था, विश्व रत्न के हवाले सारा यज्ञ कर जाता था। ऑफिस की सदली पर सोता था उसके योग में कभी सुस्ती नहीं देखी।

मेरे कारण किसी का व्यर्थ ना चले

एक बार बाबा ने मेरे को कहा, बच्ची, इसको पूना में बुलाओ। मैंने बुलाया। मैंने कहा, मुझे एक बात सुना दो, आप सदा ही योग में कैसे रह सकते हो? ऐसे मैं ममा से भी पूछती थी। कहने लगे, मुझे यह प्रश्न ही नहीं उठता है कि यह बात कैसे होगी, सब बाबा कर रहा है। मैंने कहा, फिर भी सबके साथ कनेक्शन तो आते हो और फिर भी योगयुक्त रहते हो? बोले सच बताऊँ, मैं सदा ख्याल रखता हूँ, मेरे कारण किसी का व्यर्थ ख्याल न चले। किसी का व्यर्थ संकल्प चले उसका मैं कारण न बनूँ; मानो, कोई अच्छे नोटबुक पढ़ लेती है, मेरे को लगता है, मैं इसकी नोटबुक पढ़ूं अच्छी है, मैंने पढ़ी, पर वहाँ नहीं रखी, वो ढूंढेगी

मेरी नोटबुक कहाँ गई, मैंने उसका व्यर्थ चिन्तन चलाया, मेरा योग नहीं लगेगा। कोई चीज़ काम में लूँ तो फिर यथास्थान पर रख दूँ या मुझे कहीं जाना है तो बता दूँ, मेरे लिए कोई पूछे नहीं, कहाँ है फलाना, ऐसी अच्छी-अच्छी बातें सुनाई। वो मुझे भूलती नहीं हैं। हम जो क्लास में बैठे हुए थे, सब बहुत प्यार से सुन रहे थे।

मनसा बड़ी ऊँची थी

हुज्जत वाला काम (जिस पर हक लगे) बाबा दादा विश्वरतन से कराता था। जैसे बाबा ने मुरली चलाई, बाबा कहेगा, मम्मा तक पोस्ट जब तक पहुँचे, जाओ, मम्मा को बॉम्बे में मुरली देकर आ जाओ। उसी घडी ट्रेन पकड़कर, देकर आ जायेगा। जब बाबा अव्यक्त हो गया, विश्व रत्न को चलते देख, कई मेरे से पूछते थे, बाबा ऐसे चलता था क्या? दादा चलते-फिरते किसी से बात नहीं करता था। कोई भी सेवा हो, मनसा बड़ी ऊँची थी। कभी-कभी फॉरेनर्स को क्लास कराता था। क्लास में और बातें नहीं सुनाता था, योगी बना देता था। अंतिम समय में दादा को हॉस्पिटल लाने लगे, रास्ते में ही शरीर छोड़ दिया। पहले से ही तैयार थी आत्मा। इसका एक भाई है, मित्र-संबंधी भी हैं, भाई बड़ा रिगार्ड करता है। यह कभी मिलने नहीं गया, वो इससे मिलने आये होंगे। हैं तो साधारण बाते, पर बाबा कैसा हमारा जीवन बना रहा है, ऐसा कोई सबूत सामने आ जाए, इसलिए सुना रही हूँ। कभी इसने किसी की इन्सल्ट नहीं की होगी। ब्रह्मा का बच्चा भी, ब्रह्मा जैसा प्रैक्टिकल हो, वो था दादा विश्व रत्न।

******

ब्रह्माकुमार रमेश शाह, मुम्बई दादा विश्वरत्न के साथ के अपने अनुभव इस प्रकार सुनाते हैं –

दादा विश्वरतन अपने आप में एक महान और आदर्श व्यक्तित्व वाले थे। उन्होंने हर कार्य में हाँ जी का पाठ पक्का किया हुआ था। एक जमाना था जब यज्ञ में स्नान के लिए गर्म पानी की बाल्टियाँ भर-भरकर सबके बाथरूम में पहुँचानी पड़ती थी, वह कार्य भी दादा ने किया। सब्जियाँ खरीदकर लाने का और यज्ञ की सुरक्षा के लिए सारी रात जागकर पहरा देने का कार्य भी उन्होंने किया।

जो भी बीमार होता, उसे दवाइयाँ, इंजेक्शन देने का कारोबार भी उन्होंने किया तो यज्ञ के आधारभूत चित्र झाड़ और त्रिमूर्ति आदि बनाने का श्रेय भी उन्होंने प्राप्त किया। इस प्रकार, ईश्वरीय ज्ञान को झाड़ और त्रिमूर्ति के चित्रों द्वारा विश्व के सामने प्रसिद्ध करने का महान कर्त्तव्य उन्होंने किया।

मुझे याद है कि जगदीश भाई ने एक बार मुझे कहा था कि विश्व के सभी धर्मों को एक कल्प वृक्ष के रूप में प्रस्तुत करना, यह बहुत गुह्य ईश्वरीय ज्ञान है और आज तक अन्य किसी भी धर्मस्थापक या पथप्रदर्शक ने यह कार्य नहीं किया जिसे दादा विश्वरत्न ने संपन्न किया।

आलराउंड पर्सनैलिटी

दादा विश्वरत्न की आलराउंड पर्सनैलिटी थी। सन् 1962 में मकर संक्रांति के दिन मैं आबू में था। साकार बाबा ने मुझसे पूछा, मकर संक्रांति के दिन आप बच्चे लौकिक में क्या करते है? हमने कहा था, हम तो पतंग उड़ाते हैं। साकार बाबा ने दादा विश्वरत्न

को कहा कि बच्चे, बाजार से पतंग और धागा लेकर आना ताकि बाबा बच्चों के साथ पतंग उड़ा सके। दादा विश्वरत्न बाजार में जाकर पतंग, धागा आदि सब खरीदकर लाये और हमने प्यारे बाबा के साथ हिस्ट्री हॉल की छत पर पतंग उड़ाई। पतग कैसे उड़ानी चाहिए, वह कला भी दादा को आती थी।

मैनेजमेंट कमेटी के सदस्य

सन् 1973 से सरकार ने इन्कम टैक्स के कानून में परिवर्तन किया और सभी संस्थाओं के लिए हिसाब-किताब लिखने की जिम्मेवारी अनिवार्य कर दी। तब मैंने दादी जी से पूछा था कि यज्ञ में हिसाब-किताब लिखने का कारोबार कौन करेगा, मुझे इसके लिए साथी चाहिए तब आदरणीया दादी प्रकाशमणि जी ने मुझे दादा विश्वरत्न साथी के रूप में दिया और कहा, दादा हिसाब लिखेगा। मेरे मन में संकल्प चला कि दादा एकाउंटस लिखना तो जानते नहीं तो फिर कैसे लिख सकेंगे। तब दादी जी ने दादा विश्वरत्न के लिए सर्टीफिकेट दिया कि दादा बिल्कुल एक्यूरेट हैं और एकाउंटस में सबसे ज्यादा जरूरत तो एक्यूरेसी की होती है और इसलिए आपको पूर्ण रूप से मददगार दादा बनेंगे। दादा ने यह नया रोल बहुत ही अच्छी रीति से अपने जीवन के अंत तक निभाया। सौ प्रतिशत एक्यूरेसी के साथ यज्ञ का हिसाब उन्होंने लिखा, बैंकों का कारोबार भी किया, सेवाकेन्द्रों पर पोस्ट आदि भेजना तथा वहाँ से जो एकाउंटस के फॉर्म्स आदि आते थे, उनको संभालने का कारोबार दादा ने इतनी सुंदर रीति से किया कि दादी जी ने उन्हें यज्ञ की मैनेजमेंट कमेटी का सदस्य बनाया और यज्ञ के एकाउंटस के ऊपर यज्ञ की ओर से हस्ताक्षर करने की जिम्मेवारी भी उनको दी। इस प्रकार से पुरुषार्थ करके दादा ने हर बात में आगे नंबर लिया।

प्रेम से समझाकर कार्य किया

इंकम टैक्स के कानूनी कारोबार के लिए दादा हर स्थान पर, हर समय मेरे साथी बनकर उपस्थित रहे। पहले तो हम ऑडिट के लिए विभिन्न सेवास्थानों पर जाते थे तब भी दादा हमारे साथ चलते थे और बहुत अच्छी रीति से हर कार्य में मददगार रहते थे। सेवाकेन्द्र के सभी बहन-भाइयों को भी दादा अपने अनुभवों से लाभान्वित करते थे। इस प्रकार, सब प्रकार की आलराउंड सेवा करने में वो हर प्रकार से मददगार रहे। हम उनके बहुत-बहुत शुक्रगुजार हैं। जब तक दादा जीवित थे, तब तक हम एकाउंटस डिपार्टमेंट से निश्चिन्त रहते थे, कारण कि दादा सबको बहुत अच्छी रीति से, प्रेम से समझाकर अपना कार्य करते थे और सबके सहयोग से सफलतापूर्वक कार्य होता था।

दादा के अक्षर बहुत सुन्दर थे। इतने सुंदर कि हमें टाइप कराने की भी जरूरत नहीं पड़ती थी। दादा के कारण दादी प्रकाशमणि भी हर बात में निश्चिन्त रहती थी और मैं समझता हूँ कि दादी जी ने जो विश्वास दादा में रखा और दादा के हाथों में यज्ञ का एकाउंटस का कारोबार सौंपा तो दादा जैसा कोई अन्य साथी उस समय पर यज्ञ में मिलना संभव ही नहीं था। ऐसे हमारे श्रेष्ठ अनुभवी दादा विश्वरत्न थे। अपने जीवन के अंत तक वे हमारे साथ कारोबार में साथी बनकर चले, मैं उनको अपने श्रद्धासुमन अर्पित करता हूँ।

दादी सन्तरी

आप विश्वकिशोर भाऊ की लौकिक युगल (धर्मपत्नी) थी। आप बहुत सरल स्वभाव की, बहुत मिलनसार थी। आपको दिव्यदृष्टि का बहुत अच्छा पार्ट मिला हुआ था। शिवबाबा से जब भी कोई संदेश वा श्रीमत लेनी होती तो बाबा सन्तरी दादी को ही वतन में बाबा के पास भेजते। सन्तरी दादी यज्ञ का पूरा स्टॉक, वस्त्रों आदि का स्टोर संभालती। बाबा उन्हें बहुत प्यार से सन्तरू कहकर पुकारते। आपने कुछ समय कोलकाता में भी दादी निर्मलशान्ता जी के साथ रहकर सेवायें दी। आपको जैसे ट्रांस में जाने का अभ्यास था वैसे ही अचानक मधुबन में ही 13 दिसंबर, 1990 को रात में सोये-सोये अव्यक्त वतनवासी बन गई।

दादी सन्तरी अपने लौकिक-अलौकिक जीवन का अनुभव इस प्रकार सुनाती हैं –

मेरा 'सन्तरी' नाम बाबा ने रखा। लौकिक में मेरा नाम सावित्री था। छोटेपन में हम बहुत लाल थी। यज्ञ स्थापना के शुरू में, हैदराबाद में, ओम निवास में हम ध्यान मे चली गई थी, ध्यान में श्रीकृष्ण को देख रही थी और नयनो से जल टपक रहा था। बाबा ने देखकर कहा, यह तो जैसे लाल-लाल संतरे का जूस निकल रहा है। उसी समय से बाबा ने मुझे सन्तरू बेटा कहना चालू किया। इस प्रकार सन्तरी नाम बाबा से मिला। अव्यक्त नाम मिला 'निर्मल इन्द्रा' पर उस नाम से मुझे कोई नहीं जानता।

मुझे कोई बंधन नहीं था

बाबा के साथ मेरा लौकिक संबंध ससुर का था। बाबा का एक बड़ा भाई था, उसने शरीर छोड़ दिया था। उसकी युगल थी घर में सबसे बड़ी, सभी भाई उसी को मानते थे। विश्व किशोर उन्हीं का बेटा था। मेरी वो सास थी। विश्व किशोर, 15 वर्ष की आयु से बाबा के साथ रहता था। मेरी जब शादी हुई वो बाबा के पास कोलकाता मे था। मैं भी शादी होकर कोलकाता में आई, सिन्ध-हैदराबाद में रही ही नहीं। कोलकाता में नीचे गद्दी थी, ऊपर मकान था। मैं बाबा के साथ ही उस मकान में रहती थी। विश्व किशोर ने सदा बाबा को 'हाँ जी', 'हाँ जी' कह रिगार्ड दिया तो मैं भी उसी रीति से चल पड़ी। मैं छोटी थी, बाबा मेरे को बच्ची समझके चलता था, बहू नहीं समझा। बहू तो अदब से चले, घूंघट करे, यह नहीं। मैं तो चुनरी ओढ़ती थी, बाबा उसे भी उतार देते थे, कहते थे, यह अभी छोटी है, यह बंधन क्यों रखा है। बाबा ने कहा,

जैसे पुट्टू, जैसे पालू, वैसे ये। यह बाप को छोड आई तो हमारी हो गई ना। तो बाबा ने मेरी पालना इस रीति से की। मै भी बाबा के साथ इसी रीति से चली। मेरे को कोई बधन नही था।

सुबह में बाबा को भजन सुनाती थी

घर मे भक्ति बहुत थी। हम भक्ति में ही रहते थे। मै छोटी थी, बाबा मुझे कहते थे, सुबह मे गीत गाओ। जसोदा मैया तीन बजे उठकर माला फेरती थी। मैं बाबा के पास चली जाती थी। पुट्टु होती थी, हम सब एक ही खटिया पर बैठ जाते थे। बाबा कहते थे, गीत गाओ। मैं ब्रह्मानन्द की पोथी का एक गीत रोज याद करती थी और बाबा को सुनाती थी। बाबा को अच्छा लगता था। फिर बाबा हॉकी लेकर बाहर घूमने चले जाते थे। हम लोग पीछे जाते थे और झाड़ के नीचे बैठकर गीता पढ़ते थे। जब बाबा लौटते थे हॉकी खलके तो गेंद फेकते थे, कहते थे, दौड़ो, दौड़ो। इस प्रकार हमको खेल कराते थे, फिर हम इकट्ठे चले आते थे। सात बजे हमको लेने के लिए गाड़ी आती थी।

मुझे बाबा 'विशेष' लगते थे

मैं पूजा करती थी जैसे कि जसोदा मैया करती थी। हम लोग कहीं नहीं जाते थे। घर में मन्दिर था। जब ज्ञान मे आये, ध्यान में गये तब कई बातें स्पष्ट हुई परन्तु बाबा 'विशेष है' यह फीलिंग पहले से ही आती थी। जो बाबा बोले, उसे राइट समझ कदम-कदम चलती थी। मैं 15 वर्ष की आई थी, मेरे मन में आता था, मैं बाबा की सेवा करूँ। बाबा आते थे, स्नान करते थे, खाना खाते थे, खाना तो नौकर खिलाते थे, मैं बाबा के आगे खडी हो जाती थी। ग्यारह बजे वे दुकान पर जाते थे। जाते समय बाबा जूते पहनते थे, घर मे खड़ाऊँ पहनते थे। जब जाते थे, मैं इलायची हाथ मे देती थी।

विश्वास का गुण

विश्व किशोर तो बाबा के संग-संग रहता था, बाबा की दुकान चलाता था। बाबा शाम को पाँच बजे दुकान से चले जाते थे हॉकी लेकर मैच खेलने। बाबा को हॉकी का शौक था। जब भी बाबा दुकान से आते थे, ऐसे ही नौकरों के भरोसे सब छोड़कर आते थे। दरबान ही बंद करते थे। इस प्रकार कभी चोरी भी नहीं देखी। बाबा सब पर विश्वास करते थे।

बाबा नौकरों पर जितना विश्वास करते थे, उतना ही उनकी पालना करते थे। उसके परिवार की देखभाल करते थे ताकि वो चोरी न करें। तिजोरी में सब जेवर भरे रहते थे लेकिन बाबा पूजा में निश्चिन्त होकर बैठता था। कोई भी संकल्प नहीं चलता था कि ये चोरी है या अलमारी खुली है। इस कारण बुद्धि हल्की रहती थी। फिर सात बजे दुकान पर आते थे। बाज़ार में सभी से मिलजुलकर फिर घर आ जाते थे। फिर घर के मन्दिर में आरती होती थी, उस समय तक सब पहुँच जाते थे। मेरी खटिया के आगे बाबा का चित्र लगा रहता था, विश्व किशोर की खटिया के आगे श्रीकृष्ण का चित्र लगा रहता था। सुबह उठ पहले बाबा का चित्र देखती थी, उससे फिलिंग आती थी, कोई चीज़ मुझे मिल रही है, सूक्ष्म में जिसे मैं पकड़ती रही। मैंने यह बात किसी को सुनाई नहीं, पर महसूस करती थी।

सहनशीलता की शिक्षा

एक बार तबीयत खराब हुई, अपेन्डिक्स का दर्द पड़ा। बाबा ने डॉक्टर बोस को बुलाया। उसने मेरी नाड़ी देखी, हाथ लगाते ही मुझे दर्द-सा हुआ। मेरे मुख से 'आह' की आवाज आई। बाबा ने सुन लिया। बाबा बोले, बच्ची, ये आह की आवाज तुम्हारी थी, क्या हुआ? मैं तो कमजोर और छोटी थी। मैंने कहा, हाँ बाबा। बाबा बोले, बेटी, तुमको दर्द हुआ, तुम्हारे में इतनी शक्ति नहीं है जो दर्द सहन कर सको। कोई तुमको डाँटे तो क्या करोगी, रोओगी? अभी कभी ऐसे नहीं करना। ऐसी शिक्षा बाबा ने दी कि दुख में भी खुशी का आभास होना चाहिए। सहनशीलता का गुण सबसे बड़ा है।

बाबा को देखते ही बीमारी का दर्द भूल जाती थी। नर्स इंजेक्शन लगाकर जाती थी। मैं सोई रहती थी पर बाबा को याद करते ही दर्द महसूस नहीं होता था। विश्व किशोर आए, मेरे पास बैठे, कुछ कहे, करें, ऐसा कुछ नहीं था। वो अपनी रीति से बाबा का बच्चा, मैं अपनी रीति से बाबा की बच्ची, ऐसे ही पवित्र जीवन हमने निभाया। विश्व किशोर नीचे रहता था, मैं ऊपर रहती थी बाबा के अंग-संग। यही मेरा बचपन लाइफ था, अभी भी बचपन लाइफ समझकर चल रही हूँ।

बनारस में अनुभव

एक बार बाबा बनारस अकेले गए थे, वहाँ जो अनुभव होता था, लिखकर भेजते थे, बच्ची, मैं ऊपर चला गया आदि-आदि। बाबा का वायदा था जसोदा मैया के साथ कि तुम और हम इकट्ठे ही चलेंगे। बाबा जब ऊपर गया तो सोचा, मै जसोदा को साथ लाया ही नहीं, तो नीचे उतर आया। यह बाबा ने पत्र में लिख भेजा। रोज़ पत्र आता था। मैं भी सुबह में चार बजे ध्यान मे बैठती थी तो अनुभव होता था, बाबा मेरे को बता रहे हैं, बाबा मेरे से बात कर रहे हैं। मैं फिर वो ही लिखती थी। हम तब दादा बोलते थे, बाबा बाद में बोला है।

बाबा की गुरु सेवा

बाबा के कई गुरु आते थे, बाबा सेवा करते थे। एक महाराज था, वह गरीब था। उसके पास पाँच-सात लड़कियाँ थीं। बाबा उसको खिलाता-पिलाता था, बच्चियों की शादी में भी मदद की। बाबा का अन्तिम गुरु गुजराती था। बाबा का दूसरा भाई, 'रूपचन्द ब्रदर्स' वाला ही बाबा को उस गुरु के पास ले गया। वह गुरु कराची में आया। बाबा ने वहाँ एक मकान लिया। हम उस मकान में रहे। उसकी सेवा बाबा ने बहुत की। उससे बाबा को कुछ ज्ञान की रीति से मिला, बाबा चेंज होता गया। हम भी साथ-साथ चेंज होते गए। जैसे जसोदा मैया करती थी, मैं भी वही करती थी। हम उसको भाभी जसोदा कहते थे। मैं तीन घंटा पूजा करती थी। सारी सुखमणि, जपसाहेब, भागवत गीता, पाण्डव गीता पढ़ती थी। संस्कृत मैंने पाँच क्लास पढ़ी थी, गुरुमुखी भी पढ़ी। बाद में सिन्धी पढ़ी और अंग्रेजी की भी दो क्लास पढ़ी। उसके बाद बाबा मुझे ले गया। बाद में बाबा ने जो पढ़ाया, वही पढ़ी।

कभी पैसा पास नहीं रखा

मेरे मन में जो संकल्प आता था, मैं किसी को

बताती नहीं थी, कागज़ पर लिख देती थी, वह सकल्प समाप्त हो जाता था। मैंने कभी एक पाई भी अपने पास नहीं रखी इसलिए कि संकल्प उठेगा, मेरे पास पैसा रखा है। घर में आठ नौकर थे, मैंने कभी भण्डारे की शक्ल नहीं देखी। मैं घण्टी बजाती थी, पानी भी हाथ में मिलता था। बोलती मैं बहुत कम थी, सभी कहते थे, कितना धीरे बोलती है। छोटेपन में भी पढ़ाई में ध्यान रहता था, मैं किसी के संग में नहीं आती थी। ज़रूरत कभी पड़ी, बाज़ार गई और कपड़ा अच्छा लगा तो दुकान पर चला जाता था, पैसे वो दे देते थे। हज़ार का सामान लूँ या दस हज़ार का, मेरे पर कोई रोक-टोक नहीं थी। हमारी ममता तो होती नहीं थी, ले आती थी तो भी सबके लिए। घर तो भरा हुआ था। सिन्ध में तो तीनों भाइयों (बाबा तीन भाई थे) का इकट्ठा परिवार था। विश्व किशोर की माँ ने बाबा की अपने हाथों शादी कराई, अपनी भांजी देकर इसलिए फिर बाबा ने भी विश्व किशोर को अपने साथ रखा। तीसरा भाई ज्ञान में नहीं आया। थोड़े समय उसकी युगल आई थी।

बाबा की समदृष्टि

बाबा शुरू से फ़राखदिल थे। गरीबों पर विशेष दया भावना थी कि इनको सुखी रखना चाहिए। ज्ञान में आने के बाद तो बाबा की पूरी समदृष्टि हो गई। सिन्ध में बाथरूम साफ करने वाली आती थी। वह ध्यान में चली जाती थी तो बाबा उसको ऐसे नहीं समझता था कि यह क्यों आती है। बाबा ने अपने गुरु को बुलाया था सिन्ध में तो अपने सामने बाथरूम साफ कराया। वह सफाई वाली साफ करके जाती थी तो बाबा गुलाब जल ले जाकर छिड़कता था, इतनी भावना थी। बाद में वह सफाई वाली ध्यान में जाने लगी बाबा की गोद भी लेती थी क्योंकि फिर तो वह गोपिका बन गई ना।

एक धक से व्यापार छोड़ा

जब बाबा ने कारोबार समेटा, उस समय मैं थी। एक दिन बाबा रात में चौपड़ खेल रहे थे। बाबा का जो लौकिक पार्टनर (भागीदार) था, बाबा प्यार से भाऊ कहते थे। खेलते-खेलते बाबा संकल्प आया कि छोड़ो तो छूटे। तो थोड़ी देर हँसते हुए, कौड़ी फेंकते हुए बाबा बोले, भाऊ, देखो सोच चलता है कि इसको छोड़ दूँ। भाऊ बोले, किसको बाबा बोले, इस धंधे को, सचमुच बोलता हूँ, इसको संभालो। तो पार्टनर भी बड़ी-बड़ी चीजें माँगने लगे। मेरे को यह घर देंगे, बाबा कहे, हाँ। मेरे को अलमारी देंगे (जिसमें सोने-चाँदी के बर्तन व जेवर हुए थे)। बाबा बोले, हाँ। मेरे को ये देंगे, वो देंगे। भाऊ माँगता जाये, बाबा हाँ-हाँ करता जाये। ऐसा चीजों को देने में हाँ-हाँ करने पर भागीदार का चला कि दादा का दिमाग तो कहीं ठीक नहीं है। रात में तो ऐसे ही बाते करते-करते सो गये। सवेरे ही भाऊ ने बाबा को कहा, पक्का है, पक्का है, है? बाबा ने कहा, हाँ।

फिर बाबा बोले, अच्छा भाऊ, जो तुमने है, उसे कोर्ट में जाकर पक्का लिखा-पढ़ी कर इस प्रकार बात-बात में ही स्थूल व्यापार को छोड़कर बेहद ज्ञान-रत्नों के व्यापार में लग गये।

बाबा की शुभ आश पूरी हुई

बाबा का एक काका था मूलचन्द। उसकी बाबा बहुत मानते थे, सेवा भी करते थे। उसने अपनी सारी जीवन प्लेग पीड़ितों की सेवा में लगाई। दान-पुण्य में अपनी सारी मिलकियत दे दी थी। धर्मशाला बनवाई थी। सारे सिन्धी लोग उसे 'आजवाला सन्त' के नाम से जानते थे। मुम्बई में उसका आज (हाथी दात) का व्यापार था। प्लेग में हाथों से सेवा करता था। बहुत मान था उसका। वह सारी रात गोद में तकिया रखकर बैठा रहता था और जपता रहता था, 'हरि तुम शरणं, हरि तुम शरणं ..।' बाबा ने मूलचन्द काका को कहा था, मैं व्यापार छोड़ूँ पर काका ने कहा, जब मैं कहूँ तब छोड़ना, पहले नहीं। फिर बाबा ने बोला, मेरी इच्छा है, काका, जब आप शरीर छोड़ेंगे तो मैं भी व्यापार छोड़ूँगा तथा अपने हाथों से आपका अंतिम क्रियाकर्म करूँगा। बाबा, सिन्ध में अम्मी को बोलकर गया था, जब ऐसा हो, हमको (कोलकाता से) बुलाना। रात में बाबा ने व्यापार छोड़ने की बात भागीदार से की और अगले दिन ही बाबा को तार मिल गया कि काका मूलचन्द ने शरीर छोड़ दिया है। 'बस, बाबा के अंदर का जो संकल्प था वो भी पूरा हुआ' कारण बाबा ने सकल्प लिया था कि काका शरीर छोड़ेंगे तो मैं व्यापार छोड़ दूँगा। अब बाबा सिंध के लिये रवाना हुए। जैसे ही इलाहाबाद से बाबा गुजर रहे थे तो त्रिवेणी का सगम याद आया। कुछ मुसलमान बाबा के डिब्बे में आ गये थे। अचानक बाबा को साक्षात्कार ट्रेन मे बैठे-बैठे ही होने लगा। घुँघरू की आवाज व सतयुगी दृश्य, श्रीकृष्ण सबको दिखाई देने लगा। साक्षात्कार में ही बाबा ने त्रिवेणी नदी मे काका के क्रियाकर्म का कार्य किया। इस प्रकार बाबा का सूक्ष्म संकल्प, साक्षात्कार मे व साकार रूप में पूर्ण हुआ।

सिन्ध में आने के बाद बाबा रोज़ शाम को गीता पढ़ते थे और उस पर समझाते थे। कई लोग आकर सुनते थे। धीरे-धीरे क्लास बढ़ता

मम्मा, सन्तरी दादी और अन्य दादियाँ

गया। बाद में, बाबा ने कराची में आठ बंगले लिए जिनमें अलग-अलग वर्ग की आत्माओं को रखा। झटपट कुल्फी एक पैसा, झटपट कुल्फी ध्यान दीदार – सुबह अखबार वाले ऐसे बोलते जाते थे। दीदी का लौकिक पति भी बारह मास आया, ध्यान में भी गया पर बाद में एण्टी हो गया, कहने लगा, मुझे कुछ साक्षात्कार नहीं हुआ था, मैंने तो ऐसे ही बोल दिया था।

बाबा के चरित्र देखे

जब मैं लौकिक घर में थी, हमको अलग-अलग अलमारी मिली हुई थी, उसी में भण्डारी होती थी। जो कुछ मिलता था, हम उसमें डालते थे। फिर मैं बाबा के पास आ गई पर जब कोई विशेष दिन होता था या अन्य बच्चों को खर्ची देते थे तब भी मेरे नाम से उस भण्डारी में (लौकिक घर में) कुछ-कुछ डालते रहे। हम लौकिक में भी चाँदी के बर्तनों में खाते थे, बाबा के पास भी चाँदी के बर्तनों में खाते थे, तब हमारे यहाँ चाँदी ही चलती थी। तो मेरे चाँदी वाले बर्तन भी उसी भण्डारी में डले पड़े थे। एक दिन बाबा ने कहा, जब विश्व किशोर सरेण्डर है तो तुम भी सरेण्डर हो। पर बच्ची, तुम्हारे नाम पर लौकिक में जो रखा है, वह तुम्हारा है, वह तुम लिखकर भेजो। हमारी माँ आती थी, दो मास, छह मास बाद कराची में, मिलकर जाती थी। कहती थी, इस जैसा सुख किसी को नहीं है। जब वो आई, हमने बोल दिया कि हमारे नाम पर यह सब है क्या? बोली, हाँ, हम तो कभी खोलती भी नहीं हूँ। फिर सब सामान जिसमें काले हुए चाँदी के बर्तन, 60 या 70 गिनियाँ थीं, लेकर आई। पैसा भी था कुछ, सब ले आई। बाबा बोला, यह तुम्हारा कर्ज उनके पास पड़ा था, तभी तुम्हारी तबीयत ऊपर-नीचे हो रही है। ऐसे-ऐसे चरित्र बाबा के देखे।

एक दिन कन्यायें सोई पड़ी थी, कइयों को कंठ चल रहा था। बाबा ने दिखाया, यह जो कंठ चल रहा है, यह स्वप्न अवस्था में है। जिस-जिस अवस्था में थे, बाबा दिखाते रहे और मालूम पड़ता रहा कि कैसे यह श्वास चल रहा है।

एक बार गेहूँ की 40 बोरियाँ बाहर टेनिस कोर्ट में सुखाने के लिए रख दी थी। बाबा ने बोला, मम्मा गेहूँ अन्दर रख दो। मम्मा ने कहा, ठीक है बाबा। कि दीदी ने कहलवाकर भेजा, बाबा नौकर तो आया है नहीं है। तो बाबा ने कहा, मम्मा तुम्हारी मिलिट्री मैन में नहीं आयेगी? सब लगे, दो-दो हाथ डालकर सब बोरियाँ अन्दर पहुँचा दी। एक बोरी बच गई तब इतने बरसात आके पड़ी। इससे पहले कड़ी धूप थी, बरसात का मौसम भी नहीं था। ऐसे कई प्रकार के चमत्कार बाबा के देखे।

11वें गुरु ने बाबा के चरण पकड़े

ज्ञान में आने के बाद बाबा एक बार दिल्ली में रूप बदर्स (बाबा के बड़े भाई की दुकान) में गये हुए थे। बाबा का रोहतास वाला 11वां गुरु आया। तो बाबा को देखकर गुरु जी बोले, दादा, आप को तो भगवान मिल गया तथा उसी समय बाबा के चरणों पर गिर पड़े तो बाबा को बड़ा आश्चर्य लगा कि कल जो मेरा गुरु था, आज वह कैसे चेले की तरह चरणों में गिर रहा है।

परखने की शक्ति

बाबा में परखने की शक्ति इतनी आ गई थी कि जो भी घर में जिस किसी संकल्प को लेकर आता था, बाबा उसको ऐसे पूछते थे जैसे सब जानते है। उसको वही बात, राय व सौगात देकर संतुष्ट करके भेजते थे कि उसका संकल्प साकार होने पर वह आश्चर्य व खुशी से हमेशा बाबा का गुणगान करता रहता था।

बाबा ने योग द्वारा ऑप्रेशन किया

मेरे को कभी दमा होता था, बाबा ऐसे हाथ रखता था, दमा उतर जाता था। मैं कभी डॉक्टर की दवा नहीं करती थी। एक बार पेट में बहुत दर्द हुआ। उठके खड़ी नहीं हो सकती थी। रहती तो बाबा के साथ थी। बाबा को चिन्तन चला, यह हॉस्पिटल भी दिखाने नहीं जाती है। मैंने तो सोच रखा था, बाबा बैठे हैं, आपे करेंगे। डॉक्टर ने राय दी थी, इसे हॉस्पिटल में भेजो। मैंने कहा, मैं कभी हॉस्पिटल नहीं जाऊँगी, अविनाशी हॉस्पिटल में बैठी हूँ, बाबा है ना। बाबा को बहुत ओना था। रात को एक बजे पलंग पर बैठकर योगदान दिया। मैंने देखा, सामने बाबा को बैठे हुए। एक से चार बजे तक बाबा बैठे रहे, मैं यह थोड़े समझी थी कि मेरे लिए बैठे हैं। बाबा तो वैसे भी जागते थे, लिखते थे, पढ़ते थे। तो मैंने देखा, बाबा शिवबाबा से इतना योग लगा रहे थे और मेरे पेट में जैसे कटा-कुटी की फीलिंग आ रही थी। चार बजे बाबा सामने आकर खड़े हुए, पूछा, बेटी, रात को नींद की? मैंने कहा, बाबा, नींद तो नहीं आई पर मेरे अन्दर कुछ कटा-कुटी चल रही थी, पता नहीं क्या हो रहा था। बाबा ने कहा, हाँ, अच्छा, उठो, यहाँ से वहाँ बाथरूम तक चलो। मैं उठ गई, चली, कुछ नहीं हुआ। नहीं तो उठने से ही इतनी तकलीफ होती थी। एकदम दर्द बंद हो गया, खत्म हो गया। एकदम ऑप्रेशन हो गया। मेरे अंदर तो भावना इतनी बढ़ गई कि बाबा जो भी करता है, ठीक ही करता है।

जब चाहूँ आँख खुल जाती है

बाबा दो बजे उठ जाते थे, धीरे-धीरे चलते थे, मैं भी जग जाती थी। बाबा कहते थे, तुमको नींद ही नहीं आती है क्या, जो तुम उठ जाती हो। मैं कहती थी, नहीं बाबा, नींद तो करती हूँ, ऐसे ही जाग गई। गद्दी पर ही सोती थी, जो बाबा के कमरे में है, बाबा खटिया पर सोते थे। अभी तक भी मैं रात को जागती हूँ। सवा तीन बजे तो खटिया छोड़ देती हूँ, सोने की इच्छा नहीं होती है। जागृत रहने का मेरे को अभ्यास है। डॉक्टर बोलेगा, नींद की गोली लो, मैं कहती हूँ, मुझे जरूरत ही नहीं है। कभी भी मैं अलार्म नहीं लगाती, स्वत: उठने का अभ्यास है। दो बजे, तीन बजे, जब चाहूँ, आँख खुल जाती है।

मुझे भी रहम आता है

मेरा सतोगुणी संस्कार बचपन से ही था। धीरे बोलना, किसी को दुख न देना, यह हमको समझ थी। बाबा से सीखा, जिसकी बात हो, उसको सामने बोल दो, मैं बोलती हूँ। अभी कारोबार में कभी किसी को जोर से कुछ बताना, कहना हो जाता है परन्तु अंदर से नहीं, बाहर से बोलती हूँ। अन्दर से मेरे को रहेगा, कोई समय इसे बैठकर समझाऊँ ताकि इसकी ग्लानि ना हो। जैसे बाबा रहम करता था, मुझे भी रहम आता है कि इसकी ग्लानि माना बाबा की ग्लानि। रहती

किसके पास है, बाबा के पास। कोशिश करती हूँ, यह सुधर जाए तो अच्छा है। बाबा ने मेरे को समझा दिया है कि कुछ देखो तो डायरेक्ट बोलो। मै डायरेक्ट ही बोलती हूँ कि ऐसे नही, ऐसे करो। इसकी बात उसको नहीं बोलती हूँ। सुधारने की रीति से बताती हूँ ताकि उसका रिकार्ड अच्छा रहे।

सहनशीलता बाबा ने सिखा दी

हमारे को कभी हद का संकल्प आया नहीं कि बाबा उसको ज्यादा प्यार करता है या इसको ज्यादा करता है। मेरे को एक बार बाबा मिल गया और मिला भी भरपूर है। बाबा के संग-संग हूँ। अभी भी कोई बोले, बाबा अव्यक्त हो गया, मै कहती हूँ, बाबा मेरे साथ है। चाहे व्यक्त है, चाहे अव्यक्त, बाबा ने देह से न्यारा तो कर ही दिया। मेरे को अभी भी कोई बोलेगा, यह काम करो, बुद्धि में आयेगा, करूँ। अंदर में रहेगा, बाबा को कराना होगा तो करेंगी, बाबा ले चलेगा तो जायेंगी, बाबा बोलेगा, तो करेंगी। पहले तो मै ध्यान में भी जाती थी। बाबा का प्राइवेट संदेश लाना, ले जाना– यह मै ही करती थी। बीमारी में दवाई करती हूँ पर अंदर मे रड़ियाँ (शोर-आवाज) नहीं है। सहनशीलता का गुण बाबा ने सिखा दिया। बचपन में मुझमें सहनशीलता नहीं थी। अंदर रोना आ जाता था कि मेरे को ऐसा क्यो बोला? लेकिन वो बाबा ने छुड़ा दिया। अब चाहे जो हो, मुझे कुछ नहीं होता। बाबा गये, वो भी देखा, मम्मा गई, वो भी देखा, आँसू नहीं बहाए। विश्व किशोर के भी सामने थी, वो गया, तो भी नहीं रोई। बाबा जो कर रहा है वो राइट है।

बुद्धि को बाबा के पास रखकर जवाब देती हूँ

मै विदेश अकेली गई, अंग्रेजी नहीं जानती हूँ जमैका, न्यूयार्क आदि कई शहरों में गई। जहाँ से निकलती थी, वहाँ से लिखाकर निकलती थी कि कहाँ क्या चाहिए, दूध चाहिए, फल चाहिए। प्लेन वाले भी कागज़ आपे ठीक कर देते थे। कोई न कोई सहयोगी भी मिल जाता था। लौटते समय जब हम लंदन उतरी, मुझे दादी जानकी से बात करनी थी पर फोन कहाँ है, मालूम नहीं था। एक गुजराती भाई फिर गया। पासपोर्ट देखने वाली बाहर ले गई, बाहर सब वलास वाले खड़े थे। वो मुझे सेन्टर पर ले गए। कभी कहीं लिफ्ट में चढ़ती थी, मुझे देख कहते थे तो फरिश्ते आये हैं। आकर्षण हो जाता था। सफेद कपड़े पहने हैं, फरिश्ते आये हैं – ऐसे कहते थे। भावना में कई गिफ्ट भी देते थे। बाबा को याद करते करते चलती थी, बाबा पहुँचाओ। बाबा कहते हैं, बाबा को याद करो, भूलो नहीं पर मैं कहती हूँ, मेरे से बाबा कभी भूलता नहीं। शरीर रूपी प्रकृति चलती रहती है, मैं बाबा को याद करती हूँ। भले कोई बात करता है, पर मैं बुद्धि नहीं लगाती हूँ जैसे सुना, अनसुना। खाने पर कोई बात करेगा, मैं जवाब नहीं देती हूँ। कोई समय दे भी दूँ पर देती हूँ तो सोचकर देती हूँ। बुद्धि को बाबा के पास रखकर जवाब देती हूँ। बाबा कहता था, जिस समय पास कोई आये, याद दिलाना, बच्ची, बाबा भूल तो नहीं गये। बाबा ने जो मेरे से कराया, वो मैं तो अपने पास जमा रखूँ ना।

भरी और भाखर में एक समान

बेगरी पार्ट में मुझे कोई फीलिंग नही आई, और ही अच्छा लगा। जमना घाट पर मनोहर बहन सेवा में थी। वहाँ गौरी शंकर मन्दिर में जाकर सेवा करते थे। वहीं खाना-पीना करते थे। अनाज मिलता था, बनाके खाते थे। मैं जिस दिन आबू से जमना घाट पहुँची तो दो पैसे के एक किलो टमाटर लेके गई थी। उस दिन मैं जमनाघाट पर अकेली रही। सब खुला-खुला था। साधुओं का चूल्हा (लकड़ी) जलता रहता था। थोड़ा आटा पड़ा था, उसमें नमक पड़ा था। मैंने आटे को रोटी की तरह करके, चूल्हे में पका लिया। मैं इतना ही खाती थी। बाबा कहता था, मम्मा, एक गिट्टी मैं खिलाऊँ, एक तुम खिलाओ तो इसका पेट भरा। एक टमाटर डाला कटोरी में, उसका रस निकल आया, उसके साथ खाया, बहुत मीठा लगा। यह समाचार मैंने अपनी लौकिक माँ को लिख भेजा कि माँ, आपने मेरी राजाई भी देखी और आज उस राजाई को त्यागकर मैंने ऐसे खाना खाया, बहुत मीठा लगा। मेरी माता बहुत-बहुत खुश हुई। वह तो जानती थी, मैंने क्या-क्या पहना, कैसे-कैसे रही। मेरे को बोलते थे, तुम इतना जेवर पहनकर मत आया करो, किसी की नज़र पड़ जायेगी। हम लोगों ने देखा है, तुम्हारे पास बहुत है। पिताजी भी ऐसे बोलते थे। मेरा पत्र पढ़कर माँ ने कहा, यह तो और ही अच्छा है, तुमको दुख तो नहीं हुआ ना। आज तक मैंने क्या-क्या खाया होगा, याद नहीं पर वो खाना आज तक भी याद है क्योंकि उसमें रसना भरी थी, बाबा की ताकत थी। भरी और भाखर में एक समान रहे, बाबा ने यह सिखाया।

लौकिक घर में सेवा

दो साल बाद हमारी लौकिक माँ ने लिखा, तुम यहाँ क्यों नही आती हो। उससे बाबा को निमंत्रण दिया। बाबा ने कहा, मम्मा, इसे भेज दो, दो दिन के लिए, फिर मुझे कहा, बेटी, दिल नहीं लगे तो दो दिन में लौटकर आना। अब देखो, बॉम्बे, पूना जाऊँ, वहाँ से बैंगलोर जाऊँ, दो दिन मे कैसे लौटूँगी। पर वो भी सोच नहीं चला, हम बॉम्बे में रही, पूना में रही, पूना में लौकिक बहन थी, अभी वो विदेश मे है। उसके पास हमारी लौकिक माँ आई थी, उसकी लड़की की शादी थी। मुझे वहाँ से बैंगलोर भेज दिया, हमारा जापान वाला राम भाई उस समय वहाँ रहता था, जापान में तो पीछे गया है। उसके पास रही। सत्संग करने लगे, वहाँ 5 मास लग गये। चन्द्रमणि की बहन भी वहाँ रहती थी। मैं सेवा में लग गई, सबको सेवा पसंद आई। फिर होली आई तो बाबा ने लिखा, बच्ची, चली आओ। होली के दो मास बाद उन्होंने फिर बुला लिया सेवा पर। बाबा ने भेजा था एक मास के लिए, मैंने 15 मास लगाए।

बाबा की गुप्त पालना

शिलांग में भी ईश्वरीय सेवार्थ गई। वहाँ माताओं का सत्संग होता था। वहाँ मुझे 7 मास रोक लिया। मद्रास में शान्तामणि की भाभी थी, उससे फोन मे बातचीत होती थी। सबसे मदोगरी मिलती गई, हम यज्ञ में भेजती गई, यह बेगरी पार्ट मे हुआ। गुवाहाटी में गई तो वहाँ वाशी भाई था। बहन भी थी। जाते ही, उसे पहला तलब (पैसा) जो मिला, बोला, भेजो वहाँ (यज्ञ में), उनको ज्ञान नहीं था पर बाबा टच करता था

ना। वह पूना मे रहता था। तब दादी जानकी को बाबा कहता था, मकान आदि के बारे में तुम उस बच्चे से पूछो, वह बहुत अच्छा है। वो तुमको सब बतायेगा। बाबा की भावना ऐसी थी। उनको भी बाबा में बड़ी भावना थी। उसको छाती मे एक गोली-सी निकली थी, डॉक्टर बोले, ऑप्रिशन करना पड़ेगा, क्या पता, कैन्सर है, क्या है? टाटा हॉस्पिटल में जगह खाली न होने के कारण इसे घर पर रोक दिया था और एक पहचान वाली ने कहा, जैसे ही कमरा खाली होगा, मैं तुमको फोन करके बता देगी। रात को वह सोया, सुबह चार बजे उठा तो देखा, बाबा सामने खड़ा है, एक डॉक्टर भी खड़ा है, एक और भी कोई है। बाबा ने कहा, इस बच्चे को तो कुछ है ही नहीं, डॉक्टर इसका ऑप्रिशन करना है? वो तो मैं कर देता हूँ, यह गोली देता हूँ, खा लेना। जैसे ही वह उठा, अपनी युगल को सब बताया। वह ओम मण्डली में छोटेपन में आता था, ध्यान में जाता था। सात बजे बॉम्बे से फोन आया, कमरा खाली है, आओ। उसने फौरन जवाब दिया, मैं नहीं आऊँगा, आना कैंसिल है। बाबा ने जो दवाई का नाम बताया, वह ली और उसी घड़ी से वह बीमारी चली गई। बाबा की भावना में सारा परिवार चला, ज्ञान उठाए, ना उठाए पर यह बाबा है, हर जगह बाबा का चित्र रख दिया। पासपोर्ट में, ऑफिस में सब जगह चित्र रखे। इस प्रकार आत्माओं को अनुभव होते रहे। राम भाई आबू में आते थे, बाबा हाथों से माखन-रोटी खिलाते थे। उस पालना के प्रभाव से अभी बहुत सहयोगी हैं।

कुछ भी हो जाए, चेहरे पर असर ना आए

मैं पूना में थी, फोन द्वारा बुलावा आया। मैं पूना से मुंबई आ गई। बाबा का यूरिन अचानक बंद हो गया इसलिए प्रोस्टेट का ऑप्रिशन था। ऑप्रिशन करने वाला डॉक्टर चेन स्मोकर था। रात को नर्स आती थी, बाबा जी, बाबा जी बोलती थी। शान्तिलाल डॉक्टर था। सिगरेट पर सिगरेट पीता था। अंदर घुसते ही सिगरेट फेंक दी। वह हाल-चाल पूछता था, बाबा कहता था, ओके। वह कहता था, ऐसा ओके वाला पेशेन्ट तो आज तक नहीं देखा। बाबा कहता था, कुछ भी हो जाये, चेहरे पर असर ना आये। यह गुण मैंने बाबा से उठाया। कुछ भी होता है, मैं कहती हूँ, ठीक है, सब ठीक है।

रेस करो, रीस नहीं

कोई समस्या आती है, मेरे पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। बाबा ने तो पहले ही बोल दिया है, ऐसे-ऐसे होगा। वो सब मेरे दिल में जँचा हुआ है। फिर मैं सोच क्यों करूँ पर पुरुषार्थ हर बात में करना है। किसी बात में ढिलाई नहीं करनी है। जो आज करना है, वो अब करो। चाहे लाखों की चीज़ हो, चाहे हजारों की, कभी ना नहीं बोलना, यह बाबा ने सिखाया। बाबा का मकान बना, उसमें सदा हाथ मेरा ऐसा (दाता का) था। मकान के लिए पैसा चाहिए पर मौजूद नहीं है। मैं पूछती थी, कब चाहिए, कल ना? कल मिल जायेगा, कल तक प्रबंध हो जायेगा। बाबा ने हाथ डाला है तो पूरा होगा ही। जिसका हाथ ऐसे (दाता का) उसका कोई काम रुक नहीं सकता। अब मेरा पुरुषार्थ यही है, फालतू बातें करनी नहीं, बाबा की देखी हुई दिनचर्या पर चलती हूँ, कुछ भी हो, अमृतवेले खटिया छोड़कर ज़रूर जाती हूँ, रोज बाबा से प्वाइंटस मिलती हैं। यही धारणा रखती हूँ कि बाबा जो कहता है, उसमें रेस करो, रीस मत करो।

बाबा अचल रहे

मम्मा जिस दिन गई, उस दिन सुबह में सबको अंगूर की टोली मिली थी। रेस्ट के बाद शाम को चार बजे बाबा उठे, बोले, बच्ची जाओ, मम्मा को देखकर आओ। मैं बाबा को पानी हाथ में देकर गई और मम्मा की स्थिति देखकर दौड़कर आई, कहा, बाबा, बाबा, आओ। बाबा चले और मम्मा को देखकर बोले, बाबा को जो करना था सो किया, मम्मा, बाबा के पास चली गई। बस इतना बोला। बाहर से बाबा पर कोई प्रभाव नहीं दिखा, अंदर से बाबा जाने। फिर पंजाब से मनोहर दादी, मिट्ठू दादी आई, बाबा झोंपड़ी में पत्र लिख रहा था। ये दोनों बाबा के पास चुप करके आकर बैठी, फिर रोने लगी। बाबा ने कहा, तुम बाबा के आगे, मम्मा के लिए रोने आई हो क्या? यह किसका काम है? समझ चली गई है क्या, रोते कौन हैं, विधवा होते हैं तो रोते हैं, यह अज्ञान लेके आई हो?

मम्मा में था धैर्य, उलाहना नहीं देती थी

मम्मा की विशेषता थी, बाबा ने जो कहा, फौरन करती थी। बाबा ने कहा, आज 10 बजा है, प्लेन में विश्वरत्न को भेजूँगा। आज मुरली लेकर जायेगा, टेप में भरी है। आपको दस कापी, दस सेन्टर में भेजनी हैं; कैसे भेजोगी? मम्मा कहती थी, मिल जायेंगी बाबा आपको, मिल जायेंगी। मम्मा बाहर निकलती थी। कहती थी, चलो, चलो, उठाओ पैन्सिल, सब लिखने बैठ जाते थे। मम्मा बोलती रहती थी, कापियाँ बन जाती थी, समय पर चली जाती थी। मम्मा ने कभी ना नहीं की। मम्मा में हाँ जी भी थी और प्रैक्टिकल करने की हिम्मत भी थी। हम हाँ करें पर प्रैक्टिकल करने की हिम्मत नहीं है। वह बाबा की मुरली को फौरन पकड़ लेती थी। बाबा कुछ बोलते थे, मम्मा चुप रहती थी, कुछ नहीं बोलती थी। कभी बाबा कहता था, मम्मा, ऐसे-ऐसे रिपोर्ट सुनी है, आप देखो अपनी हमजिन्स को, क्यों ऐसे करते हैं, उनको समझाओ। मम्मा फौरन उसको बुलाती थी, ऐसे कुछ कहेगी नहीं, पूछती थी, सब ठीक है, कारोबार तुम्हारी ठीक रहती है, सब अच्छा है, आपस में मिलजुलकर चलते हो ना, कभी कोई ऐसी बात तो नहीं होती है, शिवबाबा को याद करो, कर्म अच्छा करो, बस। यह तुमने भूल की, ऐसा नहीं बोलती थी। बाबा भी ऐसे थे। मानलो किसी ने भूरी दादी की रिपोर्ट कर दी। बाबा ऐसी सब्जी लेके आई है, सब काली ही काली, कड़वी ही कड़वी, पैसा खर्च करके आई है। फिर भूरी बाबा के पास आती थी, बाबा कहता था, बच्ची, तुम थककर आई होंगी, ठीक है, टोली खाओ। टोली खिला देते थे, उसे प्यार मिल जाता था। बाबा रिपोर्ट नहीं देते थे। फिर सब्जियों पर बाबा जाते थे। बाबा कहते थे, कड़वी, इसका दोष नहीं है, बाबा मीठी कर देगा। फिर बाबा कहते थे, जल्दी-जल्दी छीलो। छीलकर, नमक डालकर कड़वापन निकाल दिया। सब्जी बनाकर खिलाई, बहुत मीठी बनी। तो बाबा की पालना, मम्मा की पालना ऐसे चलती थी। मम्मा का धैर्य, जी हाँ, उलाहना नहीं, ये गुण हमें भी अपने में भरपूर करने चाहिएँ।

बाबा की अंतिम स्थिति

बाबा सबकी बातें सुनते थे, अंत में बहुत समय देना छोड़ दिया था। एक अक्षर में जवाब देकर पूरा करते थे, एक अक्षर में ही सब जवाब मिल जाते थे। बाबा शान्ति में रहते थे। जब बाबा अव्यक्त हुए, मैं कोलकाता में थी। एक दिन पहले शाम को पत्र आया था, शनिवार का दिन था, लिखा था, अब आ जाओ। उसी रात 3 बजे फोन बॉम्बे से आया, बाबा अव्यक्त हो गये। मैंने और निर्मलशान्ता ने प्लेन की टिकट ली। रात को एक बजे हम आबू पहुँचे। इससे पहले बस, बस स्टैण्ड पर उतारती थी, उसी दिन पहली बार बस हमें अंदर तक लेके आई थी। बाबा को हॉल में सुला रखा था। हम बर्फ लेकर आये थे। बाबा की सारी कारोबार मुझे करनी पड़ी। शिव बाबा मेरे तन में आया, अपने हाथों से शृंगारा रथ को, फिर बाबा ने मेरे तन से ही वाणी चलाई। बाबा ने ऐसी मुरली चलाई, मेरे को भी कभी-कभी वो सुनाते हैं। जगदीश भी था, कहा, बाबा से पूछकर आओ, क्या करना है। कन्या सौ ब्राह्मणों से उत्तम, कुमारका दादी ने घृत डाला, सब किया। बाबा का जो कलश था, उसमें फूल थे। देह त्यागने पर आदमियों को हड्डी-हड्डी दिखाई पड़ती है पर बाबा की नहीं। समुद्र में होता है ना जीव एकदम पोला-पोला, बाबा के शंख वैसे थे। दूध, फूल और शंख। वो शंख गागर में डालकर रखे। बहुत दिन रखे रहे। कई दिन दूध फटा नहीं। जब हमने निकाले, धुलाई किये, एकदम सफेद-सफेद। बाबा ने कहा, इनको त्रिवेणी में डालो। हमने बाबा के डायरेक्शन प्रमाण सब किया।

बाबा का रथ बनना स्वीकार नहीं किया

फिर दादी ने मुझे कहा, तुम बाबा को कहो, बाबा तुम्हारे में आये। मैंने कहा, मुझे यह पार्ट लेना नहीं है। दादी ने, बृजइन्द्रा ने, निर्मलशान्ता ने सबने मुझे समझाया पर मैंने कहा, नहीं। दादी ने कहा, गुलजार बहन बार-बार दिल्ली से आती है, तुम क्यों नहीं यह पार्ट बजाती, तुम तो बाबा की प्राइवेट सदेशी रही हो। मैंने कहा, यही तो आप समझो ना। प्राइवेट संदेशी माना मेरे पेट में बाबा की सब प्राइवेट बातें भरी है। अगर मेरे पर जोर करोगी तो बाबा ने जो मेरे आँसू बंद कराये वो आने लगेंगे। बाबा तो गये नहीं, मेरी फीलिंग है, वो मेरे साथ हैं। मानो, किसी को भी बाबा मेरे माध्यम से कुछ बोलेंगे, तो कहेंगे, इसको तो मालूम ही है इस बात का, तभी यह बोल रही है। जिसको नहीं जँचेगा, वह इतना भी बोल देगा कि इसी ने बोला होगा, ऐसा आप सुनेंगे क्या, ग्लानि हो जायेगी। यह कर्म मैं नहीं कर सकती।

बिगड़ी बनाने वाला बैठा है

बाबा ने शरीर छोड़ा, ख्याल भी नहीं आया कि यज्ञ कैसे चलेगा। बिगड़ी बनाने वाला बाबा बैठा है। जो अभी मुन्नी के हाथ में है, वो सब मेरे हाथ में था। ऑफिस खर्चा विश्वकिशोर, ईशू बहन को देता था। चीज़ें जो आती थी, कपड़ा रखना, लेना-देना, भाई-बहनों को कपड़ा देना, सिलाई का कारोबार – ये सब मेरे हाथ में था। भण्डारे का सामान भूरी सभालती थी। स्टाक मैं संभालती थी। विश्वकिशोर का भी

स्टाक, बाबा के संग-संग प्राइवेट रहता था, वो भी मेरे को ही मालूम था। लास्ट में जब तबीयत खराब हुई तो मैं धीरे-धीरे चार्ज देती गई। अचानक मेरा शरीर छूट जाये तो, इसलिए सब बता दिया। कभी संकल्प नही आया, यज्ञ कैसे चलेगा। चल ही रहा है, करनकरावनहार कर ही रहा है। हुण्डी सकारने के लिए कोई-न-कोई निमित्त बन जाता है।

******

दादी निर्मलशान्ता सन्तरी दादी के बारे में इस प्रकार बताती हैं –

लौकिक परिवार में जैसे हम सभी भाई-बहनें अंग-संग थे वैसे ही एक और विशेष आत्मा थी जो भाऊ यानि दादा विश्व किशोर की युगल थी, जिसे सभी सन्तरी दादी के नाम से जानते हैं। वैसे तो यह हमारे घर में बहू के रूप में आई थी लेकिन उनका पूरा ही पार्ट बेटी के समान था। बाबा मुझे 'पालू' के नाम से पुकारते थे। कारण, उस समय कोलकाता में एक आम आता था जिसका नाम 'पाली' था। बाबा सिन्धी भाषा में कहते थे – 'पाली आम मीठो' यानि पाली आम मीठा है, ऐसे ही तुम पालू बेटी हो। उसी उक्ति के अनुसार एक दूसरा फल जो बाबा को बहुत प्रिय था, वह था सन्तरा। आप जानते हैं आज भी भारत में सबसे मीठा सन्तरा दार्जिलिंग का है। उसका रंग-रूप बहुत सुन्दर होता है। सन्तरी दादी का चेहरा, मीठी-प्यारी बातें व सेवा के कारण बाबा हमेशा उसे 'सन्तरू बेटा' कहते थे।

भाऊ विश्वकिशोर, बाबा, दादी सन्तरी, मम्मा और अन्य

बाबा की प्यारी सन्तरू बच्ची

मुझे याद है कि बहू के रूप में तो उसे बाबा के सामने कम बोलना वा एकदम नहीं बोलना पड़ता था। वह सिर झुकाकर चलती थी। उस समय के समाज के अनुसार लौकिक ड्रेस में साड़ी वा सलवार-कुर्ता और चुन्नी आदि पहनना होता था। सिर ढककर चलना – यह घर का रिवाज था लेकिन बाबा ने क्या किया, शुरूआत में जब उसका एक-दो बार सिर पर चुन्नी ढककर तथा गर्दन झुकाकर चलना वा शर्म करना देखा तो झट से सभी के

सामने चुन्नी को हाथ से उतारकर जसोदा मैय्या यानि मम्मो को दे दिया तथा कहा कि आज से कभी भी यह बहू के रूप मे इस प्रकार का कोई भी चाल-चलन नहीं अपनायेगी और न ही ऐसे कपड़े पहनेगी। जैसे पालू पहनती है, रहती है, ऐसे ही पहने, चले और बोले। तब से वह बाबा की बहुत प्यारी 'सन्तरू बच्ची' बन गई।

रस निकालने की सेवा

बाबा ने खास सन्तरे के कारण ही दादी का नाम 'सन्तरू' रखा। जब सीजन मे रोज टोकरा भरकर सन्तरे आते थे तो उनका रस निकालने की सेवा सन्तरी दादी ही करती थी। घर में तो सभी को मिलता ही था, साथ-साथ गद्दी मे जो भी ग्राहक वा काम करने वाले होते थे उनको भी उस समय चाँदी की ट्रे (थाली, तश्तरी) में सजाकर गिलास भरकर देने का कार्य भी सन्तरी दादी का ही होता था। खाना बनाना, पकाना यह तो हमने लौकिक घर में कभी सीखा ही नहीं। सीखना तो छोड़ो, बाबा करने ही नहीं देता था, कारण कि उस समय भी घर में दो मेड सर्वेन्ट यानि काम करने वाली थीं। एक अंग्रेजी और दूसरी मारवाड़ी। उनकी भी अलग-अलग ड्यूटी थी। नौकर तो थे ही। अत: घर की सफाई, खाना बनाना, नहलाना, कपड़े की धुलाई आदि सभी काम नौकर ही करते थे। मीठी सन्तरी दादी भी प्यार से सेवा करते हुए भाऊ के साथ हमारे घर मे ही थी। भाऊ को एक अलग कमरा गद्दी के पास बाबा ने दिया हुआ था लेकिन सन्तरी दादी तो हमारे पास ही सोती वा रहती थी। उन्होंने अंत तक बाबा के यज्ञ में रहकर कई प्रकार की सेवायें की। हैदराबाद (सिन्ध) से मधुबन तक उनका तो संदेशों का भी पार्ट यज्ञ मे चला।

पहली अव्यक्त मुरली दादी सन्तरी के तन में

साकार बाबा के शरीर छोड़ने के बाद अव्यक्त बापदादा की पहली-पहली पधरामनी सन्तरी दादी के तन मे ही हुई थी और अव्यक्त पार्ट की पहली मुरली भी 19-01-1969 को सन्तरी दादी के तन द्वारा ही चलाई थी। उसके बाद गुलजार दादी के माध्यम से अव्यक्त पार्ट चल रहा है। लेकिन प्रथम अर्थात् आदि अव्यक्त पार्ट बाबा ने सन्तरी दादी के रथ से बजाया तो मैं समझती हूँ कि कितनी भाग्यशाली, पवित्र, निर्मल आत्मा होगी जिसमें बाबा ने प्रवेश किया।

कोलकाता में सेवा

इसके बाद मीठी दादी ने मधुबन में स्टॉक संभालने की सेवा की। अव्यक्त बापदादा ने स्टॉक संभालने की सेवा सन् 1970 में मुन्नी बहन को दे दी। कारण, बाबा ने सन्तरी दादी को सेवा अर्थ मेरे साथ सहयोगी साथी के रूप में कोलकाता भेज दिया। मैं तो सन् 1964 से ही कोलकाता में थी। सन् 1990 में कोलकाता में एक बहुत बड़ा राजयोग भवन बांगूर एवेन्यू में बना। उसका हिसाब-किताब, धन का लेन-देन यह सब सन्तरी दादी ही करती थी। ग्यारह नवंबर, 1990 को भवन निर्माण का कार्य पूरा करने के बाद मैं बाबा से मिलने मधुबन आ रही थी। हम दोनों कभी एक-साथ मधुबन नहीं आते थे। हम दोनों में से किसी एक को सेवाकेन्द्र पर रहना होता था। उस दिन मैं एयरपोर्ट पर जा रही थी तो दादी सन्तरी ने कहा, 'दीदी, मैं भी बाबा से मिलने चलूँगी।' मैंने कहा, 'भला अभी अचानक यह

संकल्प कैसे आया?' फिर उसने कहा, 'नहीं, बाबा से मिलने का दिल हो रहा है, मैं वापिस दो दिन में आ जाऊँगी।'

मधुबन में देहत्याग

ड्रामा की भावी, उसे मधुबन ले आई। तेरह दिसंबर, 1990, सतगुरुवार अव्यक्त बापदादा के आने का दिन था। मधुबन घर में 4,000 भाई-बहनें आये हुए थे तथा मीठी सन्तरू दादी ठीक अमृतवेले 3 से 4 बजे के बीच में वतनवासी बाबा के पास सोये-सोये ही पहुँच गई। फिर शाम को बाबा की पधरावनी हुई तो बाबा के संदेश का सार यही था कि सन्तरी बच्ची की दिल थी कि बाबा की गोदी में शरीर छोड़ूँ। बच्ची का सारा कर्मबन्धन चुक्तू था। बच्ची ने संकल्प किया, बाबा मैं आऊँ, बाबा ने बुला लिया। तो आप सभी भी ऐसे ही शरीर छोड़ना चाहते हो ना! ऐसे बाबा का संदेश सुनकर, मैं समझती हूँ कि मेरे लौकिक वा अलौकिक परिवार की महान आत्मा कितनी यज्ञ की वफ़ादार, फरमाँबरदार और विशेष थी, जिसे आज भी याद करते स्नेह से दिल गद्‌गद हो जाता है।

******

सन्तरी दादी जी के साथ की मधुर स्मृतियों को याद करते हुए **ब्र.कु. रमेश शाह जी** कहते हैं –

सन्तरी दादी जी लौकिक रूप में दादा विश्वकिशोर को युगल थी। उनका लौकिक पुत्र भ्राता खुशाल जी अभी विदेश में स्थायी हो गया है। हमने कभी भी दादी के मुख से, उनके लौकिक बेटे के बारे में कोई भी बात नहीं सुनी।

संतरी दादी जी यज्ञ के शुरू से ही मुख्य संदेशी रही थी और जब-जब यज्ञ-कारोबार मे जरूरत पड़ती तब संतरी दादी को ब्रह्मा बाबा वतन मे भेजते और शिव बाबा से संदेश मंगवाते। दुनिया मे कई धर्मस्थापकों ने धर्म की स्थापना के समय चमत्कार किये। इस आधार पर मैंने संतरी दादी से सवाल पूछा कि आपके अनुभव में शिव बाबा के ऐसे चमत्कारों के कोई प्रसंग हो तो हमें बताइये। संतरी दादी पहले तो मना करती रही कि चमत्कारों की बातों मे हमें नहीं जाना है, ये तो ड्रामा में होते हैं, तो बाबा करता है। मैंने फिर अपना बचपना दिखाया और कहा कि दादी आपको बताना ही है। संतरी दादी ने दो अनुभव बताए।

बाबा ने दी मुट्ठी भरकर मिश्री और इलाइची

एक बार साकार बाबा ने संतरी दादी को, शिवबाबा के पास विशेष किसी बात की श्रीमत लेने भेजा। सतरी दादी का नियम था कि शिव बाबा के पास खाली हाथ नहीं जाना है, कुछ न कुछ साथ में लेकर जाना है चाहे टोली, चाहे भोग। उस दिन तो ब्रह्मा बाबा ने अचानक ही प्रोग्राम दिया, इस कारण संतरी दादी ने किचन से एक छोटी-सी प्लेट (plate) में 8-10 दाने इलायची के और 10-15 दाने मिश्री के लेकर उनके ऊपर रूमाल ढककर सामने मेज पर रखा और बाबा के पास चली गई। ड्रामानुसार शिवबाबा संदेश देने की बजाय स्वयं ही उनके तन में अवतरित हो गए। बाबा को देखकर सारा दैवी परिवार इकट्ठा हो गया और बाबा ने संदेश भी सुनाया, मुरली भी चलाई। बाद में सबने कहा कि बाबा, अपने हाथ से टोली दो। यह बाबा की अनौपचारिक पधरामणि थी, कोई पूर्व तैयारी नहीं थी। सामने एक छोटी-सी मेज

पर प्लेट में इलायची और मिश्री के दाने रखे थे, ऊपर रूमाल ढका हुआ था। बाबा ने खुद रूमाल के नीचे हाथ डालकर एक-एक कर सबको मिश्री-इलायची देना शुरू किया। एक बहन ने सोचा कि मै बाबा को जाकर मदद करूँ परंतु शिव बाबा ने मना किया। बाबा ने उस समय मौजूद 300-400 भाई-बहनो को उस छोटी-सी प्लेट से इलायची और मिश्री दी और फिर विदाई ली। मैंने सतरी दादी से पूछा कि फिर तो सबको एक-एक इलायची तथा मिश्री का टुकड़ा मिला होगा। लेकिन दादी ने कहा कि बाबा ने सबको मुट्ठी भरकर दिया। बाद में जब संतरी दादी वापस आई तब देखा कि इलायची और मिश्री तो प्लेट में पहले जितनी ही थी।

यज्ञ-सुरक्षा अर्थ सन्देश

इसी प्रकार से दूसरा प्रसग दादी ने कराची का बताया कि एक दिन भोजन के बाद सब ऐसे ही बैठे थे। अचानक संतरी दादी को बाबा ने ऊपर बुला लिया। दादी को बाबा ने कहा कि आप बच्चों को यज्ञ का ध्यान रखना चाहिए। थोड़े समय बाद बारिश होने वाली है। आगन में गेहूँ-चावल ऐसे ही रखे है, जाओ, जाकर अनाज को इकट्ठा कर स्टोर रूम में रखो। संतरी दादी ने कहा कि बाबा, बारिश की सीजन तो नही है, एक भी बादल आकाश मे नहीं है, यह कैसे हो सकता है? बाबा ने कहा, मेरी बात मानो, नीचे जाकर अनाज समेट लो। सतरी दादी नीचे आई, सबको कहा कि बारिश आने वाली है। सब हँसने लगे, फिर दादी ने बाबा का डायरेक्शन बताया तो सबने अनाज इकट्ठा करना शुरू किया। जैसे ही अनाज इकट्ठा कर स्टोर रूम में रखा, जोर की बारिश आई। इस प्रकार से बाबा ने अपने यज्ञ की सुरक्षा की।

सतरी दादी को श्रद्धांजलि देने के लिए उनके जीवन का एक महान प्रसग लिखे बिना मै नहीं रह सकता। यज्ञ के लिए किया गया उनका यह त्याग उनकी सबसे बड़ी महानता थी। बात बड़ी विचित्र है पर फिर भी उनके प्रति श्रद्धांजलि अर्पण करने के लिए, न सिर्फ मेरी परंतु सारे ब्राह्मण परिवार की श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए यह बात लिखनी मुझे जरूरी लगती है।

19 जनवरी को पहली अव्यक्त मुरली

जब से यज्ञ की स्थापना हुई, तब से यज्ञ की मुख्य संदेशी (Chief Trance messenger) होने के नाते हर छोटे-बड़े प्रसंग पर संतरी दादी ही अव्यक्त बापदादा से संदेश लेकर आती थी। अठारह जनवरी, 1969 को ब्रह्मा बाबा अव्यक्त हुए।

धीरे-धीरे सारा दैवी परिवार चारों दिशाओं से माउंट आबू आने लगा। उन्नीस जनवरी, शाम के करीब 7 बजे हिस्ट्री हॉल में हम सब इकट्ठे हो गये। अचानक संतरी दादी को खींच हुई, वह उठकर संदली पर जाकर बैठ गई और बाबा के पास चली गई। संतरी दादी के तन में शिवबाबा की पधरामणि हुई और बाबा ने करीब सवा घंटे मुरली चलाई। ब्रह्मा बाबा के बारे में भी बताया कि बच्चा अभी वतन में आराम कर रहा था, इसलिए उसे साथ लेकर नहीं आये, 21 तारीख को भले आप अग्नि संस्कार करो, अग्नि संस्कार के बाद मैं आऊँगा और भविष्य के कारोबार के संबंध में पूरी मार्गदर्शन दूँगा।

मन श्रद्धा से भर गया

बीस जनवरी की सुबह, मुरली क्लास के बाद संतरी दादी मेरे पास आई और कहा कि रमेश जी, मैं ऐसा मानती हूँ कि मेरे तन में कल शिव बाबा न आवे और गुलजार दादी के तन में आवे क्योंकि मै शुरू से ही यज्ञ की मुख्य संदेशी रही हूँ और मैं यज्ञ की बहुत-सी बातें जानती हूँ। मेरे तन में आकर बाबा बतायेंगे तो लोगों को विश्वास नहीं होगा कि ये बाबा बोल रहे हैं। वे समझेंगे कि संतरी बोल रही है। मैंने संतरी दादी से पूछा कि आप बताओ, मै क्या करूँ, आप खुद ही मालिक बनकर बाबा के पास जाओ और पूछो कि बाबा को कौन-सा रथ चाहिए। संतरी दादी बाबा के पास गई और बाबा ने संदेश में कहा कि मुझे कौन-सा रथ लेना है, आप बच्चे ही तय करो, मुझे तो रथ चाहिए। संतरी दादी ने नीचे आकर कहा कि बाबा ने तो मार्गदर्शन नहीं दिया, बच्चों पर बात छोड़ी है। हम दादी प्रकाशमणि के पास गये, तब तक दीदी मनमोहिनी भी आ चुके थे। दोनों ने यही कहा कि इतने भाई-बहनें आ रहे हैं, हम व्यस्त है, इसका फैसला आप करो। फिर हम दोनों गुलजार दादी के पास गये और उनसे पूछा कि आपके तन में शिवबाबा की पधरामणि होगी, आपको यह मंजूर है? गुलजार दादी ने कहा कि जो सबको और बाबा को मंजूर है, हमें भी मंजूर है, आप ही नक्की करो। बात फिर से संतरी दादी पर ही आई। संतरी दादी ने फिर मुझे कहा कि रमेश जी, मै समझती हूँ कि यज्ञ के भविष्य के कारोबार और सुरक्षा की दृष्टि से मेरे तन में बाबा न आये, गुलजार के तन में आये। संतरी दादी की यह बात सुन मेरा मन संतरी दादी के प्रति श्रद्धा से भर गया। बत्तीस साल से जिस मुख्य संदेशी के पद पर साकार बाबा ने उन्हें नियुक्त किया था, उसका दादी एक क्षण में त्याग कर रही थी, यह बहुत बड़ी बात थी। हमने दादी को कहा कि दादी, आपके इस त्याग के लिए सारा यज्ञ आपका सदैव ऋणी रहेगा। फिर हम दोनों ने जाकर दादी प्रकाशमणि और गुलजार दादी को यह फैसला सुनाया और बात को वहीं खत्म कर दिया।

21 जनवरी की मुरली दादी गुलजार के तन से

अगले दिन (21-01-1969), अग्नि संस्कार के बाद, बाबा को भोग लगाने के लिए, सभा में से उठकर गुलजार दादी संदली पर जाने लगी तब बड़ी दीदी ने आवाज देकर कहा, ओ गुलजार, कहाँ जा रही हो, बाबा को भोग लगाने संतरी बैठेगी। तब संतरी दादी और दादी प्रकाशमणि ने यह बात बड़ी दीदी को बताई कि गुलजार दादी भोग ले जायेंगी।। बाद में गुलजार दादी के तन में शिव बाबा आये। फिर 21 जनवरी, 1969 की अव्यक्त मुरली द्वारा अव्यक्त बापदादा का जो पार्ट शुरू हुआ, उसके हम सब साक्षी हैं।

त्याग से बना है यज्ञ का इतिहास

गुलजार दादी द्वारा प्रभु पालना हमें मिल रही है, यह इतिहास तब बना जब संतरी दादी ने इतना बड़ा त्याग किया। बाद में मैंने दादी प्रकाशमणि को भी बताया कि संतरी दादी का यह कितना महान त्याग है! इस प्रकार हमारे यज्ञ का इतिहास त्याग की भूमिका के आधार पर बना है और इस त्याग की शृंखला में संतरी दादी का त्याग बहुत महान है। किसी ने भी उनको नहीं कहा बल्कि उन्होंने खुद मुख्य संदेशी बहन

का कलश गुलजार दादी के सिर पर रख दिया, नहीं तो आज गुलजार दादी के लिए हम सबके दिल में बाबा के रथ के रूप में जो आदर भाव है, वो संतरी दादी के लिए होता।

मैं समझता हूँ कि हमारा सारा ही दैवी परिवार मेरी इस बात से सहमत होगा।

ऐसी हमारी त्यागमूर्त संतरी दादी को हमारा शत शत नमन!

******

ब्र.कु. कानन बहन, कोलकाता दादी सन्तरी के बारे में बताती हैं –

साधना का महान फल

हम सभी की अति स्नेही, वरदानीमूर्त दादी सन्तरी जी 13 दिसंबर, 1990, सतगुरुवार को अमृतवेले लगभग 3 बजे अपनी काया को छोड़कर वतन में प्यारे बापदादा की गोद में समा गई। इस महान आत्मा ने जिस्म का इतनी सहजता से त्याग किया जिससे नई दुनिया की याद आ जाती है जहाँ मृत्यु वस्त्र-परिवर्तन के एक खेल जैसी ही होती है। मीठे बापदादा की कर्मभूमि, चरित्रभूमि मधुबन के पावन अमृतवेले में इतनी सहजता से पुरानी देह के सर्व बन्धनों को सेकण्ड में तोड़कर वतन में चले जाना ..सचमुच ही एक महान आत्मा की महान साधना का महान फल था।

अपने को गुप्त रखा

दादी संतरी जी का जीवन अनेक गुणों और विशेषताओं से भरपूर था। दादी जी ने अलौकिक जीवन में सर्व का गुणों से श्रृंगार करते हुए खुद का श्रृंगार किया। सदा 'बालक सो मालिक' का भी पार्ट दादी जी ने खूब निभाया। अपनी साथी निर्मलशान्ता दीदी जी को वह सदा अपने से आगे रखती। कोई भी कार्य में उनकी राय भी जरूर लेती और उस राय का आदर करती। बहुत कुछ करते हुए भी सदा स्वयं को गुप्त रखा। अंत तक भी दादी जी मधुबन से पत्रों द्वारा हमारी सेवा करती रही।

तो ऐसे श्रेष्ठ चरित्रों वाली दादी जी की पावन स्मृति के साथ हम सभी अपने प्यारे बापदादा के समक्ष यही दृढ़ संकल्प करते हैं कि दादी जी ने जिस प्रकार एक सत्य बाप से अटूट तार जोड़कर स्वयं को भी बाप समान बनाया और अन्य आत्माओं की भी नि:स्वार्थ स्नेह भरे दिल से सेवा की, हम भी दादी जी की विशेषताओं को स्वयं में धारण करते हुए स्व-कल्याण एवं विश्व-कल्याण के महान कर्त्तव्य में दिल व जान से सदा जुटे रहेंगे।

दादी आलराउण्डर

आप दादी गुलजार (हृदयमोहिनी दादी) की लौकिक माँ थी। बहुत ही संपन्न परिवार से थीं पर सर्व भौतिक सुख-सुविधाओं को त्याग कर, अनेक लौकिक बंधनों को पार कर यज्ञ में समर्पित हुई। बाबा से प्रथम मिलन में आप बाबा की भ्रकुटि में चमकते सफेद प्रकाश के गोले को देख आकर्षित हुई। जब हैदराबाद (सिन्ध) में बाल भवन बना तो आपने अपनी 9 वर्षीय लौकिक बच्ची शोभा (दादी हृदयमोहिनी) को बाल भवन के छात्रावास में दाखिल करवा बाबा-मम्मा की पालना में रखने का बहुत साहसी कदम उठाया। आप यज्ञ की हर छोटी-बड़ी सेवा बड़े प्यार से करती थी। आवश्यक चीजों की खरीदारी के लिए भी बाबा ने आपको ही नियुक्त किया। आप हर क्षेत्र में बहुत अनुभवी थी इसलिए बाबा ने ही आपको आलराउण्डर नाम दिया। आपका बहुत प्यारा शब्द था 'लाल'। हर एक को लाल कहकर पुकारती और दिल्ली, पाण्डव भवन में रहकर जोन इंचार्ज के रूप में अपनी सेवायें देते 23 नवंबर, 1993 में आप अव्यक्तवतनवासी बनी। आपकी छोटी बहन रुक्मिणी दादी अभी दिल्ली में रजौरी गार्डन सेवाकेन्द्र संभालती हैं।

लगभग 30 वर्षों तक दादी आलराउण्डर के साथ सेवा की साथी बनकर रही, पाण्डव भवन, दिल्ली की प्रभारी **ब्रह्माकुमारी पुष्पा बहन** उनके बारे में इस प्रकार सुनाती हैं –

पहले दादी आलराउण्डर रजौरी गार्डन सेन्टर पर रहती थी, बाद में करोल बाग सेन्टर पर आई। दादी हम सबको 'लाल', 'लाल' कहकर संबोधित करती थी। दादी अथक होकर हमेशा सेवा में तत्पर रहती थी। दादी में रूहानी पालना देने का बहुत गुण था। बाल्यकाल में 9-10 वर्ष की आयु में मैं अपने माता-पिता के साथ बाबा से मिली, मम्मा को भी मिली, उनकी गोद भी प्राप्त की। माता-पिता के साथ सेन्टर में आते-जाते दादी आलराउण्डर के संपर्क में भी आई। हमारे परिवार की पालना, अधिकतर बड़ी दीदी मनमोहिनी तथा दादी आलराउंडर के द्वारा ही हुई।

दादी बहुत बहादुर थी

दादी सुनाती थी कि जब यज्ञ में मैं बाबा के साथ थी तब बाबा ने मुझे 17 ड्यूटी दी हुई थी। दादी बहुत बहादुर थी। बाबा ने दादी को बाहर की सेवायें भी सौंपी हुई थी। दादी से भासना ऐसी आती थी कि वे केवल नारी ना होकर, एक शक्तिशाली पुरुष हैं जो कोई भी कार्य करने में प्रवीण हैं। जब दादी सेवार्थ, यज्ञ से बाहर जाने वाली थी तब बाबा ने क्लास में हाथ

उठवाए कि दादी की सेवाओं की ड्यूटी लेने को कौन तैयार है? दो-तीन भाइयों ने हाथ खड़े किये और बाबा ने दादी की सेवाओं को बाँटा जबकि दादी अकेली ही उन सब सेवाओं को संपन्न करती थी। दादी का नाम आलराउण्डर ब्रह्मा बाबा ने इसलिए रखा था कि चाहे किसी भी प्रकार की सेवा हो, दादी उसे बहुत अच्छी तरह से पूरा करती थी।

मातृ रूप

कुमारियों को दादी ऐसी पालना देती थी कि कोई अपनी लौकिक कुमारी को भी शायद ऐसी पालना ना दे पाए। दादी कहती थी, यह बाबा का यज्ञ है, बाबा ही पालना देने वाला है। जो पालना हमने बाबा से ली है, वो हम तुमको दे रहे हैं। एक बार, जब मैं दिन में भोजन करने गई तो खिलाने वाली बहन दही देना भूल गई। मेरा तो ध्यान नहीं था पर दादी का ध्यान गया कि इस बहन की थाली में दही नहीं है। उन दिनों मैं नई-नई समर्पित हुई थी। दादी ने अपने भोजन की थाली में

पुष्पा बहन और आलराउण्डर दादी

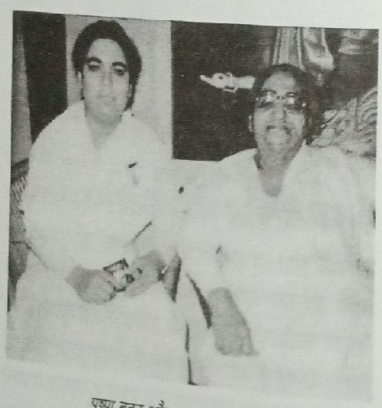

से दही की कटोरी मुझे भेज दी। बाद में एक बहन द्वारा मुझे पता चला कि आज दादी ने दही नहीं खाया, अपनी कटोरी आपको भेज दी। मैंने सुना तो दिल एकदम पिघल गया। सब्जी-अनाज की खरीदारी, नये सेवास्थान के लिए जगह देखना, किसी से विशेष मिलना, पहरा देना, भण्डारे में भोजन बनाना, टोली बनाना, अनाज साफ करवाना, सब्जी कटवानी, भोजन खिलाना आदि अनेक प्रकार की सेवाओं की जिम्मेवारी दादी पर थी। जब कोई विशेष नाश्ता बनता था तो अपने हाथों से सबको खिलाती थी ताकि सबको बराबर मिले और सभी संतुष्ट रहें। इस प्रकार उनका बहुत ही प्यारा मातृ रूप नजर आता था।

नष्टोमोहा

दादी नष्टोमोहा थी। गुलजार दादी उनकी लौकिक सुपुत्री हैं, दोनों साथ-साथ रहे पाण्डव भवन में लेकिन हमें कभी भी ऐसा आभास नहीं होता था कि गुलजार दादी इनकी लौकिक सुपुत्री हैं, और ही, हमको यह आभास होता था कि हम कुमारियाँ ही इनकी लौकिक अलौकिक बच्चियाँ हैं क्योंकि हम सबका इतना ध्यान रखती थी। दादी कहती थी, हम देह के संबंधियों को और सारी पुरानी दुनिया को छोड़ आये हैं और अगर फिर से हमारा खिंचाव उनकी तरफ होता है तो यह ऐसे ही है जैसेकि कोई थूक फेंक देता है और फिर उसे चाटता है। दादी कहती थी, देह और देह के संबंधियों से तो हमारा उत्थान हुआ नहीं। जब दादी से हम पूछते थे, लौकिक परिवार के बारे में सुनाओ तो कहती थी, उनको याद नहीं करना। जब बाबा ने ही की दुनिया से निकाल लिया तो उन बातों का चिंतन

करना माना आत्मा को नीचे लाना। दादी कहती थी, मैं उन बातों को भूल चुकी हूँ। बाबा के चरित्र खूब सुनाती थी। हम कहते थे, दादी आप सिन्धी भाषा में बात नहीं करते हो, तो कहती थी, जब से बाबा ने मना किया, मैंने सिन्धी बोलना छोड़ दिया। सिन्धी बोलना भी लौकिक को याद करना है। बड़ी दीदी कहती थी, आलराउण्डर सिन्धी नहीं बोलती इसलिए अच्छा भाषण कर लेती है। दादी भाषण करने में बहुत होशियार थी। गुलजार दादी के साथ भी हिन्दी में ही बात करती थी। जिन बातों के लिए बाबा की मना थी, दादी उनको कभी नहीं करती थी।

बोलत-बोलत भरे विकार

पाण्डव भवन में शुरू से काफी बड़ा संगठन रहा है। यदि कभी किसी भाई ने थोड़ा असंतुष्टता से कुछ बोल भी दिया तो दादी चुप करके बैठी रहती थी। कहती थी, बोलत-बोलत भरे विकार (ज्यादा बोलने से विकार भर जाते हैं)। यदि हम कहते थे, दादी, देखो, उसने ऐसा बोल दिया तो कहती थी, चुप। उस बात को रिपीट भी करने नहीं देती थी। जवाब देना, चेहरे पर कोई भाव लाना, यह तो दूर की बात रही। कभी कोई उनकी बात यदि किसी कारण से नहीं सुनता था तो शक्तिशाली रूप मे स्थित होकर चुप बैठ जाती थी। दादी निर्भय थी। ना व्यक्ति से, ना परिस्थिति से डरती थी।

नष्टोमोहा बनने की ट्रेनिंग

लौकिक माता का मुझमें बहुत मोह था। मैं समर्पित हुई तो वो रोती रहती थी और दादी के पास आती थी। एक बार मुझे जोर से बुखार आया। लौकिक घर से फोन आया तो दादी ने ना मुझे फोन दिया, ना मुझे फोन के बारे में बताया और ना घरवालों को बताया कि आपकी लौकिक बच्ची को बुखार है। काफी दिनों के बाद उन्हें पता चला, वे मिलने आए तो कहने लगे, हमने तो फोन कई बार किया था लेकिन आपसे हमारी बात दादी आलराउण्डर ने कराई नहीं। मैंने बाद में समझा कि दादी ने यह कितना अच्छा किया जिससे ना तो मुझे ख्याल आया कि मैं घर में जाऊँ और ना ही मेरे प्रति घरवालों का चिन्तन चला। इस प्रकार दादी ट्रेनिंग देती थी कि लौकिक की तरफ कभी मोह न जाए।

बड़ों का सम्मान

दादी अलर्ट, एक्टिव थी। दादी के कमरे के अंदर बाथरूम नहीं था, बरामदे में जाना पड़ता था। हम कई बार कहते थे, तो कहती थी, फिर क्या हुआ, हम तो शुरू से ऐसे ही यज्ञ में रहे हैं। दादी की आयु जब और बढ़ी और सभी इस बारे में कहने लगे तो दादी ने कहा, बड़ी दादी की आज्ञा होगी तो बनायेंगे। फिर एक बार जब दादी प्रकाशमणि पाण्डव भवन में आई थी, तब दादी ने उनको सब बात बताकर उनसे अनुमति ली। कोई भी बात होती थी तो बड़ी दादी से पूछकर करती थी। इस प्रकार खुद बड़ी होते भी, बड़ी दादी का इतना सम्मान करती थी। दादी पत्र द्वारा सारा समाचार मधुबन भेजती थी। मधुबन से कम्यूनिकेशन बहुत अच्छा रखती थी। क्या खरीदारी की, कौन मेहमान आया, क्या सेवा हुई आदि-आदि सब समाचार उस पत्र में विस्तार से लिखती थी। सीजन का कोई भी पहला फल आता तो पहले मधुबन भेजती, बाद में खुद स्वीकार करती। सेन्टर पर भोग लगाने के लिए खर्चा

मिलता था तो उस पैसे में से भी मधुबन के लिए पैसा बचा लेती थी। हमको भी ऐसा ही सिखाती थी।

सादगी के साथ अथॉरिटी

दादी बहुत सादगी वाली थी। सफाई की कला, टोली, भोजन बनाने की कला भी सिखाती थी। बचत सिखाती थी। जब कभी फोटो खींचने के लिए हम कैमरा निकालते थे तो कहती थी, यह माया है, यह तुमको चक पहन रही है। सब्जी काटने के बाद, कई सारे पत्ते निकालकर दिखाती थी जो फेंक दिये होते थे। अनाज सफाई खुद बैठकर कराती थी, सिखाती थी। उनकी चाल साधारण नहीं थी, ऐसा लगता था, कोई महाराजा चल रहा है। दादी का प्रशासन बहुत शक्तिशाली था। किसी स्कूल, कॉलेज के प्रिंसिपल की तरह अनुशासन में रहती थी, एकदम सीधी चलती थी, झुककर नहीं। दादी की सबके प्रति समान दृष्टि थी। व्यक्तित्व बड़ा आकर्षक था। बड़े-बड़े लोग आकर मिलते थे, संतुष्ट होकर जाते थे, महसूस करते थे, एक माँ की पालना मिली है। उनका जगतमाता का रूप भी था तो रूहानी टीचर का भी। ज्ञान बड़ी अथॉरिटी से सुनाती थी। ज्ञान की गहराई में जाती थी। बेहद सेवा का बहुत शौक था। अजमल खां पार्क में जब मेला आयोजित किया तो कहती थी, ऐसा मेला करो जो सबसे सुन्दर हो। अच्छे से अच्छा मेला होना चाहिए। पहले तो सारी दिल्ली के सेवाकेन्द्रों को दादी आलराउण्डर ही संभालती थी। सुबह मुरली क्लास दादी गुलजार करवाती थी, दादी आलराउण्डर बाद में सभी भाई-बहनों से मिलती थी। सतगुरुवार और रविवार को आधा घंटा क्लास कराती थी, अमृत पिलाती थी। दादी अथक बहुत थी, हम जवान कन्यायें थक जाती थी, जाकर सो जाती थी पर दादी इतनी आयु में भी हर समय कमरे में बैठी मिलती थी, सोई हुई नहीं। सुबह चार बजे बाहर बरामदे में आ जाती थी, वहीं बैठकर बाबा को याद करती थी और सारा दिन होने आने-जाने वालों पर ध्यान रखती थी।

समय के साथ परिवर्तन

दादी खुद तकिये के नीचे दबाये हुए, बिना प्रेस वाले कपड़े पहनती थी पर समय के साथ-साथ भी चलती थी। बाबा की और यज्ञ की रीति-रस्म को ध्यान में रखती थी परंतु सेवा, समय और वर्तमान को कुमारियों को देखकर कई नियमों में छूट भी देती थी। ऐसे नहीं कि कोई कुमारी इतना त्याग ना कर सके तो जबर्दस्ती उसे बोझिल किया जाये। जैसे मैं जब आई तो प्रेस वाले कपड़े पहनती थी, तकिये के नीचे रखे कपड़े मुझे पसंद नहीं थे। दादी ने युक्ति से कहा, तुम गठड़ी बाँधकर कपड़े नीचे दे जाओ, मैं बाहर से प्रेस करवाकर ऊपर भिजवा दूँगी। गुप्त पालना देकर भी

अव्यक्त बापदादा से मिलते हुए दादी आलराउण्डर जी

कुमारियों को संतुष्ट रखती थी और साथ-साथ उनकी शक्ति के अनुसार त्याग का पाठ भी पढ़ाती थी।

नब्ज देखने में प्रवीण

दादी की स्टूडेन्ट लाइफ दिखाई देती थी। बरामदे में बैठी दादी मुरली, पत्रिका आदि पढ़ती रहती थी। कभी दादी को खाली बैठे नहीं देखा। वे या तो टोली देने में या पढ़ने में या ज्ञान सुनाने में ही व्यस्त नजर आते थे। दादी को सुस्ती पसंद नहीं थी। यदि कोई बहाना करके, अलबेलेपन में सोये तो पसंद नहीं था। तबीयत खराब होने पर हाल-चाल पूछती थी। दवाई-पानी, आराम का प्रबंध देती थी पर जब ठीक से भोजन खाना शुरू हो जाता था तो कहती थी, अब सेवा पर आना है। जब हम नये-नये आये थे, ज्ञान में इतने प्रवीण नहीं हुए थे तब दादी हमें मार्गदर्शन देती थी कि आज यह परिवार कोर्स करने आयेगा, इसको क्या-क्या सुनाना है। कोर्स करने आने वालों से भी पहले पाँच मिनट मिलती थी, फिर कहती थी, 'लाल', इसको परिवार में शान्ति की बातें विशेष सुनाना या आत्मा पर विशेष सुनाना, ऐसे उसकी जरूरत को परख लेती थी। हम तो आधे घंटे में पाठ पढ़ाकर आ जाते थे पर दादी उन कोर्स करने वालों से या म्यूजियम समझने वालों से भी, एक-एक से बैठकर बातचीत करती थी। उनके प्रश्नों के उत्तर भी देती थी।

जगदीश भाई देते थे जिगरी सम्मान

जगदीश भाई के मन में दादी के प्रति बड़ी श्रद्धा थी। वे दादी के त्याग को देखकर बहुत प्रभावित थे। दादी ने कितने बड़े संपन्न परिवार को छोड़ा, गुलजार दादी जैसा रत्न यज्ञ को दिया, इतनी बड़ी दिल्ली की जिम्मेवारी उठाई और दिन-रात अथक रूप से सेवारत रही – इन बातों के कारण जगदीश भाई दिल से सम्मान देते थे। दादी को देखकर खुद खड़े हो जाते थे, नम्रतापूर्वक हाथ जोड़कर ओमशान्ति बोलते थे। दादी से बहुत अच्छी रूहरिहान करते थे और कहते थे, आपके मुख से सुनूँगा तो अच्छी तरह उसे लिख सकूँगा। दादी का भी जगदीश भाई प्रति बहुत स्नेह और विश्वास था कि मैं कोई भी बात इसे सुनाऊँगी तो यह जल्दी समझेगा। दिल की बात दादी जगदीश भाई को बुलाकर कर लेती थी।

अन्तिम घड़ी

जब मधुबन में (1993 में) राजाओं का प्रोग्राम होने वाला था, दादी की तबीयत ठीक नहीं थी पर मधुबन जाने की दिल थी। तब जगदीश भाई ने अपने साथ प्लेन के द्वारा मधुबन ले जाने का साहस दिखाया। दादी ने कार्यक्रम भी देखा और बीमारी की हालत में बाबा से भी मिली। फिर एक मास ग्लोबल हॉस्पिटल में ट्रीटमेंट भी चली। फिर 23 नवंबर 1993 में 89 वर्ष की आयु में वहीं हॉस्पिटल में ही शरीर का त्याग कर बापदादा की गोद में समा गई। मेरे जीवन का तो आधार थी दादी। भले ही आयु और तबीयत को देखते हुए उनका जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं थी परंतु फिर भी खालीपन महसूस हुआ। गुलजार दादी का साथ होने के कारण हमें बहुत अकेलापन तो नहीं लगा पर आलराउण्डर दादी के होते जो हम निश्चिन्त रहते थे, वो निश्चिंतता चली गई। दादी आलराउण्डर के होते हमें ऐसा लगता था कि हम बच्चे हैं और मौज में रह रहे हैं। ◈

दादी ध्यानी

आपने भी यज्ञ में बहुत विशेष पार्ट बजाया। आपका लौकिक नाम लछमी देवी था। ध्यान में जाने के कारण आपका नाम ध्यानी पड़ा। कल्पवृक्ष की जड़ में विराजमान आठ रत्नों में आप भी शामिल हैं। बहुत मीठे स्वभाव की होने के कारण प्यारे बाबा ने आपका नाम मिश्री रख दिया था। आप लौकिक में मम्मा की सगी मौसी थी। आप सदा एकरस, अचल-अडोल रह, बहुत प्यार से सबकी पालना करती थी। दिल्ली, अमृतसर, कानपुर आदि स्थानों पर ईश्वरीय सेवा करने के पश्चात् आपने लंबे समय तक अंबाला में सेवायें दी। आप तबीयत के कारण सन् 1979 में मधुबनवासी बन गये थे। दशहरे के दिन पुराना शरीर त्याग आप वतनवासी बनी।

अंबाला छावनी के **ब्रह्माकुमार शामलाल** नरूला, ध्यानी दादी के बारे में अपने अनुभव इस प्रकार सुनाते हैं –

सन् 1970 की बात है। मैं एक अध्यापिका विद्या माता के कहने पर सब्जी मण्डी, अंबाला छावनी स्थित ब्रह्माकुमारी आश्रम में गया। ध्यानी दादी से सारा ज्ञान समझा। प्रदर्शनी एवं सात दिन का कोर्स समझने के उपरांत ध्यानी दादी के साथ मैं बरामदे में पड़े बैंच पर बैठ गया। ध्यानी दादी ने पूछा, कैसा लगा यह ईश्वरीय ज्ञान? मेरा उत्तर था, दादी, मुझे जँचा नहीं, जैसे कि सारा कल्प ही पाँच हजार वर्ष का है आदि-आदि। जब मैं जाने लगा तो ध्यानी दादी ने बड़े ही सरल एवं मुसकराते मुख से कहा, जा रहे हो परंतु याद रखना, आप साल बाद पुनः लौट कर मेरे पास आयेंगे। मैंने पूछा, दादी, इस बात का आधार? कहा, मेरा मन कहता है।

अविनाशी ज्ञान का बीज नाश नहीं

भले ही मैंने ध्यानी दादी को कह दिया कि मुझे यह ज्ञान जँचा नहीं परंतु ध्यानी दादी का भोला-भाला, निश्छल, प्रभावशाली व्यक्तित्व कई दिनों तक मेरे मन को प्रभावित करता रहा। इसे इत्तफाक ही समझा जाये कि काफी समय पश्चात् मैं दोबारा जब एक मित्र के साथ आश्रम गया तो ध्यानी दादी ने उसी बैंच पर बैठे हुए, उसी भोले अंदाज से कहा, मैंने कहा था ना कि आप दोबारा आयेंगे, आ गये ना, मुझे पता था कि अविनाशी ज्ञान का बीज नाश नहीं होता।

व्यक्तित्व में अपनापन

बाद में ध्यानी दादी के साथ इतना स्नेह जुड़ गया कि घर की, सर्विस की, निजी – प्रत्येक समस्या उनको

सुनाये बिना मन को चैन नहीं आता था। ध्यानी दादी ने कभी भी अपने प्रति हमारे विश्वास को कम नहीं होने दिया। वे हँसते-हँसते हमारे सभी दुख-दर्द सुनकर अपने में समा लेती थी। जब कभी हम किसी विषय में दुविधा एवं असमंजस की स्थिति में होते तो उनका एक ही महावाक्य हमें राह दिखा देता था तथा हम भटकन से बाहर निकल आते थे। इतना अपनापन था उनके व्यक्तित्व में।

जीवन था खुली पुस्तक

उनका व्यवहार छोटे-बड़े, गरीब-अमीर सभी के साथ एक समान वात्सल्यपूर्ण था। आज तक उनके प्रति किसी के मुख से कभी कोई गिला-शिकवा, शिकायत नहीं सुनी। सभी उनको आज तक आदर की दृष्टि से याद करते हैं। उनका स्वभाव बहुत ही सरल था। किसी प्रकार का कोई छल-कपट नहीं। वे खुली पुस्तक की तरह अपने जीवन को सबके सामने रख देती थी। मन के सभी दरवाजे-खिड़कियाँ खोलकर अंतःकरण के दर्शन करवा देती थी। एक बार मैंने उनसे अकेले में पूछा, दादी, हम तो अपने घर-बाहर की सभी छोटी-बड़ी बातें आपको बता देते हैं। आपने निजी जीवन के बारे में कभी कुछ नहीं बताया। उन्होंने बड़े भोले अंदाज से कहा, आपने कभी पूछा नहीं, पूछो, क्या पूछते हो। मैंने उनसे उनके जीवन के वे निजी प्रश्न पूछे जिनके लिए मैं आज महसूस करता हूँ कि बड़ों से ऐसी बातें पूछना अभद्रता है। मेरे प्रश्नों के उत्तर में उन्होंने जो दिग्दर्शन करवाया, वह इस प्रकार था –

उस समय (सन् 1973) के नोट्स अब भी मेरे पास मौजूद हैं। उन्होंने बताया कि उनका जन्म सिंध-हैदराबाद में हुआ था। उस समय अपनी आयु 68 वर्ष बताई। उन्होंने बताया कि वे तीन बहनें एवं तीन भाई थे। उनकी माता का नाम मीमी जी था। लौकिक पिता जी जिनका नाम फतेहचन्द था, अमृतसर में सर्विस करते थे। ध्यानी दादी ने बताया कि उनके बड़े भाई का नाम साधूराम था, वे भी सर्विस करते थे। दूसरे भाई होतचन्द जी थे जिन्हें वे प्यार से होतू कहते थे। तीसरे भाई का नाम हासाराम था।

उनकी एक बहन रोचां थी जो मातेश्वरी (मम्मा) की माता जी थी, जो उस समय जीवित थी। उनकी एक बहन का नाम पार्वती था। ध्यानी दादी ने अपना लौकिक नाम लछमी देवी बताया था। ध्यान में जाने का खास पार्ट होने के कारण उन्हें ध्यानी कहा जाता था। ज्ञान में आने से पूर्व उन्हें गुरुग्रंथ साहिब की वाणी तथा भगवद्गीता में विशेष रुचि थी। वे ठाकुरों की सेवा कर बहुत आनन्दित हुआ करती थी।

ध्यानी दादी ने बताया कि उनकी 16-17 वर्ष की आयु में शादी हो गई थी। उनके दो जेठ व दो देवर थे। उनके पति का नाम परमानन्द था जो व्यापार किया करते थे। शादी के चार वर्ष पश्चात् उन्होंने शरीर छोड़ दिया था।

हैदराबाद-सिन्ध में उनका घर बाबा के घर के पड़ोस में था, बाबा को उस समय दादा लेखराज जी कलकत्ता वाले कहा जाता था। ध्यानी दादी ने बताया कि उन्हें एक दिन प्रातःकाल बड़ी अजीब-सी आवाजें आई जैसे उन्हें कोई बुला रहा हो। रात्रि को उन्हें विष्णु का साक्षात्कार हुआ तो उन्हें लगा कि वही बुला रहे हैं। अगले दिन वैसे ही बुलाने की आवाजें फिर आई।

उसी शाम को उनके पास दो मातायें आईं जिन्होंने बताया कि पड़ोस में सत्सग होता है, गीता सुनाई जाती है, अलौकिक दृश्य होता है। वहाँ जाने पर ज्ञान का ऐसा 'इंजेक्शन' लगा कि मैं बाबा की ही हो गई। कर्म, अकर्म, विकर्म की गहन गति का ज्ञान हो गया। उस समय का गीत 'तेरी गठरी में लागा चोर, मानव जाग जरा' गाकर ध्यानी दादी ऐसे मग्न हो गई मानो उनकी आत्मा कहीं शिवबाबा के पास ही घूम रही हो।

ध्यानी दादी ने बताया कि मातेश्वरी (राधा) को ज्ञान में ले जाने वाली वह ही थी।

फिर यह साक्षात्कार का पार्ट, ध्यान में जाना, रास करना आदि-आदि तीन वर्ष तक चलता रहा। उसी दौरान पवित्रता पर हंगामे आदि हुए। ध्यानी दादी ने बताया कि जब ये हंगामे हो रहे थे तो बाबा ने उन्हें गेटकीपर की ड्यूटी दे रखी थी। वहाँ के मुसलमान लोग उन्हें खुदा दोस्त कहा करते थे। विभाजन के बाद वे माउंट आबू आ गये। ध्यानी दादी ने बताया कि माउंट आबू आने के पश्चात् वे तीन वर्ष दिल्ली रही। तत्पश्चात् वे अढाई वर्ष अमृतसर कुंज बहन के साथ रही। एक मास वे कानपुर भी रही।

ये सब बताने के बाद ध्यानी दादी ने मुझसे पूछा कि कोई और प्रश्न बाकी हो तो पूछ लो, आज खुली छुट्टी है। मैंने कहा, दादी, जैसे स्थूल की गीता में कृष्ण जी, अर्जुन को विराट रूप दिखाते हैं, ऐसे आपने मुझे अपने दिल का एक-एक कोना दिखा दिया है, मेरा अब कोई प्रश्न नहीं। मेरी जिज्ञासा शात हो गई है।

मधुबन में यादगार मुलाकात

सन् 1979 में वे यहाँ से मधुबन चली गई थीं। जाते समय वे हमें मिलकर नहीं गई थी जिस कारण मन में संकल्प चलते थे। सन् 1981 में जब मैं पहली बार मधुबन गया तो मैं अकेला ही गया था। मेरे साथ कोई ब्राह्मणी या सहयात्री नहीं था। मुझे आज भी अच्छी तरह याद है कि मधुबन में दाखिल होते ही आज के हिस्ट्री हॉल के सामने एक कमरे की दहलीज पर ध्यानी दादी बैठी हुई थी। मैंने उन्हें ओमशान्ति की। उन्होंने मेरा नाम आदि पूछा। मैंने उन्हें बताया कि मैं अंबाला कैंट से आया हूँ। उन्होंने सबकी राजी-खुशी तो पूछी लेकिन मुझे लगा कि उनमें अब अपनापन नहीं रहा (परन्तु यह मेरी गलतफहमी थी)। याददाश्त कम तथा दृष्टि कमजोर हो जाने के कारण वे मुझे पहचान नहीं पाई थी। मेरा बिस्तर नीचे तहखाने के हॉल में पट्टा लगवाया गया था। जब मैं स्नानादि करके वापस हॉल में पहुँचा तो वहाँ न मेरा बिस्तर था, न अटैची थी। मैं घबरा कर समझा कि शायद चोरी हो गया है परंतु हुआ यूँ कि मेरे आ जाने के उपरांत ध्यानी दादी ने किसी से पूछा कि यह (मैं) कौन था। ध्यानी दादी मुझे 'हस्पताल वाला' कहकर संबोधित किया करती थी। जब किसी ने बताया कि यह वही अंबाला छावनी का हस्पताल वाला भाई है तो ध्यानी दादी को सब याद आया। उन्होंने ही फिर मेरी अटैची, बिस्तरा तहखाने के हॉल से उठवाकर ऊपर हवाई जहाज वाले कमरे में लगवा दिया था जहाँ केवल तीन बड़ी-बड़ी चारपाईयाँ थीं जिनमें से दो पर भण्डारे में काम करने वाले भाई सोते थे।

फिर तो ध्यानी दादी से रोज वहीं कमरे की

दहलीज पर मुलाकात होती। वे मेरे से सारे दिन का हालचाल पूछती। मेरे रहने-सहने, खाने आदि का समाचार लेती तथा ऐसे मुझे गाइड करती जैसे कोई लौकिक माँ अपने बेटे को छोटी-छोटी बातें समझाती है।

दृष्टि की छाप

वहाँ मधुबन में रहते मुझे ख्याल आया कि यहाँ ध्यानी दादी अपनी दैनिक आवश्यकता के लिए कहीं पैसे आदि से तंग न हो। मैंने 200 रुपये निकालकर ध्यानी दादी को देने चाहे। वह फौरन बोली, अरे, मैं इनका क्या करूँगी, कहाँ संभालती फिरूँगी। आप इनको यज्ञ में दे दो, मुझे तो यहाँ किसी चीज की आवश्यकता नहीं। मैंने कहा, दादी, मैंने जो यज्ञ में देना था, दे दिया है। जब वापस आना था तो ध्यानी दादी ने मुझे टोली की तीन-चार डिब्बियाँ दी तथा कहा कि यह वाली ट्रेन में बैठकर भोजन खाने के बाद खोलना, यह वाली चाय के समय खोलना, यह वाली कल प्रातः खोलकर खाना। मेरे मेन गेट के बाहर निकलने तक वे एकटक मुझे निहारती रही। उस दृष्टि की छाप आज तक मेरे मानसपटल पर अंकित है। ट्रेन में बैठकर जब दादी के आदेशानुसार टोली की डिब्बी खोलकर कभी नमकीन कभी मीठा खाता था तो ऐसा लगता था जैसे ध्यानी दादी मेरे साथ बैठकर अपने हाथों से मेरे मुँह में टोली डाल रही हो।

******

ब्र.कु. अमीरचंद भाई, ध्यानी दादी के बारे में अपना अनुभव इस प्रकार सुनाते हैं –

ध्यानी दादी की विशेषता थी कि खुली आँखों से ध्यान में जाती थी। सन् 1959 में जब मैं ज्ञान में आया उस समय ध्यानी दादी अंबाला कैंट में संचारत थी। दादी का योग इतना पावरफुल होता था कि लोगों को अनुभूति होती थी। दादी खुद ध्यान में जाती थी तो वातावरण इतना शक्तिशाली बन जाता कि सारी क्लास ध्यान में चली जाती थी। मनोहर दादी उस समय करनाल में थी। वे अक्सर ध्यानी दादी को क्लास के भाई-बहनों को अनुभूति कराने के लिए अंबाला से करनाल बुलाया करती थी।

पहले स्थूल फिर सूक्ष्म पालना

दादी जी में पालना का संस्कार जबर्दस्त था। दादी जी डायरेक्ट ज्ञान-योग की पालना नहीं देती थी, पहले स्थूल पालना देती थी। जब निश्चयबुद्धि हो जाते थे तो ज्ञान-योग से पक्का करती थी। यही कारण था कि अंबाला कैंट में परिवार के परिवार ही क्लास में आते थे।

बच्चों पर विशेष ध्यान

वे जितनी स्वीट थी, उतनी स्ट्रिक्ट भी थी। दादी प्रकाशमणि जी सुनाया करती थी कि जब शुरू के दिनों में बाबा ने सबको चिट्ठी लेकर आने को कहा तो ध्यानी दादी की गेट पर ड्यूटी लगाई। ध्यानी दादी बहुत प्यार से बात करती लेकिन बाबा के आदेश पालन में पक्की इतनी कि चिट्ठी के बिना किसी को अंदर नहीं आने देती थी। उनके नियम-कायदों में पक्की होने के कारण ही अंबाला में जितने भी युगल निकले, वे पूर्ण रूप से मर्यादाओं में चलने वाले थे। माताओं को भी दादी सिखाती कि बच्चों को हफ्ते में एक दिन आश्रम पर ले आना है। उन्हें ट्रेनिंग देती कि बच्चों को

रूहानी पालना कैसे करनी है। वे उन्हें कहती कि अगर आप बच्चों को पैसे देंगे तो वे बाहर का खायेंगे, इसकी बजाय, स्वयं बनाकर उनके बैग में कोई न कोई खाने की चीज़ डाल दो। सुबह नाश्ते से पहले जो मुरली आपने सेन्टर पर सुनी, वह बच्चों को सुनाओ।

उपराम, न्यारी-प्यारी अवस्था

शरीर छोड़ने के कुछ महीनों पहले जब उनकी तबीयत ठीक नहीं रहती थी तो दादी प्रकाशमणि जी ने उन्हें अंबाला कैंट से पांडव भवन बुला लिया। पांडव भवन में ट्रेनिंग सेक्शन में मैं उनके कमरे में मिलने गया तो देखा कि दादी बाबा की याद में बैठी हैं। दादी के चेहरे पर बहुत चमक थी। मैंने पूछा कि आप कैसे हैं? दादी ने तुरंत कहा, भाई, मैं तो तैयार बैठी हूँ, बाबा जब बुलाये। अपने अंतिम समय का, शरीर छोड़ने का कोई इतना खुशी से इंतजार करे, ऐसा मैंने ध्यानी दादी को ही देखा। उनकी योग की साधना ऐसी थी कि वे यहाँ ही जीवनमुक्त स्थिति का अनुभव करती थी। अंतिम दिनों में मैंने उन्हें एकदम उपराम, न्यारी-प्यारी अवस्था में देखा।

******

अंबाला छावनी शाखा की निमित्त संचालिका बहन कृष्णा जी ने ध्यानी दादी के विषय में अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये –

माँ जैसी पालना

सन् 1974 में जब मैं मधुबन से अंबाला छावनी शारीरिक इलाज करवाने आई, उस समय सेवाकेन्द्र पर ध्यानी दादी थी। मैं सन् 1978-79 तक लगभग चार-पाँच वर्ष उनके सान्निध्य में रही। मेरा शरीर ठीक नहीं था। ध्यानी दादी ने मुझे माँ की तरह पालना दी। इसलिए हम उन्हें प्यार से ध्यानी नानी कहते थे क्योंकि वह नानी की तरह हमारी छोटी-छोटी बातों एवं आवश्यकताओं का ध्यान रखती थी। उनमें नम्रता, निर्मानता के गुण कूट-कूट कर भरे हुए थे। यदि कोई जिज्ञासु रूठ जाता तो वे उसके घर जाकर उसे मना लेती थी। वे अपने जीवन के प्रत्येक कार्य में परमात्मा का हाथ व साथ पकड़े रहती थी। सप्ताह के प्रत्येक दिवस को उन्होंने परमात्मा के साथ जोड़ रखा था।

दादी दिनों का महत्त्व बताती थी

इतवार के दिन वे कहती, हर क्षण बाबा पर एतबार करो। इतवार को रविवार कहते तो कहती थी कि रवि (सूर्य) के सान्निध्य में सूर्य की तरह चमको। सोमवार वाले दिन कहती, बाबा के अंग-संग रह सारा दिन सोमरस पिओ। मंगलवार वाले दिन कहती, मंगल मिलन मनाओ, प्रभु गुण गाओ। बुधवार वाले दिन कहती, बुद्धि प्रदान करने वाली माँ सरस्वती को याद करो। सतगुरुवार को कहती, आज मेरे सतगुरु का

सेवाकेन्द्र का उद्घाटन करती हुई दादी ध्यानी

हित है, सच्चे दिल, शुभभावना, शुद्धता से भोग बनाओ और सतगुरु को खिला कर खाओ। वे स्वयं अपने हाथ से सतगुरुवार का भोग बनाती व भोग लगाती। सतमेनी (सोहन हलवा) बनाती व खिलाती। शुक्रवार को सभी को कहती, बार-बार बाबा का शुक्रिया करो और रात को शुक्रिया कर बाबा की गोद में सो जाओ। शनिवार वाले दिन कहती, सभी बाबा के सामने बैठ योग करो और शनि तथा राहू-केतु को दूर भगाओ। योग अभ्यास करो, पापों का नाश करो।

हर चीज़ से बाबा का नाम जोड़ती थी

इस प्रकार बाबा को याद करने एवं करवाने की वे कोई-न-कोई युक्ति निकाल लेती थी। पापड़ भूनते हुए कहती, पापड़ परमात्मा का, पानी परमेश्वर का, रोटी राम की, सब्जी सांवल शाह की, रजाई राम की, तलाई त्रिलोकीनाथ की, बिछौना बाबा का। वे हर चीज़ के साथ बाबा का नाम जोड़ लेती थी जैसे बाबा उनके रोम-रोम में बसता हो।

निश्छल और साफ मन

सन् 1978-79 में उनकी आँखों की दृष्टि बहुत खराब हो गई थी। आँखें बनवाने के लिए उन्हें मुंबई भेजा गया। आँखें ठीक न बनने के कारण वे मधुबन में ही रह गई परंतु उनका दिल हमेशा अंबाला की ही तरफ रहा। सन् 1982-83 में वे पुनः एक बार अंबाला कैंट आई तथा सभी भाई-बहनों को मिलकर गई।

उनका मन बच्चों की तरह निश्छल एवं साफ था। जब मन किसी भी कारण से उदास अथवा खिन्न होता तो वे अकेले अथवा छोटे-छोटे बच्चों के साथ गुड्डे या गिट्टे खेलने लग जाती थी। ऐसी थी हमारी ध्यानी दादी।

******

प्रसिद्ध आर्किटेक्ट एफ.सी. अग्निहोत्री के बड़े सुपुत्र ओम प्रकाश अग्निहोत्री ने ध्यानी दादी के बारे में अपने संस्मरण इस प्रकार व्यक्त किए –

सादगी और मृदुभाषा

सन् 1957 की बात है, मेरी आयु लगभग 18 वर्ष की थी। उस समय ब्रह्माकुमारी आश्रम हमारे घर में ही होता था। मुझे ध्यानी दादी से बहुत ही घनिष्ठ प्यार था। जब कभी उन्होंने चाय आदि बनानी या पीनी होती थी, मुझे अवश्य ही आवाज लगाकर बुला लेती थी तथा हम इकट्ठे ही चाय आदि पीते थे। यदि उस समय मैं वहाँ नहीं होता था तो वे मेरा इंतजार किया करती थी। ध्यानी दादी के समय अंबाला छावनी में लगभग 65-70 युगल ज्ञान में चलते थे। यह एक रिकॉर्ड था कि शुरू-शुरू में जितने युगल यहाँ ज्ञान में चलते थे, इतने कहीं भी नहीं थे जैसा कि पाटन की समर्पित बहन नीलम के माता-पिता, अंबाला की समर्पित बहन आशा के माता-पिता, इंदौर वाले ओमप्रकाश भाई के माता-पिता आदि। ये सभी युगल ध्यानी दादी के ज्ञान, ध्यान, सादगी, मन की सच्चाई-सफाई, मृदु भाषा एवं निश्छल स्नेह के दीवाने थे। ये सभी इस ईश्वरीय ज्ञान में इतने दृढ़ निश्चय वाले थे जैसे कि चूने में लगी ईंट।

दादी-नानी जैसा प्यार

ध्यानी दादी सभी जिज्ञासुओं का बहुत ध्यान रखती थी। सभी अपने दिल की बात, पारिवारिक समस्यायें आदि ध्यानी दादी को आकर बताया करते थे। उन्होंने

कभी किसी की बात इधर-उधर नहीं की, न ही किसी की बात का प्रभाव अपने ऊपर पड़ने दिया। वे अमीर-गरीब, छोटे-बड़े, साधारण-विशेष सभी के साथ एक जैसा प्यार एवं व्यवहार रखती थी। उनकी चाल-ढाल, बोल-चाल, व्यवहार में मुझे नानी या दादी के प्यार की भासना आती थी। ध्यानी दादी बहुत थोड़ा बोलती थी लेकिन जब बोलती थी तो लगता था कि उनकी मंद-मंद मुसकान के रूप में फूल झर रहे हैं। उनके साथ रहने वाली राधा बहन भी बहुत साफ दिल की थी परंतु वे ध्यानी दादी के विपरीत खुल कर, खिलखिलाकर हँसती थी। ध्यानी दादी में वस्तुओं का संग्रह करने की वृत्ति बिल्कुल नहीं थी। इतने वर्ष एक स्थान पर रहने के बावजूद उनका निजी सामान एक छोटा-सा ट्रंक जिसे शायद संदूक कहना अधिक उचित होगा तथा जयपुरी पतली-सी रजाई सहित छोटा-सा बिस्तरा था जिसमें सारी सर्दी गुजार देती थी।

उन्हें खाने की बजाय खिलाने का शौक था। यदि कोई फल आदि लाता था तो वह उसकी मौजूदगी में ही टोली-प्रसाद के रूप में उसे सबको बाँट देती थी। ऐसी प्रेम और शीतलता की मूर्ति ध्यानी दादी को याद कर आज भी मन शांत, स्थिर एवं शीतल हो जाता है। ऐसी महान विभूति को मेरा कोटि-कोटि नमन!

******

वायुसेना की सेवाओं में तकनीकी पद से सेवानिवृत्त **ब्रह्माकुमार मोहनलाल** (अंबाला) पिछले 40 वर्षों से ज्ञान में चल रहे हैं। ध्यानी दादी से ली गई भरपूर पालना के अनुभव को वे इस प्रकार बयान करते हैं –

अठारह जनवरी सन् 1970 को पहली बार सेवाकेन्द्र पर आया तो देखा कि सभी बहनें शांति में बैठी है, मैं भी बैठ गया। ब्रह्माकुमारी ध्यानी दादी भी ध्यान मुद्रा में लीन थी। कुछ समय बाद ध्यान से नीचे आई तो कुछ महावाक्य उच्चारण करने लगी। उनके महावाक्यों में अद्भुत आकर्षण था जैसे स्वयं शिवबाबा और ब्रह्मा बाबा बोल रहे हों।

ध्यानी दादी जी का व्यक्तित्व

दादी जी का दिव्यता से भरपूर, मधुर, इच्छारहित, नि:स्वार्थ मातृस्नेह से परिपूर्ण व्यवहार देखकर मन गद्गद हो गया। ऐसा लगा जैसे कई जन्मों से बिछुड़ी हुई माँ हमें मिल गई हो। इस नि:स्वार्थ माँ जैसे प्यार ने देह के संबंधों को भुला दिया। फिर क्या था, मैं और मेरा बड़ा भाई ठाकुरदास जी, गाँव से आकर सेवाकेन्द्र के पास अलग से रहने लगे और बाबा की सेवा में पूरी तरह से संलग्न हो गये। दादी जी से हम दोनों भाइयों (मोहन व ठाकुर) को घर जैसा प्यार मिला और हम सब कुछ भूल गये। ध्यानी दादी जी गुरुवार का भोग स्वयं ही तैयार करती थी और अपने ही हाथों से शिवबाबा को स्वीकार करवाती थी। भोग स्वीकार करवाने के उपरांत शिवबाबा का अलौकिक संदेश सुनाया करती थी।

पारखी बुद्धि

दादी जी की पारखी बुद्धि की हम प्रशंसा करते हैं। किसी की भी अवस्था थोड़ी-सी भी ढीली देखती थी तो उसे युक्ति से कहती थी कि आज आपको भोजन का निमंत्रण है और उसे योग की शक्ति से भरपूर कर देती थी। कभी भी किसी को बिना टोली, भोग आदि दिये नहीं भेजती थी चाहे कुरमुरा चने (बेगरी

टोली) ही क्यों न हो। ध्यानी दादी के योग एवं वरदानी स्थिति की रिजल्ट यह निकली कि अंबाला में पवित्रता को धारण किये हुए 65 युगल ईश्वरीय ज्ञान में चल रहे थे। कुछ उनमें से अभी भी उसी प्रकार पावन ज्ञानयुक्त जीवन जी रहे हैं।

रास की विशेषता

दीपावली एवं जन्माष्टमी के अवसर पर दादी जी ध्यान में जाती थी, रास होती थी। इस आत्मा द्वारा भी अलौकिक फरिश्तों जैसा रास होता था। क्लास के सभी भाई-बहनें रास करते थक जाते थे परंतु ध्यानी दादी कभी नहीं थकती थी। इतनी वृद्ध अवस्था में ऐसा देखकर आश्चर्य होता था। हम बच्चों को, दादी के द्वारा शिवबाबा ने वो प्यार दिया जो कल्प-कल्प का इतना ऊँचा भाग्य बना दिया। हमारी मीठी, प्यारी, तेजस्वी दादी की हम जितनी महिमा करें, उतनी ही थोड़ी है। साक्षात् शक्ति की अवतार थी। उनके होने से क्लास का वातावरण ही बदल जाता था।

खुशियों से भर जाती थी झोली

कई बार हम किसी नई आत्मा को सेवास्थान पर लाते थे तो हम अनुभव करते थे और देखते भी थे कि जैसे दादी जी की आँखों में शिवबाबा आ जाता था और नई आत्मा को निहाल कर देता था। वह व्यक्ति दादी जी के चरणों में झुक जाता था। इस प्रकार, हम सब खुशियों से झोली भर कर जाते थे। उनकी पालना की ही कमाल है जो आज तक भी हम उसी निश्चय से अपना जीवन जी रहे हैं। उन्हीं के वरदानों के आधार पर मुझ आत्मा द्वारा अनेक आत्माओं की सेवा हुई। मैं तो अपने आप को पद्मापद्म भाग्यशाली समझता हूँ।

******

जगाधरी (हरियाणा) से **ब्रह्माकुमार दलबीर भाई**, ध्यानी दादी जी से अपनी प्रथम मुलाकात का वर्णन इस प्रकार करते है –

निराकार शिव पिता ने नवसृष्टि के निर्माण के कार्य में जिन अनेक आदि-रत्नों को चुना, ध्यानी दादी भी उनमें से एक थी। स्नेह से परिपूर्ण उनकी अलौकिक दृष्टि मात्र से ही अनेक आत्माओं को शान्ति और शक्ति का अनुभव होने लगता था।

ब्रह्मा बाबा का साक्षात्कार

सन् 1972 की बात है, मुझे ज्ञान में आये हुए लगभग एक वर्ष हो गया था। कुछ दिनों के बाद ही मैं अंबाला छावनी स्थित सेवाकेन्द्र पर गया। जैसे ही आश्रम में प्रविष्ट हुआ, देखा, ध्यानी दादी जी सामने चारपाई पर बैठी हुई थी। उन पर जैसे ही दृष्टि पड़ी, मुझे ब्रह्मा बाबा का साक्षात्कार हुआ। मैं कुछ देर शांत खड़ा रहा, फिर दादी ने प्यार से मुझे अपने पास ही बिठा लिया और पूछा, कहाँ से आये हो। मैंने कहा, दादी, मैं गाँव से आया हूँ जो दस किलोमीटर दूर है। दादी ने कहा, हाँ, अच्छा, गाँव से आये हो, देखो, शिवबाबा भी गाँव के अपने भोले-भाले बच्चों को सच्चा पावन हीरा बनाने आये हैं, आप कितने भाग्यशाली हो जो इतनी छोटी-सी आयु में ही प्यारे बाबा को पहचान लिया। स्नेहमयी दादी के साथ पहली मुलाकात से ही ऐसा लगा जैसे कि मैं दादी को बहुत समय से जानता हूँ और दादी भी मुझे बहुत समय से जानती हैं। फिर दादी ने कहा, कल रक्षाबंधन है, सवेरे बाबा से पावन राखी बँधवाने आना।

गीले और रंगीन कपड़े

अगले दिन सवेरे तीन बजे उठा और तैयार होकर आश्रम पर जाने के लिए पैदल ही चल पड़ा। जैसे ही कुछ दूरी तय की, बरसात शुरू हो गई परंतु मैं हिम्मत करके चलता रहा। आश्रम के नजदीक पहुँच कर मैंने भीगे हुए कपड़ों को निकाला, अच्छी तरह निचोड़ा और फिर पहन लिया। आश्रम में सभी बहन-भाई, क्लास में, पंक्ति में बैठे योग कर रहे थे। एक बहन ने मुझे देखकर पूछा, आप कहाँ से आये हो? मैंने कहा, बहन जी, मैं तो दूर गाँव से आया हूँ। उसने कहा, आपने ये गीले और रंगीन कपड़े पहन रखे हैं, आपको इतना भी मालूम नहीं कि क्लास में सफेद वस्त्र पहनकर आना होता है। मैं डरकर, चुपचाप सिकुड़कर पीछे बैठ गया परंतु मन में गीले कपड़ों को देखकर ग्लानि महसूस हो रही थी।

चारों ओर लाल प्रकाश

जैसे ही ममतामयी दादी जी संदली पर बैठ सबको योग दृष्टि देने लगी, कुछ क्षणों के बाद ही मेरे चारों ओर लाल प्रकाश ही प्रकाश फैल गया, असीम शक्ति का अनुभव होने लगा और जरा भी देह का भान नहीं रहा। कब मैं उठकर सबसे पहले दादी जी के सामने जा बैठा और कब दादी ने मुझे राखी बाँधी, मुझे कुछ भी पता नहीं चला। उस समय मैं बहुत ही गहरी शान्ति और शक्ति का अनुभव कर रहा था।

अन्त में जब कार्यक्रम पूरा हुआ, सभी मेरी ओर आश्चर्य भरी निगाहों से देख रहे थे, खुश होकर कह भी रहे थे कि आप तो बहुत सौभाग्यशाली हो जो बाबा ने आपको सबसे पहले राखी बाँधी और इतनी शक्तिशाली दृष्टि दी। कई दिनों तक मैं इसी अव्यक्त स्थिति की अनुभूति में खोया रहा।

******

ध्यानी दादी जी के प्रति पाटन सेवाकेन्द्र (गुजरात) की निमित्त संचालिका **ब्रह्माकुमारी नीलम** बहन अपने उद्‌गार इस प्रकार व्यक्त करती है –

मैं जब चार वर्ष की थी तब लौकिक माता-पिता ज्ञान में आए। वे हमें भी साथ में लेकर आश्रम जाते थे। आश्रम पर ध्यानी दादी ने मुझे देखते ही कहा, यह यज्ञ से गई हुई आत्मा है, इसका ध्यान रखना। बच्चों की क्लास में दादी जी हमेशा मुझे ही संदली पर योग में बिठाती थी क्योंकि मैं शांत और योगयुक्त रहती थी। अन्य बहनें भी मुझे देखकर कहती थी, इसे देखते ही बाबा की याद आती है।

वाणी में जादू

ध्यानी दादी एकदम योगयुक्त, शांत, धैर्य की मूर्ति और गंभीर थी। उन्हों की दृष्टि से ही आत्मायें बाबा के बच्चे बन जाती थीं। बहुत कम बोलती थी परंतु वाणी इतनी शक्तिशाली थी जो आने वालों पर जादू का काम करती थी। बच्चों से बहुत प्यार करती थी, टोली खिलाती थी। उनका ध्यान का पार्ट था। जब जन्माष्टमी का दिन होता था तब बाबा को भोग लगाते समय उन द्वारा श्रीकृष्ण का पार्ट पले होता था। इतना बड़ा भारी शरीर होने पर भी क्लास में घुटनों के बल (श्रीकृष्ण की तरह) घूमती थी। हम उन्हें मक्खन खिलाते थे, उनके साथ रास भी करते थे।

वे सभी भाई-बहनों की मम्मा-बाबा जैसी पालना

जगदीश भाई

भ्राता जगदीश चन्द्र जी का जन्म 10 दिसंबर, 1929 को ऋषि-मुनियों के लिए विख्यात शहर मुलतान (वर्तमान समय पाकिस्तान में) की पवित्र भूमि पर हुआ। आपकी आध्यात्मिकता में अनुपम रुचि थी तथा इसी अभिरुचि को तृप्त करने के लिए आपने भारतीय दर्शन, वैदिक संस्कृति एवं विश्व के विभिन्न धर्मों का गहन अध्ययन किया। जब शुरू में दादियों ने दिल्ली में सेवायें प्रारंभ की, उस समय आपने दिल्ली कमलानगर में ज्ञान लिया। आप लौकिक में प्रोफेसर थे, आपकी बुद्धि बहुत दूरांदेशी और प्रवीण थी। आपने कोर्स करते ही, गुप्त रूप में आये हुए भगवान को पहचान लिया और स्वयं को बेहद सेवाओं में समर्पित कर दिया। बाबा आपको संजय, गणेश आदि उपनामों से पुकारते थे। आपकी बुद्धि के लिए कहते कि 7 फुट लंबी बुद्धि है। आपने राजयोग जैसी जटिल व गुह्य विद्या पर शोध कार्य किया तथा उसकी व्याख्या अत्यंत सरल, सुबोध एवं सुरुचिपूर्ण शब्दों में की। आपने विद्यालय का पूरा साहित्य तैयार किया। राजयोग, मानवीय मूल्यों, आध्यात्मिकता एवं समसामयिक विषयों पर 200 से भी अधिक हिन्दी, अंग्रेजी और उर्दू भाषाओं में पुस्तकें लिखी। आप ज्ञानामृत, वर्ल्ड रिन्युअल तथा प्योरिटी के प्रधान संपादक रहे और 'भारतीय एडीटर्स गिल्ड' के सदस्य भी थे। आप सेवाओं के आदि रत्न थे। आपका यज्ञ में अग्रणीय स्थान रहा। आप मुख्य प्रवक्ता के रूप में रहे। आपने सेवा की अनेकानेक नई योजनायें तैयार की और उन्हें प्रैक्टिकल स्वरूप दिया। आपने विभिन्न वर्गों की सेवाओं हेतु अनेक विंग्स बनाई और उनका सुचारु रूप से संचालन किया। आप यज्ञ सेवाओं की नींव थे। दिल्ली शक्तिनगर सेवाकेन्द्र पर रहकर आप विश्व सेवा के निमित्त बने। रशिया में आपने सेवाओं की नींव डाली जहाँ आज हजारों बाबा के बच्चे ज्ञान-योग की शिक्षा ले रहे हैं। आपका व्यक्तित्व एवं कृतित्व सब कुछ जैसे संपूर्ण मानवता के लिए ही था। अक्सर कहा जाता है कि आप सच्चे दधीचि थे। आपने 12 मई, 2001 को अपने पार्थिव शरीर का त्याग कर संपूर्ण स्थिति को प्राप्त किया।

आदरणीय **भ्राता जगदीश** जी को बाल्यकाल से ही प्रभु-मिलन की गहन प्यास थी। माउंट आबू में एक कार्यक्रम के दौरान बाल्यकाल के अनुभवों को सुनाते हुए आपने कहा था कि ''जब मैं छोटा था तो मेरे मन में उत्कट इच्छा थी कि मुझे परमात्मा से मिलना है, आत्मा के स्वरूप में स्थित होना है और आत्म-अनुभूति करनी है। मैंने निश्चित किया था कि मेरे जीवन का यही परम लक्ष्य है, इसे किये बिना मैं नहीं टलूँगा, मुझे और कुछ भी नहीं चाहिए। तो उस भावना से जो भी कोई सत्संग या धार्मिक सम्मेलन होता था, मैं उसमें शामिल होता था। कुछ शास्त्रार्थों में भी शामिल होता रहा। उस समय के कई महात्माओं से, साधु-संतों से, योगियों से भी मिलता रहा ताकि प्रभु मिलन का सच्चा मार्ग मिल जाए।''

सन् 1952 में आपने महसूस किया कि प्रभु मिलन हेतु और इंतजार नहीं किया जा सकता और आपको लगा कि ईश्वरानुभूति के बिना तो जीवन मानो निरर्थक ही हो गया है। जीवन के इसी मोड़ पर आप प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के संपर्क में आये और इसके संस्थापक प्रजापिता ब्रह्मा के पवित्रता व सादगीयुक्त जीवन से विशेष रूप से प्रभावित हुए। इस ईश्वरीय विश्व विद्यालय द्वारा सिखाई जाने वाली सहज राजयोग की विधि तथा ईश्वरीय ज्ञान से आपको नई रोशनी मिली। यहाँ आपको गहन आध्यात्मिक अनुभव हुए और आपने लौकिक नौकरी छोड़ दी तथा मानव सेवा हेतु अपना जीवन इस संस्था को समर्पित कर दिया। आप इस संस्था में विभिन्न महत्त्वपूर्ण पदों पर कार्यरत रहे। आपने संस्था के प्रमुख प्रवक्ता के रूप में अनेक राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों, परिचर्चाओं व आध्यात्मिक मेलों इत्यादि का आयोजन किया। जन-जन को आध्यात्मिक संदेश देने हेतु भारत के 6,000 एवं विश्व के 80 देशों के 300 सेवाकेन्द्रों की स्थापना एवं प्रगति में विशेष योगदान दिया। आप संस्था की केन्द्रीय समिति के जनरल सेक्रेटरी और प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय की संबंधित संस्थाओं के उपाध्यक्ष भी थे।

विश्व भर में इस ईश्वरीय ज्ञान का प्रचार-प्रसार करने हेतु आपने 50 देशों की यात्रा की और अपने दिव्य अनुभवों का अनेकों के साथ आदान-प्रदान किया। सभी देशों में समाचार-पत्रों, रेडियो, दूरदर्शन आदि के द्वारा आपके साक्षात्कारों व कार्यक्रमों का प्रसार हुआ। आपको विश्व के अति विशिष्ट व्यक्तियों – लार्ड माउण्टबेटन, दलाई लामा, पोप, अर्नाल्ड टायनबी, संयुक्त राष्ट्र संघ के उच्च पदाधिकारियों, अनेक देशों के राष्ट्रपतियों व प्रधानमंत्रियों आदि से भेंट कर उन्हें ईश्वरीय संदेश देने व उनके साथ आध्यात्मिक चर्चा करने का सुअवसर भी प्राप्त हुआ। प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय की प्रगति में आपका विशेष योगदान रहा और आपके विशेष प्रयासों के फलस्वरूप यह संस्था संयुक्त राष्ट्र के साथ अंतर्राष्ट्रीय गैर सरकारी संस्थान के रूप में सम्बद्ध हुई व विश्व भर में फैली। बीमारी के दौरान भी अनेक सेवायोजनाओं का सफल संचालन कर आपने अपनी देहातीत स्थिति का प्रमाण प्रस्तुत किया। आप यही कहते रहे, 'मेरा शरीर बीमार है, मैं (आत्मा) नहीं।' दैवी-संस्कृति के गूढ़ रहस्यों के ज्ञाता, नव विश्व निर्माण के आधारमूर्त, सबके उद्धारमूर्त, निःस्वार्थ स्नेही, निस्पृह, आप्तकाम भ्राता जगदीश जी को सर्व ब्राह्मण कुल भूषणों की तरफ से शत-शत स्नेह-सुमन अर्पण और नमन। आज शारीरिक रूप से हमारे मध्य न होकर भी आपकी बाप समान धारणाएँ और प्रेरणाएँ, आपकी अमूल्य लेखनी के उद्गार सदा हमें ज्ञान-प्रकाश देते रहेंगे। आपके प्रति और बापदादा के प्रति हमारे स्नेह का सही अर्थों में यही प्रमाण और प्रकटीकरण होगा कि हम आपकी आश 'बाबा की प्रत्यक्षता' को पूर्ण करें। महान विभूति, ब्राह्मण कुल के शृंगार, विजयी-रत्न भ्राता जगदीश जी को बार-बार हार्दिक प्रेम भावांजलि तथा श्रद्धा-सुमन अर्पण!

******

जगदीश भाई जी के त्यागी, तपस्वी और सेवामय जीवन की लगभग 40 वर्षों तक साक्षी रही वहन चक्रधारी उनके बारे में इस प्रकार बताती हैं –

बचपन से ही आपके मन में वैराग्य की भावना थी और कहते थे कि मुझे ऋषिकेश में जाकर ही वास करना है। एक बार ऋषिकेश में स्थान भी देखने गए कि अगर वातावरण अच्छा हो तो कमरा लेकर वहीं रहकर साधना की जाये। जगदीश भाई का ऑफिशियल नाम तो जगदीश चंद्र ही था। घर में उनका नाम ऋषिकेश था और आलमाइटी बाबा ने उन्हें जो अव्यक्त नाम दिया, वह था, 'मनोहर फूल'। इसके अलावा बाबा ने उन्हें 'गणेश' और 'संजय' (दिव्यदृष्टिधारी) नाम भी दिये थे।

ईश्वरीय ज्ञान सीखने में कठिनाइयों का सामना

एक बार बहनें थियोसॉफिकल सोसायटी में भाषण करने के लिए गई थीं, जगदीश भाई भी भाषण सुन रहे थे। जब बहनें प्रोग्राम पूरा करके बाहर आईं तो आप भी ये जानने के लिए कि ये बहनें कहाँ रहती हैं, उनके पीछे-पीछे आये। आपने उनसे उनके सेवास्थान का पता पूछा और आने का समय पूछा। बहनों ने सुबह चार बजे का समय दिया। जगदीश भाई ने सोचा कि अब मैं अपने रहने के स्थान पर जाऊँ और सुबह ठीक चार बजे बहनों से ज्ञान लेने के लिए पहुँचूँ, इतना समय तो नहीं है इसलिए वे वहीं एक पेड़ के नीचे साइकिल खड़ी करके समय व्यतीत करने लगे और सुबह चार बजे सेवाकेन्द्र पर पहुँच गये। उस समय बहनें दिल्ली मलकागंज में छोटे-से कमरे में रहती थीं। वहीं से आपने ज्ञान लिया। आपको ईश्वरीय ज्ञान की इतनी लगन थी कि आप कई बार तो सुबह चार बजे से पहले ही पहुँच जाते थे। शाम को भी क्लास करते थे। क्लास करके अपने निवास (सोनीपत में एक हॉस्टल) पहुँचने में इन्हें रात के 12 बज जाते थे तब तक हॉस्टल के दरवाजे बंद हो जाते थे। भाई साहब ने सुनाया था, एक बार मैं खिड़की से कूदकर अपने कमरे में जा रहा था, किसी ने खिड़की के अंदर मटका रख दिया था, मुझे मालूम नहीं था कि यहाँ मटका रखा हुआ है। ज्यों ही मैं कूदा, मटका गिरा, जोर से आवाज आई, सारे लोग खड़े हो गए और कहने लगे, क्या हो गया, क्या हो गया। मैं भी उनके साथ शोर मचाने लगा कि क्या हो गया.. ताकि यह ना पता चले कि मैं लेट आया हूँ। क्या हुआ..क्या हुआ..चोर आया..ऐसा शोर मचाकर सब सो गये। फिर, रात को दो-अढाई बजे उठकर, नहा-धोकर मैं फिर खिड़की के रास्ते निकल गया ताकि सुबह की क्लास कर सकूँ। किसी को पता न पड़े इसलिए पीछे की खिड़की से कूदकर बाहर जाना पड़ता था।

एक बार रात के अंधेरे में एक शराबी ने पकड़कर पिटाई भी कर दी कि यह कौन है जो रोज आता है। फिर भी ज्ञान सुनना छोड़ा नहीं। आश्रम तक पहुँचने का रास्ता बड़ा ऊबड़-खाबड़ था, चोर लूट लेते थे इसलिए घड़ी पहनकर नहीं आते थे, टाइम का पता नहीं पड़ता था। अगर टाइम से पहले पहुँचकर दरवाजा खटखटाते थे तो बहनें दरवाजा भी नहीं खोलती थीं। एक बार ऐसा ही हुआ, बहनों ने कहा, इतना जल्दी क्यों आ गये हो, अभी दरवाजा नहीं खुलेगा तो पान वाले से जाकर समय पूछा। पता पड़ा कि अभी तो चार

बजे है। भाई साहब का जीवन सादा होने के कारण बहनें समझती थी कि साधारण-सा है लेकिन कई बार साधारण दिखने वाला भी अंदर से कितना महान हो सकता है, यह भी सत्य है।

बाबा का डायरेक्शन सेवाकेन्द्र प्रति

बाबा ने कहा था, सेवाकेन्द्र ऐसे स्थान पर खोलो जो दिल्ली यूनिवर्सिटी के सामने हो, जिसकी दीवार किसी गृहस्थी के घर की दीवार से ना मिले। सचमुच ऐसा एक भवन मिला जो बाबा की कंडीशन के अनुसार था। वह था, प्रथम सेवाकेन्द्र जहाँ आप समर्पित रूप से रहे, कमला नगर दिल्ली का। जगदीश भाई जी हमें सुनाया करते थे, उस समय सेवाकेन्द्र पर दो ही कमरे थे तथा एक छोटा-सा स्टोर था। एक कमरे में बहनें रहती थी, किचन बहुत छोटी थी। भाई साहब का जो कमरा था, उसी में क्लास होती थी। लिखने आदि का सारा काम वे वहीं करते थे। अलमारियाँ दीवार में ही पत्थर की स्लैब डालकर बनाई गई थी जिनका कोई दरवाजा नहीं होता था। जैसे ही हवा आती थी, सारे कागज उड़ने शुरू हो जाते थे। वे बताते थे कि मेरा काफी समय कागज़ समेटने में ही लग जाता था।

भगवान मिला, इससे बढ़कर और क्या चाहिए

मधुबन से नित्य बाबा किसी न किसी बहन को वहाँ भेजते ही रहते थे। भाई साहब यह भी सुनाते थे कि एक ही लेट्रिन-बाथरूम था। स्नान करने वाले ज्यादा थे इसलिए हम लोटा लेकर दूर जमुना जी के घाट पर चले जाते थे। वहाँ पब्लिक लेट्रिन बनी हुई थी। वहीं स्नान-पानी करके फिर घर आते थे। लेकिन कभी भी मन में यह नहीं आया कि यह क्या, यहाँ तो स्नान के लिए भी जगह नहीं मिलती। अरे, भगवान मिल गया, इससे बढ़कर और क्या चीज़ चाहिए! भगवान मिल गया, स्नान का प्रबंध नहीं मिला, खटिया नहीं मिली तो क्या बड़ी बात है! इस प्रकार भाई साहब ने शुरू से जीवन बड़ा त्याग का जीया।

ईश्वरीय सेवा की लगन

सेवाकेन्द्र के पास एक आर्यसमाजी स्कूल था। भाई साहब पहले आर्यसमाज से संबंध रखते थे। एक बार उन्होंने उनसे बातचीत करके कार्यक्रम के लिए उनका हॉल ले लिया और बहनों का भाषण रख दिया। इतने पैसे नहीं होते थे कि पर्चे छपवाएं और बाँटे इसलिए स्वयं ही दरियाँ बिछाई और बाहर सड़क पर खड़े हो गए। फिर पकड़-पकड़ कर लोगों को लाने लगे कि 'आओ, देवियों का भाषण सुनो, आबू पर्वत से उतरी हैं ये देवियाँ।' उनका लक्ष्य होता था कि देवियों के आने से पहले हॉल भर जाए और सबको बहनों द्वारा प्यारे बाबा का संदेश मिल जाए।

मुझे एक शिक्षा भाई साहब ने दी कि कोई भी ज्ञान सीखने आए तो उससे प्रभावित नहीं होना कि यह तो बहुत अच्छा है लेकिन किसी से नफरत भी नहीं करना। यह शिक्षा हमको बहुत काम आई।

सुविधायें कम, कार्य अति महान

सेन्टर पर कुर्सी और मेज नहीं थे, क्लासरूम में ही बैठकर लिखते रहते थे इसलिए कंधे निकल आए और कमर झुक गई। पेट भी थोड़ा बड़ा होता गया। उनके कमरे की एक खटिया ही उनका सब कुछ होती थी। उसी पर बैठकर खाना भी है, लिखना भी है और

सोना भी है। एक छोटा-सा स्टूल होता था जिस पर उनके सारे पेन आदि रखे होते थे। पेट पर ही तकिया रखकर, उस पर तख्ती रख लिखते रहते थे। कई लोग कहते थे, जो यहाँ के संपादक हैं, उनका ऑफिस दिखाओ, हम उनके ऑफिस में उनसे मिलना चाहते हैं। ऑफिस हो तो दिखायें, इसलिए हम आने वालों को नीचे ही बिठा लेते थे और कहते थे कि आप बैठिए, हम भाई साहब को यहीं बुला लेते हैं, वो आपसे यहीं आकर मिल लेंगे। वे किसी मिलने वाले को अपने कमरे में नहीं बुलाते थे।

अति साधारण पहनावे में भी गुणों की झलक से सफलता

जब जगदीश भाई यज्ञ में आये तो बेगरी पार्ट चल रहा था। सिंध-हैदराबाद से आये हुए पुराने कपड़े कुछ स्टॉक में पड़े रहते थे, उनमें से ही इनको कोई पैजामा-कुर्ता मिल जाता था, उसी से काम चलाते थे। कहते थे, कभी भी कोई कपड़ा फिट नहीं आता था। कभी किसी पैजामे की टांग ऊपर चढ़ जाती तो कोई नीचे लटकता रहता था। ऐसे ही कपड़े पहनकर बड़े-बड़े लोगों से मिलने चले जाते थे लेकिन उनका बातचीत करने का तरीका ऐसा था कि किसी से भी अप्वाइंटमेंट ले आना उनके लिए बहुत सरल था। दृढ़ता इतनी थी, कहते थे, कोई काम करना है तो करना ही है और युक्ति से अपना काम कर ही लेते थे।

उन दिनों कार तो होती नहीं थी, बसों में ही आना-जाना होता था। रिक्शा के लिए भी पैसे खर्च नहीं कर सकते थे। भाई साहब प्रोग्राम देते, चलो, आज किसी से मिलने जाना है। मिलने का समय निश्चित होता था पर बस मिलना तो निश्चित नहीं होता था। दादी गुलजार भी साथ होती थी। हम सड़क पर पहुँचते थे, यदि सामने से कोई बस आ रही होती थी, तो कहते थे, गुलजार दादी, आप जल्दी-जल्दी बस के आगे खड़े हो जाओ और हाथ दो। सड़क के बीचों-बीच खड़े होकर हम हाथ देते थे। गुलजार दादी साड़ी उठाए जल्दी-जल्दी दौड़ती थी और जगदीश भाई कहते थे कि आप इस तरह बीचों-बीच खड़े हो जाओ जो बस आगे निकल ही न पाए। जैसे ही बस खड़ी होती थी, भाई साहब गेट पर खड़े होकर कहते थे, आइये बहन जी, बहनों को चढ़ाकर खुद भी चढ़ जाते

चक्रधारी बहन, रुकमणी दादी, पालू दादी, आलराउंडर दादी, सुदेश बहन, दादी गुलज़ार, भ्राता जगदीश जी, आत्म प्रकाश भाई (ज्ञानामृत), सुन्दरलाल भाई (ह्रिनगर) और दिल्ली के अन्य भाई-बहनें

थे क्योंकि टाइम पर पहुँचना होता था।

कड़ी परिस्थितियों में युक्ति से मुक्ति

एक बार बनारस में एक कांफ्रेस थी, उसका निमंत्रण मिला, सारा दिन उसका मैटेरियल तैयार किया और प्रेस में छपवाया। उस समय प्रथम और द्वितीय श्रेणी की तो बात थी ही नहीं, तृतीय श्रेणी में ही सफर करते थे। ठंडी बहुत थी, अपने साथ एक रजाई ले गये थे, उस रजाई को लपेटकर ऊपर की बर्थ पर सो गये। दिन-भर काम करने के कारण थकान इतनी हो गई थी कि गहरी नींद में करवट ली और नीचे गिर गये। नीचे बैठे लोग चाय पी रहे थे, उन पर गिरे तो उनके कप-प्लेट भी टूट गये। भाई साहब ने बताया कि मेरे को चोट तो नहीं आई क्योंकि रजाई में लिपटा हुआ था लेकिन वो लोग चिल्लाने लगे कि हमारी चाय गिरा दी, प्लेटें तोड़ दी, बाबूजी पैसे निकालो। बाबू जी के पास तो पैसा एक भी नहीं। बहनों ने टिकट बनवाकर दे दी थी और एक रुपया दिया था, रिक्शा से आश्रम तक जाने का। पैसे कहाँ से दें, तो शोर मचाया कि मुझे बहुत चोट लगी है। यह सुनकर उन्हें तरस आ गया और बात खत्म हो गई। चोट लगी नहीं थी पर पैसे थे ही नहीं तो यह सब कहना पड़ा।

ट्रेन से उतरकर एक रिक्शा वाले से पूछताछ की, वह पैसे ज्यादा मांग रहा था। तो रजाई को लपेटकर बगल में दबाया, थैला उठाया और पैदल ही चल पड़े ताकि कुछ आगे जाकर रिक्शा ले लेंगे, सस्ता मिलेगा। आगे जाकर ज्यों ही रिक्शा में बैठे, पैजामा घुटनों से फट गया। बगल में रजाई, एक हाथ में थैला, दूसरे हाथ से पैजामा पकड़ लिया – ऐसी स्थिति में सेन्टर पहुँचे। भाई साहब हमेशा सूई-धागा साथ में रखते थे क्योंकि कभी कोई कपड़ा फट जाता था, कभी कोई तो सफर में ही सिलाई कर लेते थे।

बहनों के प्रति सदा श्रद्धावान

कई बार बहनें दो आने देकर भाई साहब को बाहर भेजती थी और पर्चे छपवाने तथा खरीदारी के कार्य करने को कहती थी। भाई साहब किराया बचाने के लक्ष्य से पैदल जाते, पैदल आते और किसी को ज्ञान सुनाकर, किसी से स्नेहपूर्वक कहकर उन दो आनों को भी बचा लेते थे। यज्ञ की बड़ी बहनों के पास भले ही दुनियावी ज्ञान नहीं था पर उन्हें देखकर लगता था कि ये देवियाँ हैं इसलिए भाई साहब कोई भी सेवा करने के लिए हरदम तैयार रहते थे। जब प्रोग्राम होते थे तो वे हमेशा मंच सचिव बनते थे ताकि भाषण में कोई बात छूट जाये तो उसे स्पष्ट कर सकें।

बाबा ने भाई साहब को अधिकार दिया था कि बच्चे, तुम भक्ति आदि की या अन्य प्रकार की कोई भी किताब पढ़ सकते हो, फिर उसकी ईश्वरीय ज्ञान से तुलना कर सत्यता को लोगों के सामने रख सकते हो। कई बार हम भाई साहब को कहते थे कि आपके पास इतनी किताबें पड़ी हैं, कुछ हमको भी पढ़ने के लिए दे दो, तो कहते थे, यह ईश्वर की आज्ञा नहीं है, जो आपके काम की चीज होगी, वो आपको मैगजीन द्वारा या साहित्य द्वारा मिल जायेगी, इन्हें पढ़कर आप अपना टाइम खराब क्यों करती हो।

माताओं-बहनों से जिगरी स्नेह

कई बार सुनाते थे कि यज्ञ के कार्यों अर्थ भी कई प्रकार के कष्ट सहन करने पड़े। एक बार एक

बहन थी, ज्ञान में चली तो पति पवित्रता के लिए झगड़ा करता था। फिर केस चला। उस बहन की रक्षा के लिए भाई साहब को मार भी खानी पड़ी। लेकिन कहते थे, इन माताओं-बहनों को बचाने के लिए ब्रह्मा बाबा ने कितना सहन किया, हमने चार थप्पड़ खा लिए तो क्या हुआ। माताओं-बहनों के लिए बहुत स्नेह था। भाई साहब हर कार्य में बहनों को आगे रखते थे। किसी से मिलना हो, कार्यक्रम लेना हो तो बहनों को साथ जरूर लेते थे क्योंकि बाबा ने बहनों को आगे रखा है। हमें तो मूर्ति बनाकर साथ ले जाते थे। अधिकारी को कहते थे, बहन जी, आपके लिए टोली लाई हैं और हमें कहते थे, आप योगयुक्त होकर दृष्टि देते रहना, बात मैं खुद कर लूँगा।

विघ्न-विनाशक

उनके कामों में विघ्न बहुत आते थे। हम कहते थे, आपका नाम इसलिए बाबा ने विघ्नविनाशक रखा है, विघ्न आयेंगे, फिर आपको उन्हें खत्म करना होगा। कितना भी बड़ा विघ्न आये, बड़ी से बड़ी बात आये पर उनके मन में यह नहीं आता था कि बाबा की सेवा नहीं होगी। कई बार ऐसा भी होता था, मान लो गाड़ी में हमें रिजर्वेशन नहीं मिली तो कहते थे, जब गाड़ी चलने लगे तो फौरन चढ़ जाना। मैं कहती थी, टी.सी. देख रहा है आँख टेढी करके, मैं बिल्कुल नहीं चढ़ूँगी तो कहते थे, मैं कहता हूँ, चढ़ जाना। हम चढ़ जाते थे। टी.सी. देखता रहता था फिर उस टी.सी. को पता नहीं कान में क्या फूंक मारते थे अर्थात् समझाते थे जो वह कहता था, चलो, एडजस्ट होकर बैठ जाओ।

बहनों को सदा चैतन्य देवियाँ समझा

दिल्ली का अंबेडकर स्टेडियम खेलने का स्थान है, धार्मिक प्रोग्राम वहाँ न हुए और न हो सकते थे लेकिन भाई साहब ने अंबेडकर स्टेडियम में प्रोग्राम फाइनल कर दिया। शाम को प्रोग्राम होना है और सुबह कुश्ती के लिए आये हुए पहलवानों ने कह दिया कि हम तुम्हारी लगाई हुए स्टेज को तोड़ देंगे। भाई साहब ने कहा, तुम तोड़ो, मैं तुम्हारा सामना करने को तैयार हूँ, फिर उनके साथ दोस्ती भी कर ली। थोड़ी देर में उनके गले में हाथ डालकर चलने लगे। पता नहीं, क्या कहते थे कि लोग ठंडे हो जाते थे। मैं पूछती थी, भाई साहब, आपने उनको कहा क्या, कोई तो बात कही होगी? तो कहते थे, मैंने उनको कहा कि देखो, जो पहलवान होते हैं, वे देवियों के पुजारी होते हैं और यह देवियों का काम है। आपके प्ले ग्राउंड में यह कार्यक्रम मैं भी नहीं करना चाहता क्योंकि मैं भी आपका भाई हूँ लेकिन अब तो पान का बीड़ा उठा लिया और देवियों का काम जहाँ हो, उसे अगर बीच में छोड़ दिया जाये तो विघ्न बहुत आते हैं, तो आपके स्टेडियम में विघ्न बहुत आयेंगे। आप पहलवान लोग देवियों के उपासक हो। मैं नहीं चाहता कि आगे चलकर आपको विघ्न आयें। आप जहाँ जाओ, आपकी जीत होनी चाहिए, नहीं तो आपकी जीत में कमी आ जायेगी इसलिए मैं आपको प्यार से बता रहा हूँ। आपके एक बार कहने से ही मैं स्टेज को उठा देता पर मैं मजबूर हूँ आपके कारण, बहनों के कारण नहीं। इन बहनों को आप नहीं पहचानते, मैं पहचानता हूँ। ये देवियाँ हैं और देवियों के काम में विघ्न नहीं आने चाहिएँ इसलिए आप मुझे सहयोग दो। जो और लोग आके खड़े हुए

है, उन्हें भी कहो कि शान्ति का सहयोग दें। जो हो रहा है, होने दो। इस प्रकार उन लोगों को अपने में मिला लेते थे। अगर कुछ लोग फिर भी विरोधी रह जाते थे तो उनकी तरफ से कहते थे, हमारे अपने ही घर में फूट हो तो हम क्या करें। इस प्रकार सेवा हो जाती थी।

विघ्नों के पूर्व आभास से विघ्नजीत

एक बार रशियन लोगों को आबू जाना था। रिजर्वेशन हुई पड़ी थी। बस द्वारा रेलवे स्टेशन जाना था। इसी बीच ट्रैफिक की हड़ताल होने का समाचार आया। भाई साहब ने कहा, आप ट्रैफिक पुलिस में एक एप्लीकेशन लिखकर दे दो और बस की परमिशन ले लो। हमने परमिशन लेने के लिए भाइयों को भेजा। उन्होंने कहा कि दीदी, वो कहते हैं, वोट क्लब में यह हड़ताल होगी, आम एरिया में नहीं होगी इसलिए आप लोगों को परमिशन की कोई जरूरत नहीं है। मैंने कहा, ठीक है, मैं भाई साहब को बता देती हूँ। मैंने बताया तो कहने लगे, आप समझते नहीं हो, भाइयों को कहो, परमिशन लेकर ही आना है। मैंने कहा, जब हड़ताल होनी ही नहीं है तो फिर परमिशन लेने की क्या जरूरत है और परमिशन देते भी नहीं हैं। फिर स्वयं फोन करके कहा, छोटे ऑफिसर को छोड़ दो, बड़े ऑफिसर के पास जाओ और कहो, हमें लिखित में दे दो कि हमारी बस निकल सकती है। बड़े साहब ने कहा, परमिशन की कोई आवश्यकता नहीं है, हड़ताल दूसरे क्षेत्र में होगी। आपको तो पुरानी दिल्ली जाना है, आप भले जाना। लेकिन भाई साहब ने कहा, अगर जरूरत नहीं है तो भी परमिशन लेटर देने में जाता क्या है। इस प्रकार, बहुत पुरुषार्थ के बाद, बड़े साहब ने स्टेम्प लगाकर लैटर लिख दिया। अगले ही दिन पुलिस ने हर चौराहे को ट्रैफिक के लिए बद घोषित कर दिया। किसी भी प्रकार का ट्रैफिक वहाँ से निकल नहीं सकता था। हमारे पास तो परमिशन थी और वो भी बड़े ऑफिसर की। किसी ने हमारी बस को नहीं रोका। सारी सड़क पर हमारी ही बस घूम रही थी और इस प्रकार सभी विदेशी भाई-बहनें ठीक समय पर रेलवे स्टेशन पर पहुँच गये। भाई साहब को बाबा ने 'गणेश' टाइटल दिया था तो उनकी बुद्धि इतनी तेज थी जो आने वाले विघ्नों को पहले से ही जान जाती थी। वे बहुत ही दूरदेशी थे।

नाम, मान, शान, दिखावे से मुक्त

यज्ञ सेवा के कार्य करते कई बार बहुत मेहनत करते थे, अधिकारीगण किसी बात की स्वीकृति देने से ना भी कर देते थे, तो भी लास्ट घड़ी तक प्रयास करते रहते थे। मैं कहती थी, भाई साहब छोड़ दीजिए, इनका कानून नहीं है, तो कहते थे, भगवान के काम में ला (कानून) बीच में नहीं होता है। हम तो फिर शांत हो जाते थे। फिर हम देखते थे, स्वीकृति लेकर ही रहते थे। किसी को पता भी नहीं पड़ता था कि यह सब हो कैसे गया। कभी शो नहीं करते थे कि मैंने यह किया। कई बहन-भाई अपनी-अपनी सेवा का वर्णन उनके आगे करते थे तो सुनते थे पर कभी यह नहीं कहते थे, मैं भी कर रहा हूँ। कहते थे, बाबा की सेवा की है, बाबा ने तो जान ही लिया है।

बेहद सेवा में सदा अथक

एक बार प्रगति मैदान में मेला लगने वाला था,

अधिकारियों ने केवल 8 छोटे स्टाल देने ही स्वीकृत किए पर भाई साहब ने नम्रतापूर्वक निवेदन किया – प्रगति मैदान में तो सारे विश्व के लोग आयेंगे, कितनों का आशीर्वाद आप सबको मिलने वाला है और इस स्थान पर बहुत बड़ी सेवा होने वाली है, इसका अहसास शायद आपको नहीं है, आप भले ही छोटे स्टाल दो, पर दो पंद्रह ही। उन दिनों उनकी तबीयत बिल्कुल अच्छी नहीं थी फिर भी अथक होकर यह कार्य किया। किसी को पता नहीं पड़ता था कि जगदीश भाई इतने चक्कर क्यों काट रहे हैं। स्वीकृति मिल जाने के बाद भी खड़े होकर कार्य को करवाते थे। ना खाना खाते थे, ना पानी पीते थे, मान लो हम थोड़ा सूप लेके जाते थे, देते थे, तो कहते थे, ये पीछे की बातें हैं। हमको कहते थे, जाओ, खाओ। बहनों का बहुत ध्यान रखते थे। कई कामों में भाग-दौड़ और विघ्न बहुत होते थे, पर सब बातें सहन करते थे।

दृढ़ता से सफलता

दिल्ली में हमने मकान का नक्शा बनाया क्या था और वह बन क्या गया। मैं कहती थी, देखो, अखबार में आ गया है कि जो नक्शे के अनुकूल नहीं होगा, उसे तोड़ देंगे, मकान तो अब टूट जायेगा। उनका दिल बहुत बड़ा था, कहते थे, मैं सब कुछ आगा-पीछा देखकर करता हूँ, हम बाबा की सेवा कर रहे हैं, अपने सुख के लिए नहीं बना रहे, भगवान की छत्रछाया है, उसको नहीं मालूम है कि मेरे बच्चे किसलिए कर रहे हैं, आप नेगेटिव मत सोचो। इस प्रकार, जिस काम को उठा लेते थे, उसको पूरा करके ही छोड़ते थे।

हर प्रकार की बचत

मैं कई बार कहती थी कि आप अपना वारिस तो किसी को बनाओ तो सुनकर शांत हो जाते थे, कभी यह नहीं कहते थे कि फलां व्यक्ति मेरे पीछे देख लेगा। कहते थे, बाबा का कार्य है। उनको शुरू से यह संस्कार था कि काम भले ज्यादा हो पर करने वाले ढेर नहीं होने चाहिएँ। कई बार काम एक होता है और दस करने वाले साथी-सहयोगी हो जाते हैं – यह वे नहीं चाहते थे। अंत तक उन्होंने अकेले ही काम किया, कोई दूसरा साथ में नहीं लिया। कई बार स्वयं ही फोटोकॉपी कराने जाते थे क्योंकि काम भी बढ़िया होना चाहिए और जहाँ 50 पैसे लगते हैं वहाँ 40 पैसे में काम होना चाहिए। कहते थे, यज्ञ में हम धन से सेवा नहीं कर रहे पर यह जो बचत कर रहे हैं, यह भी धन की ही सेवा है। इसलिए हम लोगों को तन, मन, धन तीनों तरीकों से सेवा करनी चाहिए। हमें भी सिखाते थे, हर बात में बचत का ख्याल रखो, कपड़ा अगर फट रहा है तो ऐसे नहीं कि फटता ही चला जाये, उसको सभाल लो पर अपने पास कपड़ों का ढेर भी ना लगा लो। चीज़ उतनी ही होनी चाहिए जितनी से काम चल जाए। उनको यह होता था कि मेरे पास जो काम करने आए, उसे यह ना हो कि अब तो मेरा खाने का समय हो गया, अब मेरा सोने का समय हो गया। जिसका सोने का, खाने का टाइम निश्चित है, वह मेरे पास काम नहीं कर सकता। मुझे ऐसा व्यक्ति चाहिए जिसे भूख और नींद ध्यान में ना आए। जब काम है तब काम। मान लीजिए, कोई उनके पास सेवारत है, खाने गया और खाने का आनन्द ले रहा है तो कहते थे, यह मेरे योग्य नहीं है क्योंकि इसमें त्याग नहीं है।

काम को सफलता तब होगी जब त्याग और तपस्या होगी। मानो, कोई सोया हुआ है और उसको कहा, उठो, जल्दी से एक सेवा में जाना है और वो कह देता है, आधे घंटे बाद उठूँगा तो भाई साहब कह देते थे, यह सेवा नहीं करेगा। जिसको बाबा की सेवा की लगन है, वह यह नहीं देखेगा कि यह मेरा नींद का टाइम है। कई बार हम कहते थे, आप बहुत सख्त कार्य देते हो, तो कहते थे, मैं कहाँ कार्य दे रहा हूँ, आप उसे अपने काम में लगा लो। मुझे अपने काम में वो आदमी चाहिए जो वैसे ही चले, जैसे मैं चाहता हूँ। कई बार, कई आजकल की बुद्धि वाले ऐसा भी कह देते कि कल कर लेंगे, आज क्या पड़ी है तो कहते थे, यह अपनी बुद्धि चलाता है, इसको यह भी नहीं मालूम कि कल क्या होगा और कल कौन-सा काम करना होगा, कल के लिए मेरी कोई और योजना हो तो। यह बुद्धिवान सोचता है कि मेरी बुद्धि भी काम करे पर इस प्रकार बुद्धियों में टकराव आ जाता है।

शारीरिक नुकसान से रहे अनभिज्ञ

बाबा ने संदेश में कहा कि उन्होंने शरीर का ध्यान नहीं रखा। वास्तव में, डॉक्टर लोग यह तो कहते थे कि आपको रेस्ट करना चाहिए पर यह नहीं बताते थे कि रेस्ट नहीं करेंगे तो इससे स्वास्थ्य में क्या-क्या नुकसान होगा। भाई साहब यह भी कह रहे थे कि शारीरिक मेहनत से लीवर को क्या नुकसान होगा, डॉक्टर्स ने मुझे एक बार भी नहीं बताया। सिर्फ कह देते थे कि आपको ज्यादा श्रम नहीं करना है।

बहनों को हर बात में मान

हमें सहयोग पूरा देते थे पर जहाँ ऑफिशियल रहना होता था वहाँ पूरे ऑफिशियल थे। ऐसे नहीं कि उनका कोई कागज़ हम पढ़ लें। कई बार समाचार सुनाने हम उनके कमरे में चले भी जाते थे। यदि कोई समाचार नहीं सुनाते थे तो यह भी कह देते थे, आप लोगों ने मुझे कुछ नहीं सुनाया। कहीं भी जाते थे, कुछ भी मिलता था, सब लाकर हम निमित्त के सुपुर्द कर देते थे। हम कहते थे, आप भी बड़े हैं, आप रखिए पर कहते थे, नहीं। कोई लिफाफा पकड़ाता था तो भी कहते थे, बहन जी को दीजिए। इस प्रकार, हर बात में मान देते थे।

तीक्ष्ण बुद्धि

कोई मिलने आता था, उसका सम्मान दिल से करते थे पर बिना बताए, बिना समय लिए आता था तो भाई साहब को वो अच्छा नहीं लगता था। कहते थे, कार्य के बीच में विघ्न पड़ता है और लिंक टूट जाता है। उनकी बुद्धि बहुत तीक्ष्ण थी। भाषण लिखवाते समय यदि फोन आ गया तो दस मिनट फोन पर बात करके पुन: जब भाषण लिखवाते थे तो जहाँ से छोड़ा था, वहीं से आगे चालू कर देते थे। यह नहीं पूछते थे कि पहले क्या लिखवाया था, बताओ।

भोजन बाबा की याद में

खाना खाते समय, कोई उनके पास आकर बैठे, उन्हें अच्छा नहीं लगता था। कहते थे, खाना बाबा की याद में रुचि से खाया जाए। कोई बात करता है तो खाने का वो आनन्द नहीं आता। इसलिए हम कोशिश करते थे कि खाना खाएँ तो पर्दा कर दें, कोई अंदर ना जाए। इस संबंध में दादी जानकी जी भी सुनाती है कि मैं खिचड़ी के साथ आलू की सब्जी बनाती थी, जगदीश

भाई को परोसती थी और देखती थी कि बहुत ही बाबा की याद में स्थित होकर खाना खाते थे। मैं भी भोजन बहुत ही बाबा की याद में बनाती थी।

कन्याओं को आगे बढ़ाने की कला

भाई साहब से कोई कन्या डरती नहीं थी। कन्याओं को यह निश्चय था कि दीदी हमारी बात यदि ना भी सुनें तो भाई साहब जरूर सुनेंगे। मुझे यह निश्चय होता था, भाई साहब उनके दिल की बात सुन लेंगे और मेरे लिए भी कोई अप्रिय बात नहीं कहेंगे बल्कि समाधान ही करेंगे इसलिए मैं किसी भी कन्या को उनसे बात करने में कभी रोकती नहीं थी। भाई साहब सबसे प्रश्न पूछते थे, वाणी पढ़कर सुनाने को कहते थे, कोई बहन संकोच करती थी तो बहुत महिमा करके उसे प्रोत्साहित करते थे। सेवाकेन्द्र की ड्यूटी या बहनों को चलाने में उनका कोई हस्तक्षेप नहीं था। यदि किसी बात में उनके सहयोग की आवश्यकता होती थी तो वे पूरा देते थे।

हम 15 बहनें इकट्ठी रहती थी, मान लो, कोई बात हुई, किसी कारण से कोई थोड़ी नाराज हुई तो मैं कहती थी, रहने दो नाराज, थोड़ी देर में आपे ठीक हो जायेगी। लेकिन भाई साहब को पता पड़ जाता था तो जरूर आते थे। किसी को पता नहीं पड़ने देते थे पर बातों-बातों में पूछते थे, आज वो कहाँ गई। हम कहते थे, लेटी है थोड़ी। फिर उसको कहते थे, उठो, सोने का समय नहीं है, नाश्ता किया या नहीं। हम कहते थे, नाश्ता नहीं किया। तो कहते, अरे, प्रभु प्रसाद, भाग्य से प्राप्त प्रसाद, खाया नहीं, फिर किसी से नाश्ता मंगवाते। गिट्टियाँ तोड़-तोड़ थाली में रखते। मैं कहती, आप बिगाड़ रहे हो, नहीं खाया तो छोड़ दो, हमने कुछ कहा नहीं। फिर कहते थे, आओ, बहनजी खिलाओ, एक गिट्टी खिलाओ। उनको यह भाव होता था कि संगम का समय बड़ा कीमती है, इसका यूँ ही न चला जाये इसलिए स्नेह से उसके मन को ठीक कर देते थे। वे चाहते थे कि सभी बहनों को एक-एक सेन्टर की जिम्मेवारी मिल जाए क्योंकि अब ये बड़ी हो गई हैं।

तबीयत खराब होते भी मकान देखने जाते थे। कहते थे, मीटिंग में केवल इंचार्ज बहनें आती हैं। इनको आठ-आठ, दस-दस साल सेन्टर पर रहते हो गए पर इंचार्ज नहीं बनी है तो मीटिंग का चांस नहीं मिलता इसलिए सेन्टर संभालेंगी तो बहुत कुछ सीखेंगी। हम बहनें आपस में प्यार से मिलकर बैठती थी तो उन्हें बड़ी खुशी होती थी।

सुव्यवस्था पसंद

उन्हें हर चीज़ एक्यूरेट पसंद आती थी। कोई चीज अव्यवस्थित नहीं होनी चाहिए। यदि कोई मिलने वाला साढ़े पाँच बजे आने वाला होता था तो उन्हें होता था, सवा पाँच बजे सब बत्तियाँ जल जाएँ, अगरबत्ती जल जाए और सब व्यवस्था ठीक हो। बाबा के घर में जो आए, उसे लगे कि मेरा सम्मान हुआ। कोई साढ़े पाँच बजे कहकर पाँच बजे आ जाए, वो भी उन्हें पसंद नहीं था। यदि कोई भाई साहब से ही स्पेशल मिलने वाला होता था और मानो साढ़े पाँच बजे का समय दिया तो वे तैयार होकर 5.25 पर नीचे आके बैठ जाते थे। अपने सारे काम रोककर, वे उसके लिए टोली-पानी का पूरा प्रबंध करके बैठते थे। इस प्रकार समय के बड़े पाबंद थे। फिर कोई लेट आता था तो

उन्हें अच्छा नहीं लगता था।

सिम्पल और सैम्पल

भाई साहब के कमरे में आखिर के दिनों में हमने एक सोफा रख दिया, उनको तो वो भी अच्छा नहीं लगा। हम कहते थे, कोई आयेगा, पूछेगा, भाई साहब कहाँ रहते हैं, तो क्या दिखायेंगे? एक बार पतला-सा कारपेट बिछा दिया तो कहा, उठाओ। हमने कहा, नहीं उठायेंगे। इतनी गर्मी में भी बिना ए.सी. के रहे। जब हमने ए.सी. लगवाया तो कहा, पहले बहनों के कमरे में लगेगा, तब फिर लगवाऊँगा। वो कहते थे, मुझे इतनी सुविधायें नहीं चाहिएँ। उनका सूत्र था, अपने पर खर्च कम से कम हो, सेवा ज्यादा से ज्यादा हो।

बीमारी में भी झेली कठिनाइयाँ

जब उन्हें पहली उल्टी आई तो हॉस्पिटल लेकर गए। वहाँ प्राइवेट रूम मिलना संभव नहीं था। उनको जनरल वार्ड में रखा गया। पर लेट्रिन, बाथरूम गंदे थे तो रात को घर आ गये। डॉक्टर ने कहा था, पूर्ण रेस्ट करना है पर वहाँ रेस्ट कैसे करें, बाथरूम आदि की सुविधायें थी नहीं। जब सेवाकेन्द्र पर आए तो हमने कहा, नीचे ही रेस्ट कर लीजिए। ऊपर मत चढ़िए। हम आपके लिए एक ही दिन में, नीचे ही सब सुविधायें निर्मित कर देंगे परंतु नहीं, तीसरी मंजिल पर अपने निश्चित स्थान पर जाकर ही रहे। फिर हॉस्पिटल गए। दो दिन ऐसे आना-जाना करते रहे। दो दिन बाद प्राइवेट रूम मिला। पर दो दिन में भी तकलीफ तो बहुत उठाई ना।

बाबा को पहचाना नहीं

जब वे ग्लोबल हॉस्पिटल में थे तो एक दिन हम सब उनके पास बैठे थे। गुलजार दादी बाद में आई थी। कहने लगे, सबने बाबा को पहचाना नहीं। हमने कहा, भाई साहब, आपने इतना लिखा है, सब पढ़ेंगे तो पहचान लेंगे। गुलजार दादी आई तो उनको भाई साहब की बात बताई। दादी ने कहा, जगदीश जी, आपने तो पहचाना ना, तो कहा, नहीं, मैंने भी कम पहचाना, जितना पहचानना था उतना नहीं पहचाना। उस बाप को जिसने हमें इतना प्रत्यक्ष किया, उसके लिए हमें क्या नहीं करना चाहिए, यह उनके अंदर बहुत भावना रहती थी। जब भी क्लास कराते थे तो यही कहते थे कि हमने तो अपना सब कुछ समेट लिया, अब आप ऐसा करना। वे कहते थे, जीवन हमारा त्यागी तपस्वी हो, ईश्वर का ज्ञान हमारे जीवन से टपके। हम केवल सेवा ही ना करें बल्कि स्वयं सेवा का स्वरूप भी बनें।

72 वर्ष में 100 वर्ष जितनी सेवा

जब हॉस्पिटल में आये तो अपनी पूर्ण हुई किताबों को अपने साथ ले आये थे और उन्हें जल्दी से छापने का आदेश भी दे दिया था। छपाई बहुत सुंदर ढंग से हो, इस पर भी उनका विशेष ध्यान रहता था। इसलिए निमित्त आत्म भाई को भी उन्होंने कहा था कि इकट्ठा कागज़ खरीदना ताकि किताब में एक ही प्रकार का कागज़ लगे, दो प्रकार का लगने से उसकी शोभा कम हो जाती है। कई बार कहते थे, बाबा तो बहुत साहूकार है पर मैं उनका गरीब बच्चा हूँ, अगर मेरे हाथ में पाँच-सात लाख रुपये होते तो मैं बढ़िया से बढ़िया

किताबें छपवाता। भाई साहब कहते थे कि मेरी आयु आगर 72 वर्ष है तो मैंने 100 वर्ष की आयु जितना काम किया है।

अंतिम श्वास तक प्रत्यक्षता की योजना

सोनीपत की जमीन पर बाबा की प्रत्यक्षता के निमित्त कुछ विशेष बने, जगदीश भाई को इसकी बहुत लगन थी। बीमारी के दौरान भी उस जमीन के बारे में उनके मन में निरंतर योजनायें चलती रहती थी। उन्हें महसूस होता था कि मेरे पास समय कम है लेकिन इस कम समय में भी मैं बाबा के लिए कुछ विशेष करके जाऊँ। उनकी भावना थी कि कोई ऐसी चीज बननी चाहिए, जो भी देखे, उसे लगे, सत्यता हो तो ऐसी हो। दुनिया में भी Planitarium होता है जहाँ बैठे-बैठे तारामण्डल और रात देखने में आ जाती है, इसी प्रकार, ऐसी कोई चीज़ बने जिसमें साकार वतन में बैठे-बैठे सूक्ष्म वतन दिखाई दे। सूक्ष्म वतन का पूरा दृश्य इस रूप से सामने आ जाए जो सबको सूक्ष्म वतन का अनुभव हो जाये। सूक्ष्म वतन की लाइट की भी अनुभूति हो, फिर इस अनुभव से भी ऊपर उठकर, निराकारी दुनिया, एकदम सोल वर्ल्ड में पहुँच जाएँ, वहाँ का अनुभव हो। अमेरिका जैसा डिज्नी लैण्ड बने। दिल्ली में एयरपोर्ट के पास भी कई जगहें देखते रहे। फिर जब सोनीपत की जगह मिली तो कहा, मुझे इसके लिए कुछ प्लैन करने दो तो दादियों ने भी स्वीकृति दे दी। हमने कहा, आप इतनी जिम्मेवारी ले रहे हो, शरीर चल नहीं रहा है, तो कहा, मेरी फोल्डिंग खटिया और रजाई ले चलना, मैं सोनीपत की जमीन पर ही मीटिंग करूँगा। हमने कहा, आप भाई-बहनों को यहीं बुला लीजिए तो कहा, उसी स्थान पर मीटिंग करें तो आइडिया दिया जा सकता है। यह अलग बात है कि वो वहाँ जा नहीं सके पर बाबा की प्रत्यक्षता की लगन बहुत थी। वे चाहते थे कि ऐसा स्थान बने जो बहुत देखने वाले वहाँ आये। कई आर्किटेक्टस से भिन्न-भिन्न नक्शों का निर्माण भी करवाया, कहते थे, वैसे तो मेरी आयु पूरी हो गई है, अगर बाबा इस सेवा का मौका देगा तो वो मेरे लिए प्रेस में बाबा द्वारा दिये गये वर्ष होंगे।

अधूरे कार्य पूरे करने की लगन

ग्लोबल हॉस्पिटल में जब आई.सी.यू. में थे तो मैं रात को बारह बजे सोने के लिए चली गई और फिर एक बजे उन्हें देखने के लिए पुनः आई क्योंकि हालत तो नाजुक ही थी। देखकर आश्चर्यचकित हुई कि क्लीनर सुनील भाई तख्ती पर कागज़ लगाये बैठा है और भाई साहब कुछ लिखवा रहे हैं। मैंने पूछा, सुनील क्या कर रहे हो? तो कहा, भाई साहब ने कहा है, अगर थोड़ा भी लिखना जानता है तो लिख। मैंने फिर पूछा, भाई साहब, क्या लिखवा रहे हो? जगदीश भाई ने कहा, 'योगबल से सन्तान कैसे होगी' यह मेरी किताब अधूरी है, इसे पूरा करना है। उन्हें अपने अधूरे कार्य पूरे करने की अंतिम श्वास तक बड़ी लगन रही।

******

भ्राता जगदीश जी के साथ के अपने अनुभव **ब्र.कु. रमेश भाई जी** इस प्रकार बताते हैं –

हम सबके अति प्रिय भ्राता जगदीश जी बहुत ही अनुभवी, शास्त्रों एवं विविध धर्मग्रंथों के समर्थ विद्वान एवं ईश्वरीय ज्ञान के विविध तथ्यों की गहराई को जानने वाले थे। उनको समाज की विभिन्न व्यवस्थाओं

और कारोबार का भी गहन अनुभव था। उनकी लेखनी ज्ञान के गूढ़ रहस्यों से युक्त और ज्ञान के गहन राजों को प्रत्यक्ष करने वाली थी।

प्रेमपूर्वक व्यवहार

मैं जब सन् 1952 में इस ईश्वरीय ज्ञान के संपर्क में आया तब से ही जगदीश भाई का नाम सुना। सन् 1957 में प्यारे ब्रह्मा बाबा ने उनको मुंबई आने का निमंत्रण दिया। वे मुम्बई में आये और आते ही लौकिक गीता ज्ञान यज्ञ करने वालों की ईश्वरीय सेवा के कार्य में जुट गये। मैं उनकी लगन को देख रहा था। उन्होंने शास्त्र जानने वालों की सेवा में मुझे जुटा दिया और धर्मनेताओं की सेवा कैसे की जाये, वह भी मुझको सिखाया। जब मैंने उनसे पूछा कि आप मेरे साथ ऐसा प्रेमपूर्वक व्यवहार क्यों कर रहे हैं, तब उन्होंने बताया कि प्यारे ब्रह्मा बाबा ने आपके लिए मुझे कहा है कि ज्ञान-चर्चा करके उसे भी इस ईश्वरीय सेवा में लगा दो क्योंकि आगे चल कर उसका इस ईश्वरीय सेवा में बहुत बड़ा पार्ट है। इस प्रकार बापदादा के द्वारा, मेरे लिए दिये गये वरदान की जानकारी, भ्राता जगदीश जी के द्वारा मुझको मिली, इसलिए मैं उनका बहुत ही आभारी हूँ। उन्होंने मुझको ईश्वरीय सेवा में आगे लाने का पुरुषार्थ किया और अन्त तक मेरे साथ बड़े भाई का संबंध निभाया। मैं उनको सदा ही कहता था कि भले ही ज्ञान के हिसाब से राम-लक्ष्मण का संबंध त्रेतायुगी है किन्तु फिर भी मुझे लक्ष्मण के रूप में आपकी सेवा करने और साथ निभाने का सदा ही गौरव अनुभव होता है।

सर्वव्यापी के ज्ञान की वास्तविकता

सन् 1961 में मैंने और ऊषा ने शिव बाबा और ब्रह्मा बाबा को अपने पारलौकिक और अलौकिक पिता के रूप में अपनाया किन्तु ऊषा को सर्वव्यापी के सिद्धांत के विषय में लौकिक मान्यता थी। सन् 1961 में जब हम देहली गये तब जगदीश भाई ने विशेष समय निकाल कर सर्वव्यापी के ज्ञान की वास्तविकता समझाई, तब ऊषा ने इस ईश्वरीय ज्ञान में शत-प्रतिशत निश्चयात्मक बुद्धि बन कर आगे बढ़ने का दृढ़ संकल्प किया। इस प्रकार ब्र.कु. ऊषा भी उनको आभारी है।

प्रदर्शनी की सेवा में योगदान

सन् 1964 में मुम्बई में पहली प्रदर्शनी का आयोजन हुआ तब जगदीश भाई भी ईश्वरीय सेवा में सहयोग करने आये। दिसंबर 29, सन् 1964 के दिन शाम को प्यारी मम्मा ने हम सभी को बिठा कर प्रदर्शनी की उपयोगिता बताई। उस समय के हृदय से निकले हुए उद्‌गार अभी भी मुझको याद हैं। जगदीश भाई ने मातेश्वरी जी को कहा – अब तक मैं नहीं समझ सकता था कि बाबा जो मुरली में कहते हैं कि एक दिन आबू रोड से आबू पर्वत तक लंबी लाइन लगेगी किन्तु इस प्रदर्शनी को देखने के लिए जो लंबी लाइन लगती है, उससे मुझे विश्वास हो गया कि अवश्य ही आगे चलकर ऐसा होगा। फिर उन्होंने प्रदर्शनी की सेवा कैसे आगे बढ़े और देहली में भी प्रदर्शनी की जाये, इस पर अपने विचार प्रकट किये। उस समय प्रदर्शनी में गीता के भगवान के विषय में तीन चित्र थे। जगदीश भाई ने, इन चित्रों पर क्या और कैसे समझाया जाये, यह भी स्पष्ट किया। जगदीश भाई ने जो ढंग

सिखाया, उससे सबको यथार्थ रूप में गीता का भगवान कौन है, यह बताना आसान हो गया।

पोप की सेवा

बाद में मुझे जगदीश भाई के साथ अनेक प्रकार की ईश्वरीय सेवा करने का अवसर मिला। मुम्बई में ईसाई धर्म की इक्राइस्ट कांफ्रेंस (Euchrish Conference) हुई तो ईसाई धर्म के धर्मगुरु पोप, पहली बार भारत में आये। उस कांफ्रेंस में ईसाई धर्म के बड़े-बड़े आर्च बिशप आदि की सेवा करने की योजना भी उन्होंने बनाई और 30''× 40'' आकार के छपे हुए झाड़-त्रिमूर्ति-सृष्टि चक्र के चित्रों को कास्केट में रखकर पोप को उपहार दिया, जो चित्र आज भी रोम के वेटीकन म्यूजियम में लगे हुए हैं।

ईश्वरीय सेवार्थ पहली विदेश यात्रा

बाद में राजयोग की प्रदर्शनी मुम्बई में हुई और उसके बाद देहली में हुई। देहली में आयोजित उस प्रदर्शनी में, अमेरिका में होने वाली एवास्टिंग रिट्रीट (Awosting Retreat) में जो कांफ्रेंस होने वाली थी, उसका निमंत्रण मिला और उस निमंत्रण के आधार पर विदेश सेवा का शुभारंभ हुआ। विदेश सेवा के लिए जाने वाले ग्रुप में जिन छह डेलीगेट्स के नामों का चयन बापदादा ने किया, उनमें चार बहनों और दो भाइयों का अर्थात् मेरा और जगदीश भाई का नाम बापदादा ने लिया। जाने के दिन देहली से जगदीश भाई हवाई जहाज से मुम्बई आये और जगदीश भाई ने मुझे बताया कि पहली बार उन्होंने हवाई जहाज से यात्रा की है। उसी रात को हम सभी विदेश यात्रा को निकले। हवाई जहाज, बीच में ग्रीस की राजधानी एथेन्स में रुका और तब हम दोनों ने पहली बार विदेश की धरती पर कदम रखे और एक घंटे तक ग्रीक तत्वज्ञान (Philosophy) के विषय में चर्चा की। फिर हम लंदन पहुँचे और अपनी दैवी बहन जयन्ती के घर पर रहे। अंग्रेजी में प्रवचन करने का हम दोनों को ही अभ्यास था इसलिए इंग्लैण्ड में सभी स्थानों पर हम दोनों ने मिलजुल कर ईश्वरीय सेवा का कारोबार किया।

विदेश में पहला सेवाकेन्द्र

जगदीश भाई के मन में दृढ़ संकल्प था कि हमारी इस विदेश यात्रा का कुछ फल अवश्य निकलना चाहिए। हम लोगों को अवश्य ही पूर्व और पश्चिम में कम-से-कम एक-एक स्थान पर, ईश्वरीय सेवाकेन्द्र की स्थापना करके ही जाना चाहिए। उन्होंने इसी कारण मधुबन में फोन किया और लंदन और हांगकांग में सेवाकेन्द्र की स्थापना की स्वीकृति माँगी। उनके इस दृढ़ संकल्प के कारण लंदन में 23 सितंबर, 1971 में पहले-पहले राजयोग सेवाकेन्द्र की स्थापना हुई। उनकी यह एक विशेषता थी कि वे जो भी सेवा करते थे, उसको कार्यान्वित करने और सफल बनाने का बहुत दिल से पुरुषार्थ करते थे।

स्थूल सेवा

न्यूयार्क में जब हम रहते थे तब हम दोनों का स्थूल सेवा का भी विशेष पार्ट था। मेरी बर्तन साफ करने और कपड़े धुलाई की ड्यूटी थी और जगदीश भाई को रहने के स्थान की सफाई आदि की सेवा मिली। अपनी-अपनी सेवा को करते हुए हम लोग हँसी में गीत गाते थे – 'किसी ने अपना बनाके हमको बर्तन साफ करना सिखा दिया और किसी ने अपना

बनाके हमको झाड़ू लगाना सिखा दिया।' जिनके घर मे हम रहते थे, वे भाई एक दिन हमारे पास आये और उन्होंने जगदीश भाई को झाड़ू लगाते देखा। तब उन्होंने कहा कि आप भारत में ऐसे झाड़ू लगाते हो तो कमर टेढ़ी होती है परन्तु हमारे पास होवर (Houver) मशीन से झाड़ू लगाया जाता है और उनके घर में जो होवर मशीन थी, उससे सफाई करना सिखाया। उस पर जगदीश भाई ने मुझको कहा कि अब हमारी कमर सीधी रहेगी और मैं अधिक सेवा कर सकूँगा। तब मैं उनको कहता था कि आप ज्ञान-योग की झाड़ू से सबके अंदर से माया का किचड़ा साफ कर ही रहे हैं।

हंसते-हंसते सेवा

विदेश यात्रा में हम सभी जगदीश भाई के साथ नाश्ता, भोजन करते थे। उनका नियम था कि वे तीन रोटी ही खाते थे परन्तु खाते समय ईश्वरीय सेवा के विषय में चर्चा करने में इतने मगन हो जाते थे कि वे भूल जाते थे कि उन्होंने कितनी रोटियाँ खाई हैं और बहनें उनको झूठी गिनती बताकर अधिक रोटियाँ खिला देती थीं। उस समय जगदीश भाई कहते थे कि बहनें उनके साथ रोटियों की गिनती में ठगी करती हैं परन्तु बड़े प्रेम से सबके साथ भोजन करते थे। जगदीश भाई हमको यह भी कहते थे कि जब मैं वापस जाऊँगा तब कमलानगर में सब मुझसे पूछेंगे कि आपने क्या किया? तो कुछ नवीनता करके दिखाई जाये और खुद पर हँसते थे कि मैं विग (Wig) पहन कर जाऊँगा और सबको बताऊँगा कि विदेश सेवा के कारण मेरे सिर पर चमत्कारिक रूप से बाल उग आये हैं। इस प्रकार हँसते-हँसते सेवा करते थे।

निर्भयता से ज्ञान-दान

हांगकांग में जब ईश्वरीय सेवायें प्रारंभ की, तब मैंने जगदीश भाई को कहा कि मुझे तो लौकिक कार्य अर्थ जल्दी भारत में जाना होगा। तो जगदीश भाई ने सहर्ष हमको छुट्टी दे दी और सारा कार्यभार स्वयं ही संभाल लिया। हांगकांग में प्रदर्शनी आदि करने के बाद जगदीश भाई सिंगापुर, वियतनाम आदि देशों में ईश्वरीय सेवा करने गये। इस प्रकार उन्होंने लगभग 12 मास तक दिल व जान से विदेश में ईश्वरीय सेवा को। उनके अंग-संग रहकर सेवा करने का जो सौभाग्य मिला, उससे मुझको बहुत-सी बातें सीखने को मिली, जो हमको ईश्वरीय सेवा में बहुत मददगार हैं। उनका एक लक्ष्य था कि जो भी प्रदर्शनी देखने आये, उसे ईश्वरीय ज्ञान के सभी पहलुओं का ज्ञान, सार रूप में अवश्य समझाना चाहिए। इसलिए वे पवित्रता, सत्यता, सर्वव्यापी, ड्रामा की पुनरावृत्ति के ज्ञान को निर्भय होकर सबको बताते थे।

लेखनी बाबा की मुरली जैसी

प्यारे बापदादा ने हमारे डेलीगेशन को एक श्रीमत दी थी कि हम विदेश मे देवता अर्थात् देने वाले बन कर जा रहे हैं। इस बात को उन्होंने पूरा ही पालन किया। जगदीश भाई ने कहीं भी किसको भी यह आभास तक नहीं होने दिया कि हम उनसे कुछ लेना चाहते हैं। सदा देने का ही संकल्प रखा। हमारी इस विदेश यात्रा का एक बहुत सुन्दर फल भारत में निकला कि यहाँ एक विशिष्ट भाई ने हमको बताया कि वे जगदीश भाई को यज्ञ का बहुत ही अनुभवी भाई मानते थे और समझते थे कि गुलजार दादी के तन में शिव

बाबा आकर मुरली नहीं चलाते हैं बल्कि साकार बाबा के बाद अपने जगदीश भाई मुरली लिखते है और गुलजार दादी उसको याद कर मुरली के रूप में सुनाती हैं। जब जगदीश भाई एक साल तक बाहर रहे फिर भी भारत में गुलजार दादी के तन द्वारा बाबा की मुरली चलती ही रही तो उस भाई को निश्चय हुआ कि प्यारे शिव बाबा ही आकर मुरली चलाते हैं। मैं समझता हूँ कि जगदीश भाई की महानता में यह श्रेष्ठ-से-श्रेष्ठ शिष्टाचार (Complement) है कि उनकी लेखनी इतनी ओजस्वी, ज्ञान की गहराई से संपन्न और योग के अनुभवों से युक्त थी कि वह कुछ भाई-बहनों को शिवबाबा की मुरली के समान अनुभव प्रदान करती थी।

बहनों प्रति बहुत ऊँची भावना

अंतिम दिनों में जब उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं था, उस समय मैं मुम्बई से उनसे मिलने आया। मिलते समय मैं उनसे उनके स्वास्थ्य के विषय में पूछता, उससे पहले बड़े भाई के नाते वे मुझसे मेरे स्वास्थ्य के विषय में पूछने लगे। फिर जब मैं यज्ञ के ऑडिट के कारोबार के अर्थ मधुबन में आया तो अनेक बार उनसे हॉस्पिटल में मिला और उन्होंने बड़े भाई के नाते अनेक प्रकार की शिक्षायें दी। एक विशेष बात उन्होंने मुझसे कही कि मुझे बहनों के हिसाब-किताब को तुरंत और सहज ही चेक करके बहनों की आशीर्वाद प्राप्त करनी चाहिए। उनकी यह बहुत बड़ी महानता थी कि वे सदा ही बहनों को देवी के स्वरूप में देखते थे और सभी छोटी-बड़ी बहनों का देवी के रूप मे आशीर्वाद प्राप्त करने का संकल्प रखते थे। जब उनका स्वास्थ्य बहुत खराब हो रहा था, उसी बीच आदरणीया दादी प्रकाशमणि जी का अफ्रीका की सेवा पर जाने का कार्यक्रम था और उनको 13 मई, 2001 के बाद आना था। तो अव्यक्त बापदादा ने दादी जी को विदेश जाने की मना कर दी। मई 12, 2001 को मैंने ऊषा को सुखधाम में जगदीश भाई की तबीयत को देखने के लिए भेजा। पौने आठ बजे तक वह वहाँ थी, फिर हमको समाचार देने पाण्डव भवन आ रही थी, तभी समाचार आया कि जगदीश भाई ने प्यारे बापदादा की गोद में विश्रान्ति पाई। मेरी यह दृढ़ मान्यता है कि हम दोनों का जैसे ईश्वरीय सेवा में गहरा संबंध रहा वैसे ही सारे कल्प में भी भिन्न नाम-रूप, देश-काल में संबंध रहेगा और मुझे अवश्य ही किसी-न-किसी जन्म मे लौकिक में छोटे भाई के रूप में उनकी सेवा करने का अवश्य ही सौभाग्य प्राप्त होगा। अब तो जगदीश भाई ने आगे एडवांस पार्टी में ईश्वरीय सेवा का पार्ट बजाने के लिए हम सबसे विदाई ले ली फिर भी उनके लिखे साहित्य और दी गई मार्गदर्शना के द्वारा, जब तक यज्ञ चलेगा तब तक ईश्वरीय सेवा में उनका सहयोग अमर रहेगा।

इस तरह, इस लेख के द्वारा मैं और ब्र.कु. ऊषा अपने अग्रज जगदीश भाई को अपने श्रद्धासुमन अर्पित कर रहे हैं। उनकी तीव्र इच्छा थी कि सोनीपत में जो जमीन ली है, वह एक स्प्रीच्युअल वण्डरलैण्ड बने, उनकी इस आश को पूर्ण करके, स्थूल रूप में भी सच्ची श्रद्धांजलि अर्पित करने का पुरुषार्थ करूँगा। मै अपने अग्रज को दिल से वन्दन करता हूँ।

******

ब्र.कु. आत्मप्रकाश, संपादक, ज्ञानामृत, जगदीश भाई जी के साथ के अपने अनुभव इस प्रकार सुनाते हैं –

प्यार से गले लगाया

भ्राता जगदीश जी से इस कल्प में मेरा प्रथम मिलन सन् 1957 में हुआ। उस समय मम्मा-बाबा दिल्ली, राजौरी गार्डन में आये हुए थे और मै भी बाबा से मिलने गया तो वहीं उनसे मुलाकात हुई। उन्होंने बड़े प्यार से गले लगाया और मुझे महसूस हुआ कि जैसे लंबे समय से बिछुड़े अति स्नेही भाई ने मुझे स्नेह दिया है। विद्यालय की पहली हिन्दी पत्रिका 'त्रिमूर्ति' उस समय उनके संपादन में ही निकलती थी। पत्रिका के लेखों की गुह्यता और स्पष्टता से मैं बहुत प्रभावित था। इनके द्वारा लिखी 'सच्ची गीता' और 'Real Geeta' का भी हम अध्ययन कर चुके थे। इन दोनों पुस्तकों ने भी हमें बहुत प्रेरणाएँ प्रदान की थीं। इसलिए मन-ही-मन उनके प्रशंसक तो हम थे ही, फिर उनसे सम्मुख मिले तो हमारी प्रसन्नता और भी बढ़ गई।

त्यागमय जीवन से लाभान्वित

सन् 1962 में प्यारे साकार बाबा ने मुझे साहित्य की सेवा अर्थ इनके पास भेजा। उस समय लगभग दो वर्ष इनके अंग-संग रहकर विभिन्न प्रकार की ईश्वरीय सेवाओं के अनुभव प्राप्त किये और इनके त्यागमय, उच्च धारणाओं वाले जीवन से लाभान्वित भी बहुत हुए।

उच्च योगस्थ स्थिति का अनुभव

किसी भी व्यक्ति के साथ कार्यक्षेत्र में रहकर, उसके जीवन के व्यवहारिक पक्ष में जिन बातों को पल-पल साकार होते हम देखते हैं उनका अमिट प्रभाव हमारे मानस में गहराई से अंकित होता है। भ्राता जगदीश जी के जीवन की ऐसी विशेषताओं की एक लंबी कड़ी है। वे महान ज्ञानी, महान योगी, महान लेखक, महान प्रवक्ता और महान सेवाधारी थे। कहते हैं कि 'Writing makes a man perfect.' उनकी लेखनी से गहन राज़ उद्‌भूत हुए और उनसे हमने पहली नज़र में, अंजान व्यक्तियों को भी परमात्मा पिता की तरफ आकर्षित होते देखा। कई बार तो बड़े-बड़े प्रसिद्ध लोग उनसे मिलते और ईश्वरीय ज्ञान-चर्चा में उनके आत्मिक गुणों से प्रभावित होकर यहाँ तक भी कह देते थे - 'हम आपमें साक्षात् ईश्वर को ही देख रहे हैं।' हमारा जब भी उनसे मिलना होता तो ज्ञान-चर्चा तो होती ही थी। एक बार उन्होंने कहा कि एकाग्रता किसे कहते हैं? फिर खुद ही स्पष्टीकरण दिया कि किसी भी एक ज्ञान बिन्दु पर निरंतर चिन्तन चलाते रहना ही एकाग्रता है। यदि इस बीच बुद्धि में दूसरी बात आ जाती है तो उसे निकाल दो। वे ये भी कहते थे कि यदि आपको अच्छी अनुभूति हो रही है और बीच में किसी कारण से सफेद लाइट हो जाती है तो आप अपनी अनुभूति की स्थिति के आनन्द में मगन रहो, नीचे नहीं आओ। उनके पास बैठने से ही उनकी उच्च योगस्थ स्थिति का अनुभव हो जाता था क्योंकि हमारा भी योग लग जाता था। ऐसा नहीं कि कुछ विशेष घड़ियों में ऐसा होता था, हर समय स्वाभाविक ढंग से ही वे आत्म-स्मृति और परमात्म-स्मृति की स्थिति में रहते थे।

तीव्र लगन और उमंग से सेवा

मेरे प्रारंभकाल में जब देहली में अनेक स्थानों की जानकारी अर्थ मुझे साथ लेकर जाते और बताते कि यहाँ छपाई होती है, यहाँ ब्लाक बनते हैं तो बहुत ज़्यादा पैदल ही आना-जाना होता था। उस समय वे अपने लंबे-ऊँचे हृष्ट-पुष्ट शरीर से चलते थे और मुझे दौड़ना पड़ता था। हर सेवा तीव्र लगन और उमंग से संपन्न करते हुए इन्होंने ईश्वरीय जीवन के 50 वर्षों में अपना तन, मन, श्वास, संकल्प सब कुछ विश्व-सेवा में अर्पण कर दिया।

दृष्टि से ओझल होते भी मन से ओझल नहीं

संसार रंगमंच पर आने वाले हर पार्टधारी को शरीर तो छोड़ना पड़ता है, यह अटल सत्य है, परंतु शरीर छोड़कर भी महामानव अपनी कर्मठता, सच्चाई, कर्त्तव्यपरायणता, दूरदृष्टि, निर्भयता, अडोलता, सर्व के प्रति सच्चे रूहानी स्नेह, पवित्रता, विशालहृदयता, त्याग, अपनत्व इत्यादि गुणों की अपनी सूक्ष्म तस्वीर को रंगमंच पर छोड़ जाता है। वह सदा-सदा के लिए सर्व के लिए प्रेरणा स्त्रोत बना रहता है। दृष्टि से ओझल होने पर भी मन से ओझल नहीं होता है। छोटे अस्तित्व के लुप्त होने पर उसके गुण और विशेषताओं का विशाल अस्तित्व, उदधि की तरह ठांठे मारकर बार-बार मन रूपी किनारे को छू लेता है।

सादगी और मितव्ययता के अवतार

ईश्वरीय विश्व विद्यालय में बेगरी पार्ट में समर्पित होने वाले प्रथम समर्पित ब्रह्माकुमार जगदीश भ्राता जी का जीवन सादगी और मितव्ययता का मानो अवतार था। उनकी सदा यही इच्छा रहती थी कि जो भी कार्य किया जाये, वह बढ़िया से बढ़िया और सस्ते में सस्ता भी हो। वे समय के बहुत ही पाबंद थे। जब कोई कार्य पूर्ण करके उनके सामने जाते थे तो उनकी पारखी दृष्टि उसमें रही हुई खामी को तुरंत पकड़ लेती थी। वे हर कार्य में परफेक्शन चाहते थे। उनकी इस चाहना को पूर्ण करने के लिए अथक प्रयास करने पर भी, कई बार आरंभ काल में मुझे सफलता न भी मिलती रही हो परंतु उनके मार्गदर्शन में किये गये पिछले कई वर्षों के मेरे कार्य से वे बहुत प्रसन्न थे। उन्हें आभास हो गया था कि वे अब बहुत दिनों तक इस तन में नहीं रहेंगे। मैं भी उनकी इस आंतरिक भावना को समझ गया था। मैं अन्य सब कार्यों से पहले उनके द्वारा निर्देशित कार्य को संपन्न करता था। शरीर छोड़ने से लगभग एक मास पूर्व जब मैं उन्हें सुखधाम (मधुबन) में मिलने गया और भिन्न-भिन्न प्रकार की छपी हुई पुस्तकें दीं तथा मैंने कहा कि भाई साहब, हम तो भरत मुआफिक आपके कार्य को सरअंजाम दे रहे हैं। उन्होंने बड़े प्यार से कहा, 'आत्म, मुझे खुशी है कि तुम भी काफी अनुभवी हो गये हो, ज्ञानामृत की संख्या भी काफी बढ़ गई है और इसका स्तर भी काफी अच्छा हो गया है..पुस्तकें भी ठीक छप रही हैं..।' इस प्रकार उनकी संतुष्टता से प्राप्त दुआओं से मैं गद्‌गद हो गया।

अन्त तक सेवारत

शरीर छोड़ने से एक सप्ताह पूर्व उन्होंने पूछा कि 'कार्टून और कहावतें' यह पुस्तक कहाँ तक छपी है? मैंने कहा कि अभी छपना जारी है। 'जल्दी करो' ऐसा आदेश मिलते ही मैंने उसे जल्दी तैयार करवा कर तीन दिन बाद ही उनके सामने पेश किया और उनके

मुख से निकला, 'चलो, यह कार्य भी पूरा हुआ' और मुझे धन्यवाद दिया। इस प्रकार अंत तक वे सेवारत रहे। वे पुस्तकों, लेखों, अनुभवों के रूप में इतना ज्ञान खज़ाना हमें प्रदान करके गये हैं कि आगे के समय में हम उनसे लाभान्वित होते रहेंगे। उनके द्वारा निर्मित ईश्वरीय संविधान, उनका स्वयं का नष्टोमोहा स्मृतिलब्धा स्वरूप, ईश्वरीय नियम, धारणाओं में वज्र के समान अडोल जीवन हमें सदा प्रेरित करता रहेगा। अंतिम श्वास तक उनको स्वयं से एक ही गिला रहा कि हम शिव बाबा को संपूर्ण जगत में प्रत्यक्ष नहीं कर पाये। सच्चे स्नेही के रूप में अब हम उनकी प्रत्यक्षता की इस शुभ आश की पूर्णता का दृढ़ संकल्प करें और उसमें जी-जान से जुट जाएँ।

******

दिल्ली, हस्तसाल से **भावना बहन** जगदीश भाई के साथ का अनुभव इस प्रकार सुनाती हैं –

हर बात की योजना

कोई भी कार्यक्रम होता तो भाई जी छोटी से छोटी बात का भी ध्यान रखते, कार की पार्किंग कहाँ करनी है, जूते-चप्पल कहाँ निकाले जायेंगे, स्टेज कहाँ पर बनेगी आदि-आदि। हर बात की पहले से ही पूरी प्लानिंग करते थे। प्रोग्राम की पूरी व्यवस्था कैसे करनी है, यह हमने भाई जी से सीखा। प्रोग्राम के बाद, एक-एक व्यक्ति द्वारा की गई सेवा की महिमा करते, इस प्रकार उन्हें आगे बढ़ाते।

ज्ञान की गहराई

जब वे ज्ञान सुनाते तो हम सोचते कि भाई जी का दिमाग है या कंप्यूटर? कभी सामने से आते दिखाई देते तो हम संकोचवश हल्का-सा मुसकराते लेकिन भाई जी फिर खुद ही ओमशान्ति बोलते और हाल-चाल पूछते। रोज रात को ब्राह्मणों की क्लास कराते, रिफ्रेश करते, हँसाते-बहलाते, ज्ञान की गहराई में ले जाते। जिसकी जो विशेषता होती, उसकी महिमा करते। एक बार मुझसे पूछा, आपको कौन-सी टोली अच्छे से बनानी आती है? मैंने बताया तो कहा कि यह बनाओ फिर हम गुलजार दादी के पास ले जायेंगे।

देने की भावना

सेन्टर पर कोई नया फल आता तो कहते, पहले सबको दो फिर जो बचता वो लेते थे। किसी बहन-भाई को कोई समस्या होती या कुछ पूछना होता तो वे समय लेकर भाई जी से मिलते और फिर बताते कि हमें जो चाहिए था, भाई जी से वो मिल गया। भाई जी के लिए जब नई गाड़ी आई तो बोले, क्लास में जिन भाई-बहनों के पास गाड़ी नहीं है, पहले उन्हें गाड़ी से छुड़वाओ, फिर मैं गाड़ी में बैठूँगा। इस प्रकार उनके हर कर्म में एक प्रेरणा, एक मार्गदर्शन और सर्व को देने की भावना रहती थी।

◈

दादी सन्देशी

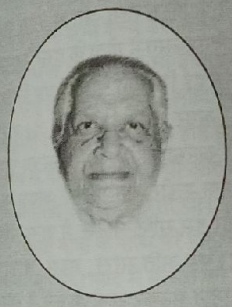

आप सन्देशपुत्री बनकर वतन के अनेक सन्देश लाती थी। इसलिए अलौकिक नाम मिला, 'सन्देशी'। लौकिक में आप मातेश्वरी जी की मौसेरी बहन थी। आप सुन्दर गाती भी थी और नृत्य भी करती थी इसलिए बाबा से आपको अव्यक्त नाम मिला 'रमणीक मोहिनी'। आप बाबा के साथ खेलपाल करती और उन्हें बहलाती भी थी इसलिए बाबा आपको 'बिन्द्रवाला' भी कहते थे। आप बहुत ही रहमदिल, स्नेही, नम्रचित्त, सादगीपूर्ण तथा एक बल एक भरोसे वाली थी। दादी शान्तामणि लौकिक में आपकी बड़ी बहन थीं। यज्ञ के प्रारंभ में आपका सारा ही परिवार एक धक से तन, मन, धन सहित सर्वप्रथम समर्पित हुआ। आप लंबे समय तक यज्ञ में रहकर सन् 1965 में ईश्वरीय सेवार्थ कोलकाता गई। पटना, मुजफ्फरपुर, नेपाल आदि स्थानों पर सेवा करते सन् 1978 से भुवनेश्वर सेवाकेन्द्र पर सेवारत रही। आपने सतगुरुवार, 1 नवंबर, 2007 को पुरानी देह का त्याग कर बापदादा की गोद ली।

दादी सन्देशी जी ने अपने लौकिक-अलौकिक जीवन का अनुभव इस प्रकार सुनाया –

सिंध-हैदराबाद के एक प्रभावशाली तथा प्रतिष्ठित सखरानी परिवार में मेरा जन्म हुआ। दादा जी का नाम था प्रताप सखरानी जो बहुत ही भद्र, सरल और आस्तिक थे। पिताजी का नाम था रीझूमल सखरानी और माताजी का नाम था सती सखरानी। लौकिक माता-पिता का जीवन बहुत सुखमय था और उनको देख सब कहते थे कि ये तो जैसे कि श्रीलक्ष्मी और श्रीनारायण की जोड़ी है। मेरा जन्म 25 दिसंबर, 1925, शुक्रवार के दिन माता-पिता की चौथी कन्या के रूप में हुआ। हम पाँच बहनें और एक भाई थे। भाई सबसे बड़े थे, उनका नाम था जगूमल सखरानी। बहनों के नाम थे – देवी, कला, लीला (दादी शान्तामणि), लक्ष्मी (दादी सन्देशी) और भगवती (अलौकिक नाम ज्योति)। भाई की शादी जसू नाम की एक कन्या से हुई। भाई के दो पुत्र थे – राम और गगन। पिताजी कठोर परिश्रमी और बुद्धिमान थे। उनका व्यवसायिक केन्द्र श्रीलंका में था, जो बहुत सफल था इसलिए लौकिक परिवार की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी थी। हैदराबाद शहर के एक भव्य मकान में हम सब रहते थे। खान-पान, पोशाक, चलन सब ऊँचे खानदान और ऊँचे वंश की परंपरा के अनुकूल था। घर में काम करने के लिए नौकर-चाकर होते हुए भी सती माता सभी बच्चों को

हर कार्य करने की शिक्षा देती थी। मेरी एक मौसी थी जिसका नाम था रोचा (रुक्मिणी)। उनके पतिदेव का नाम था पोकरदास। उनका सोने-चाँदी का व्यापार था लेकिन व्यापार में घाटा होने के कारण मौसा जी का अचानक हृदयाघात में देहांत हो गया। रोचा मौसी की तीन बच्चियाँ थी। बड़ी बच्ची पार्वती जिसकी शादी हो चुकी थी, फिर थी राधे और फिर थी गोपी। पति की मृत्यु के बाद रोचा मौसी उन दोनों बच्चियों को लेकर हैदराबाद आ गई और अपने मायके में रहने लगी। मेरी दूसरी मौसी का नाम था ध्यानी, वह भी अपने पति की मृत्यु के बाद हैदराबाद आकर अपने मायके में रही।

ओम मण्डली से परिचय और जुड़ाव

मेरी माताजी अपनी इन दोनों बहनों से मिलने और दुख के समय सांत्वना देने और प्रार्थना करने मायके उन्हों के घर में जाया करती थी और जपसाहेब और सुखमणि आदि धर्म की किताबें पढ़कर सुनाया करती थी। माताजी का रोज आने-जाने का रास्ता दादा लेखराज के घर के सामने से पड़ता था। दादा लेखराज की लौकिक पत्नी जसोदा माता घर की खिड़की से माताजी को रोज आते-जाते देखती थी। एक दिन जसोदा माता ने उनसे रोज आने-जाने का कारण पूछा। माताजी ने कहा, हमारी दोनों बहनों के पति गुजर गये हैं, वे बहुत दुखी हैं, हम सब मिलकर शान्ति के लिए सत्संग करते हैं। जसोदा माता ने कहा, दादा (दादा लेखराज जो बाद में ब्रह्मा बाबा के नाम से जाने गये) अपने घर में बहुत अच्छा सत्संग करते हैं। पहले आप आओ, सुनो और देखो, अच्छा लगे तो अपनी दोनों बहनों को भी लेकर आना। दूसरे दिन माताजी, दादा जी के घर गई और सत्संग सुनने के पश्चात् उन्हें बहुत शान्ति का अनुभव हुआ। फिर अगले दिन तीनों बहनों ने मिलकर दादा के घर सत्संग का लाभ लिया। सत्संग के प्रारंभ तथा अंत में ओम ध्वनि की जाती थी। उस दिन सत्संग में गीता के दूसरे अध्याय के ऊपर विशेष चर्चा हुई जिसका भावार्थ यह निकला कि आत्मा अजर, अमर और अविनाशी है। शरीर त्याग करने पर भी आत्मा नहीं मरती। आत्मा पुराने शरीर को छोड़, नया शरीर धारण कर अपना पार्ट बजाती रहती है और इस सृष्टि-नाटक में जन्म-मरण एक खेल सदृश है। यह अति सरल, सरस, ज्ञानपूर्ण और हृदयस्पर्शी व्याख्या सुनकर सभी के मन में खुशी की लहर आई। सभी ने अपने आपको शरीर से भिन्न एक अलौकिक सत्ता के रूप में अनुभव किया। रोचा मौसी की सूरत में प्रसन्नता की झलक देखकर उनकी कन्यायें – राधे (जो ज्ञान में आने पर सभी की अति प्रिय 'जगदम्बा सरस्वती' के नाम से जानी गई) और गोपी भी सत्संग में आने लगी। ईश्वरीय ज्ञान का अनोखा अनुभव प्राप्त कर गोपी एक साल तक दिव्य साक्षात्कार करती रही। उसने ओम राधे (मम्मा) को श्री राधा के रूप में और ओम बाबा (ब्रह्मा बाबा) को श्रीकृष्ण के रूप में देखा। ध्यानावस्था में वह उनके साथ रास भी करती थी। सृष्टि-नाटक की पूर्व निश्चित व्यवस्था के अनुसार छोटी आयु में टायफायड से गोपी का देहांत हुआ। हैदराबाद के इतिहास में पहली बार यह हुआ कि गोपी की शव शोभायात्रा में, बाबा के इशारे पर सत्संग की सभी माताओं और कन्याओं ने भाग लिया तथा अग्नि संस्कार स्वयं ओम राधे ने ही किया।

सारा परिवार समर्पित हुआ

हमारे परिवार में गुरुप्रथा चलती थी। पिताजी बड़े गुरुभक्त थे। मकान में एक विशेष कोठरी को गुरुघर कहा जाता था। रोज शाम को पिताजी के निर्देशानुसार सभी बच्चे उस कमरे में प्रार्थना करते थे और प्रार्थना के पश्चात् माँ प्रतिदिन 'गुरुमुखी ग्रंथ', 'जप साहेब', 'सुखमणि' आदि धर्म पुस्तकें पढ़कर समझाती थी। आयु में छोटी होते हुए भी हम इस घरेलू सत्संग से बहुत प्रेम रखती थी और आनन्द तथा शान्ति का अनोखा अनुभव करती थी।

ब्रह्मा बाबा के साथ मेरे पिताजी का बहुत अच्छा संबंध था। हैदराबाद में सत्संग की शुरूआत के बाद, कुछ समय के लिए ब्रह्मा बाबा, अपने लौकिक परिवार के साथ, एकांतवास के लिए कश्मीर चले गये। वहाँ से ब्रह्मा बाबा ज्ञानयुक्त पत्र ओममण्डली में भेजते रहे। सत्संग में आने वाली मातायें और कन्यायें उन्हें पढ़कर बहुत अलौकिक सुख प्राप्त करती थी। अपने परिवार के सदस्यों को ब्रह्मा बाबा कश्मीर में भी ज्ञान की शिक्षा देते थे। उन्हीं दिनों हमारे पिताजी ने भी पहलगाम जाने की तैयारी की और ब्रह्मा बाबा के कश्मीर निवास का पता भी अपने साथ ले लिया। कश्मीर पहुँचने के बाद ब्रह्मा बाबा से मिलने की प्रेरणा आई और चल भी पड़े। ब्रह्मा बाबा के निवास-स्थान की ओर जाते समय उन्हें रास्ते में निर्मलशान्ता दादी मिली और उनसे पूछा, 'बेटी, पहलगाम का रास्ता किधर जाता है?' फट से दादी निर्मलशान्ता ने कहा, 'पहलगाम का रास्ता तो मालूम नहीं पर परमधाम का रास्ता बता सकती हूँ।' उस समय निर्मलशान्ता दादी जी की उम्र छोटी ही थी। वे छोटी बच्ची के मुख से ऐसी नई बातें सुनकर आश्चर्यचकित हो गए और हँसते हुए बोले, 'अच्छा बेटी, ठीक है, अब हमें उस परमधाम का रास्ता ही बता दीजिए।' उसके बाद दादी जी ने पिताजी को ब्रह्मा बाबा से मिलवाया। ब्रह्मा बाबा हँसते हुए बोले, 'बेटा, मैं तीन दिनों से तुम्हारा इंतजार कर रहा हूँ, तुम अब तक कहाँ थे?' पिताजी को ब्रह्मा बाबा द्वारा 'बेटा' संबोधन सुनकर बहुत आश्चर्य हुआ क्योंकि वे दोनों ही समान उम्र के थे। वास्तव में ब्रह्मा बाबा के तन में अवतरित परमात्मा शिव ने उन्हें 'बेटा' कहकर संबोधित किया था। तत्पश्चात् ब्रह्मा बाबा ने कहा, 'बेटे, तुमको परमधाम का पता चाहिए ना!' पिताजी ने 'हाँ' कहा। उसके बाद बाबा उनको दृष्टि देने लगे और पिताजी एकदम ध्यानस्थ होकर एक दिव्य धाम का साक्षात्कार करने लगे। इस घटना के बाद पिताजी के साथ-साथ हमारे सारे परिवार की दिशा ही पूर्णतः बदल गई। तन-मन-धन सहित हमारा संपूर्ण परिवार 'ओम मण्डली' में समर्पित हो गया। पिताजी ने अपने मन को व्यापार से पूरी तरह हटा लिया और सत्संग में लगनशील हो गए।

ईश्वरीय जीवन का आधार: दृढ़ निश्चय

ईश्वरीय ज्ञान सुनने के बाद ईश्वर के ऊपर अटूट निश्चय और असीम प्रेम चाहिए। मन समर्पित होना चाहिए। आज की तरह, पहले कोई साप्ताहिक पाठ्यक्रम, ईश्वरीय किताबें, पत्राचार पाठ्यक्रम या अन्य कोई साधन नहीं थे। कराची में ब्रह्मा बाबा कहते थे, 'बच्चो, अब तुम ईश्वरीय ज्ञान का दूध पीते हो, भविष्य में जो बच्चे आयेंगे, वे मक्खन खायेंगे', हकीकत में ऐसा ही हुआ।

ध्यान का वरदान

बाबा और ईश्वरीय ज्ञान में निश्चय का दूसरा आधार था, 'ध्यान'। ध्यान मेरे जीवन में श्रेष्ठ वरदान था। मैंने अनेक बार आत्मा और परमात्मा के दिव्य स्वरूप का साक्षात्कार किया। ध्यानावस्था (ट्रांस) में सतयुगी दैवी दुनिया के भिन्न-भिन्न दृश्य, देवी-देवताओं की पोशाक, सजावट, हीरों के महल, मनमोहक राजदरबार, सुन्दर-सुन्दर बाग-बगीचे आदि का साक्षात्कार किया। यह साक्षात्कार का पार्ट कई घंटों तक तथा कई दिनों तक भी चलता था। उन सब दृश्यों का वर्णन किया जाये तो कई किताबें बन जायें। बाद में क्लास में ये सारे अनुभव सुनाये जाते थे जिसके ऊपर सब विचार सागर मंथन करते थे और बाबा के प्रति निश्चय दृढ़ करते थे।

एक बार बाबा ने क्लास में कहा, 'बच्चो, दूसरी दीवाली नहीं आयेगी, जो पुरुषार्थ करना है सो अब कर लो।' बाबा के ये महावाक्य सुनकर मैं दृढ़ निश्चय के साथ पुरानी कलियुगी दुनिया को संपूर्ण भूल गई और सोचने लगी कि बाबा के सिवाय इस दुनिया में कुछ भी काम का नहीं है। इस घटना से मेरा निश्चय दुगुना हुआ क्योंकि ठीक समय पर बाबा ने ठीक महावाक्य उच्चारण कर हमारे पुरुषार्थ की गति को तीव्र कर दिया।

बाबा की पालना– राजकुमारी जैसी

हैदराबाद के एक स्थानीय विद्यालय में हमारी शिक्षा आरंभ हुई। हम केवल पाँचवीं कक्षा तक ही पढ़ी, आगे की शिक्षा ईश्वरीय विश्व विद्यालय में अर्थात् बाबा द्वारा खोले गए रूहानी बोर्डिंग में हुई।

बोर्डिंग में मेरे जैसी छोटी-छोटी करीब 60 कन्यायें थी। उनकी देखभाल के लिए पाँच बड़ी दादियाँ नियुक्त थीं। बारह-बारह कन्याओं के पाँच ग्रुप्स बने थे। दादियों के नाम थे – दादी प्रकाशमणि, दादी चन्द्रमणि, दादी शान्तामणि, दादी मिट्ठू और दादी कला। स्नान के लिए जाते समय हम को साथ में ब्रश, पेस्ट या पोशाक आदि लेने की जरूरत नहीं पड़ती थी। स्नानागार में सब कुछ पहले से ही उपयुक्त स्थान पर रखा रहता था। बाबा ने हम कन्याओं के लिए क्या नहीं किया! बाबा की हर शिक्षा दैवी संस्कार संपन्न थी। बाबा का जीवन दर्शन था, 'कर्म के आधार से शिक्षा देना।'

बाबा ने हम बच्चों को राजसी पोशाक में सदा रखा। देखने वाले सोचते थे कि ये या तो परी हैं या राजकुमारी हैं। शरीर पर मखमल की सफेद पोशाक, सिर में ओम का रिबन और कमर में ओम वाली बेल्ट। ड्रेस की क्रीज़ ऐसी होती थी जैसे सरल रेखा। सारे दिन में तीन बार ड्रेस बदलते थे।

रात को सोने से पहले हम सब की शय्या तैयार हो जाती थी। रात को रोज़ बेडशीट बदली जाती थी। मच्छरदानी भी लगती थी। हमारे शय्या पर जाते ही मच्छरदानी गिरा दी जाती थी। उसके बाद 'सो जा राजकुमारी' गीत का रिकार्ड बजता था। हम सभी बेड पर योगासन मुद्रा में बैठकर बाबा को गुडनाइट करने की तैयारी में रहते थे, तभी बाबा-मम्मा चक्कर लगाने आते थे। बाबा मच्छरदानी की चेकिंग भी करते थे। कन्याओं को योग-मुद्रा में देख बाबा, मम्मा को कहते थे, 'देखो मम्मा, मंदिर में मूर्तियाँ कैसे शोभायमान हैं।' उसके बाद बाबा-मम्मा गुडनाइट करके विदाई लेते थे।

व्यायाम

हम सभी कन्यायें सुबह 4.30 बजे उठकर 5 बजे तक भ्रमण के लिए तैयार हो जाते थे। उसी समय व्यायाम के साथ-साथ 'शान्ति समाधि' भी सिखाई जाती थी। ड्रिल क्लास भी रोज होता था। व्यायाम के साथ-साथ रिंग-बाल, बेडमिंटन आदि खेल भी रोज सिखाये जाते थे। बाबा-मम्मा भी सबके साथ खेलते थे। हार-जीत दोनों में मजा आता था। हम कन्याओं के उत्तम स्वास्थ्य के लक्ष्य से बाबा ये सब कराते थे।

भोजन

बाबा, हम बच्चों को रोज़ पिस्ता, बादाम, मक्खन, मधु और देशी घी से बनी हुई मीठी रोटी खिलाते थे। शान्त और योगयुक्त वातावरण में सभी का भोजन सम्पन्न होता था। पहले बच्चे भोजन करते थे और अंत में बाबा-मम्मा करते थे। बाबा के त्याग और निर्मानता की बातें याद आने से आँखों में आनन्दाश्रु आ जाते हैं।

अलौकिक नामकरण

यज्ञ में समर्पित होने के कुछ दिनों के बाद बाबा ने अलौकिक नामों की एक लिस्ट अव्यक्त वतन से भेजी थी। बच्चों की विशेषता के अनुसार बच्चों का नामकरण किया गया था। मैं ध्यान में जाकर संदेश लेने के निमित्त थी इसलिए मेरा नाम बाबा ने 'सन्देशी' रखा। हम छोटी-छोटी कन्याओं की एक रास मंडली थी। साक्षात्कार के बाद हम कन्यायें भिन्न-भिन्न आध्यात्मिक स्वरूपों जैसे स्वास्तिका, अर्धचन्द्रमा, सितारे, ओम आदि के रूप में खड़े होकर रास करते थे। रास इतनी मनमोहक होती थी कि देखने वाले खुशी से विभोर हो जाते थे। मैं अच्छा गाती भी थी और सुंदर नृत्य भी करती थी। गीत और नाच जितना ज्ञानपूर्ण था, उतना ही रमणीक भी था। इसलिए बाबा ने बहुत प्यार से मेरा एक अन्य नाम भी रखा था, 'रमणीक मोहिनी।'

यज्ञ में सबसे ज्यादा दिन मैं साकार बाबा के साथ रही। मैंने निराकार को साकार में और साकार को निराकार में देखा। दोनों बाबा मेरे लिए सदा एक रहे हैं। बाबा के साथ ज्ञान-योग, खान-पान, खेल-कूद आदि का पार्ट मैंने बहुत ही सुन्दर रूप में निभाया। मैं खेल में सदा बाबा की प्रतिद्वन्द्वी रहती थी और पारदर्शिता भी दिखाती थी। इसलिए बाबा अनेक बार बोलते थे, 'बच्ची, तुम भगवान को बहलाने वाली आत्मा हो।' यदि मैं कभी खेल में जीत जाती थी तो बाबा हँसकर कहते थे कि बच्ची, तुम लक्ष्मी लाल हो जो भगवान को हरा दिया। मेरी इस विशेषता को सामने रख बाबा ने मुझे एक तीसरा विशेष नाम दिया, 'बिन्द्रबाला।'

सांस्कृतिक कार्यक्रम

बाबा जितने गम्भीर थे, उतने ही रमणीक भी थे। बाबा का दिया हुआ ज्ञान भी अति रमणीक है। मैं रोज-रोज ध्यान में जाती थी और सूक्ष्म वतन में रासलीला के भिन्न-भिन्न रमणीक दृश्य देखकर आती थी, फिर वर्णन भी करती थी। उसके पश्चात् बाबा-मम्मा अन्य बच्चियों के द्वारा वैसा ही रास रचवाते थे। इस कार्यक्रम में वेशभूषा भी देवताई होती थी और प्रदर्शन भी बहुत चित्ताकर्षक होता था।

ओम ध्वनि

मेरे जीवन की एक बड़ी विशेषता रही 'ओम

ध्वनि'। अलौकिक जीवन का पहला पाठ रहा, 'ओम ध्वनि।' बाबा के इशारे पर मैं पहले ओम ध्वनि करती थी फिर थोड़े समय के बाद इसके प्रभाव से दूसरे सब ध्यानस्थ हो जाते थे और रास भी करते थे।

ध्यान : बाबा का वरदान

ज्ञान मार्ग में ध्यान एक विशेष विषय है। परमपिता के अवतरण और सतयुगी दैवी दुनिया की स्थापना की रूपरेखा ध्यान के माध्यम से ही स्पष्ट होती गई। जब मैं ओम मण्डली में समर्पित हुई तो अनुभव हुआ कि कोई मुझे ऊपर खींच रहा है। जैसे लोहा चुम्बक की तरफ आकर्षित होता है वैसे ही मैं ऊपर की किसी सत्ता की तरफ आकर्षित होती थी। चार-पाँच दिन तक ऐसा अनुभव लगातार होता रहा। मैंने थोड़ा विचलित-सा होकर मीठी मम्मा को सारी बातें बताईं। मम्मा ने भी बाबा को सुनाया। बाबा, मम्मा को समझाते हुए बोले कि सन्देशी बच्ची के द्वारा शायद शिव बाबा को कोई विशेष सेवा करवानी है। उसके बाद एक दिन शाम को मैं अपना सिर मम्मा की गोदी में रखकर बैठी थी। उसी समय ऊपर खिंचाव अनुभव हुआ। मैंने फट से मम्मा को बताया और मम्मा ने उत्तर दिया, 'बच्ची, डरो मत, बाबा को शायद आपके द्वारा कोई विशेष कार्य कराना है।' तत्पश्चात् मैं ध्यान में चली गई। अशरीरी अवस्था में सूक्ष्म वतन में पहुँची और जैसे टीवी में भिन्न-भिन्न दृश्य देखते हैं वैसे वहाँ बैठ रासलीला का एक चमत्कारिक दृश्य देखने लगी। उस समय ऊपर बाबा ने कहा, 'बच्ची, आराम से बैठकर देखो और नीचे जाकर दूसरों को भी सुनाना और खुद भी रास करना।' ध्यान से वापस आने के बाद मैंने मम्मा को बताया। मम्मा ने बाबा को सुनाया। फिर बाबा ने मेरे सहित पाँच कन्याओं को मिल करके रास करने के लिए कहा और हम सबकी रास देख बाबा-मम्मा बहुत ही खुश हुए। उसके बाद मेरा ध्यान का पार्ट चलता रहा। ध्यान के समय खाना-पीना भूल जाते थे, अनुभव करते थे कि बाबा के साथ जैसे अनेक प्रकार के भोजन और फलों का रस पी रहे हैं। ध्यानावस्था में जो खुशी, आनंद और संतुष्टता मिलती थी, वह अवर्णनीय थी। मैं ध्यान में राजकुमारी बनके आठ-दस दिन तक भी रही। राजकुमारी जैसी राजाई चलन, खानपान आदि मुझमें दिखाई देने लगता था। सृष्टि नाटक के नियमानुसार बाद में बाबा को इस पार्ट को बंद करना पड़ा क्योंकि खेल और रमणीकता में बहुत समय चला जाता था। यह सत्य है कि ध्यान में बहुत उमंग-उल्लास मिलता था लेकिन एक दिन बाबा ने सभी के सामने स्पष्ट कर दिया कि इससे विकर्म विनाश नहीं होंगे, सिर्फ योग से ही आत्मा के विकर्म विनाश होंगे।

परकाया प्रवेश का पार्ट

एक बार ध्यान के कारण मेरे जीवन में विचित्र घटना घटी। माँ से वंचित एक मेरी उम्र की कन्या उस समय हैदराबाद में रहती थी। वह श्रीकृष्ण को बहुत भक्ति करती थी। वह मातृवियोग के गहरे कष्ट को भूल नहीं पा रही थी। वह सोचती थी कि भगवान श्रीकृष्ण एक न एक दिन जरूर उसकी पुकार सुनेंगे और लौकिक माँ से जरूर मिलन करायेंगे। एक दिन वह कन्या श्रीकृष्ण के मंदिर में प्रार्थना करते-करते बेहोश हो गई, उसकी आत्मा ध्यानस्थ हो गई। उस समय मैं भी ध्यानस्थ थी। थोड़े समय के बाद उस कन्या की आत्मा ने मेरे शरीर में प्रवेश कर लिया और मेरी आत्मा उस कन्या के शरीर में प्रवेश हो गई। उस कन्या के शरीर में, मैं आत्मा कुछ दिन उनके घर ठहरी। मैं वहाँ ईश्वरीय ज्ञान सुनाती थी और अपने को ओम मण्डली में छोड़ देने के लिए कहती थी। मेरी बातचीत और चलन को देखकर उस घर के लोग सोचने लगे कि शायद माँ के देहांत के कारण कन्या पागल हो गई है।

दूसरी तरफ, मेरे तन में उस कन्या की आत्मा के पार्ट से ओम मण्डली में विचित्र परिस्थिति पैदा हो गई। उसने जब बृजेन्द्रा दादी जी को देखा तो खुशी से माँ-माँ पुकारने लगी। उसने अपने घर की सब बातें बताई। उसने उनके साथ सोने, खाने और घूमने की इच्छा व्यक्त की। लेकिन मेरे तन द्वारा ऐसी बाह्यमुखता की बातें सुन सभी के मन में संशय आया और अंत में सारी बातें बाबा को बताई गई। बाबा को तो सारे रहस्य का पता था ही। उस कन्या की आत्मा के ईश्वरीय ज्ञान में न होने के कारण उसके साथ भोजन न करने के लिए दादी बृजेन्द्रा को बाबा ने इशारा दिया।

ऐसे समय पर उस कन्या के घर से ओम मण्डली में एक पत्र पहुँचा। ओम मण्डली से भी उसका सही जवाब दिया गया। उसके बाद बाबा ने उस कन्या के घर के बड़ों के साथ मुझ आत्मा को ओम मण्डली में बुलाया। बाबा की आज्ञानुसार हम दोनों कन्यायें इकट्ठी हुईं। बाबा ने क्या किया, किसको पता नहीं चला। जब होश आया तो मुझे यही अनुभव हुआ कि हम दोनों आत्मायें अपने-अपने शरीर में आ चुकी थी। मैं यज्ञ में रही और वह कन्या अपने बड़ों के साथ अपने लौकिक घर चली गई। वास्तव में यह सारा खेल उस कन्या की मातृस्नेह की प्यास बुझाने के लिए किया गया था। उसकी कृष्ण के प्रति सच्ची भक्ति थी। शिव बाबा ने, दादी बृजेन्द्रा द्वारा मातृस्नेह दिलवाकर उसकी आस पूर्ण की थी।

राजयोग का विशेष अभ्यास और अनुभूति

यज्ञारंभ के समय मे योगभट्ठी द्वारा यज्ञ-वत्सों को योग-शिक्षा दी जाती थी। कराची में मैं तथा कई अन्य सन्देशियाँ ध्यान में जाकर वतन से भट्ठी के कार्यक्रम की रूपरेखा ले आते थे। उस रूपरेखा अनुसार सात या दस कन्याओं को लेकर ग्रुप बनता था और इस प्रकार भिन्न-भिन्न ग्रुप की तपस्या आरंभ होती थी। तपस्या के समय सभी सफेद पोशाक पहनते थे और भोजन में सफेद पदार्थों को ही स्वीकार करते थे। नियमित रूप से रोज तपस्या करते थे। तपस्या माना विदेही स्थिति में स्थित होना। उस समय की तपस्या का फल आज सेवा में सफलता का आधार है। बढ़ती उम्र में योगाभ्यास और उसकी अनुभूति बड़ी विचित्र बात लगती है लेकिन उस समय के अभ्यास के कारण योगाभ्यास का पुरुषार्थ करना नहीं पड़ता, योग की स्थिति बनी रहती है। कभी-कभी अनुभव होता है कि सूक्ष्म लोक में शान्ति से बैठी हूँ और कभी अनुभव होता है कि बाबा से शक्ति ले रही हूँ।

कर्मयोगी जीवन

बाबा ने कभी भी कर्म से योग को अलग नहीं किया बल्कि योग द्वारा कर्म में कैसे कुशलता और सफलता मिलती है, वह करके दिखाया। यज्ञ में कन्यायें अलग-अलग नहीं रहती थी लेकिन सबका कर्त्तव्य

अलग-अलग था। बाबा की शिक्षा अनुसार मैंने कभी भी अनुभव नही किया कि फलाना कार्य बड़ा है, फलाना कार्य छोटा है। ईश्वर के घर के सब काम समान भी है और महान भी। कन्याओं की कर्त्तव्य तालिका (Duty list) समयानुसार परिवर्तन होती थी। बोर्डिंग जीवन मे पहले-पहले मुझे पोशाक प्रेस करने की ड्यूटी मिली थी। प्रेस करने से पहले एक पात्र मे स्वच्छ जल लाती थी, पोशाक के चारों तरफ समान रूप से छींटे डालती थी और सजाकर रखती थी। बाद में टेबल तैयार कर कर फिर आयरन को उसके स्थान पर रखकर गर्म करती थी। प्रेस करते समय आयरन की गर्मी और कपड़े की सुन्दरता पर नज़र रखती थी। सारी पोशाक की प्रेस एक जैसी रहती थी। 'काम चलाऊ' शब्द मेरे जीवन में कभी नहीं रहा। एकाग्रता से, शान्ति से और सावधान होकर सेवा करती थी क्योंकि ईश्वर की दी हुई सेवा थी। अपनी सेवा समाप्त होने पर दूसरे सेवासाथियों को सहयोग करती थी।

14 साल की भट्ठी के दौरान बाबा-मम्मा हर प्रकार की कर्मणा सेवा खुद करके हमको सिखाते थे। सिखाने के बाद बच्चों को कार्य संपन्न करने के लिए कहा जाता था। फिर बाबा कभी-कभी बच्चों के पीछे आकर चुपचाप खड़े होकर कार्य की देख-रेख करते थे। कोई ग़लती देखते थे तो बाबा स्वयं उस कार्य को करते और बच्चों को प्यार से कहते, 'बच्ची, वैसा नहीं ऐसा करो।' हर कर्मणा सेवा अर्थात् बाथरूम सेवा से शुरू करके जूते-चप्पल मरम्मत करना, बस मरम्मत करना, गाड़ी चलाना, बर्तन मांजना, ब्रह्मा भोजन बनाना, कोर्स कराना, भाषण करना आदि-आदि सेवा बाबा खुद करके बच्चों को सिखाते थे। बाबा ने सबको ऐसे तैयार किया कि किसी की कोई भी प्रकार के कार्य मे कोई त्रुटि नहीं रहती थी, यह थी अलौकिक परिवार मे सेवा की सफलता।

जीवन शैली में परिवर्तन

लौकिक में, दादा लेखराज हमारे पड़ोसी थे बाबा के परिवार की चलन बहुत राजसी थी लेकिन बाबा के तन में शिवबाबा की प्रवेशता के बाद बाबा की जीवन-शैली पूर्ण रूप से बदल गई। उनकी कीमती पोशाक खादी के सफेद धोती-कुर्ते में रूपांतरित हो गई। कीमती बिस्तर, साधारण बिस्तर में बदल गया। कीमती पाँवों के जूतों के स्थान लकड़ी की खड़ाऊं उनके पाँवों में दिखाई देने लगी। बाबा का राजसी जीवन साधारण हो गया लेकिन यज्ञ-वत्सों का साधारण जीवन बदलकर राजसी बन गया। लेकिन बाबा सिखाते थे, बच्चो, कम खर्च बालानशीन बनो। ईश्वर को समर्पित एक-एक पैसा अति मूल्यवान है। बाबा के साथ लंबे समय तक रहने के कारण हमने भी अपने जीवन शैली को बदल लिया। 'कम खर्च बालानशीन' को जीवन का व्रत मान लिया।

माँगने से मरना भला

बाबा की महान शिक्षाओं से प्रभावित होकर हम अपने लौकिक संसार और संस्कार को भूल गये। हमने कोई भी वस्तु कभी अपने लौकिक माता-पिता से माँगी ही नहीं। बाबा की शिक्षा थी कि 'बच्चे, माँगने से मरना भला।' इसके अलावा यह भी हमारी बुद्धि में आ गया कि अगर कभी किससे कोई वस्तु ली तो वही व्यक्ति याद आयेगा और बाबा याद नही आयेगा।

मन में परिवर्तन नहीं

यज्ञ का स्थानांतरण कराची से माउंट आबू होने पर कुछ दिनों के लिए यज्ञ में अभाव का बादल रहा। माउंट आबू में पहले-पहले भोजन में सिर्फ बाजरे की रोटी और छाछ मिला और पहनने के लिए मखमल की जगह पर सभी को खादी का वस्त्र मिला। भले भोजन और पोशाक में परिवर्तन आया लेकिन उस समय हमारे मन में कोई परिवर्तन नही आया। बोर्डिंग में जैसे खुशी से खाते थे, उस समय भी वैसे ही खाया। छाछ पीने से ओर ही अनेकों की शारीरिक अस्वस्थता ठीक हो गई। सभी अनुभव करते थे कि स्थान परिवर्तन के कारण सभी के उत्तम स्वास्थ्य के लिए शायद भोजन और पोशाक में बाबा ने परिवर्तन लाया है। ऐसे अभाव के समय पर भी बाबा ने किससे कुछ नहीं माँगा बल्कि सबको देते रहे। धन्य वह दाता, धन्य वह भाग्य विधाता!

लौकिक दुनिया में अलौकिक सेवा

उसके बाद सन् 1951 में शुरू हुई लौकिक दुनिया में अलौकिक सेवा। ईश्वरीय सेवा का प्रचार और प्रसार धीरे-धीरे वृद्धि को प्राप्त करने लगा। भारत के विभिन्न स्थानों में सेवाकेन्द्र, उपसेवाकेन्द्र और गीतापाठशालाएँ खुलने लगे। सन् 1951 से सन् 1965 तक मैं मुख्यालय माउंट आबू में साकार बाबा की सेवासाथी बनकर रही। बाबा से मिलने के लिए, बाहर से आने वाली पार्टियों को बाबा से मिलाने का कार्य मेरा ही था। इस ईश्वरीय सेवा द्वारा मानसिक और शारीरिक शक्ति की वृद्धि होती थी। तन-मन सदा निरोगी रहता था। साकार बाबा के साथ मिलन मनाना, अलौकिक अनुभव करना, यहाँ तक कि पार्टियों का विदाई लेने का अनुभव भी बड़ा निराला होता था। मधुबन में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की स्वर्गिक सुगन्धि थी।

चौथे सब्जेक्ट की कमी की पूर्ति

सन् 1965 की बात है, एक दिन बाबा ने कहा, 'तुमको पास विद् ऑनर्स बनना है इसलिए चारों विषयों (ज्ञान, योग, धारणा और सेवा) में पूरी-पूरी सफलता प्राप्त करना अति जरूरी है। बाबा के साथ रहने के कारण तुम्हारे पास ईश्वरीय सेवा के नम्बर कम हैं, तो क्या करना होगा?' यज्ञ से बाहर जाकर सेवा करने का प्रत्यक्ष अनुभव मुझे नहीं था। मेरी चौथे सब्जेक्ट की कमी को भरने के लिए सर्वज्ञ बाबा ने मुझे कोलकाता भेज दिया। 'हाँ जी' के पाठ मे हम सदा पक्की थी इसलिए मधुबन से छुट्टी लेकर कोलकाता चली गई। उस समय अनुभव हुआ कि 'बाबा, आप कितने महान हो! बच्चों की स्वउन्नति के लिए, बच्चों से ज्यादा आप चिन्तित रहते हो।' बच्चों की उन्नति के निमित्त बाबा द्वारा रची गई युक्तियों का मथन करने से यह अनुभव होता था कि वास्तव में बाबा कितने महान है!

सेवाकेन्द्र संचालन की कला सीखी

कुछ दिन कोलकाता में सेवा करने के बाद पटना जाना हुआ। उस समय वहाँ दादी प्रकाशमणि, दादी निर्मलशान्ता और दादी निर्मलपुष्पा (कुज दादी) रहते थे। बाबा इन दादियों के पास उस समय बहुत स्नेह भरे सुन्दर-सुन्दर पत्र भेजते थे जिनको पढ़कर सभी के मन खुश हो जाते थे। पटना में रहकर हमने सेवाकेन्द्र संचालन की कला सीखी। कुछ दिनों बाद मुजफ्फरपुर सेवाकेन्द्र की संचालिका के रूप में मेरा स्थानान्तरण

हो गया। मुजफ्फरपुर में रहते हुए ही नेपाल (काठमाण्डू) में भी बाबा का झण्डा लहराया। भुवनेश्वर से निमंत्रण-पत्र मिलने पर दादी निर्मलशान्ता ने हमको यहाँ राजधानी में ईश्वरीय सेवा के विस्तार के लिए भेज दिया।

नई-नई अनुभूतियाँ

सन् 1978 में भुवनेश्वर सेवाकेन्द्र की जिम्मेवारी मिलते ही, थोड़े दिनों में ही ईश्वरीय सेवा के क्षेत्र में नई-नई अनुभूतियाँ होने लगी। सेवा में सफलता के लिए ऊँची स्थिति की जरूरत है। स्थिति ज्ञान-योग से बनती है इसलिए क्लास शुरू होने से पहले शिक्षक और विद्यार्थियों को कम से कम 15 मिनट योग में बैठना आवश्यक है। बुद्धि में यह स्मृति रहे कि मुरली पढ़ाने वाला है शिव बाबा। निमित्त टीचर को ठीक से मुरली पढ़नी चाहिए। अपने मन से कुछ मिलावट नहीं करनी चाहिए। मुरली के हर शब्द में दिव्यता और रमणीकता भरी हुई है। इसलिए विधिपूर्वक मुरली सुनाना है।

बेहद की भावना

सेवा की अन्य एक विधि है, निःस्वार्थ भाव। सेवाकेन्द्र बाबा का, विद्यार्थी भी बाबा के और हम निमित्त मात्र हैं। आज हैं, कल नहीं भी होंगे। सेवा हमारा जीवन है लेकिन सेवाकेन्द्र नहीं। ईश्वरीय शिक्षा हमारा जीवन है लेकिन शिक्षार्थी नहीं। साधना हमारा जीवन है लेकिन साधन नहीं। सेवा बहुत बढ़े, सेवाकेन्द्र भी बहुत खोलें लेकिन साथ-साथ सेवाधारियों के दिल में कोई हद न हो। सेवा भी बढ़े, दिल भी बड़ी हो। सेवा में भले भौगोलिक सीमा हो लेकिन दिल में बेहद की भावना हो।

पवित्रता की अटूट मर्यादा

बाबा ने कहा, 'बच्ची, पवित्रता सुख-शान्ति की जननी है', 'धरत पड़िए धरम न छोड़िए' और 'पवित्र बनो-राजयोगी बनो'। बाबा की इन आज्ञाओं से मैं इतनी प्रभावित थी कि दोनों बाबा के सिवाय दुनिया के किसी भी व्यक्ति का संकल्प, स्वप्न में भी कभी नहीं आया। अंत तक नाम-रूप की बीमारी से मुक्त रही हूँ। अनेकानेक विद्यार्थी, सेवा-साथी, सहयोगी और वीआईपी इसी पवित्रता की झलक से प्रभावित होकर जीवन को महान बनाने के लिए उत्साहित हुए हैं।

भोजन

ज्ञान, ध्यान और तपस्या के साथ-साथ बाबा हर प्रकार के ईश्वरीय नियम-मर्यादायें, यज्ञ के हर विभाग की कार्यप्रणाली सिखाते थे ताकि सब बच्चे आलराउण्डर बनें और भविष्य में सेवाकेन्द्रों का हर कार्य खुद कर सकें तथा दूसरों को भी सिखा सकें। मेरे पास भोजन बनाने की सुन्दर कला भी थी। भोजन बनाने के लिए मैं कभी किसी पर निर्भर नहीं रही। विद्यार्थियों को शुद्ध, स्वादिष्ट ब्रह्मा भोजन खिलाकर संतुष्ट और शक्तिशाली बनाना मेरे जीवन का महान लक्ष्य रहा।

बाबा को भोजन स्वीकार कराते समय मन में बहुत श्रेष्ठ भावना रहती थी। भोग के बर्तन की सफाई का विशेष ध्यान रखती थी। भोग के बर्तन चांदी के होते हुए भी अगर स्वच्छ न हों तो काले-काले दिखते हैं जो बाबा को कभी पसंद नहीं आता था। बर्तन देखकर बाबा जान जाते थे कि बच्चों की कितनी श्रद्धा और भावना है। शुद्धिपूर्वक, विधिपूर्वक और याद सहित

भोजन का भोग लगे, यह है महामंत्र। सेवाकेन्द्र में, ईश्वरीय सेवा में व्यस्त होते हुए भी कम से कम एक समय बाबा के भोग के लिए बनाना हम कभी नहीं भूली।

जब शरीर बुजुर्ग हो गया तो आवश्यकता को चीजें सेवासाथी ही जानते और मँगाते थे लेकिन इस अवस्था से पहले हरेक आवश्यक सामग्री मधुबन से मिलती थी। सेवाकेन्द्र की भण्डारी से सिर्फ भोजन, टिकट तथा दवाई आदि के छोटे-मोटे खर्चों के सिवाय एक पाई भी अपने लिए खर्च नहीं करती थी। सेवाकेन्द्र में प्राप्त सौगातों को कभी प्रयोग नहीं करते थे। इन सब चीज़ों को मुख्यालय भेज देते थे या दूसरे सेवाकेन्द्र, अपने सेवा साथी अथवा विद्यार्थियों को दे देते थे। बाबा कहते थे, 'जिसकी चीजें प्रयोग करेंगे, उसकी स्मृति जरूर आयेगी।'

पोशाक और सजावट

वस्त्रों के पुराने होने पर और थोड़ा-बहुत फटने पर हम सिलाई कर लेती थी। जब ज्यादा फट जाता था तो दूसरे कपड़े की चत्ती लगा लेते थे। जब पहनने योग्य नहीं रहता तो उसको रजाई या कंबल का कवर बना देते। जरूरत पड़ने पर उन्हीं पुराने वस्त्रों से रसोईघर के पर्दे, रसोई का रूमाल या पोंछा लगाने का कपड़ा बनाकर प्रयोग करते। यज्ञ के नियमानुसार जितने जोड़े कपड़े रखने चाहिएँ, उतने ही रखते थे। बाबा की आज्ञानुसार शुरू से हमने श्रेष्ठ चलन और उत्तम व्यवहार का संस्कार अपने अंदर भरा क्योंकि बाबा की आज्ञा थी, 'बच्चो, अगर किसको दुख देंगे तो दुखी होकर पड़ेंगे।' कर्म की बात तो दूर रही, लेकिन वाणी से भी कभी किसको आघात नहीं पहुँचाया।

******

दादी के सदा अंग-संग रही भुवनेश्वर की गीता बहन उनके बारे में इस प्रकार सुनाती हैं –

चलन और व्यवहार

दूसरों का भला कार्य और यज्ञ सेवा के लिए दादी जी सदा खुश होती थी और बाबा को धन्यवाद देती थी। कभी किसकी ईश्वरीय मर्यादा उल्लंघन की बात कानों में आती थी तो बाबा के उपयुक्त महावाक्यों के माध्यम से उसे निवृत्त करने की शिक्षा देती थी। वे कभी भी ऊँची आवाज या कोई अपशब्द पसन्द नहीं करती थीं। लड़ाई और झगड़े को वे दूर से ही नमस्कार करती थीं। कोई वस्तु या धन किससे माँगना जैसे कि उनकी जन्मपत्री में विधाता ने नहीं लिखा था। कितना भी बड़ा सेवा का कार्यक्रम सामने हो लेकिन धन के बारे में दादी जी सदा कहती थी कि 'जिसका कार्य उसको चिन्ता।' वह सदा अपने को निमित्त समझते हुए हर कार्य संपादित करती थी।

धन का सदुपयोग

सेवाकेन्द्र में दादी जी के पास दिन-भर में अनेक जिज्ञासु और विद्यार्थी आते थे। सेवासाथी और सेवाधारी भी आते थे। भाषण करना पड़ता था, क्लास भी कराना पड़ता था और टेलिफोन में भी बातें करनी पड़ती थी। यह सब कार्यक्रम होते हुए भी दादी जी सारे दिन में धन कम खर्च करती थी और सभी को संतुष्ट भी करती थी। जहाँ दो मीठे शब्द बहुत हैं, वहाँ एक घंटा भाषण करने की क्या जरूरत है? जहाँ एक इशारा काफी है, वहाँ ऊँची आवाज में बातचीत करना अनुचित

है। दादी जी का अनुभव था कि उत्कल निवासी भाई-बहनें बहुत गरीब हैं। उनके कठिन मेहनत से प्राप्त हुए सत धन का वे सही उपयोग करती थी। दादी जी की रेल यात्रा तीसरे दर्जे मे होती थी। रेल में तीसरा दर्जा बंद होने के बाद दूसरे दर्जे में यात्रा करती। बढ़ती हुई उम्र और पाँव टूटने के कारण दादी जी ने जब विमान यात्रा शुरू की तब टिकट खर्च में रियायत मिलती थी।

धन का सही हिसाब

यज्ञ में धन का सही हिसाब रखने के लिए बाबा पहले ऊपर से सन्देश भेजते थे। दादी जी अनुभव में सुनाते थे कि जैसे कर्म की गहन गति है, वैसे धन की भी गहन गति है। एक तरफ अपना भाग्य बनाने वाले विद्यार्थी, दूसरी तरफ भाग्यविधाता निराकार बाप और बीच मे सेवाकेन्द्र की निमित्त बहन। बाबा पहले से ही निमित्त बहनों को बता देते थे कि बच्ची, सच्चे दिल पर साहेब राजी, इसलिए प्राप्त धन को सही खर्च करना और खर्च का सही हिसाब रखने का काम निमित्त बहन का है। यह याद रहे कि कमाई और खर्च का सही हिसाब मानव जीवन को सुन्दर बनाने में मदद करता है। दादी जी कहते थे कि ईश्वरीय परिवार में आपस में पैसे की लेन-देन करना अथवा उधार देना-उधार लेना श्रीमत के विरुद्ध है, इसलिए कभी किसी को खुश करने के लिए या किसी से प्रशंसा पाने के लिए ईश्वरीय धन को उधार देना या लेना नहीं है। दादी जी सुनाते थे कि मधुबन का ख्याल रखना उनके जीवन का व्रत था। इसका अर्थ यह नहीं कि अन्य किसी से माँगकर मधुबन भेजें। सेवाकेन्द्र पर चार रोटी की जरूरत होते हुए भी वे तीन रोटी खाकर एक बाबा के लिए रखती थी। खुशी की बात यह थी कि दादी जी बाबा के लिए जितना करती थी, उससे कई गुणा अधिक बाबा उनको दे देते थे।

दादी जी जब मुजफ्फरपुर में रहते थे तब आम की ऋतु में एक विद्यार्थी कुछ आम लेकर सेवाकेन्द्र पर आया। उन दिनों में मधुबन में आम नहीं मिलते थे। भाई को दादी जी ने कहा, बाबा को खिलाये बिना हम कैसे खायेंगे? भाई ने कहा, इतने थोड़े-से आम मधुबन कैसे भेजेंगे? यह तो लज्जा की बात है। अगले दिन, मधुबन के लिए बहुत सारे आम लाया, उन्हें मधुबन भेजा गया। उस भाई को, इस श्रेष्ठ भावना के फल रूप कई अधिक गुणा बाबा ने दिया।

दादी जी ने जब भुवनेश्वर सेवाकेन्द्र की जिम्मेवारी ली, तब राजधानी के हिसाब से सेवाकेन्द्र का मकान बहुत छोटा था। सेवाकेन्द्र की आर्थिक स्थिति भी ठीक नहीं थी। विद्यार्थी भी कम थे। उस समय दादी जी बोलते थे कि यह है परीक्षा की घड़ी। सेवा की उन्नति के लिए दादी जी को धन की आवश्यकता थी लेकिन आये कहाँ से? उनके पास साधना का एक महामंत्र था, वह था – 'हिम्मते बच्चे, मददे बाप।' कुछ दिनों के तीव्र पुरुषार्थ के बाद बाबा के इस महामंत्र ने दादी जी को सफलता का हार पहनाया। धीरे-धीरे विद्यार्थियों की वृद्धि हुई, बड़ा मकान भी मिला, राज्य सरकार से जमीन भी मिली आदि-आदि।

सत् धन सदा सुखकारी

सरकारी जमीन मिलने के बाद अपना मकान बनाने के लिए दादी जी के कंधों पर एक नई जिम्मेवारी

आई। उन्होंने ना सरकारी अनुदान लिया, ना किससे चन्दा माँगा, ना मधुबन से पैसा लिया और ना ही किसी सेवाकेन्द्र से लिया। उड़ीसा गरीब राज्य होते हुए भी इसके हर कोने से बाबा के बच्चों के स्वत: सहयोग से ओम निवास बन गया और दादी प्रकाशमणि जी के कर-कमलों से उद्घाटन हुआ। आवश्यकतानुसार बाबा ने विद्यार्थियों के माध्यम से सबकुछ करवाया। धन के लिए दादी जी ने ना तो कभी किसको स्पष्ट कहा, न किसको कष्ट दिया। दादी जी धन के बारे में सभी को कहती थी कि उपयुक्त परिश्रम कर ईमानदारी से जितनी धन की कमाई होती है, उसमें संतुष्ट रहो और उसका कुछ हिस्सा ईश्वरीय सेवा में लगाओ। वह यह भी कहती थी कि असत् धन कभी किस सत् कार्य में नहीं लगता। अगर कहीं लगता है तो उपयुक्त सुफल नहीं मिलता। सत् धन का अधिकारी सदा सुखी रहता है।

शिवरात्रि पर बाबा के गले में 21 गिनी का हार

एक बार मुजफ्फरपुर से पार्टी लेकर दादी जी मधुबन आई थी। बाबा उनको देखते ही बोले कि बच्ची, तुम बड़ी लक्की हो। अगली शिवरात्रि पर बाबा को 21 गिनी का हार पहनाना। उस समय दादी जी इस महावाक्य का अर्थ नहीं समझ पाई क्योंकि मुजफ्फरपुर सेवा इतनी फलीभूत नहीं हुई थी तो 21 गिनी हार कहाँ से मिले जो बाबा को पहनाये। जो हो, बाबा की इस बात को दादी जी बाबा की स्वभाव सुलभ मजेदार बात समझ भूल गई। आश्चर्य की बात थी कि मधुबन से मुजफ्फरपुर वापस आने के कुछ दिनों के भीतर एक माता ने दादी जी को एक सोने की गिनी दी। दादी जी ने गिनी को ऐसे ही रख दिया। थोड़े दिनों के बाद और दो माताओं ने दो गिनियाँ दी। धीरे-धीरे और भी कुछ-कुछ मिलता रहा। शिवरात्रि से पहले दादी जी ने जब भंडारी खोली तो 21 गिनियाँ पाई और जल्दी-जल्दी उसको एक मखमल के कपड़े में रख एक हार बनाया। शिवरात्रि के अवसर पर दादी जी मधुबन आई और बाबा को वह हार पहनाया।

वेस्ट को बेस्ट

बाबा ने वेस्ट वस्तुओं को सफल करना बच्चों को सिखाया। उदाहरण के तौर पर, प्राप्त पत्रों के लिफाफों को बाबा नष्ट न करके काटकर पर्चियाँ बनाते थे जो सब्जी की लिस्ट बनाने जैसे बहुत से कार्यों में काम आती थी। दादी जी भी यही काम अंत तक करती थी। दादी जी पुराने फटे कपड़ों को पोछा कपड़े के रूप में, गेहूँ से निकाले गये छोटे-छोटे दानों को चिड़िया के दाने के रूप में, सब्जी के छिलकों को गाय के खाद्य के रूप में और छेने के पानी को कढ़ी तैयार करने में प्रयोग करती थी। दादी जी सुनाती थी कि बाबा कहा करते थे कि बच्चे, तुम वेस्ट को बेस्ट न बना सके तो संगमयुग पर पतितों को पावन कैसे बनायेंगे?

14 साल के प्रशिक्षण के समय में यदि किसी यज्ञ-वत्स को शारीरिक व्याधि होती तो उसका कोई भी उपचार किसी डॉक्टर के द्वारा नहीं कराया जाता था। ऐसे समय पर यज्ञ माता-पिता के इशारे पर दादी जी खुद ट्रांस में जाकर शिवबाबा को रोग का विवरण देती थी और उनसे आज्ञा ले आती थी। बाबा के परामर्श पर उस यज्ञ-वत्स का उपचार होता था और

वह बहुत जल्दी ही ठीक हो जाता था।

जो करेगा, सो पाएगा

बाबा सब कुछ कर सकते थे लेकिन बाबा ने स्पष्ट रूप में बताया कि बच्चे, जो करेगा, सो पायेगा। ऐसा नहीं कि बाप पाठ पढ़ेगा और बच्चा इम्तिहान पास करेगा। बाबा पुरुषार्थी नहीं है, वह हमारा परमशिक्षक है, उसके दिये हुए ज्ञान को बच्चे पढ़कर, जीवन में प्रयोग कर उससे सफलता प्राप्त करेंगे। यह याद रहे कि अब सबका अंतिम जन्म है और इस जन्म में बच्चों को विगत 63 जन्मों के विकर्मों को विनाश करना है। विगत विकर्मों का फल, हो सकता है कि दुख-अशान्ति के रूप में या अभाव अथवा शारीरिक व्याधि के रूप में अपने सामने खड़ा हो जाये। यह सब हिसाब-किताब बच्चों को हो चुक्तू करना पड़ेगा और इन सबको चुक्तू करने का साधन है योग साधना। परिस्थिति कितनी भी भयानक या दर्दनाक हो लेकिन बच्चों को योग समाधि की श्रेष्ठ स्थिति के द्वारा पहाड़ भी राई बन जायेगा। ऐसी परिस्थिति में दूसरों को दुख लगता होगा लेकिन हिसाब-किताब चुक्तू करने वाला व्यक्ति अतीन्द्रिय खुशी में झूलता रहेगा। यही है योग-तपस्या का फल।

ईश्वर के वचन अटल

दादी जी की अन्य एक विशेष अनुभूति थी कि मनुष्य के वचन पानी की लकीर हैं लेकिन ईश्वर के वचन सदा ही अटल हैं। समर्पण के समय बाबा ने कहा था कि बच्चे, तुम मेरी शरण में आ जाओ तो मैं तुम्हारी सभी जिम्मेवारियाँ निभाऊँगा। इसलिए बाबा कहते थे, शारीरिक व्याधि वास्तव में दुखदायी नहीं है बल्कि योग की नई-नई साधना और अनुभव करने का एक मुख्य साधन है। दादी जी ने बहुत समय हठ में बिताया। इसलिए योगाभ्यास में कमी रह गई होगी तो बाबा ने निरंतर योगाभ्यास के लिए उनको अंतिम सुअवसर दिया। अगर बाबा ने दादी जी को व्याधि से ठीक कर दिया होता तो दादी जी की योग में मात्रा नहीं बढ़ पाती। ड्रामा कल्याणकारी है।

सतगुरुवार, 1 नवंबर 2007 दोपहर 1.50 बजे दादी ने अपनी स्थूल देह-त्याग दी। दोपहर 1.30 बजे दादी ने भोजन किया। चेहरे से कोई तकलीफ दिखाई नहीं दे रही थी। भोजन करने के बाद हमने दादी से कहा कि दादी बाबा बोलो। दादी ने पाँच बार 'बाबा' बोला। फिर दोपहर 1.50 बजे स्थूल शरीर को छोड़ अव्यक्त वतनवासी बन बाबा की गोद में समा गई।

दादी आत्ममोहिनी

दादी आत्ममोहिनी जो दादी पुष्पशान्ता की लौकिक में छोटी बहन थी, भारत के विभिन्न स्थानों पर सेवायें करने के पश्चात् कुछ समय कानपुर में रही। जब दादी पुष्पशांता को उनके लौकिक रिश्तेदारों द्वारा कोलाबा का सेवाकेन्द्र दिया गया तब ब्रह्मा बाबा की श्रीमत अनुसार दादी आत्ममोहिनी ने भी दादी पुष्पशान्ता के साथ कोलाबा सेवाकेन्द्र की सेवा में बहुत सहयोग दिया और उनके जाने के बाद कोलाबा सेवाकेन्द्र का कार्यभार संभाला। आप बहुत ही निर्मानचित्त और शान्त स्वभाव की थी। बड़ी बात को छोटा करने में सदा ही नंबर आगे लिया। अपने नियम की पक्की और व्यवहारकुशल भी थी। आप 17 फरवरी, 1996 को पुराना शरीर छोड़ अव्यक्त वतनवासी बनी।

दादी आत्ममोहिनी जी के बारे में **ब्र.कु. रमेश** शाह, मुंबई इस प्रकार सुनाते हैं –

आत्ममोहिनी दादी लौकिक में पुष्पशान्ता दादी की छोटी बहन थी। दादी पुष्पशान्ता तो माता थी परंतु आत्ममोहिनी दादी कन्या थी और कन्या के रूप में ही आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत का पालन कर सदा ही ईश्वरीय सेवा में तत्पर रही। जब आबू से सभी बहनें इधर-उधर ईश्वरीय सेवा पर गई तब आत्ममोहिनी दादी अनेक स्थानों पर सेवायें करते अंत में कानपुर स्थिर हुई परंतु जब दादी पुष्पशांता को उनके लौकिक रिश्तेदारों द्वारा कोलाबा का सेवाकेन्द्र दिया गया तब उन्होंने ब्रह्मा बाबा को अर्जी दी कि मुझे हैण्डस चाहिएँ। दूरदेशी ब्रह्मा बाबा ने उत्तर में यही लिखा कि तुम्हारा भाई सेन्टर लौकिक के सहयोग से खुल रहा है इसलिए तुम्हारा साथी भी लौकिक ही होना चाहिए ताकि आपके लौकिक को तसल्ली हो जाये कि उनके द्वारा दिया सहयोग सेवा में सफल हो रहा है। इसी कारण जब कोलाबा सेवाकेन्द्र की स्थापना हुई, तब दादी आत्ममोहिनी मुंबई आई। दादी पुष्पशांता के बाद आत्ममोहिनी दादी ने ही कोलाबा सेवाकेन्द्र का कार्यभार संभाला।

बड़ी बात को छोटा करना

आत्ममोहिनी दादी बहुत ही निर्मानचित्त और शांत स्वभाव की थी। एक बार मेरे से गलती हो गई। सन् 1974 में मुंबई में विशेष मेला हो रहा था और हम सबने मिलकर अखबार में सप्लीमेंट डाली जिसमें हमने दादी पुष्पशांता और दादी आत्ममोहिनी दोनों का फोटो

डाला। परंतु ग़लती से मैंने दादी आत्ममोहिनी के फोटो के नीचे दादी आत्मइन्द्रा (गगे दादी) का नाम लिख दिया। अखबार में दादी का नाम ग़लत छप गया। सबने मुझे कहा कि आपके ऊपर आत्ममोहिनी दादी नाराज होंगी। कोलाबा सेवाकेन्द्र पर जाकर मैंने आत्ममोहिनी दादी से गलती के लिए माफी माँगी। दादी ने कहा कि कोई हर्जा नही है। 'आत्म' शब्द तो है ही, सिर्फ 'मोहिनी' की बजाय 'इन्द्रा' शब्द लिखा गया है, आप फिक्र मत करो। मुझे कोई दुख या अफसोस नहीं है। तब मैंने दादी आत्ममोहिनी का बहुत-बहुत दिल से शुक्रिया माना और तय किया कि आगे से ऐसी छोटी भूल नहीं करूँगा। मुझे सदा ही दादी जानकी का एक क्लास याद रहता है कि हमारे हाथों में है छोटी बात को बड़ा करना या बड़ी बात को छोटी करना। छोटी बात को बड़ी करने में तो सब एक्सपर्ट हैं पर परीक्षा होती है बड़ी को छोटी करने में और उसमें विरले ही सफल होते हैं। इस प्रकार दादी आत्ममोहिनी जी ने सदा ही बड़ी बात को छोटी करने में नंबर आगे लिया।

व्यवहार कुशल

दादी आत्ममोहिनी ने मुझे हमेशा ही ईश्वरीय सेवाओं में हर तरह से सहयोग दिया। दादी पुष्पशांता ने यह नियम बनाया था कि मैं हर रविवार को कोलाबा सेवाकेन्द्र पर क्लास कराऊँ। दादी पुष्पशांता के शरीर छोड़ने के बाद दादी आत्ममोहिनी ने इस नियम को अंत तक निभाया। रविवार आने के एक-दो दिन पहले वे मुझे फोन करके याद दिलाती और कोलाबा सेवाकेन्द्र आने का निमंत्रण देती। इस प्रकार आत्ममोहिनी दादी न केवल नियम की पक्की थी बल्कि व्यवहारकुशल भी थी।

******

कोलाबा सेवाकेन्द्र की **गायत्री बहन** जिन्होंने दादी जी के साथ 8 वर्ष तथा मोहिनी बहन जिन्होंने दादी जी के साथ 15 वर्ष बिताये, अपना अनुभव इस प्रकार सुनाती हैं –

आत्ममोहिनी दादी, पुष्पशान्ता दादी की लौकिक बहन थी। उनका लौकिक नाम हँसी मिलवानी था। सिंध हैदराबाद में जब बाबा ने यज्ञ की स्थापना की उस समय कुमारी अवस्था में ही ये यज्ञ में समर्पित हो गई। कुछ समय कानपुर में रहकर सेवायें की फिर बाबा ने इन्हें कोलाबा भेजा।

कुमारियों की उत्तम ट्रेनिंग

दादी जी अमृतवेले पर विशेष ध्यान देती थी। अनुशासन में रहना, चारों विषयों में बैलेन्स रखना, एक्यूरेसी – ये सब हमने दादी जी से सीखा। कन्यायें जब सेन्टर पर आती तो अपने लौकिक का, पढ़ाई का देह-अभिमान होता, दादी बड़ी युक्ति से उसे खत्म करती। दादी जी चाहती थी कि मेरे पास रहने वाली हर कुमारी भाषण में भी होशियार हो तो किचन का काम करने में भी एक्यूरेट हो। आलराउंडर हो। इसलिए दादी कुमारियों को इसी तरह की ट्रेनिंग देती थी। दादी जी को सुस्ती, बहानेबाजी बिल्कुल अच्छी नहीं लगती थी। लौकिक परिवार के साथ कितना संबंध रखना है, उनकी सेवा कैसे करनी है, यह सब हमें दादी जी ने सिखाया। रोजाना रात को कचहरी (फैमिली मीटिंग) लगाती। एक-दो से समाचारों की लेन-देन करती, अगले दिन के कार्यक्रम को निर्धारित करती।

कुमारों पर पूरा ध्यान

दादी कुमारों को विशेष पालना देकर आगे बढ़ाती थी। उन्हें रहता था कि कुमार, कुमार ही रहे, कभी ब्राह्मण जीवन से तंग होकर भटक न जाये। इसलिए दादी हर रविवार कुमारों की विशेष भट्ठी कराती थी। उस दिन का भोजन कुमार ही बनाते थे। इससे कुमार भोजन बनाना भी सीख जाते थे और उनकी पिकनिक भी हो जाती थी। कुमारों की योग्यता अनुसार उन्हें सेवा देती थी। जिन कुमारों ने उनकी पालना ली, वे आज भी दृष्टि, वृत्ति, नियम, धारणाओं में बहुत पक्के हैं।

अपने लिए कोई खर्च नहीं

दादी जी निर्भय थी। बड़ी-बड़ी परीक्षायें आईं पर हमने उन्हें कभी घबराते हुए नहीं देखा। दादी जी बहुत इकॉनामी से चलती थी। दादी जी का सिद्धांत था, कम खर्च बालानशीन। हम जहाँ एक हजार खर्च करते हैं वहाँ दादी इकॉनोमी से सिर्फ 200 रुपये ही खर्च करती थी। उसमें भी अपने लिए उन्होंने कभी खर्च नहीं किया। कहीं भी सेवार्थ जाना होता तो बस में या रिक्शा में जाती थी, अपने लिए कभी गाड़ी नहीं ली।

अंतिम समय की उनकी स्थिति के बारे में **ब्र.कु. गायत्री बहन** सुनाती हैं–

न्यारी, प्यारी और उपराम

अंतिम समय दादी चार महीना बीमार रही, हार्ट की तकलीफ थी। मुझे उनकी नजदीक से सेवा करने का भाग्य मिला। उस दिनों दादी बहुत न्यारी, प्यारी, उपराम हो गई थी। उन्हे ल्यूकोमिया हो गया था। उन दिनों बाबा का संदेश आया कि दादी तो मेरी गोद में है, निमित्त मात्र हिसाब-किताब चुक्तू करने के लिए बेड पर है। हम जब उनसे मिलने जाते, हमें बहुत हलकी दिखाई देती मानो हमें सकाश दे रही है। सत्रह फरवरी, 1996, शिवरात्रि का दिन था, दादी के कहे अनुसार हमने प्यारे बाबा को भोग लगाया। दादी जी की इच्छा थी कि पुलिस कमिश्नर शिवध्वज

मम्मा-बाबा के साथ ग्रुप में दादी आत्ममोहिनी (नीचे बायें से दायें प्रथम) और अन्य दादियाँ

लहराये सो पुलिस कमिश्नर आये और शिवध्वज लहराया। इधर शिवरात्रि का कार्यक्रम पूरा हुआ और उधर दादी ने प्रातः 9 बजे के लगभग शरीर छोड़ा।

******

. कोलाबा सेवाकेन्द्र के **नागेश भाई** जो पिछले 25 वर्षों से ज्ञान में चल रहे हैं और जिन्होंने 15 वर्ष दादी जी की पालना ली, उनके साथ का अनुभव इस प्रकार बताते हैं –

उन दिनों मेरा नया-नया कोर्स हुआ था। मुझे अमृतवेला सेन्टर पर करने की इच्छा थी। इसके लिए मैंने दादी जी से अनुमति ली। अगले दिन सुबह से ही मुझे एकदम बुखार आ गया, सारे शरीर में कंपकंपी छूटने लगी फिर भी नहा-धोकर मैं सुबह 4 बजे सेवाकेन्द्र पर आया। अमृतवेले योग के बाद मैं बाबा के कमरे में गया। दादी मुझे देखने आई और कहा, नागेश, बाबा तो वतन में चले गये, अभी उठो। मैं उठ नहीं पा रहा था। दादी को पता चला तो कहा, बाजू में आराम करने का कमरा है, वहाँ जाकर आराम करो। उन्होंने अपने हाथ से आशीर्वाद दिया और कहा, दस मिनट के अंदर आराम हो जाएगा। सच में ऐसा ही हुआ, दादी के वरदान से दस मिनट में ही मेरा बुखार उतर गया।

एक अन्य भाई शिवचरण शर्मा की उंगली में कपड़ा बंधा देखकर दादी ने पूछा, आप उंगली में कपड़ा क्यों बाँधते हो? उस भाई ने कहा, मुझे उंगली अंदर से दुखती है, ऐसा लगता है कि उंगली में कैंसर है। दादी ने कहा, आज से कपड़ा नहीं बाँधना, ठीक हो जायेगी। ऐसा ही हुआ, एक हफ्ते के अंदर ही उंगली दुखनी बंद हो गई और उस भाई का वहम खत्म हो गया।

******

मुलुंड सेवाकेन्द्र की संचालिका **ब्र.कु. गोदावरी बहन** दादी जी की विशेषतायें इस प्रकार सुनाती हैं –

दादी जी बहुत सरल स्वभाव की थी और ईश्वरीय स्नेहमूर्त फरिश्ता स्वरूप जैसी बहुत ही अच्छी लगती थी। चलते-फिरते भी हमें कर्मों द्वारा शिक्षा देती रहती थी। उस समय उम्र छोटी होने के कारण दादी जी की कई बातें हमें समझ में नहीं आती थी लेकिन दादी जी कभी भी नाराज या नाराज नहीं होती थी बल्कि हमेशा हर्षितमुखता से ज्ञान की मीठी-मीठी शिक्षायें देती रहती थी। उनका पवित्र प्रेम, रूहानी दृष्टि, आत्मीय योगदान और बाबा के प्रति लगन देखकर हमें भी उन समान बनने की प्रेरणा मिलती थी। अभी भी हमें याद आता है कि दादी जी के यज्ञ स्नेह, यज्ञ के प्रति बेहद की भावनाओं ने हमें भी यज्ञ के समीप लाकर यज्ञ में तन, मन, धन, मन, वचन, कर्म से समर्पित कर दिया।

दादी शीलइन्द्रा

आपका जैसा नाम वैसा ही गुण था। आप बाबा की फेवरेट सन्देशी थी। बाबा आपमें श्री लक्ष्मी, श्री नारायण की आत्मा का आह्वान करते थे। आपके द्वारा सतयुगी सृष्टि के अनेक राज़ खुले। आप बड़ी दीदी मनमोहिनी की लौकिक में छोटी बहन थी। लौकिक-अलौकिक परिवार के कल्याण की आप एक कड़ी बनी। सिन्धी समाज की सेवा में आपने विशेष योगदान दिया और मुंबई गामदेवी सेवाकेन्द्र पर रहकर अपनी सेवायें दी। आप 22 जून, 1996 को अव्यक्त वतनवासी बनी।

ब्रह्माकुमार रमेश शाह, दादी शीलइन्द्रा के बारे में अपना अनुभव इस प्रकार सुनाते हैं –

इस यज्ञ में चेनराई परिवार से क्वीन मदर और उनकी देवरानी लीलावती जी समर्पित हुई। उनके साथ उनकी दो-दो बेटियाँ, क्वीन मदर की बेटियाँ – दीदी मनमोहिनी तथा ब्र.कु. शीलइन्द्रा तथा लीलावती बहन की बेटियाँ – ब्र.कु. बृजशान्ता तथा हरदेवी बहन भी समर्पित हुई।

ब्र.कु. शीलइन्द्रा बहन को प्यार से शील दादी कहते थे। वे बहुत ही अच्छी संदेशी बहन थी और उनके द्वारा अनेक प्रकार के शुभ संदेश हमें मिलते रहे और इस प्रकार से श्रीमत पर चलने में हमें सदा ही मदद मिलती रही।

जब नवंबर, 1968 को वर्ल्ड रिन्युअल स्प्रीच्युअल ट्रस्ट का निर्माण हुआ तब यज्ञ की ओर से दादी शीलइन्द्रा को ट्रस्टी के रूप में नियुक्त किया गया। मेरे लिए ट्रस्ट का कारोबार नया था, उसका कोई अनुभव नहीं था। 18 जनवरी, 1969 को ब्रह्मा बाबा के अव्यक्त हो जाने पर ट्रस्ट के कारोबार के संबंध में शील दादी द्वारा मुझे बहुत मदद मिली।

बाबा ने सन्देश देकर भूल बताई

सन् 1971 में विदेश सेवा के प्रारंभ का बीज डालने के लिए, छह आत्माओं का एक ग्रुप डेलीगेट्स के रूप में शिवबाबा ने भेजा, उसमें भाइयों में भ्राता जगदीश जी और मैं तथा बहनों में ब्र.कु. रोजी बहन, ब्र.कु. डॉ. निर्मला बहन, ब्र.कु. ऊषा बहन तथा इस ग्रुप की मुख्य संचालिका के रूप में ब्र.कु. शीलइन्द्रा बहन थी। विदेश सेवा के दौरान समय प्रति समय अव्यक्त बापदादा की श्रीमत, संदेश के रूप में शील

दादी लेकर आती थी। एक छोटा-सा मिसाल बताता हूँ। हम लोग न्यूयार्क में थे और एक संस्था में प्रदर्शनी करने के लिए जा रहे थे। हम लोग लिफ्ट में बैठ चुके थे, इतने में शील दादी को शिवबाबा की टचिंग मिली कि आप लोग मुझे याद किये बिना ही सेवा के कार्यक्रम के लिए जा रहे हो क्योंकि जब हम सब भारत से निकले थे तब अव्यक्त बापदादा की डायरेक्शन थी कि कोई भी सेवा के लिए निकलो तो पहले पाँच मिनट शिवबाबा को याद करके ही निकलो। शील दादी ने हमारी गलती को महसूस किया। हम लोग लिफ्ट छोड़ वापस अपने स्थान पर पहुँच गये और शिवबाबा को याद करने लगे। शिवबाबा ने एक मिनट में शील दादी की बुद्धि की रस्सी अपने पास खींच ली और दादी को हँसते-हँसते कहा कि देखो बच्ची, बाबा ने कैसे आप बच्चों को, याद करने के लिए बुला लिया। तब बाबा ने संदेश में बताया कि यह कोई तुम्हारा भारत नहीं है जहाँ बहुत जिज्ञासु हैं और कोई चीज़ रह जाये तो कोई जिज्ञासु लेकर आ जायेगा। यहाँ तो आपेही पूज्य और आपेही पुजारी बनकर चलना पड़ेगा। आप सबने बाकी सब चीजों की तो तैयारी कर ली है परंतु दीप प्रज्वलन के लिए माचिस की डिब्बी नहीं ली है। जब हमने दादी से यह मैसेज सुना तो अपना सामान देखा, पाया कि मैच बॉक्स नहीं था। हम सब मैच बॉक्स लेकर प्रदर्शनी के स्थान पर गये और बहुत ही अच्छी सेवा हुई।

ऐसा ही एक दूसरा मिसाल है, सन् 1973 में भारत सरकार ने इन्कम टैक्स के कानून में यह परिवर्तन करना चाहा कि हरेक संस्था को जो भी धन दान में मिलता है तो उसके पास हरेक दाता का नाम और पता आदि होना चाहिए। अगर यह बात कानून बनती तो यज्ञ कारोबार में भंडारी-प्रथा खत्म हो जाती किंतु सरकार ने संसद में जब यह बात रखी तब इसके लिए एक संसदीय कमेटी का गठन किया तथा निश्चित किया कि वो जैसा कहेगी वैसा ही करेंगे। संसदीय कमेटी ने 12 अगस्त, 1975 के दिन रिपोर्ट पेश की और कहा कि संस्थाओं में भंडारी प्रथा चालू ही रखनी चाहिए।

बुद्धि की तार क्लीयर

तेरह अगस्त को मैं मधुबन जाने के लिए मुंबई से निकला और 14 अगस्त को हम लोग आपस में इस बारे में मीटिंग कर रहे थे कि भंडारी प्रथा यज्ञ में होनी चाहिए या नहीं। इस बारे में कई राय निकली। उस समय गुलजार दादी आबू में नहीं थी, शील दादी आबू में थी। जब शील दादी को बाबा के पास संदेश प्राप्त करने अर्थ भेजा गया तो अचानक ही शिवबाबा की पधरामणि शील दादी के तन में हो गई। तब बड़ी दीदी ने पहला ही सवाल बाबा को पूछा कि आप अचानक शील बहन के तन में क्यों आ गये। शिवबाबा ने उत्तर दिया कि भंडारी सिस्टम जैसी यज्ञ की बहुत बड़ी बात के बारे में श्रीमत देने के लिए मुझे स्वयं आना ज़रूरी लगा और इस शील बच्ची की बुद्धि की तार बहुत क्लीयर है इसलिए मैं इसके तन में आकर आप बच्चों को श्रीमत देता हूँ। परिणामरूप शिवबाबा की श्रीमत के आधार से भंडारी-प्रथा यज्ञ में चालू रही।

ऐसे ही शील दादी जब लंदन ईश्वरीय सेवार्थ गई तो वहाँ पर ऑक्सफोर्ड रिट्रीट सेन्टर के लिए बात

चल रही थी। रिट्रीट का स्थान दादी जानकी सहित सबको पसंद था और इसके बारे में तुरंत निर्णय लेना था। इसलिए शील दादी द्वारा बाबा के पास संदेश भेजा गया और बाबा ने छुट्टी दी, फलस्वरूप ऑक्सफोर्ड रिट्रीट सेन्टर की स्थापना हुई।

यहाँ पर मेरा एक निजी अनुभव लिखना चाहता हूँ। मातेश्वरी जी पूना में थी और उन्हें 11 अप्रैल, 1965 को डॉक्टर को दिखाने के लिए मुंबई आना था और 12 अप्रैल की डॉक्टर की अप्वाइंटमेंट थी। परंतु पूना के बहन-भाइयों के प्रेमपूर्वक आग्रह पर मैंने मातेश्वरी जी के डॉक्टर से फोन पर बात करके 19 अप्रैल, 1965 की अप्वाइंटमेंट ली और मातेश्वरी जी 18 अप्रैल को मुंबई हमारे घर पधारी। उन्नीस अप्रैल को मातेश्वरी जी को मेरी लौकिक बड़ी बहन डॉ. अमीला बहन हॉस्पिटल लेकर गई और डॉक्टर ने जो कुछ कहा, उसके फलस्वरूप मेरी बड़ी बहन द्वारा मुझे मालूम पड़ा कि मातेश्वरी जी का कैंसर तीव्र गति से फेफड़ों की ओर आगे बढ़ रहा है और मातेश्वरी जी का जीवन बहुत लंबे समय नहीं रहने वाला है। डॉक्टर से प्राप्त यह समाचार सुनने से मुझे बहुत दुख हुआ और मैं दूसरे ही दिन अर्थात् 20 अप्रैल के दिन शील दादी के पास गया और उन्हें कहा कि आप बाबा के पास जाइये और उन्हें नीचे मुझसे मिलने के लिए भेजिये। शील दादी ने मना भी किया कि आप ब्रह्मा बाबा से बात कर लो, ब्रह्मा बाबा कहें तो मैं जाऊँगी। मैंने कहा कि अति आवश्यक है, आप बाबा के पास मेरी अर्जी लेकर जाओ कि रमेश बच्चा नीचे आपसे मिलना चाहता है। अगर बाबा अर्जी स्वीकार करें तो आपके तन में स्वयं पधारें। शील दादी ने कहा कि आप संदेश दे दो, मैं पूछकर आऊँगी। मैंने कहा कि मैं आपको संदेश भी नहीं दे सकता, आप बाबा से पूछिए। शील दादी शिवबाबा के पास गई और अव्यक्त बापदादा की पधरामणि शील दादी के तन में हुई। उसके बाद अव्यक्त बापदादा के साथ मेरा जो दो-ढाई घंटे का डायलाग चला वो तो सारे दैवी परिवार को मालूम ही है। उस दिन हमने मम्मा के भविष्य के बारे में जाना। बाद में मम्मा की ट्रीटमेंट भी हुई और डॉक्टर ने 4 जून, 1965 को आबू जाने की छुट्टी दी। हमारी बड़ी बहन मम्मा के साथ आबू गई और बाद में जब वापस आई तो उन्होंने बताया

शीलइन्द्रा दादी के मुँह में टोली खिलाते हुए बाबा

कि मम्मा की तंदुरुस्ती दिन-प्रतिदिन बिगड़ती जा रही है। तब 17 जून, 1965 को गुरुवार के दिन हमने शील दादी को बाबा के पास यह संदेश ले जाने के लिए कहा कि बाबा हमको किसी भी तरह से मातेश्वरी के अंतिम संस्कार में शामिल होना ही है। हमने आज तक कभी कुछ नहीं माँगा, इतना करें कि हम मातेश्वरी के अंतिम संस्कार में शामिल हो सकें। तब शील बहन ने हम पर गुस्सा किया कि तुम्हारी जीभ से कैसे ये शब्द निकल सकते हैं कि मैं मातेश्वरी के अंतिम संस्कार में पहुँच जाऊँ। मैंने शील दादी को कहा कि आपका फर्ज है बाबा के पास संदेश ले जाना, मैं आपको ज्यादा नहीं बता सकता। आज्ञाकारी शील दादी बाबा के पास गई। जवाब में बाबा ने संदेश दिया कि बच्चे ड्रामा में होगा तो तुम अवश्य ही पहुँच जाओगे। चौबीस जून, 1965 को मातेश्वरी ने शरीर छोड़ा। निर्वैर जी, दादी प्रकाशमणि जी और मुंबई की सीता माता ट्रेन में आबू आने के लिए निकले और हम पाँच लोग – मैं, ऊषा, शील दादी, नारायण दादा और नलिनी बहन दूसरे दिन हवाई जहाज से निकले और टैक्सी द्वारा मेहसाणा पहुँचे। वहाँ से दिल्ली मेल पकड़ आबू रोड़ पहुँचे। बाद में ऊपर श्मशान घाट पहुँचकर मातेश्वरी जी को अंतिम विदाई दी। ऐसी हमारी शील दादी प्रति हमारी सादर श्रद्धांजलि!

******

कोलाबा सेवाकेन्द्र की **ब्र.कु. गायत्री बहन** जिन्होंने 8 साल तक दादी के अंग-संग रहकर सेवायें की, दादी के साथ के अपने अनुभव इस प्रकार सुनाती है –

शीलइन्द्रा दादी, दादी मनमोहिनी की छोटी बहन थी, कुमारी थी। शुरू में यज्ञ में जब पूरे के पूरे परिवार समर्पित हुए तो दादी का परिवार भी समर्पित हुआ। दादी का लौकिक परिवार बहुत रईस था। दादी सुनाती है, हमारी एक कोठी थी। उसमें एक कमरे से दूसरे में जाने में ही आधा घंटा लग जाता था। हमने कभी बालों में कंघी खुद नहीं की, सब नौकर-चाकर करते थे। यज्ञ में समर्पित होने वाले परिवारों में दादी का परिवार सबसे बड़ा था। इसलिए सिंध में हल्ला मच गया। दादी के चाचा लोकूमल पिकेटिंग करने वालों में सबसे आगे थे। ओम मण्डली पर केस भी इन्होंने किया।

शील दादी को बाबा शहजादी कहते थे। दादी सचमुच में शहजादी थी। उनका बोलना-चलना, रहना, विचार सब शहजादी की तरह रॉयल थे। दादी हरेक काम में बिल्कुल एक्यूरेट थी। कहीं जाना होता तो दादी 10 मिनट पहले ही तैयार हो जाती थी। हमेशा एलर्ट रहती थी। दादी की इन्हीं विशेषताओं के कारण बाबा इनको मुंबई का गवर्नर कहता था।

दादी यज्ञ के प्रति बहुत वफादार थी। शील दादी की लौकिक भाभी कमला चेनराय उस समय मुंबई में जसलोक हॉस्पिटल चलाती थी। बाबा ने दादी को उनकी सेवा के लिए मुंबई भेजा। उन्होंने फिर बाबा को बेगरो पार्ट में धन की मदद की। लौकिक भाई ने मुंबई में सेवा के लिए फ्लैट खरीद कर दिया। बाबा ने नवीन मदर और शीलइन्द्रा दादी को मुंबई में सेवा के लिए भेजा। दादी जी ने 1970 से 1996 तक मुंबई, गामदेवी सेवाकेन्द्र का बड़ी कुशलता से संचालन किया।

दादी कमलसुन्दरी

दादी कमलसुन्दरी मेरठ में रहकर अपनी सेवायें दे रही थी। आप यज्ञ की नामीगिरामी संदेशी थी। शुरू में आपके द्वारा सतयुगी दुनिया के कई नये राज़ खुले इसलिए आपको सभी देवता दादी के नाम से जानते थे। आपकी योगस्थिति बड़ी पावरफुल थी, बाबा के साथ क्लीयर लाइन थी। रग-रग में यज्ञ के प्रति प्रेम भरा था। इकॉनामी का पक्का संस्कार था। अंत तक भी कर्मरत रही। आप पूर्ण नष्टोमोहा, समय की पाबंद, मर्यादाओं और धारणाओं में बड़ी दृढ़ थी। अंतिम स्थिति एकदम उपराम थी। आपने 8 मई, 2007 को अपना पुराना शरीर छोड़ बापदादा की गोद ली।

दादी कमलसुन्दरी ने अपने मरजीवा जन्म का अनुभव इस प्रकार सुनाया है –

'क्या बताऊँ, सारे कल्प में वर्तमान जीवन एक बहुत ही अजीब जीवन है। मैंने इस जीवन में चार बार जन्म लिया। एक जन्म तो जैसे सभी का होता है, वैसे लिया ही। इस जन्म से मेरा अभिप्राय है – 'शारीरिक जन्म लेना।' इसके बाद माता-पिता ने लालन-पालन करके बड़ा किया और फिर विवाह कर दिया। इसे मैं अपना दूसरा जन्म मानती हूँ क्योंकि कन्या के लिए विवाह एक घर से मरकर दूसरे घर में जन्म लेने के समान होता है। विवाह होने पर उसे एक प्रकार से माता-पिता से और मायके वालों से दैहिक नाते तोड़कर ससुराल में तथा ससुराल वालों से नया नाता जोड़ना होता है। कन्या के समय का अलबेला, निश्चिन्त, स्वतंत्र और पवित्र जीवन समाप्त होकर अब उसका पराधीन, परतंत्र और चिन्ताओं से भरा, जिम्मेवारी का जीवन प्रारंभ होता है जिसमें उसे कदम-कदम पर दूसरों की बातें सुननी पड़ती हैं और सहन तथा त्याग करना पड़ता है। ये दो जन्म तो प्रायः हरेक नारी को इस कलियुगी विकारी संसार में लेने ही पड़ते हैं, परन्तु मैंने दो जन्म इनके अलावा भी लिये। आप सोचते होंगे कि वे दो जन्म कौन-से थे?

दो और जन्म

जब मैंने ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त किया तब वह मेरा एक नया जन्म था। इसे मैं इसलिए 'नया जन्म' मानती हूँ क्योंकि अब मैंने परमात्मा को पिता के रूप में अपनाया और मीरा की तरह विकारी संसार की रीति-रस्म

और लोक-लाज छोड़ी। अब परमपिता परमात्मा जो सद्गुरु के रूप में मिले तो सभी दैहिक नातों को भूलकर, उनके 'मामेक शरणं व्रज', 'सर्वधर्मान् परित्यज्य' के मंत्र के अनुसार उनसे ही आत्मिक नाता जोड़ना पड़ा। 'मेरे तो गिरिधर गोपाल दूसरा न कोई' इस वचन को निभाने के लिए बुद्धि में एक पतिव्रता नारी की तरह उस निराकार परमात्मा को ही मन में बसाया, बाकी इस संसार के विनाशी नाते तथा कर्मों के खाते भुलाने पड़े।

यह मरना भी कठिन था और जन्म लेना भी कठिन था क्योंकि मैंने पहले जो दो जन्म लिये थे, जिनका मैं पहले वर्णन कर चुकी हूँ, उनमें इतना सहन नहीं करना पड़ा और बुद्धि को भी इतना पुरुषार्थ नहीं करना पड़ा जितना कि अलौकिक जन्म अथवा मरजीवा जन्म लेने पर। इस अलौकिक जीवन में वर्तमान कलियुगी विकारी संसार को बुद्धि से भुलाने तथा मन से बिसारने का पुरुषार्थ था और सभी लौकिक रिश्तेदारों को देखते हुए भी बुद्धि से उन नातों को याद न करके अविनाशी आत्मिक नाते को याद करना था। जन्म-जन्मान्तर से आत्मा के जो संस्कार पक्के हो गये थे, उन्हें बिल्कुल मिटाने की मेहनत कोई कम मेहनत न थी बल्कि यह भी एक तरह से मरना और एक तरह से जीना था। पाँव फर्श पर होते हुए भी बुद्धि को अर्श पर रखने का यह पुरुषार्थ था। और तो क्या, स्वयं अपनी देह को भूलकर विदेही बन जाने का यह अभ्यास था और कदम-कदम पर, पतियों के भी पति परमेश्वर की जो मत मिले, उस पर ही चलने तथा मर-मिटने की टेव मन को डालनी थी। पुराने सिर (पुरानी बुद्धि) को काट कर, तली पर रखकर, दिव्य बुद्धि के दाता परमपिता से नया शीश अर्थात् दिव्य बुद्धि लेने की यह अनोखी बात थी। इसलिए ही तो इस जीवन को 'मरजीवा जन्म' कहा गया है और इस जन्म के कारण ही तो सच्चे ब्राह्मणों को 'द्विज' अर्थात् 'दूसरा जन्म लेने वाला' माना गया है। गोया शुद्र (क्षुद्र) जीवन का अंत करके अब ब्राह्मण (पवित्र) बनने का अथवा कीड़े से बदलकर भृंगी बनने का सवाल था।

अतीन्द्रिय सुख वाला जीवन

बहुत-से यज्ञ-वत्सों ने यह जन्म लिया और उनकी तरह मैंने भी यह अलौकिक जन्म अथवा जीवन लिया। अत: अब हम 'ब्रह्ममुख-वंशावली' अर्थात् ब्रह्मा बाबा के मुख से (मुख द्वारा दिये गये ज्ञान से) पैदा हुए ब्राह्मण-'ब्रह्माकुमारियाँ', 'ब्रह्माकुमार' कहलाये। यज्ञ-पिता और यज्ञ-माता द्वारा ही हमारा लालन-पालन और हमारी शिक्षा शुरू हुई। बड़ी आयु होते हुए भी अब फिर से इस ईश्वरीय गुरुकुल में हमारा न्यारा, प्यारा और निश्चिन्त विद्यार्थी जीवन प्रारंभ हुआ और ईश्वरीय विद्या के अध्ययन में ही व्यस्त हम ब्रह्मा बाबा तथा सरस्वती मैया के रूहानी धर्म के बच्चे (Adopted Children) बने। अहा, इस अलौकिक जीवन के सुख का क्या वर्णन करें! नित्य-प्रति ज्ञान की मीठी-मीठी बातें सुनते, अलौकिक तथा पारलौकिक माता-पिता का नि:स्वार्थ और आत्मिक स्नेह पाते, ईश्वर अर्पण हुए धन से, सच्चे ब्राह्मणों द्वारा बनाया पवित्र ब्रह्मा-भोजन लेते, ईश्वरीय कुटुम्ब में रहते, हमारा यह नये प्रकार का बचपन तो हमें कभी स्वप्न में भी नहीं भूल सकता। अतीन्द्रिय सुख वाला यह जीवन भी सभी ब्रह्मा-वत्सों ने पाया। परन्तु मेरा जो चौथा जन्म

हुआ, वह किसी-किसी ने ही पाया।

मेरा चौथा जन्म

हुआ यह कि एक बार मेरे जीवन में फिर पलटा आया। शिव बाबा को यज्ञ-वत्सों, यज्ञ-माता और यज्ञ-पिता को यह अनुभव कराना था कि सतयुग में देवताई जीवन कैसा होगा। उस समय के संस्कार कैसे होंगे और खान-पान आदि की रीति कैसी होगी। अत: उस करन-करावनहार, दिव्य-दृष्टि के दाता, दिव्य-दृष्टि विधाता प्रभु ने मुझे एक और जन्म दिया। कैसे? अनायास ही एक दिन शिवबाबा ने विशेष प्रोग्राम दिया। उसके अनुसार, मैं अलग ही एक कमरे में कई दिन तक रही। मुझे भोजन करने के लिए मना थी। थोड़ा फल और दूध लेती थी और न किसी की बात सुनती थी, न किसी से करती थी और न किसी अज्ञानी व्यक्ति को देखती थी। निरंतर योगाभ्यास की आज्ञा मुझे मिली हुई थी। एक सूर्यमुखी फूल की तरह मेरी दिनचर्या थी। शिवबाबा की याद ही मेरा एकमात्र काम था, बस! इस प्रोग्राम के परिणामस्वरूप मेरे इस जीवन के सभी संस्कार तिरोभावित (Merge) हो गये। इस संसार की सभी स्मृतियाँ गुम हो गई, सभी दैहिक नाते भूल गये और दृष्टि-वृत्ति सब पलट गई। मैं जीती-जागती तो थी परन्तु मुझे अपनी देह का नाम, आयु वा परिचय कुछ भी याद न रहा। मेरे जो लौकिक संबंधी थे, उनकी भी मुझे पहचान तथा स्मृति न रही। यहाँ यज्ञ में आने के बाद जो मेरे दिव्य संबंधी अर्थात् यज्ञ-निवासी भाई-बहनें थे, इनके भी नाम आदि मुझे सब भूल गये।

बाबा, मम्मा और कमलसुन्दरी दादी

सतोप्रधान संस्कारों का प्रादुर्भाव

मैंने अपने-आपको भविष्य की, सतयुगी सृष्टि की एक दैवी राजकुल की बहुत छोटी-सी कन्या के रूप में अनुभव किया। वहाँ की ही भाषा तथा बोलचाल मेरे मुख से धीमे-धीमे स्वर से निकलती थी। वहाँ के देवी-देवताओं जैसे ही

सतोप्रधान संस्कारों का मेरे मन में प्रादुर्भाव हुआ। मैं काम, क्रोध, लोभ आदि का अर्थ, व्यवहार या विचार जानती तक न थी। इस कलियुगी संसार की भाषा, चेष्टा, हाव-भाव, रीति-रस्म आदि को समझती तक न थी।

सतयुगी सृष्टि का स्पष्ट ज्ञान

मेरे नेत्र वही थे परन्तु देखने वाला मन बदल गया था। मैं दिव्य दृष्टि से सभी को देखती थी। त्रिकालदर्शी परमपिता परमात्मा ने अपनी शक्ति से मुझे कुछ समय के लिए ऐसा कर दिया था कि जो-जो भी यज्ञ-वत्स मेरे सामने आते, मेरे मन में उनकी वह सूरत-सीरत, उनका वह नाम-धाम, वह संबंध और कर्त्तव्य स्पष्ट रूप से अंकित हो जाता जोकि भविष्य में सतयुगी सृष्टि में उन्हें मिलना था। मुझसे यज्ञ-वत्स कई बातें पूछते कि 'आप कौन हो' तो मैं अपने-आपको भविष्य की सतयुगी सृष्टि में एक शहजादी (राजकुमारी) महसूस करने के कारण अपना वही दैवताई नाम-धाम, आयु आदि बताती और जब वे पूछते कि फलां जो यज्ञ-वत्स है, यह कौन है? तो उसे भी मैं सतयुगी राजकुमार या राजकुमारी या दास या दासी या सखी आदि जिस रूप में देखती, उसी का वर्णन करती। कौन-से राजा का राज्य है, कौन मेरे माता-पिता हैं, उनका भी पता मैं देती थी। मेरा ऐसा पार्ट लगभग एक-डेढ़ मास चला।

दैवी शाहजादी

मैं सतयुगी दैवी राजकुमारियों की तरह बहुत ही थोड़ा खाती थी। दिन-भर में एक-दो बार दूध के दो-चार चम्मच ही लेती थी। इतना बड़ा शरीर था, सभी सोचते कि यह इतने दिन तक इस प्रकार अल्प भोजन पर कैसे चलेगी? परन्तु मुझे कुछ भी कमजोरी अनुभव नहीं होती थी। एक छोटी-सी दैवी शहजादी की तरह ही मेरी चाल-ढाल, मेरा खान-पान और मेरा सारा व्यवहार था।

डेढ़ मास मानो गुम थी

उन्हीं दिनों मेरे लौकिक रिश्तेदार भी यज्ञ में मुझसे मिलने आये थे, परंतु मैंने किसी को भी नहीं पहचाना था। जब मेरा यह पार्ट समाप्त हुआ तब भी बहुत दिनों तक मुझे अपने दैहिक नाम, देह के संबंधियों का परिचय तथा यज्ञ-वत्सों के भी नाम आदि याद न थे। कई दिन तक जब मुझे यज्ञ-वत्सों का तथा मेरे मरजीवा जीवन का परिचय याद दिलाया जाता रहा, तब मेरा पहले वाला अर्थात् यज्ञ का जीवन मुझे याद हो आया और दिव्य दृष्टि पर आधारित देवताई जीवन का पार्ट हल्का हुआ। तब मुझे यज्ञ-वत्सों ने बताया कि डेढ़ मास मेरा जीवन बिल्कुल ही बदला हुआ था और एक दैवी शहजादी की तरह था। मुझे तो अब उस डेढ़ मास के जीवन का बिल्कुल पता तक न था। बस, मैं यही जानती कि इस डेढ़ मास के समय में मैं कहीं गुम थी, पता नहीं कहाँ थी। इसे मैं अपना चौथा और विचित्र जन्म मानती हूँ जो कि स्वयं परमपिता परमात्मा की दिव्य शक्ति के प्रभाव से कुछ काल के लिए हुआ।

******

नोएडा सेवाकेन्द्र की **मंजू बहन** जिन्होंने 17 साल दादी के अंग-संग रहकर उनकी पालना ली, अपना अनुभव सुनाती है –

यज्ञ से विशेष प्यार

दादी 24 साल की उम्र में यज्ञ में आई। यज्ञ के प्रति बहुत उच्च भावना थी। दादी को लौकिक परिवार से जो कुछ भी मिलता, दादी अपने लिए कुछ न रख सीधे यज्ञ में देती। हमसे भी यही अपेक्षा रखती कि हमें भी लौकिक से जो मिले, हम सारा यज्ञ में दे, अपने लिए खर्च न करें। वह समझती थी, क्योंकि हम यज्ञ के हैं तो हमें प्राप्त हर चीज, बाबा के यज्ञ की अमानत है। हमने उन्हें बीमारी में भी कभी दो रुपये का फल खरीदकर खाते हुए नहीं देखा। किसी भाई-बहन ने ला दिया तो खा लिया, बाबा की भंडारी के पैसे से फल मँगवाकर खायें, यह उन्हें अच्छा नहीं लगता था। डॉक्टर के कहने पर अगर हम युक्ति से फल मँगवाते भी तो वे तुरंत पहचान लेती थी।

योग की पावरफुल स्थिति

अमृतवेला बहुत नियमित था। अपने आप दो बजे उठकर योग करती, बीच में थोड़ा आराम लेती फिर हम लोगों के साथ योग करती। मैंने जब सेन्टर पर रहना शुरू किया तब मैं नौकरी करती थी। उन्हें इतनी जल्दी उठकर योग करते देख मुझे भी होता कि मैं भी योग करूँ। एक-दो बार मैं दो बजे योग के लिए उठी तो उन्होंने मना किया। कहती थी, मैं तो फिर भी दिन में आराम कर लूँगी, तुम नौकरी पर जाओगी तो दिन में आराम का समय नहीं मिलेगा, रात तक थक जाओगी, बीमार पड़ जाओगी। इसलिए मुझे जल्दी उठने से मना करती। कई बार मैं देखती कि योग के लिए बैठे है तो मैं भी बैठ जाती तो मुझे देख खुद लेट जाते, आँखें बंद कर लेते ताकि मैं भी सो जाऊँ।

मैंने उन्हें बीमारी में भी कभी अमृतवेला मिस करते हुए नहीं देखा। एक बार उन्हें 105 डिग्री बुखार था तो भी कमरे में बैठकर योग किया। ऐसे समय उन्हें चाहना रहती कि सब बहनें मेरे साथ कमरे में ही योग करें जिससे उनको सकाश मिले। जब स्वस्थ होती तो कभी भी कमरे में, बिस्तर पर योग नहीं करती, ना हमें करने देती। दादी का योग बहुत पावरफुल था। मुझे दादी के योग ने ही समर्पित कराया। मुझे दादी की योग-दृष्टि से ही ऐसा अलौकिक अनुभव हुआ जैसेकि मैं यहाँ पर नहीं, एकदम शान्ति की दुनिया में हूँ और मैं बाबा की बन गई। योग कराते समय दादी जी लगातार एक घंटा बिल्कुल स्थिर, एक ही पोज में बैठे रहते। हम हिलते तो कहते, तुम्हारा योग ठीक नहीं है, चंचलता है।

त्यागमूर्त

दादी में त्याग भावना बहुत थी। उनके कपड़े फट जाते तो उन्हें चित्ती लगाकर भी पहनती। दादी मेरे आगे सारे फटे कपड़े लाकर रख देती कि इन्हें सिलाई करो। मैंने लौकिक में कपड़े पर कभी चित्ती नहीं लगाई थी। मैं उलटा-सीधा लगा देती तो उधड़वाकर दुबारा सिलवाती। हम अक्सर दादी को कहते, आप भी बड़ों दादी हो, आप अच्छे कपड़े पहनो तो मना करती। कभी नया कपड़ा आता तो बाबा के घर मधुबन भेजती, खुद पुराना पहनती रहती। कपड़े धुलाई के समय साबुन का पानी वेस्ट न जाए, इसकी भी सावधानी देती।

उनके जीवन में सादगी बहुत थी। अगर कभी दुनियावी फैशन के हिसाब से हम उन्हें नये स्टाइल की चीज लाकर देते थे तो स्वीकार नहीं करती थी। मैं नौकरी करती तो उनको जरूरत की अगर कोई चीज लेकर आती तो वे मना करती। कहती कि तुम पैसों को अपना समझती हो इसलिए लाती हो, सब कुछ बाबा का है। वे चाहती कि हर चीज यज्ञ में जाये। कभी हम कहते, दादी, देखो, सबके बड़े-बड़े सेवाकेन्द्र बन गए, आप भी अपना बड़ा बना लो तो कहती कि जो यहाँ पर बड़े-बड़े महलों में रहेंगे तो देखना, उन्हें सतयुग में बड़े महल नहीं मिलेंगे। मुझे तो सतयुग में बड़े महल में रहना है, यहाँ नहीं, उन्हें बनवा लेने दो। जब दादी बीमार थी तो मैं दादी के साथ डेढ़ साल रही। बीमार होते भी दादी रसोई में अपनी सब्जी खुद बनाती। भोग के समय आ जाती और मदद करवाती। उन्होंने अपने शरीर को अंत तक यज्ञ सेवा में लगाया।

पालना के संस्कार

जिज्ञासुओं के प्रति उनकी बहुत अच्छी भावना थी। जो नियम-मर्यादा पर चलते, उन पर जान कुर्बान करती, उन्हें अच्छे से अच्छा खिलाती, अच्छी पालना देती। अच्छी से अच्छी चीज भी अपने प्रति इस्तेमाल न कर उन्हें सौगात में दे देती पर अगर यज्ञ मर्यादा के विपरीत कुछ होता तो वे बर्दाश्त नहीं करती थी। उनकी पालना में पले सभी विद्यार्थी ईश्वरीय मर्यादाओं का स्वरूप हैं। दादी माताओं को विशेष नियम-धारणाओं में पक्का करती। क्लास में माताये पूरी ड्रेस में आयें, रोजाना क्लास-योग करें, इस पर पूरा ध्यान देती। वे समय की बड़ी पाबंद थी। क्लास में हमेशा पाँच मिनट पहले पहुँचती। जैसे वे खुद करती, हमसे भी वही अपेक्षा रखती।

बाबा से विशेष प्यार

उनके मन में बाबा के प्रति बहुत सम्मान था। कभी लेटते समय और कभी खाना खाते समय कुछ न कुछ बाबा की बात सुनाती रहती थी। कभी खाने में सिन्धी कढ़ी बनती तो कहती, बाबा को कढ़ी के साथ बूंदी बहुत पसंद थी। जो चीजे बाबा को पसंद थी, वही चीजे 18 जनवरी को भोग के समय बनवाती। बड़ी दादी से भी इतना ही प्यार था जितना बाबा से। जब कभी दादी का फोन आता और दादी उन्हें मधुबन बुलाती तो वे बहुत खुश हो जाती थी। तबीयत खराब होने पर भी कहती थी, मुझे दादी ने नहीं, बाबा ने बुलाया है, जाना जरूरी है। अगर कभी किसी भाई को कोई सेवा दी और वह पूरी किये बिना ही चला गया तो हम कहते, दादी, उसे बुला लें तो सिन्धी में कहती, "मिंजो तो बाबा बैठो, वो पानो कंदो (मेरा तो बाबा बैठा है, वो अपने आप करेगा)। बाबा का कार्य है, पूरा हो ही जायेगा, इससे नहीं तो बाबा किसी और से करा लेगा।"

स्वर्ग का वर्णन

दादी संदेशी थी। वे अक्सर स्वर्ग के साक्षात्कार करती थी और वहाँ की बातें सुनाया करती कि कैसे सतयुग में दिल्ली से लेकर जयपुर तक एक ही महल होगा। शादी के बाद राजकुमारी के साथ 25 दासियाँ जाती है। बाबा पहले नंबर के कृष्ण तो बनेंगे ही, बाद में चौथे नंबर के नारायण (नारायण प्रथम का पड़पौता) भी बनकर आयेंगे और गद्दी पर बैठेंगे। सतयुग में यहाँ

जैसी लाइट नहीं होगी, महलों में हीरे लगे होंगे जिनसे रोशनी होगी। इस प्रकार की कई बातें हमें उनसे जानने को मिलती। उनके ट्रांस की स्थिति में एक अजीब-सा चुंबकीय आकर्षण था। ध्यान के माध्यम से, सतयुग में जाने पर जब वे खड़े होकर रास करती तो क्लास का माहौल एकदम बदल जाता, सब उनके साथ रास करने लगते।

एक बार दादी जी ने सुनाया था कि जब बेगरी एरिया चल रहा था तो बुजुर्ग बाबा सब ब्रह्मावत्सों के खाने के बाद ही खाते थे, मेरा ध्यान का पार्ट चल रहा था। ध्यान में सोने का नौलखा हार देखा। बाबा को कहा कि वहाँ पियू (ब्रह्मा बाबा) का शरीर कमजोर हो गया है, बहुत तकलीफ है, आप मुझे यह नौलखा हार दे दो, मैं बाबा को दूँगी। बाबा ने कहा, जाओ बच्ची, ले जाओ लेकिन नीचे आकर देखा, हार है ही नहीं, तो मैं कहने लगी, मेरा हार कहाँ गया जो बाबा ने मुझे दिया था। दीदी ने कहा, ऊपर भूल आई होगी, फिर से ऊपर जाओ। देवताई पार्ट में वो समझ नहीं थी कि साक्षात्कार में देखी चीज़ यहाँ नहीं आ सकती।

******

मेरठ सेवाकेन्द्र की संचालिका **विनोद बहन** जो सन् 1965 से 1980 तक देवता दादी के साथ रहीं, अपना अनुभव सुनाती हैं –

परीक्षा में पास हुई

दादी जी सन् 1958 में मेरठ आई। इससे पहले वे दिल्ली जमुना के कठे पर व कमला नगर सेवाकेन्द्र पर सेवायें करती थी। जब दादी जी यज्ञ में आई तो बच्चों को साथ लेकर आई थी, फिर परिवार वाले आकर बच्चों को वापस ले गये। जब यज्ञ हैदराबाद-सिंध से कराची चला गया तो वे कुछ समय के बाद हैदराबाद से कराची पहुँची और बाबा से मिली। बाबा ने कहा, मैं इसका मुखड़ा नहीं देखूँगा, देरी से आई है। इतना सुनते ही दादी जी को यादगार ग्रंथ रामायण की सीता की याद हो आई। साथ-साथ दृढ़ निश्चय था कि मैं सीता, रावण की जेल से निकलकर राम की शरण में तो आ ही गई हूँ, अब राम मिलेंगे अवश्य ही। ऐसा ही हुआ। उसी रात बाबा, अचानक ही उनके बेड के सामने जाकर खड़े हो गये। बाबा ने यह भी जैसे उनके निश्चय की परीक्षा ली थी जिसमें वे पास हो गईं। उन्होंने अपने लिए कभी कुछ नहीं चाहा। हड्डी-हड्डी सेवा में लगाई। अन्य आत्माओं का सब कुछ सफल कराने की विधि भी दादी को बहुत अच्छी आती थी। जो भी धारणायें हमारे जीवन में आईं, सब दादी जी की कमाल है।

बाबा के साथ क्लीयर लाइन

दादी जी के ट्रांस की विशेषता यह थी कि वे खुली आँखों से ट्रांस में जाती थी। जब वे स्वर्ग की बातें सुनाती तो इतना खो जाती कि महसूस होता कि दादी वहीं है। उनका सुनाने का तरीका ऐसा होता कि हमें लगता कि हम भी स्वर्ग में हैं। तीन-चार घंटे स्वर्ग की क्लास कराना उनके लिए साधारण बात थी। वे जब भोग लगाती, तो कई बार स्वर्ग की शहजादी उनमें आ जाती फिर रास प्रारंभ हो जाती। यदि कोई मर्यादा का उल्लंघन करके क्लास में आता तो दादी को तुरंत वायब्रेशन आ जाता और वे क्लास में बोल भी देती। योग कराते समय किसके मन में क्या विचार

चल रहे है, कौन बाबा की याद में है, दादी को यह भी पता चल जाता। इसका कारण था कि दादी की बाबा के साथ बुद्धि की लाइन बहुत क्लीयर थी।

नष्टोमोहा

दादी में, 96 वर्ष की आयु में भी आलस्य नाम की कोई चीज़ नहीं थी। वे सदा उमंग-उत्साह में रहती थी। यज्ञ का हर कार्य स्वयं करती। दूसरों से उन्होंने कभी सेवा नहीं ली। दादी जी नष्टोमोहा थी।

******

बचपन से दादी की पालना लेने वाली मवाना की **अमिता बहन** सुनाती हैं –

रग-रग में यज्ञ प्रति प्रेम

एक बार मधुबन में दादियों का 70वां वर्ष मनाया गया। उस समय वार्षिक मीटिंग भी थी। मीटिंग में भारत तथा नेपाल से हजारों बहनें-भाई आये हुए थे। कइयों ने उस उपलक्ष्य में दादियों को सौगातें भी दी। देवता दादी को भी बहुत सौगातें मिली। उन सभी सौगात की चीज़ों को गठरी में पैक करके उनके कमरे में पहुँचा दिया गया। दादी ने कहा, इस गठरी को अलग रख दो। कई बहनों ने कहा, दादी, यह चीज़ हमें दे दो, वो चीज़ हमें दे दो। दादी ने इशारा से समझाया, यह सब यज्ञ का है और यज्ञ में ही जायेगा। दादी ने, जो यज्ञ से मिला था उसे रखकर, बाकी सब यज्ञ में पहुँचा दिया। दादी की रग-रग में यज्ञ के प्रति प्रेम समाया था। हर बात में पहले यज्ञ ही याद आता था।

घटनाओं का पूर्व आभास

एक दिन दोपहर में एक माता दादी से मिलने आई। दादी सबसे प्रेम से मिलती थी, किसी को मिलने से ना नहीं कहती थी पर उस दिन दादी ने माता से कहा, अभी नहीं, शाम को मिलने आना। माता को आश्चर्य भी हुआ और थोड़ा ख्याल भी आया कि दादी क्यों नही मिली। वह उदास-सी घर पहुँची, देखा कि घर में चोर घुसे हुए थे, गठरी बाँध ली थी। उसे देखकर चोर गठरी छोड़कर भाग गये। दादी को मानो पहले से ही आभास हो गया था कि नुकसान होने वाला है इसलिए माता को नुकसान से बचाने के लिए ही मिलने से मना कर दिया था। बाद में माता को भी दादी के ना मिलने का रहस्य समझ में आया तो उसको खुशी भी बहुत हुई।

******

मेरठ की **सरोज बहन** दादी के बारे में सुनाती हैं–

ट्रांस का क्लीयर पार्ट

क्लास में आने वाले एक भाई का बेटा, उसके ज्ञान में आने के कई वर्ष पहले खो गया था। जब वह ज्ञान में आने लगा और उसे दादी द्वारा ध्यान में जाने का ज्ञान हुआ तो उसने दादी को, अपने बेटे के बारे में संदेश लाने को कहा। दादी ने तो बच्चे को कभी देखा भी नहीं था। दादी ने कहा, भोग लगवाओ। दादी ट्रांस में गई, बाबा ने एक दृश्य दिखाया कि दिल्ली में एक पुल के नीचे, बच्चा रिक्शे पर सोया हुआ है। उस भाई ने तुरंत दिल्ली में फोन किया, पता किया और वह बच्चा मिल गया। दादी का ट्रांस का पार्ट एकदम क्लीयर था।

जब उन्होंने आँखों का ऑपरेशन कराया तब

डॉक्टर आश्चर्यचकित होकर कहते, आपकी इतनी उम्र होते भी आपको किसी भी प्रकार का बीपी नहीं है। उन्होंने 8 मई, 2007 को 96 वर्ष की आयु में शरीर छोड़ा। अंतिम अवस्था एकदम उपराम थी।

******

ब्र.कु. भावना बहन, हस्तसाल, दादी जी के साथ बिताए गए उन अविस्मरणीय पलों को याद करते हुए कहती हैं –

दादी जी सचमुच मानवी तन में देवताई अवतार थीं। वे सचमुच देवदूत, फरिश्ता थी। साथ-साथ शक्तिस्वरूपा भी थी। ब्रह्माकुमारी जीवन के शुरू के 5 वर्षों में दादी से मिली पालना ने मुझे अचल, अडोल और धारणामूर्त बना दिया। उनके दिल में सदा एक बाबा, बाबा का यज्ञ और सेवा ही रहती थी।

समय की पाबंद

अमृतवेले रिकॉर्ड बजाने वाला भाई थकावट या अन्य किसी कारण से यदि 3.30 बजे का रिकॉर्ड नहीं बजाता तो खुद आवाज लगाकर अलर्ट करती कि समय हो गया है। सुबह ठीक 5.30 बजे क्लास रूम में पहुँच जाती थी और पहले साकार मम्मा-बाबा की कैसेट चलवाती थी फिर योग और मुरली चलती थी। दादी की खड़ाऊँ की आवाज सुनकर हमें पता लग जाता था कि समय हो गया है, दादी पहुँच गये हैं। खड़ाऊँ की आवाज, अलार्म की घंटी की तरह हमें अलर्ट कर देती थी। दिन में बाबा को भोग ठीक 12 बजे लग जाता था। दादी कहती, यह बाबा का दिया हुआ समय है, मधुबन में ठीक 12 बजे भोग लग जाता है तो यहाँ 12.15 भी नहीं होने चाहिएँ। अगर होते है तो आपकी एक्यूरेसी कम है। इसके लिए हमें अल करती थी।

योग में वे साक्षात् देवी की मूर्ति लगती थी, बिल्कु हिलती नहीं थी, यहाँ तक कि उनकी पलकें भी न झपकती थी। ऐसे लगता था मानो मूर्ति को ही बि रखा है।

अपने लिए कुछ नहीं चाहा

दादी जी त्यागमूर्त थी। मेरठ, दिल्ली से दूर पड़ता है। दिल्ली में मीटिंग आदि में जाने के लिए अपनी गाड़ी न होने से तकलीफ होती थी। भाई-बहनें गाड़ी के लिए कहते थे तो मना कर देती थी। उन्होंने कभी अपनी सुख-सुविधा के लिए धन खर्च नहीं किया। वे जहाँ रहती थी, वह मकान पुराने ढंग से बना हुआ था। उनके कमरे से बाथरूम दूर था। भाई-बहनें नये मकान के लिए कहते तो कहती थी, मुझे नहीं चाहिए। जो भी धन की बचत होती, बड़ी दादी को मधुबन में देकर आती, अपने पास नहीं रखती थी, कहती थी, मुझे जरूरत होगी तो दादी देगी। वे डरती नहीं थी। सच्चाई की बात स्पष्ट कह देती थी। कोई उन्हें कुछ कह देता तो उसका बुरा नहीं मानती थी।

बाबा से अटूट प्यार

बाबा का बड़ा फोटो उनके बेड के सामने लगा होता था। आते-जाते जब हम उनके कमरे में देखते तो पाते कि वो लेटे-लेटे बाबा से बातें कर रही हैं। हम पूछते, दादी, आप क्या कर रहे हो तो कहती, मेरा बाबा ही तो है, मैं उनसे बात करती हूँ। बाबा को, यज्ञ को, ध्यान की बातें करते हुए उनमें खो जाती थी, खुशी से झूम उठती थी। उनका लौकिक जीवन कैसा

था, फिर बाबा के कैसे बने, कैसे सब त्याग किया, कैसे बाबा के पास आ गये, सब बातें सुनाती थी। ब्राह्मण जीवन का और भविष्य स्वरूप का (शहजादी की ड्रेस वाला) जो फोटो बाबा ने उनका बनवाया था, उसे देख बड़ी खुश होती थी कि शीघ्र ही मैं यह बनूँगी।

रक्षाबंधन पर जब भाई-बहनों को राखी बाँधती थी तो ध्यान में जाकर बाँधती थी, देखती थी कि अगर किसी की धारणा ठीक नहीं है तो पहले उनसे प्रतिज्ञा करवाती थी, लेटर लिखवाती थी, बाद में राखी बाँधती थी।

बड़ों का सम्मान

कोर्स कराना, भाषण करना, योगशिविर कराना आदि की ट्रेनिंग मुझे दादी जी द्वारा ही मिली। मुझे दादी के पास रहते छह मास ही हुए थे कि गुलजार दादी जी वहाँ मेले की ओपनिंग करने आई। दादी ने, गुलजार दादी से कहा, मेले में शिविर कराने के लिए बहनों को भेजना। गुलजार दादी ने कहा, गुजराती बहनें बहुत अच्छा शिविर कराती है, यह (भावना) करा लेगी। यह सुनकर देवता दादी ने यह नहीं कहा कि अभी तो इसे आये हुए छह मास ही हुए हैं, नई है। गुलजार दादी ने कहा और देवता दादी ने मान लिया। दादी जी, बड़े दादी और अन्य दादियों की हर बात में आज्ञाकारी थे। जब मैं शिविर कराती थी तो बाहर बैठकर सुनती थी कि कैसा सुनाती है। फिर कहती थी, अच्छा ज्ञान सुनाती हो।

किसी से प्रभावित नहीं

माँ का भी प्यार देती थी तो भोजन, टोली आदि बनाना भी सिखाती थी। मैं सादी रोटी, परांठा बना देती थी तो कहती थी, तुम तो सूखा संन्यासी हो, रोज रोटी खिला देती हो। फिर सुनाती कि बाबा ने हमें कैसी पालना दी, माजून खिलाया, इतने प्रकार के भोजन खिलाये आदि-आदि। मैं सेवाकेन्द्र पर नई-नई आई थी, दादी जी सिन्धी शब्द ज्यादा बोलती थी। वे सिन्धी भाषा में जो चीज माँगती थी, मैं लाकर दे देती थी तो कहती थी, होशियार है, समझदार है। कभी मैं बीमार पड़ती थी तो तबीयत का ध्यान रखती थी, दवाई आदि लाकर देती थी। उन्होंने हमेशा देने का ही ख्याल किया, कभी लेने का नहीं। वे सबको समान रूप से चलाती थी, चाहे कोई बड़ा हो या छोटा। किसी के धन या पद-पोजीशन का उनके ऊपर रिंचक भी प्रभाव नहीं पड़ता था।

ऐसी थी हमारी देवता दादी, जो माँ का स्वरूप भी थी तो शक्ति स्वरूपा भी थी। वे व्यक्ति को धारणामूर्त, त्यागी, तपस्वी और हर परिस्थिति का सामना करने योग्य अचल, अडोल बना देती थी।

******

ब्र.कु. सपना बहन, वर्तमान समय ओ.आर.सी. में सेवारत हैं। देवता दादी के साथ के सात वर्षों का अनुभव इस प्रकार बताती हैं –

लौकिक में भी अलौकिक मर्यादा

दादी जब यज्ञ में आई तो 22 साल की थी। दो बच्चे थे, लड़की छह मास की तथा लड़का थोड़ा बड़ा था। पति विदेश में था। पति ने पवित्रता पर झगड़ा किया और ओम मण्डली में आने पर बन्धन लगा दिया। फिर बन्धन तोड़कर, बच्चों को साथ लेकर आई। बच्चों को पिताजी लेने आया तो बच्चों को वापस दे

दिया। अब बेटे ने 70 साल की उम्र में शरीर छोड़ दिया है। जब वे मिलने आते तो दादी उनको गेस्ट हाऊस में ठहराती थी, सेन्टर पर नहीं। वे अपने लौकिक में भी सेवार्थ जाती थी तो यज्ञ के लिए मदोगरी करके आती थी अर्थात् उनका सफल कराके आती थी। यज्ञ की बातें उनको सुनाती थी, कभी लौकिक बातें उनसे नहीं करती थी। एक बार दादी की बेटी अपनी बहू को लेकर आई। बहू ने दादी को कहा, लाओ, मैं आपको नहला दूँ। दादी ने कहा, नहीं, मेरी बच्ची (अर्थात् मैं) नहलायेगी। यह सुनकर उनकी बेटी तथा बहू दोनों बहुत अफसोस से कहने लगी, हमने ना तो दादी से पालना लेने का भाग्य पाया और ना ही अब पालना देने का भाग्य हमें मिल रहा है।

बचत का संस्कार

दादी का सेन्टर भरपूर था, कोई भी चीज़ आती थी, चाहे माचिस भी, सब इकट्ठी करके मधुबन देती थी। चप्पल टूट जाती थी तो उनको गठवा कर प्रयोग करती थी। फटे-घिसे कपड़े ठीक करके पहनती रहती थी। यदि हम उन्हें छिपाकर, पहनने को दूसरे देते थे, तो कहती थी, बाबा के घर का वेस्ट नहीं करना, अभी उनसे काम चल सकता है, वही पहनूँगी। एक बार मेरी चप्पल टूटी, मैंने दादी को बिना पूछे दूसरी पहन ली। दादी ने देखा तो पूछा, तुम्हारी वो चप्पल कहाँ है? मैंने कहा, दादी, वो टूट गई हैं। दादी बड़े प्यार से कहती हैं, नई चप्पल क्यों पहनी मेरे बिना पूछे, तुम पुरानी को टांका लगाकर पहन सकती थी। फिर उनके सामने वही चप्पल टांका लगवाकर कई दिन पहनी। इस प्रकार स्वयं भी फालतू खर्च नहीं करती थी। हमें भी नहीं करने देती थी।

धारणाओं पर ध्यान

हम बहनें एक-दो की चीज़ यदि आपस में यूज़ कर लेते तो बहुत ध्यान रखती और सख्ती से मना करती थी। आपस में व्यर्थ बातें करने से भी मना करती थी। चक्कर लगाती रहती थी यह देखने के लिए कि क्या बातें करती है। एक-दूसरे के बेड पर बहनों को बैठने नहीं देती थी। कन्याओं का आपस में या भाई-बहनों के साथ लगाव-झुकाव ना हो जाए, इस बात में बहुत सावधान रहती थी। भाई से तो क्या, माताओं से भी ज्यादा बात नहीं करने देती थी। कन्याओं को अलबेला नहीं बनने देती थी। किसी नई साथी बहन के आ जाने पर दादी कहती थी, तुमने इसे सफाई के लिए क्यों बोलो, मालकिन क्यों बनती हो? दूसरों से सेवा लेती हो? आदत क्यों बिगाड़ती हो? लौकिक घर से फोन आ जाये तो ज्यादा देर बात नहीं करने देती थी। मैं कहती थी, दादी उनकी तरफ से आया है, तो भी कहती थी, उनका पैसा क्यों खराब कर रही हो। मुझसे पूछती थी, कॉलेज से कितने बजे आयेगी? मैं कहती थी, 2.50 बजे आऊँगी। यदि मैं पाँच मिनट भी लेट हो जाती थी तो वो बाहर धूप में खड़ी होकर इंतजार करती थी। मैं कहती थी, दादी, आप बाहर क्यों खड़े हो? कहती थी, तेरे इंतजार में, कहीं मेरी बालकी को कोई उठा ना ले जाये। अपने हाथों खाना खिलाती थी बड़े प्यार से। फिर कहती थी, इन बर्तनों को अभी साफ कर। इस प्रकार प्यार भी देती थी, सेवा भी सिखाती थी।

अनासक्ति सिखाती थी

एक बार दादी ने शकरकंदी उबाली। मेरे हिस्से

की किसी मेहमान को खिला दी। जब मैं कॉलेज से आई, मेरे लिए स्पेशल एक शकरकंदी, पतीले के पास बैठकर उबाली और मुझे खिलाई। दादी कहती थी, भोजन बाबा की याद में खाओ, आसक्ति से नहीं। मुझसे पूछती थी, तुमको क्या खाना पसंद है? मैं कहती थी, भिण्डी पसंद है, केले की सब्जी बिल्कुल नही खाऊँगी। दादी क्या करती थी, भिण्डी थोड़ी देती थी, केले की सब्जी ज्यादा खिलाती थी। यह भी कहती थी, देवताओं का भोजन बहुत कम होता है। जितना भी फल आता था, गुरुवार को भोग में प्रयोग करती थी। आलू का छिलका कम उतारती थी। मटर का दाना कुर्सी के नीचे चला जाये तो कहती थी, ढूँढ़कर दो। एक दाना भी व्यर्थ नहीं जाने देती थी। सब्जी का साइज एक जैसा कटवाती थी। हमें थोड़े से सर्फ से कपड़े धोने सिखाये।

कभी खाली नहीं रही

दादी मुझे दो बजे उठा देती थी। अमृतवेले योग के बाद सब्जी काटने तथा झाड़ू-पोछा करने में पौने पाँच बज जाते थे, फिर दादी को स्नान कराना, उनके कपड़े धोना, चोटी करना आदि सेवायें करती थी। फिर छह बजे क्लास होती थी। मुरली विनोद भाई सुनाते थे। दादी हफ्ते में दो बार क्लास कराते थे। दादी ने लास्ट तक अपने हाथों से सब्जी बनाई, अमृतवेले के बाद कभी नहीं सोई। कहती थी, अमृतवेले के बाद सोना माना बाबा से शक्ति ली, वो खत्म। मधुबन में होती थी तब भी, कोई हो या ना हो, ठीक 6.30 बजे क्लास में आ जाती थी। हमने उनको कभी खाली नहीं देखा, या तो मुरली पढ़ती थी या योग करती थी।

मैं कितनी खुशनसीब हूँ,
मैंने पालना उनकी पाई,
जो ईश्वर के प्रेम में
अपना सब कुछ छोड़कर आई,
थी त्यागी और तपस्वी एकानामी की अवतार,
बाबा के यज्ञ से था उनको बहुत ही प्यार।
थी पक्की नष्टोमोहा, हमको भी बनना सिखाया,
बन जाओ एकव्रता, यह पाठ हमको पढ़ाया।

******

कमलसुन्दरी दादी, मम्मा और अन्य बहनें

नवसारी सेवाकेन्द्र की निमित्त **बहन गीता**, जिन्होंने लौकिक पढ़ाई पढ़ते हुए दादी से पालना ली, उनके साथ का अनुभव इस प्रकार सुनाती हैं –

साथ खिलाने-पिलाने का संस्कार

देवता दादी में पालना का संस्कार कूट-कूट कर भरा हुआ था। कोई भी चीज़ वे कभी अकेले नहीं खा-पी सकती थी, सबको साथ खिलाने-पिलाने में ही उनको तृप्ति होती थी। एक बार, दादी जी के लिए चाय बनानी थी। दूध कम था। हम दो बहनें साथ थी। एक बहन ने दादी के लिए एक कप चाय बनाई तथा दो गिलासों में पानी डालकर ले आई। एक मुझे पकड़ाया, एक खुद ने पकड़ा। पानी को हम दोनों बहनों ने दादी के साथ-साथ, घूट-घूट कर ऐसे पीया जैसे हम चाय पी रहे हैं। दादी को लगा कि ये भी मेरे साथ चाय पी रहे हैं। यदि हम ऐसा ना करते तो दादी अकेले चाय नहीं पीतो।

सावधानी देने का संस्कार

दादी भरी क्लास में किसी भी बहन या भाई को किसी भी धारणा के प्रति सावधान कर देती थी परन्तु किसी को भी बुरा नहीं लगता था। क्लास पूरी होने पर वह बहन या भाई यही कहता था, हमारी माँ भी तो हमें सिखाती थी, दादी भी तो हमारी माँ हैं, सावधानी दी तो क्या हो गया। पीठ पीछे किसी ने भी, कभी भी दादी की बुराई नहीं की क्योंकि दादी का चित्त हर प्रकार के दुर्भाव से अछूता था। उनके मन में जो कल्याण-भावना थी, वही सब तक पहुँचती थी।

धारणाओं पर ध्यान

दादी माताओं को क्लास में फुल ड्रेस में आने का पाठ पक्का कराती थी। माताओं को भी दादी ने समर्पित ब्रह्माकुमारियों की तरह फुल ड्रेस पहनने की आदत डाली। बाँधेली माताओं को भी ड्रेस के मामले में छूट नहीं देती थी।

सच्ची योगिन

दादी साढ़े तीन बजे उठकर संदली पर बैठ जाती थी और योग में चेहरा लाल-लाल हो जाता था। देखकर हमें लगता था, सचमुच दादी का कनेक्शन बाबा से जुड़ा हुआ है। दिन में आराम करना होता था तो कहती थी, वतन में जा रही हूँ। पाँच मिनट के अंदर दादी सो भी जाती और उठ भी जाती थी। ऐसे लगता था, स्वयं पर इतना नियंत्रण है कि संकल्प के साथ निद्रा और संकल्प के साथ जागृति हो जाती है। दादी की पालना से आत्मा इतनी परिपक्व हो जाती थी कि कोई भी परिस्थिति, कहीं भी, कभी भी उसे हिला ही नहीं सकती थी।

दादा चन्द्रहास

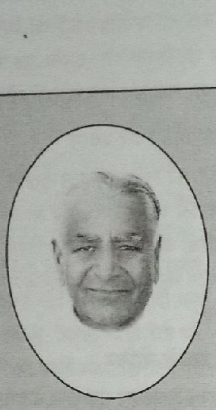

आपका लौकिक नाम माधौ था। चन्द्रहास नाम प्यारे बाबा ने रखा। बाबा लाड़-प्यार से चन्द्रहारा बाबू जी कह बुलाते थे। साकार मुरलियों की टेपरिकॉर्डिंग में आपकी आवाज, बापदादा से भी पहले सुनाई देती है। आपको ज्ञान-रत्नों को जमा करने का विशेष शौक रहा। आप, यज्ञ के आरंभ से ही, बहुत छोटी आयु में, लौकिक के अनेक सितम सहन कर, बंधनों को पार कर बाबा के पास आए, समर्पित हुए। सृष्टि-चक्र का चित्र बनाने में आपका विशेष योगदान रहा। ईश्वरीय सेवाओं के प्रारंभ में आपने मुम्बई में सेवायें दी और बेगरी पार्ट में विशेष मददगार बने। आपको बाबा ने यज्ञ-भवन निर्माण के निमित्त भी बनाया और आपने इस सेवा से बहुतों को सुख दिया। आप बहुत ही निर्माणचित्त, कम खर्च बालानशीन, बापदादा के साथ सर्व सम्बन्धों से सदा लवलीन, सबको आगे बढ़ाने वाले तथा मिलनसार स्वभाव के थे। आप 27 दिसंबर, 2009 को अपना पुराना शरीर छोड़ अव्यक्त वतनवासी बन गये।

मेरा बचपन

मुझ आत्मा का परम सौभाग्य है जो मेरा जन्म उसी हैदराबाद सिन्ध में हुआ जहाँ शिव बाबा के भाग्यशाली रथ ब्रह्मा बाबा का हुआ और ऐसे परिवार में हुआ जिनका सम्बन्ध ब्रह्मा बाबा, जगदम्बा सरस्वती, दीदी मनमोहिनी तथा दादी प्रकाशमणि जी के परिवार से बहुत निकट का था। इसलिए छोटेपन से उन्हों के पास बड़े त्योहारों पर आना-जाना, खेलकूद करना होता रहता था। मेरा लौकिक नाम माधौ था।

बचपन में देखे दुख

लौकिक फ़ादर जापान, कोबे तथा योकोहामा में बिजनेस करते थे। अचानक ड्रामा ने पलटा खाया। कोबे शहर में भयंकर भूकम्प हुआ, उसमें मेरे लौकिक पिता का देहावसान हो गया। उस समय मेरी आयु लगभग 6 मास की रही होगी। इसके बाद आर्थिक कठिनाई होने लगी; दुकान आदि भी बेचनी पड़ी। इस दुःख के कारण मेरी लौकिक माँ भी चल बसी। तब मैं केवल 6 वर्ष का था। तब मेरी लौकिक मौसी जो बड़े धनी परिवार में ब्याही थी, उसने हम दोनों भाइयों को अपने पास बुला लिया (बड़ी बहनों की शादी हो गई थी)। मेरी लौकिक मौसी, जे.टी.चैनराय फर्म के मालिक भाई हासाराम से ब्याही थी। उनका बहुत बड़ा मकान था जिसमें मेरी मौसी के साथ उनके तीन मातेले बच्चे, परिवारों सहित रहते थे। बड़ा बच्चा किसी दुर्घटना में गुजर गया था। उनके दो बच्चे और दो बच्चियाँ (बड़ी

दीदी मनमोहिनी तथा शील इन्द्रा) माँ (क्वीन मदर) के साथ रहते थे तथा दूसरा बच्चा मूलचन्द अपने परिवार (लीलावती तथा हरदेवी, ब्रजशान्ता) के साथ रहता था। तीसरा बच्चा भोजराज भी अपने बच्चों सहित रहता था। फिर एक और दुःख का झटका आया। मेरी लौकिक मौसी का देहान्त हो गया और हम दोनों भाइयों को मौसी का घर छोड़ अपनी नानी जी के पास आना पड़ा। हमारी नानी का घर खातुबद गली में था। जहाँ सब कृपलानी परिवार रहते थे। हमारी नानी, मामा जी भी कृपलानी थे। बाबा का मकान भी हमारे पड़ोस में ही था।

ओम् मण्डली का आरम्भ

जब बाबा ने कलकत्ते से आकर एक छोटे-से पुराने मकान में सत्संग चालू किया तो मेरी नानी ने कहा, दादा जी बहुत अच्छा सत्संग करते हैं जो सुनने वालों को भगवान के दर्शन हो जाते हैं, तो मैं भी खुशी से नानी जी के साथ सत्संग में पहुँच गया। वहाँ क्या देखा कि बाबा गीता उठाकर, इसके एक-दो श्लोक पढ़ते, फिर ज्ञान देना, अर्थ समझाना आरम्भ करते और अन्त में ओम् की ध्वनि लगाते। ओम् की ध्वनि लगाते ही बहुत मातायें आदि ध्यान में चली जातीं, कोई बाबा का हाथ पकड़ कर नाचने लगती, कोई चिल्लाती "सखियो! कृष्ण आया है" इत्यादि। ये सब देख मैं चकित रह जाता कि इन सबको कैसे बिगर कोई साधना के श्रीकृष्ण के साक्षात्कार होते हैं। यह बात सारे शहर में फैल गई। कोई कहने लगा, दादा कलकत्ता से जादू सीखकर आये हैं। उसके बल से भोली-भाली माताओं को ध्यान में भेज देते हैं। खैर, मेरी समझ में कुछ नहीं आया इसलिए मैंने कुछ दि जाना छोड़ दिया। कुछ दिन बाद जब सत्संग बढ़ने लगा तो बाबा ने अपने मकान, जसोदा निवास में सत्संग चालू किया। वहाँ बाबा ने ज्ञान के साथ पवित्र जीवन, पवित्र खान-पान तथा दैवी गुणों पर ज्ञान देना आरम्भ किया। बाबा की वाणी में इतनी शक्ति तथा आकर्षण था जो सुनने वाले फौरन उस पर अमल करने लगे। यह सुन-देख मैं भी रोज़ जाने लगा। हमारे सभी रिश्तेदार भी जाने लगे और सभी के जीवन में एकदम से परिवर्तन आने लगा। मेरे को भी ऐसे पवित्र-स्वच्छ जीवन का बहुत आनन्द अनुभव होने लगा। शहर में भी बहुतों पर, बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा।

पवित्रता पर झगड़ा

जब दादी प्रकाशमणि जी की बड़ी बहन सती का पति विदेश से आया तो उनका पत्नी के साथ पवित्रता पर झगड़ा आरम्भ हुआ। उससे शहर में हंगामा आरम्भ हो गया कि जो ओम् मंडली में जाएगी उसके पति को विष नहीं मिलेगा। विदेश में रह, वहाँ की बुरी आदतें शराब, मांस-मदिरा आदि सेवन करना सीखने से उनके लिए पवित्र रहना कठिन हो गया। जब दादी जी की दूसरी-तीसरी बहन के पति भी विदेश से वापिस पहुँचे तो तीनों मिल गए। उनकी पत्नियाँ कहें, आप पवित्र नहीं रह सकते तो भले ही दूसरी शादी करो, हम खुशी से आपकी दूसरी लड़की से सगाई करवाते हैं लेकिन हमको पवित्र रहने दो। यह सुन सभी शहर वाले मुखी, चौधरी चकित रह जाते। ऐसे तो कोई पतिव्रता नारी पति को नहीं छोड़ती; दादा ने कैसा ज्ञान इनको दिया है जो इतना त्याग करके भी पवित्र रहने

को जिद करती है। भले ही पतियों ने उनसे मारपीट की, घर से निकल जाने को कहा लेकिन वे अपनी बात पर अटल रहीं। ऐसे समाचार अखबारों में भी छपने लगे। ऊपर से हैडिंग लिखते 'Sindh's Celibate Wives' इस रीति से यह हंगामा बढ़ता गया। इसमें बहुत सारे जवान लड़के भी मिल गए। एक दिन शाम को जब बाबा का सत्संग चल रहा था तो 100-150 लड़कों ने इकट्ठे होकर ओम् मण्डली के बाहर हंगामा करना आरम्भ कर दिया। तब दो-तीन भाई सत्संग से उठ, बाहर निकल पुलिस में गये। पुलिस ने आकर उन को हटाया, तब सत्संग के सभी भाई-बहनें अपने-अपने घर गये। उन्होंने तो ओम् मंडली को आग भी लगाने की कोशिश की जिस पर बाबा, लाखा भवन को आग लगाने का मिसाल देते हैं। लेकिन उसको फौरन बुझा दिया गया। ये सब मेरे आंखों देखे दृश्य हैं। मैं भी उस समय सत्संग में था। लेकिन इतने हंगामे में भी बाबा की तथा सभी भाई-बहनों की बहुत शान्त-स्थिर अवस्था थी क्योंकि शिव बाबा का साथ था।

ओम मण्डली शिफ्ट हो गई ओम निवास में

ऐसे हंगामे देख बाबा ने ओम् मंडली को जो कि शहर के बीच में थी, वहाँ से शिफ्ट कर ओम् निवास में, जो बाबा ने शहर के एक किनारे में बनवाया था, वहाँ प्रारम्भ किया। यह ओम् निवास बहुत बड़ा, डबल स्टोरी मकान था। वहाँ बाबा ने सत्संग में आने वाले परिवारों के बच्चों के लिए बोर्डिंग बनवाया था। जहाँ बच्चों की ज्ञान की, पवित्र सात्विक-जीवन की तथा स्थूल पढ़ाई भी होने लगी। बच्चों की सम्भाल तथा शिक्षा के लिए बाबा ने पांच दादिया (दादी जी, दादी चन्द्रमणि, दादी मिट्ठू, दादी कला और दादी शान्तामणि) को रखा। इनके ऊपर मम्मा थी। अब तो बाबा ने वहाँ सत्संग आरम्भ किया। हम घरों में रहने वाले, टाइम पर सत्संग में आते थे। मैं भी साइकिल पर पहले सत्संग में आता था फिर स्कूल में जाता। उस समय मैं ऐकेडमी हाईस्कूल में सातवीं कक्षा में पढ़ता था।

पिकेटिंग हुई

एन्टी ओम् मंडली वालों को यह पसन्द नहीं आया, उनको तो सत्संग बन्द कराना था। उन्होंने प्रोग्राम बनाया, ओम् निवास के बाहर पिकेटिंग करने का। हम शक्ति सेना को भी बाबा ने ऐलान किया और सभी पिकेटिंग में आकर बाहर खड़े हो गये। ओम् निवास में रहने वाले बच्चे-बच्चियां तथा घरों में रहने वाली मातायें भी आ गईं। आखिर अपने ही बच्चों को कहाँ तक भूखा-प्यासा खड़ा रखते, उनको हारना ही पड़ा। एक-दो दिन यह धर्म युद्ध चला, आखिर कलेक्टर को हस्तक्षेप करना पड़ा। इस रीति से सारे शहर में आन्दोलन देख, बाबा ने ओम् निवास के बच्चों को कराची में शिफ्ट कर दिया।

मुझ पर वारंट निकला

जब सारा ओम् निवास कराची में शिफ्ट हो गया तो पक्के ज्ञान में चलने वाले परिवार भी कराची आ गये। उनके लिए बाबा ने दो-तीन बंगले किराये पर लिये जिनमें वे रहने लगे। जैसे ईशू बहन का दादा, दादी, माँ-बाप, भाई-बहन तथा दादी चन्द्रमणि के पिता रतनचन्द का परिवार, हरदेवी भंडारी का परिवार-

एवं आठ-दस परिवार आ गये। बाकी हैदराबाद में ही जो अकेले ज्ञान में चलते थे, वे रह गये। हम बाबा से मिलने कैसे पहुँचें? क्योंकि ज्ञान अमृत के बिगर तो रहा नहीं जाता। तो कुछ कन्यायें-मातायें, छोटा-छोटा ग्रुप बनाये, छिपकर कराची जाने लगे। ऐसे ही एक दिन मैं भी कराची पहुँच गया। जो कराची आते, बाबा उनके परिवार वालों को तार भेज देते थे कि आपका बच्चा उनके पास पहुँच गया है। बाबा बड़े कायदे से चलते थे, जिससे किसी को ढूँढना न पड़े। खैर, इस रीति से मैं भी यज्ञ में उसी दिन समर्पित होकर बहुत समय की प्यास बुझाने लगा। उधर एन्टी ओम् मंडली वालों ने मेरे पर भी वारंट निकाल दिया। उसी दिन गुलजार बहन पर भी वारन्ट आया और दोनों को चीफ मिनिस्टर खुद कार में लेकर कराची में हमारे सम्बन्धी जोजा जी के पास छोड़ गये।

मैं फिर से बांधेला बन गया

आ तो गया मैं, लेकिन हम बच्चों को बाबा ने जो पाठ पढ़ाया था कि बच्चे ये विकारी लोग आपको अशुद्ध भोजन खिलायेंगे इसलिए उन्हों के हाथ का भोजन मत खाना। वैसे भी तुम ब्राह्मण विकारियों के हाथ का खायेंगे तो तुम पर अशुद्ध अन्न का असर पड़ेगा। इसमें मैं पक्का था इसलिए मैंने भोजन लेने से इन्कार कर दिया। उन्होंने बहुत जोर-जबरदस्ती की लेकिन मैं अपनी बात पर स्थिर रहा। जब सात-आठ दिन कुछ नहीं खाया तो शरीर कमजोर होता गया। उनको डर लगा कि बच्चा कहीं शरीर न छोड़ दे, लोग क्या कहेंगे? मोह भी तो रहता है ना। सो उन्होंने छुट्टी दी कि भले ही अपने हाथ का बनाकर खाओ। मैंने कहा-आपके पाप का पैसा भी प्रयोग नहीं कर सकता। इसलिए मैं कुछ काम कर, उस पैसे से अनाज लेकर, रोटी पकाकर खाऊंगा। अब ऐसे ही उन्हों को मानना पड़ा। मैंने दादी जी से कुछ सिलाई का काम सीखा था सो घर के ही कुछ कपड़े सिलाई कर, उनके 6-8 आने (आधा रुपया) लेकर अनाज ले, रोटी पकाकर दूध के साथ खा लेता था। कभी-कभी मौका पाकर, छिपकर हैदराबाद में बाबा के ओम् निवास में भाग जाता और शाम को घण्टा भर बहनों से मिलकर, मुरली-समाचार आदि सुनकर वापस आ जाता था। इस पर मेरे जीजा जी बहुत चिढ़ते, पिटाई

बाबा, चन्द्रहास दादा, उषा बहन

भी करते।

बाबा की बताई युक्ति से बंधन मुक्त हुआ

एक दिन मैंने सपने में बाबा को देखा और रोते हुए, बाबा के गले से जा चिपका। बाबा ने बोला- बच्चे, तुमको पिटाई करते है! अच्छा, मै एक तरकीब बताता हूँ, ऐसे करो तो तेरे को हाथ भी नहीं लगायेंगे और तेरे बन्धन भी छूट जायेंगे। फिर मैंने वैसे ही किया। क्या किया कि दूसरे दिन छिपकर, एक पत्र लिखने लगा और उसे बस्ते के बीच में इस तरह रखा जो वे भले ही देखें। उन्होंने वह पत्र दूसरे दिन पढ़ा। उसमें मैंने कलेक्टर को लिखा था कि यहाँ मेरे को रोज पिटाई करते हैं, मेरा शरीर छूट गया तो आप जिम्मेदार हैं। यह पढ़कर वे डर गये कि अगर यह पत्र कलेक्टर को मिल जाता तो पुलिस पकड़ कर ले जाती। बस, तब से उन्होंने हाथ लगाना छोड़ दिया और मैं रोज ओम् निवास जाता और बहनों से मिलता। आखिर एक दिन मौका पाकर कराची आ गया। उन्होंने फिर कोई बाधा नहीं डाली। समझा कि बच्चा जहाँ खुश रहे। ऐसे ही बाबा की सूक्ष्म मदद से बन्धन मुक्त हो, ज्ञान सागर शिव बाबा की गोदी में सदा के लिये समा गया।

कराची शहर में आने से बहुत पढ़े-लिखे लोग बाबा के पास आने लगे। जिनको बहनें-भाई बगीचे में अलग-अलग बिठा कर, ज्ञान समझाते, सेवा करते। इससे अच्छे पढ़े-लिखे कुछ लोग समर्पित भी होने लगे। इनमें एक मद्रासी मुसलमान भाई था, उसका नाम बाबा ने ऋषि रखा। वह इंग्लिश में अनुवाद करता था तथा हम भाई-बहनों को इंग्लिश सिखाता था। एक आत्माराम आडवानी भाई ज्ञान में आया, वह भी हमको इंग्लिश पढ़ाता था। तीन-चार और भी पढ़े-लिखे भाई, उनमें दादा विश्वरतन भी था, वे इंग्लिश आदि टाइप करते थे। बाबा ने विश्वकिशोर दादा तथा आनन्दकिशोर दादा को भी कलकत्ता से बुला लिया। रतनचन्द दादा परिवार सहित, रीझूमल दादा परिवार सहित, ईशु बहन के दादा-दादी, माँ-बाप, भाई-बहन सारा परिवार, जानकी दादी के माँ-बाप परिवार सहित इत्यादि बहुत बड़ा आश्रम हो गया।

ज्ञान के गुह्य राज़ (चन्द्रहास का नाम)

एक बार सन्देशपुत्री को बाबा ने झाड़ का साक्षात्कार करवाया, जिसमें मनुष्य के शीश (चेहरे) लटक रहे थे। उस पर बाबा ने वाणियों द्वारा समझाया कि यह मनुष्य सृष्टि भी झाड़ मिसल है जिसमें कैसे पहले देवी-देवताओं का एक धर्म है, फिर उससे द्वापरयुग के बाद अलग-अलग धर्म निकलते हैं। पहले पश्चिम में, इब्राहिम का इस्लाम धर्म फिर पूर्व में, बुद्ध धर्म फिर पश्चिम में, क्रिश्चियन धर्म आदि। दादा विश्वरतन को काम दिया कि ऐसा झाड़ का चित्र बनाओ। वह डिज़ाइन निकालने में होशियार था तो उसने झाड़ का चित्र बनाया। उसको बाबा ने करेक्ट कर फाइनल किया, हमसे पूछा-ठीक है? हमने कहा- वैसे तो बहुत अच्छा स्पष्ट है लेकिन एक कमी है जो इससे रिपीटेशन का राज़ नहीं खुलता। बाबा ने कहा – वह कैसे हो सकता है? तब मैंने गोले का चित्र रफ-डफ बनाकर दिखाया। बाबा देख बहुत-बहुत खुश हुए कि बच्चे की बुद्धि अच्छी चलती है। यह बहुत अच्छा पद पायेगा। उस पर बाबा ने मेरे को चन्द्रहास का नाम दिया। शास्त्रों

चन्द्रहास के भाग्य की बात आती है। बाबा ने कहा- ऋषि बाप भी बच्चों के भाग्य को देख खुश होते इस रीति से झाड़, गोला, त्रिमूर्ति के चित्र बाबा ने, पहले हम बच्चों से हाथ से पेंट करवाए फिर वहाँ विश्वकिशोर दादा ने प्रेस में भी छपवाये जो हम यहाँ भारत में ले आये।

एक बार बाबा ने कहा– जो बांधेली कन्यायें, लौकिक सम्बन्धियों को 5-6 वर्ष से छोड़ आई हैं अब इन लौकिक माँ-बाप, सम्बन्धियों की भी सेवा करनी चाहिए। इसलिये सात कन्याओं को और मुझे बाबा ने तैयार किया कि तुम ज्ञान गंगायें हैदराबाद अपने लौकिक घर, सप्ताह भर के लिए जाकर, उनको ज्ञान अमृत पिला आओ। मैं और सात बहनें, जिनमें मनोहर बहन, गोपी बहन, जमुना बहन आदि थे, इतने वर्षों बाद हैदराबाद गये। उन्हों की मातायें आदि तो अचानक उनको देख हैरान हो गईं। बड़ी खुश हो उनसे मिली।

बाबा ने अव्यक्त नाम दिए

भट्ठी के दिनों में रात-दिन ज्ञान की गुह्यता, योग के अभ्यास तथा साक्षात्कारों द्वारा अनेक राज़ों से बाबा हम बच्चों को तैयार करते। एक दिन तो एक सन्देशपुत्री (गुलजार बहन) ध्यान में जाकर सभी यज्ञ निवासी भाई-बहनों के, ध्यान में ही अव्यक्त नाम लिखने लगी, जिससे सभी को अपने-अपने अव्यक्त नाम मिल गये। बाबा ने समझाया, सन्यासी भी सन्यास करते हैं तो अपने नाम बदलते हैं। तुम भी सच्चे राजयोगी सन्यासी हो। पुरानी दुनिया का सन्यास किया है तो अव्यक्त रूप ने तुम बच्चों के नाम बदले हैं।

बचपन की कमी पूरी हुई

भट्ठी के ये 14 वर्ष जैसे स्वर्ग समान थे। यहाँ बच्चों को बाबा शहज़ादों की तरह से पालते थे। इतने तक कि एक बार बाबा की दिल हुई कि कलकत्ते में बहुत अच्छी मिठाइयां, रसगुल्ले, रसमलाई, सन्देश आदि बनते है। वह बच्चों को कैसे खिलायें? सो विश्वकिशोर दादा को कलकत्ते भेजकर वहाँ से एक मिठाई बनाने वाला बुलवाया, उसको बोला – हमारी माताओं को ये मिठाइयां बनाना सिखाओ। उसने माताओं को सिखाया, दूध की तो कमी नहीं थी, अपनी गऊशाला थी। 8-10 गायें थीं। सो मातायें जब सीख गईं तो कभी कोई, कभी कोई मिठाई बनाकर सभी को खिलाती थी। ऐसे थे मेरे प्यारे बाबा और उनका हम बच्चों में स्नेह। मेरे को तो ऐसी भासना आती जैसे यही मेरे माँ-बाप, बन्धु-सखा हैं। बचपन में जो माँ-बाप का प्यार-पालना नहीं मिली वह अब पूरी हो रही है। बाबा का भी मेरे ऊपर खास प्यार था क्योंकि गोपों में मै एक ही ऐसा बालक था जो इतने सितम सहन कर, बन्धन तोड़ बापदादा की गोद में समर्पण हुआ। बाबा को खास छुट्टी से रोज साइकिल पर, विलफ्रेड जाकर बाबा की मुरली सुनता और फिर लौटकर कुंज भवन में, बहनों की क्लास में सुनाता। कभी बाबा आकर क्लास कराते, कभी बाबा मुरली लिख भेजते, ममा क्लास कराती। कभी देशी घी खरीदने मेरे को बाबा हैदराबाद भेजते, कभी सिन्धी सेठ लोगों को लिटरेचर देने भेजते। ऐसे अनेक प्रकार से बाबा सेवा करना सिखाते।

पाकिस्तान की स्थापना

जब सेकेण्ड वर्ल्ड वार लगी तो बाबा को उसके ऊपर भी मुरलियाँ चलती थी कि यही यूरोपवासी यादव अपनी बुद्धि से (न कि पेट से), अपने विनाश के लिये ऐसे बम आविष्कार कर रहे है जिससे सारा यूरोपवासी यादव सम्प्रदाय विनाश हो जायेगा। इधर सिविल वार से, कौरव और यवन सम्प्रदाय रक्त की नदिया बहायेगा। सचमुच थोड़े समय में हिन्दुस्तान पाकिस्तान हुआ। हिन्दू-मुस्लिम के फसादों के समाचार आने लगे। हम तो सब जैसे अपनी ही दुनिया में, शिव बाबा के किले में सुरक्षित थे। मुस्लिम गवर्मेन्ट ने हमारा बहुत ख्याल रखा। पुलिस, हमारे बंगलो पर पहरा देती थी। हिन्दू भागने लगे। कुछ तो अपनी जान-पहचान के थे, आस-पास के जो थे वे अपना फर्नीचर आदि हमारे को देकर जाते। साथ तो ले नहीं जा सकते थे। कोई तो अपनी दो-तीन गायें भी यह सोचकर हमारे पास ले आये कि कहीं उनको मुसलमान लोग काट न दे, आपके पास सेफ रहेगी – यह सोचकर। अपने पास 8-10 गायों की गऊशाला भी थी। बड़ी शान्ति से, बाहर की दुनिया से दूर, अपनी दैवी दुनिया में परमात्मा की छत्रछाया में, रूहानी मस्ती में हम मस्त थे। बाहर शहर में कैसे रक्त की नदियाँ बह रही है वो हम दो-तीन भाई जो शहर में जाते थे वो ही देखकर आते थे।

पाकिस्तान बनने से हमारे सम्बन्धी, जो पाकिस्तान छोड़ भारत में आ गये, उनको हमारी चिन्ता होने लगी। हमारी कन्यायें-माताएं, मुसलमानों के देश में रह गई है, पता नहीं वह कैसे सुरक्षित रहेंगी? सो बहुतों को पत्र आने लगे – आपको टिकट भेजते है, आप हमारे पास आ जाओ। उनमें भी दीदी के चाचा मूलचन्द का बहुत ज़ोर था। उनको पैसे की तो परवाह नहीं थी। जे.टी.चैनराय के नाम से बहुत बड़ा बिजनेस चलता था। उसने दीदी को लिखा, फोन किया, आप सारी ओम् मंडली यहाँ आ जाओ। मैं सारा खर्चा दूँगा। जब उनका बहुत ज़ोर पड़ा तो बाबा ने भी कहा–यहाँ मुसलमान तो यह ज्ञान सुनेंगे नही, इसलिए भारत चले।

यज्ञ का भारत आगमन

ड्रामा प्लैन अनुसार माउंट आबू में, भरतपुर कोठी किराये पर लेकर विश्वकिशोर दादा ने सारा प्लैन बनाया कि यज्ञ, कराची से आबू में किस रास्ते से पहुँचेगा। कराची से स्टीमर द्वारा ओखा बन्दरगाह, ओखा बन्दरगाह से ट्रेन द्वारा मेहसाना, मेहसाना से ट्रेन बदल कर आबू रोड, आबू रोड से बस द्वारा माउण्ट आबू पहुँचने ही योजना बनी। रास्ते के लिए स्टीमर, ट्रेन में दो-तीन बोगियां, फिर बस द्वारा सफर आदि का प्रबन्ध किया।

यहाँ कराची में, हम भाई-बहनों ने सफर की तैयारी की। सामान, फर्नीचर आदि बहुत था। बाबा ने कहा- इतने फर्नीचर, अलमारियों आदि की दरकार नहीं है इसलिए बहुत सारा फर्नीचर हम भाई-बहनों ने पॉलिस कर नया बना दिया जो विश्वकिशोर दादा ने फर्नीचर वालों को बेच दिया। बाकी आधा फर्नीचर, बिस्तरे आदि सब पैक करने में 15 दिन लग गये। साइकिलें, बसें, कारें आदि सब बेच दिये। सिर्फ एक बस और एक कार भारत में लाये। वो भी यहाँ आकर बेच दीं। क्योंकि यहाँ आते ही बेगरी पार्ट आरम्भ हो गया। बहुत सारे पैसे, सारे यज्ञ के यहाँ शिफ्ट होने में खर्च हो गये। यूँ तो दादा मूलचन्द ने वायदा किया था

कि मैं सारा खर्चा दूँगा लेकिन जब यहाँ हम लोग आ गये तो सभी सिन्धी, दादा मूलचन्द को कहने लगे कि आप पैसे देंगे तो यह यज्ञ ऐसे ही चलता रहेगा। आप पैसे नहीं देंगे तो यज्ञ नही चल सकेगा और हमारी मातायें, कन्यायें हमारे पास वापिस आ जायेंगी। इस कारण वह खर्चा देने से मुकर गया। उनकी जो इच्छा थी कि मातायें, कन्यायें मुस्लिम देश से यहाँ आ जाएं वह तो पूरी हो गयी। अब वह इन्तजार करने लगे कि कब इनके पैसे खत्म होते हैं और सभी वापिस अपने घरों को लौटती हैं। लेकिन ड्रामा तो कुछ और ही बना था। बाबा ने वाणियां चलानी आरम्भ की कि तुम बच्चे स्वर्ग के राजा बनेंगे तो राज्य किस पर करेंगे? आप बच्चों ने प्रजा कहाँ बनाई है? अब समय आ गया है जब तुमको देश-विदेश में जाकर अविनाशी ज्ञान अमृत औरों को पिलाना है। सभी को ईश्वरीय सन्देश देना है। यज्ञ के घोड़े भी निकले थे राजाओं को जीतने के लिए। तुम बच्चों को भी सभी को ईश्वरीय सन्देश पहुँचाना है। स्वर्ग की 9 लाख प्रजा बनानी है। प्रजा बिना क्या पशु-पंछियों पर राज्य करेंगे? कितने भोले बच्चे हो!

सेवार्थ भारत के विभिन्न शहरों में जाना हुआ

हम बच्चे भी देखते थे यज्ञ में बहुत बेगरी पार्ट चल रहा है, तो सोचते थे जाकर ईश्वरीय सेवा कर यज्ञ को कुछ मदद करें। कई जवान बच्चे-बच्चियों को माया खींचने लगी कि जाकर धन्धा आदि करें। यहाँ तो रोज दाल भात खाने पड़ते हैं। मेरे को भी कहने लगे तुम भी चलो। यज्ञ को पैसे की दरकार है, धन्धा आदि कर यज्ञ को मदद करो। एक बार मैं बाबा की मालिश कर रहा था तो बचपने में, बाबा से पूछ बैठा-बाबा, आप छुट्टी दें तो कुछ धन्धा आदि कर यज्ञ को मदद करें। बाबा एकदम गम्भीर हो गये। बोले-बच्चे, बाबा ने तुमको कौन-सा धन्धा सिखाया है? क्या यह कौड़ियों का धन्धा करने का संकल्प आता है, जिससे काले हो जायेंगे? मैंने तो तुम बच्चों को ज्ञान-रत्नों का धन्धा सिखाया है तो यह धन्धा करने का उमंग नहीं आता? मैंने कहा – बाबा, आई एम सॉरी (मुझे खेद है)। ऐसे ही यज्ञ की छटनी होने लगी। कई जवान बच्चे-बच्चियां जाने लगे। इधर बाबा ईश्वरीय सर्विस के लिए उमंग दिलाने लगे। आखिर कुछ बहनें, मनोहर बहन आदि दिल्ली की सेवा पर निकलीं। जमुना किनारे जाकर सेवा आरम्भ की। दूसरी तरफ हमारे सम्बन्धी हमको निमन्त्रण देने लगे। बाबा कहते – जाओ, सेवा कर, सेन्टर जमाओ। मेरी लौकिक बहन मुम्बई में रहती थी, उसने मेरे को निमन्त्रण दिया। बाबा ने कहा-वहाँ जाकर लिटरेचर छपाओ, इसी प्लैन से मैं मुम्बई गया, कुछ बहनें भी मुम्बई में अपने सम्बन्धियों के पास आईं। मैंने लिटरेचर आदि भी छपाया। हम आपस में मिल सेवा के प्लैन बनाते। उसमें दीदी की भाभी कमला भी बहुत सहयोग देती। उनके पास ही हम मिलते क्योंकि मेरा भी तो मासात का रिश्ता था। भल हम वहाँ सेवा करते लेकिन बुद्धि मधुबन में थी कि वहाँ बेगरी पार्ट चल रहा है, कैसे यज्ञ को मदद करें?

शिवबाबा द्वारा गुप्त पालना

एक दिन जब मैं मुम्बई में था तो मेरे को सपने में आया, मधुबन में पैसे की बहुत खींचतान है। इतवार का दिन था, मैं बहनों से मिला, मिलकर कुछ पैसे

(करीब 5-6 सौ रुपये) इकट्ठे कर मैंने तीव्र डाक से मधुबन भेज दिये जो ठीक सोमवार के दिन पहुँच गये। बाद में सुना कि उन दिनों आबू में 15-15 दिन का राशन मिलता था सो दिन पूरे हुए थे, लेकिन यज्ञ में पैसे नहीं थे जो राशन खरीद करें। भूरी दादी बाबा से पूछती तो बाबा बोलते-बच्ची, धैर्य धरो, बाबा बैठा है, आप ही कुछ-न-कुछ प्रबन्ध कर देगा। सोमवार के दिन ये पैसे ठीक समय पर पहुँच गये और राशन आ गया। ऐसे ही शिव बाबा हम बच्चों को सूक्ष्म रूप से टच कर यज्ञ की पालना कराते और ब्रह्मा बाप अपने निश्चय में अडोल-निश्चिंत ऐसे रहते जैसे कोई बात है ही नहीं। शिव बाबा बैठा है, उसके बच्चे हैं। उसने रचना रची है, वही पालना करेगा। ऐसी परीक्षायें पास करते, धीरे-धीरे पहले देहली घटाघर में सेन्टर खुला। जहाँ दीदी, क्वीन मदर, कमल सुन्दरी बहन आदि रहती थी, हम भी आकर मदद करते, लिटरेचर छपाते, बांटते थे। वहाँ से फिर मेरे को लौकिक भाई ने कलकत्ते में निमन्त्रण दिया, वहाँ भी गया। वहाँ तीन-चार बहने लौकिक सम्बन्धियों के पास गईं। वहाँ भी ऐसे मिल-जुलकर सेवा करते। इस बीच कुम्भ का मेला इलाहाबाद में लगा, वहाँ दीदी जी, दादी प्रकाशमणि, दादी रतनमोहिनी आदि आठ बहनें, मैं और दादा आनन्दकिशोर गये। वहाँ से कानपुर का निमन्त्रण मिला, वहाँ सेन्टर खुला। लखनऊ में दादाराम के घर में सेन्टर खुला। ऐसे ही सेन्टर्स खुलते गये। यज्ञ भी बृजकोठी से शिफ्ट हो, कोटा हाउस में आया। अब तो बाबा बहनों को मधुबन में अधिक ठहरने नहीं देते। सबको सेवा पर भेज देते। आने पर, 4-5 दिन में रिफ्रेश कर बाबा कहते-जाओ, सेवा करो। मधुबन में बहुत थोड़े भाई-बहने रहते। एक समय ऐसा भी आया कि ईशू बहन, पोस्ट और कैश सम्भालती थी, उनको भी देहली में डिमान्ड हुई और उस समय प्रकाशमणि दादी आबू में थी तो उनको यह चार्ज दे, बाबा ने ईशू बहन को भी देहली भेज दिया। क्योंकि बाबा को पहले ईश्वरीय सेवा का फुरना रहता, बाद में मधुबन का। बाबा कहते-मैं बैठा हूँ। कोई भी यज्ञ सेवा चला लूँगा। पहले ईश्वरीय सेवा होनी चाहिए। दादी प्रकाशमणि को मैं पोस्ट आदि लिखने में मदद करता क्योंकि पोस्ट भी दिनों-दिन बढ़ती जाती थी। आखिर दादी प्रकाशमणि को भी बुलावा हुआ तो मेरे को बाबा ने पोस्ट सम्भालने के लिए कहा। मैं बाबा की भी सेवा करता और पोस्ट और कैश भी सम्भालता।

बाबा-मम्मा को पहनाया हार

एक बार मैं दिल्ली में था तो कलकत्ता से मेरे लौकिक भाई का पत्र आया कि भारत सरकार, जो सिन्धी अपनी प्रॉपर्टी पाकिस्तान में छोड़ आये हैं उनको कम्पेन्सेशन (हरजाना) दे रही है। मेरे को भी मिला है, आप भी आकर एप्लाई करो तो आपको भी मिल जायेगा। मैं कलकत्ता गया और मिनिस्टर से मिल कर लिखा-पढ़ी कर दी। हैदराबाद में मेरे लौकिक बाप के मकान जो थे उनके ऐवज में गवर्नमेन्ट ने कम्पेन्सेशन दिया। मेरा दिल हुआ कि प्यारे बाबा-मम्मा के लिए, गिन्नियों (अशर्फियों) के दो हार बनाये और लाकर बाबा-मम्मा को पहनायें। बाबा, बच्चे का प्यार देख पानी हो गये और गोद में लेकर बहुत प्यार किया। ऐसा प्यार तो स्वर्ग में भी नहीं मिलेगा। बाबा ने वह हार रख लिये और जब दादी प्रकाशमणि और दादी

रतनमोहिनी जापान से सेवा कर कोटा हाउस, मधुबन में लौटी तो बाबा ने स्वागत में, अशर्फियों के दोनों हार उनको पहनाये। ऐसे दुलार करते थे मेरे बाबा। इस बीच कुछ भारी परीक्षाये भी मेरे ऊपर आईं और आनी भी चाहिएँ जिससे अपनी लगन और निश्चय का पता चले। लेकिन जब इतने सितम सहन कर, ऐसे प्राणेश्वर बापदादा को पाया तो उनका साथ कैसे छूट सकता है? ईश्वरीय मर्यादायें भी कवच का काम करती है, इनके सहारे सीता की तरह अग्नि परीक्षायें पास कर लीं।

बाबा ने मुझे इंजीनियरिंग सिखाई

तीन वर्ष कोटा हाउस में रहे फिर राजस्थान सरकार ने मकान खाली करने को कहा। फिर सन् 1958 में हम पोखरन हाउस में आये। यह पुराना मकान तो छोटा था लेकिन इसमें जमीन बहुत थी। बाबा और कुछ बहनें पक्के मकान में रहने लगे, बाकी हम भाई, टीन शेड में रहे। फिर तो धीरे-धीरे मकान बनाने आरम्भ किए। पहले तो बाबा को क्लास के लिए हॉल की दरकार थी। बाबा ने रविदत्त भाई, जो उत्तर प्रदेश में ठेकेदारी का काम करता था, उनको अपने पास बुलाया। उनके साथ मेरे को मदद में रखा। कुछ समय बाद, रविदत्त भाई को भी अपने काम पर जाना पड़ा तो बाबा ने यह कार्य सम्भालने के लिए मेरे को निमित्त बनाया। मैं इन्जीनियरी तो नहीं जानता था लेकिन बाबा आकर मेरे को डायरेक्शन देते थे। ऐसे अनुभवों से सीखता गया और मकान बनने लगे। पहले छोटा हिस्ट्री हॉल और साथ के दो कमरे बनाये। मैंने तो वे स्नानघर सहित, इस लक्ष्य से बनवाये थे कि एक में बाबा, एक में मम्मा, आमने-सामने रहेंगे लेकिन जब तैयार हुए तो बाबा ने वहाँ रहने से इन्कार कर दिया और कहा कि बाबा तो पुराने मकान में ही रहेगा। जब शिव बाबा भी पुराने रथ में आते हैं तो ब्रह्मा बाबा कैसे नये मकान में रहेगा। ऐसे थे हमारे सर्व त्यागी बाबा। पुराने मकान में भी स्नानघर तो कमरे के साथ था लेकिन लैट्रीन दूर, पेड़ के नीचे, टीन के पत्रे की बनाई थी, बाबा वहाँ जाते थे। इस तरह बाबा के अंग-संग रहकर बाबा से बहुत कुछ सीखने को मिलता था। बाबा कहते-बच्चे जो कमरा बनाओ उसमें खुद दो-तीन दिन रहकर देखो। पार्टी में आने वाले बच्चे ऐसे आराम से रहें जो उनको अपना घर भूल जाए। ऐसे प्रैक्टिकल में इंजीनियरी सिखाते थे बाबा।

मामले तो बाबा के ऊपर हैं

एक बार की बात बताता हूँ - कैसे बाबा खुद भी सब-कुछ करते उपराम रहते, हमको भी उपराम बनाते। एक दिन दोपहर को मिस्त्री, छुट्टी पर, भोजन खाने के लिए गये थे, मैं भी भोजन कर के लेटा था। बाबा भी भोजन कर, मेरी खिड़की के बाहर चक्कर लगा रहे थे। मेरे को लेटा हुआ देखकर हंसी में बोले-बच्चे, आराम कर रहे हो? मैंने उठकर कहा-बाबा! जिनके माथे मामले वो कैसे नींद करें? बाबा मुस्करा कर बोले-बच्चे! तेरे ऊपर मामले है? मैं बाबा का इशारा समझ गया, बोला- बाबा, आई एम सॉरी (मुझे खेद है)। मामले तो, बाबा के ऊपर हैं, हम तो निमित्त हैं। जवाबदारी तो बाबा पर है। हम जब भी करनकरावनहार बाबा को भूल जाते, अहम् भाव में आते तो बाबा ऐसे-ऐसे इशारे में शिक्षा देते थे और यह

शिक्षा मेरी दिल मे सदा के लिये छप गई। जैसे बाबा अब भी मेरी अँगुली पकड़, मेरे को डायरेक्शन दे रहे है। यह मै निजी अनुभवों से बताता हूँ कि प्यारे बाबा के अव्यक्त होने के बाद भी मै मधुबन मे जो मकान बनाता था, सूक्ष्म मे बाबा से श्रीमत लेता कि बाबा आप प्रेरणा दे कि कल्प पहले यह भवन कैसे बनाया था। शान्ति स्तम्भ भी बनाया तो बाबा से निवेदन किया कि बाबा आप हमको गाइड करे, जो प्यारे बाबा का यादगार ऐसा बने जो आने वाली अनेकानेक आत्मायें इससे प्राणेश्वर बापदादा का साक्षात्कार करें। जैसे साकार मे बाबा डायरेक्शन देते थे, वैसे ही आज तक अव्यक्त रूप मे देते रहे है। आप देख रहे हैं प्यारे बाबा के अव्यक्त होने के बाद कैसे देश-विदेश मे ब्राह्मण बच्चो की वृद्धि होती जा रही है। बाबा के होते हुए जब हिस्ट्री हॉल बना तो बच्चों के रहने का मकान कम पड़ने लगा तो बहनो को छोटे हॉल मे भी सोना पड़ता था। तब बाबा ने ट्रेनिंग रूमस् के ऊपर दूसरी मंजिल बनवाई। वो बनी तो हॉल छोटा पडने लगा, तब मेडीटेशन हॉल बनाया। वो बना तो अकमोडेशन कम पड़ने लगा। तब लाइट हाउस, विशाल भवन, ज्ञान विज्ञान भवन, योग भवन बनाये। ये बने तो मेडीटेशन हॉल छोटा हो गया। तब ओमशान्ति भवन का विशाल हॉल बनाया। साथ में सुखधाम तथा स्वदर्शन भवन बने। ऐसे ही बाप और दादा दोनों की सूक्ष्म देख-रेख में प्यारा मधुबन कितना वृद्धि को पाता गया वो आज आपके सामने है। ऐसे हैं करन-करावनहार हमारे प्यारे बापदादा जो स्वयं हम बच्चों से करवा के, हम बच्चो का नाम बाला कर रहे हैं और स्वयं गुप्त हैं....!

बाबा और बच्चे के रमणीक संवाद

इसके बाद तो बापदादा अनेक प्रकार की जवाबदारी देते गये। मकान का काम करता, बिजली का काम भी करता। फिर टेप मशीन आयी तो प्राण बापदादा की मुरलियां रिकोर्डिंग करता, फिर उनकी प्रतियाँ निकाल, अनेक सेन्टर्स को भेजता। बापदादा मुम्बई-देहली जाते तो मै भी टेप मशीन लेकर साथ जाता। फिर प्यारे बाबा के अमूल्य तन की मालिश करने का भी भाग्य मिला हुआ था। मालिश के समय बाबा और मै बहुत चिटचैट करते। बाबा के इतना नज़दीक रहकर हम देखते थे कि कैसे बाबा दिनों-दिन उपराम होते, अव्यक्त अवस्था को धारण करते, कर्मातीत अवस्था के नज़दीक आते जा रहे हैं। मालिश के समय कभी-कभी तो ऐसे महसूस होता जैसे कि बाबा अपने तन मे है ही नहीं। फिर अचानक तन में आकर कहते-बच्चे! अब तक मालिश कर रहे हो? जल्दी करो, बच्चों को पत्र लिखने हैं। मै हंस कर कहता-बाबा! आप अशरीरी रहिए ना, यह रथ तो आपने शिव बाबा को दे दिया है। कितना भाग्यशाली रथ है जो दो सर्वोत्तम सवारियां इस पर सवारी करती हैं! इस रथ की तो जितनी मालिश करें, कम है। तो बाबा भी हंस पड़ते कि बच्चा, बाप को ज्ञान दे रहा है। ऐसे बहुत प्रकार की चिटचैट होती, वह तो क्या बताऊँ, क्या न बताऊं? कभी नहलाते समय मै बाबा से पूछता-बाबा! सबसे बड़ा भगत सारे ड्रामा में कौन है? बाबा कहते-मै। मैंने ही तो भक्ति आरम्भ की। मै कहता-आपने क्या किया? सोने का मन्दिर बनाया, उसमे हीरों की शिव की जड़ मूर्ति रख, उस पर दूध की लोटी चढ़ाई। लेकिन स्वयं शिव बाबा चैतन्य में

यहाँ बैठे है और साथ-साथ ग्रेट-ग्रेट ग्रैण्ड फादर-दोनों पूज्य आत्माओं के ऊपर मै गर्म पानी की बाल्टी चढ़ा रहा हूँ। बाबा कहते – शिव बाबा को देखते हो? मै कहता था कि हाँ, शिव बाबा इस रथ की भ्रकुटी मे बैठा है। तो बाबा हस पडते। बाबा का मस्तक भी शिव बाबा की पिंडी की भांति लगता था। ऐसा भाग्य इस आत्मा को मिला। कभी बाबा हसी मे कहते-बच्चे! स्नान तो उनको करना पड़ता है जो शौचालय मे जाते है। शिव बाबा तो इनसे न्यारा है। मैं कहता-बाबा! शिव बाबा तो आपके अंग-सग है। इसलिए हम बापदादा कहते हैं। आप जब शौचालय में जाते है तो शिव बाबा, वहाँ भी आपके साथ है, स्नान भी साथ में करेंगे ना। बाबा ऐसा चतुराई का उत्तर सुन हंस पड़ते।

आहा! उन दिनों को याद कर आंखों में प्रेम के आंसू नही आयेंगे? ऐसे प्यारे बाबा का सखा रूप भी देखा, पिता का प्यार भी पाया, तो टीचर के शिक्षाओं भरे रूप का भी अनुभव किया। वो प्यार भरी शिक्षाए और डाट, जिनमें अति प्यार और अपनापन समाया रहता था, उसका एक उदाहरण प्रस्तुत करता हूँ –

बाबा का प्यार देख पानी-पानी हो गया

यह उन दिनों की बात है जब मैं मकान का काम भी देखता था और बाबा की वाणियों की टेप की कापियां निकाल, सभी सेन्टर्स पर पार्सल भी करता था। सारा दिन इस भाग-दौड़ में जाता था। एक दिन बाबा ने बहुत अच्छी वाणी चलाई। उस दिन निर्मलशान्ता दादी अपने सेन्टर पर जा रही थी। उसने बाबा को कहा – बाबा! चन्द्रहास भाई को कहो कि आज की वाणी की टेप की कॉपी हमको दे। बाबा ने मेरे को बुलाकर कहा – बच्चे! आज की वाणी की टेप, बच्ची को बनाकर दे दो। मैंने कहा – आज तो बहुत काम है, मै दो दिन बाद पोस्ट में भेज दूँगा। बाबा गम्भीर होकर बोले – बच्चे! तुम बड़े सुस्त हो, नोट करते हो, खाने की फुर्सत है बाकी वाणी को कापी निकालने को फुर्सत नहीं है। मेरा दिल भर आया। मैंने कहा – बाबा! सारा दिन इतनी भाग-दौड़ करता हूँ, फिर आप सुस्त कहते हो, डाटते हो। दूसरे तो सिर्फ थोड़ी सेवा करते फिर भी उनकी महिमा करते हो। उस समय पता नहीं कैसे बचपने मे आकर, यह कह बैठा। बाबा ने प्यार से भाकी पहन कहा – बच्चे! यह मेरा डाटना नहीं, प्यार है। क्योंकि मेरी अपने बच्चे पर हुज्जत है। दूसरों को तो महिमा कर उनको उमंग मे लाना पड़ता है। उनको डाँट दूँ तो वे दिलशिकस्त हो जाएँ, लेकिन अपने बच्चे पर तो मेरी हुज्जत है। तुमको फील होता है तो आगे से मै नहीं डांटा करूँगा। महिमा करूँगा। मै बाबा का प्यार देख पानी-पानी हो गया। मै बोला, नहीं बाबा, भले डांटो, उसमें भी आपका प्यार समाया है। बाबा ने कहा – हाँ बच्चे! बाबा अपने बच्चो मे कोई भी कमी देखना नहीं चाहता; इसलिए डाट-प्यार से बच्चे को सर्व गुण सम्पन्न बनाना चाहता है। ऐसे थे हमारे प्राणेश्वर बाबा जिनकी अपने बच्चों पर इतनी हुज्जत तथा कल्याण की भावना रहती थी।

नौकरों से बाबा का प्यार

ऐसे ही ज्ञानेश्वर बाबा के अनेक रूप देखे। इतनी बड़ी हस्ती, ग्रेट-ग्रेट ग्रैण्ड फादर और कितने नम्रचित्त। हम बच्चों से सखा बन चिटचैट भी करते, बैडमिन्टन आदि खेल भी करते, बाप रूप में शिक्षा भी देते और

प्यार भी देते। न सिर्फ हम बच्चों को बल्कि जो नौकर-मिस्त्री आदि काम करते, उनको भी बच्चे-बच्चे कह प्यार देते। एक बार का उदाहरण है - राखी का त्योहार था। उस दिन मकान का काम बन्द था। दोपहर के समय मैं बाबा को धूप में मालिश कर रहा था। तभी एक मजदूर माता थोड़ी दूर आकर खड़ी हो गई। बाबा ने बोला-देखो, बच्चों को क्या चाहिए? मैं उठकर उसके पास गया तो उसने कहा-मैं बाबा को राखी बांधना चाहती हूँ। मैंने बाबा को [illegible] उठ गया, बोला-हाँ, बच्ची [illegible] थोड़ा हिचका तो बाबा [illegible] प्रति स्नेह नहीं देखा [illegible] बुलाया तो बड़ी खुशी [illegible] बांधी। बाबा ने [illegible] टोली देकर [illegible] तो बाबा ने पूछा- [illegible] दो रुपये दिए [illegible] बोले-अरे बच्ची [illegible] राखी बांधी, उसको [illegible] गया, सारी कह [illegible] आया। ऐसे प्यार से [illegible] नौकर भी बाबा का प्यार देखकर [illegible] भी उस प्यार को याद करते हैं

नम्रता की मूर्ति प्यारे बाबा

मिस्त्री मजदूर [illegible] बाबूजी कह बुलाने [illegible] बड़ी हस्ती, मेरे बुजुर्ग बाबा [illegible] कितनी नम्रता! मकान की कोई [illegible] मिट्टी की भराई करनी होती, कहीं रोड-रोलर चलाना होता तो बाबा सभी पार्टी में आये हुए बच्चों को बुलाते और खुद भी तगारी उठाने लगते। सब बच्चे, ऐसे बुजुर्ग बाबा को देख दंग रह जाते। आहा! ऐसे सर्व गुण मूर्त बाबा के गुणों का कितना वर्णन करें? एक बार बाबा ने वाणी चलाई कि तुम बच्चों को एक ज्ञान सागर शिव बाबा को ही याद करना है, उनसे ही वर्सा मिलता है। मेरी जेब तो खाली है। ब्रह्मा ने तो सब-कुछ शिव बाबा को समर्पण कर दिया... इत्यादि। जब मैं बाबा की मालिश करने बैठा तो मैंने मुस्करा कर कहा – बाबा! आप हम बच्चों को बहुत ठगते हो। बाबा ने आश्चर्य से कहा-मैं कैसे ठगता हूँ! मैंने हंस कर कहा-बाबा! आप कहते हो कि आपकी जेब खाली है, आपसे कुछ नहीं मिलना है लेकिन बाबा आपने जो इतनी कमाई की है; प्रैक्टिकल में सर्व गुण सम्पन्न, सोलह कला सम्पूर्ण बने हो, वह वर्सा तो आपको फालो करके, आपसे ही लेना है। आपके पदचिन्हों पर चल कर हो तो हम कर्मातीत बनेंगे। तब तो सतयुग में भी आपको फालो कर तख्त, ताजधारी बनेंगे। आप ही तो हमारे कल्प-कल्पान्तर के रहनुमा हो। तो बाबा [illegible] कहते-तुम भगत हो, भगत। यह भगतपना भी कितना प्यारा है। है ना?

गाय बनी उदाहरणमूर्त

जब पोखरन हाउस (पाण्डव भवन) आए तो उन दिनों बाबा को ताजे दूध की जरूरत होती थी। दूध वाला ग्वाला ओरिया गाँव से दूध लाता था। उसमें प्रातः के ९ बज जाते थे। दादा विश्वकिशोर ने सोचा कि एक गाय अपने घर में हो तो बाबा को सवेरे ताज़ा

दूध मिल सकेगा। इसलिए दादा विश्वकिशोर सिरोही गया और वहाँ एक अच्छी गाय खरीद ली। जब उसे लाने लगे तो वह ट्रक में चढ़े नहीं। बहुत उधम मचाने लगी क्योंकि वह बचपन से ही मालिक के पास पली थी। दादा ने मालिक से कहा कि तुम भी साथ चलो। माऊंट आबू में गाय को बांधकर वापस आ जाना। गाय, ग्वाले के साथ आ गई। लेकिन पाण्डव भवन में उसे बांध कर जब ग्वाला चला गया तो गाय फिर उधम मचाने लगी। रात को अपनी रस्सी तोड़कर भाग गई। प्रातः दूध निकालने गए तो गाय वहाँ थी नहीं। एक-दो दिन उसको बहुत ढूँढ़ा। उन दिनों आसपास जंगल ही था। चीते आदि जानवर भी आते थे। हमने समझा कि शायद किसी जानवर ने मार दिया या क्या हुआ पता नहीं चला। तीन दिन बाद गाय का मालिक उसे लेकर पाण्डव भवन में आया और बताया कि गाय यहाँ से भागकर मेरे पास पहुँच गई, उसको लेकर आया हूँ। तब बाबा ने दूसरे दिन क्लास में वाणी चलाई कि बच्चे, देखो, तुम से तो यह गाय ज्यादा समझदार है जो अपने मालिक और अपने घर को नहीं भूली। यहाँ से कितना दूर सिरोही में मालिक के पास पहुँच गई। बाबा इतना ज्ञानयुक्त लालन-पालन करते, घर की याद दिलाते और तुम बच्चे फिर भी बाप को भूल जाते हो। ऐसे-ऐसे उलाहने देकर बाबा ने खूब हँसाया।

मेरी तो बाजू में है, तुम्हारे सामने है

जब मालिश करने बैठा तो मैंने हँसकर बाबा को कहा कि बाबा आप हमें उलाहना देते हो परन्तु बाबा हमें घर में रहने कहाँ देते हैं? हम बाबा के साथ घर पहुँचते हैं और बाबा तुरन्त हमको स्वर्ग में भेज देते हैं। फिर सारा कल्प बाबा और घर से दूर इसी सृष्टि मंच पर चक्कर लगाते-लगाते बीत जाता है। फिर बाबा और घर कैसे याद रहेगा? तब बाबा ने कहा कि बच्चे ड्रामा ही ऐसा बना हुआ है। बाबा बच्चों को साथ रखना चाहें तो भी नहीं रख सकते। तुम बच्चों को तो यहाँ आकर अपने पुरुषार्थ की प्रालब्ध भोगनी ही है। लेकिन तुम अकेले तो नहीं आते मैं भी तो तुम बच्चों के साथ-साथ सारा कल्प पार्ट बजाता हूँ। जब यह बूढ़ा बाबा इतने बड़े यज्ञ की देख-भाल करते हुए, इतने बच्चों को सम्भालते हुए, बाबा की याद का पुरुषार्थ करते हुए पहला नम्बर ले सकता है तो तुम बच्चों पर तो कोई जवाबदारी नहीं है। तुम जवान बच्चे तो मेरे से भी आगे जा सकते हो। मैंने कहा– बाबा, आपको शिव बाबा की मदद है, आपके बाजू में तो शिवबाबा बैठे हैं तो आप कैसे उन्हें भूल सकते हैं? बाबा ने मीठा मुस्कराकर कहा– अरे बुद्धू मेरे तो बाजू में बैठे हैं लेकिन तुम बच्चों के तो सामने बैठे हैं। इन नेत्रों द्वारा तुम बच्चों को देख रहे हैं, इस मुख द्वारा तुम बच्चों को इतने रत्न दे रहे हैं। बाबा मुरली तो तुम बच्चों को सुनाते हैं। मैं तो बीच में दलाल बन सुन लेता हूँ, तुम बच्चे तो शिव बाबा से इस तन द्वारा मिल लेते हो, गले लगते हो, मैं तो बाबा को भाकी भी नहीं पहन सकता। हाँ, रथ दिया है, उसका थोड़ा-बहुत किराया बाबा दे देता है। बाकि मेरे से तो तुम बच्चे पद्मगुणा भाग्यशाली हो जो बाबा एक-एक बच्चे को देखते रहते हैं चाहे वह देश-विदेश में कहाँ भी हो। जैसे मेरे को स्मृति है कि बाबा मेरे बाजू में बैठे हैं वैसे तुम बच्चों को भी स्मृति रहे कि बाबा हमारे सामने हैं। याद है जब तुम बच्चों और माताओं पर पति तथा सम्बन्धी आदि मार-

पोट और अत्याचार करते थे, तब तुम बच्चों को संवेदना देने के लिये बाबा ने एक गीता बनाया था –

''क्यों हो अधीर बच्चे, मधुबन मे आ गया हूँ।
संताप सख्त भारी, अबलाओं पे देख रहा हूँ।
आँखों के सामने हूँ, जो चाहे मुझको देखे।
अव्यक्त रूप अपना, हर दम दिखा रहा हूँ।''

बाप तो बच्चों के अंग-संग हैं। सिर्फ हर समय बच्चों को यह याद रहे कि बाबा हम को दृष्टि दे रहे है, हमारे अग-संग है तो कितनी खुशी, कितना नशा रहेगा! यही तो गोप-गोपियों का अतीन्द्रिय सुख गाया हुआ है। लौकिक बाप को भी बच्चे प्यारे लगते है तो उनको अपने कंधे पर, सिर पर बैठाते हैं। यह बड़ी माँ भी तुम बच्चों को अपने से भी ऊँचा उठाते हैं। ओहो! बताइये, इतना प्यार करेगा कौन, बड़ी माँ करती जितना?

बाबा कर्मातीत हुए

ऐसे प्यारे बाबा के एक-एक चरित्र का क्या वर्णन करूँ...? मैं देखता, दिनों-दिन प्यारे बाबा स्थूल बातों से उपराम होते जा रहे थे। सन् 1967 से बाबा की वाणियाँ विशेष दैवीगुण धारण करने और अशरीरी-अव्यक्त अवस्था बनाने पर ही चलने लगी और प्रैक्टिकल में भी कई बार अनुभव होता जैसे बाबा इस शरीर में है नहीं। भले ही यज्ञ का चक्कर लगाते, सेन्टर्स के पत्र सुनते, उत्तर लिखते, लेकिन सब-कुछ करते, सबसे न्यारे होते जाते। बाबा का ऐसी अवस्था का अभ्यास तथा ऐसी वाणियां सुनते हुए हम भी जैसे मूलवतन में पहुँच जाते। चलते-फिरते जैसे साकार दुनिया में नहीं लेकिन सूक्ष्म वतन में अव्यक्त बापदादा के साथ चल रहे हैं। एक बार रात को बाबा क्लास में आए, सन्दली पर बैठते ही सामने बैठी दादी को कहा- कुमारका बच्ची! चप्पल बाहर उतार कर आओ। दादी जी हैरान होकर देखने लगी। चप्पल पहनकर तो कोई क्लास में नहीं बैठता। तब बाबा गुस्करा कर बोले- मुठी, पैरों का चप्पल नहीं, शरीर रूपी चप्पल-जूते बाहर उतार कर यहाँ आत्मा हो बैठो। बाप तुम आत्माओं से बात करते हैं और हमको लगा, सचमुच, हम आत्माएं मूलवतन में बापदादा के सामने बैठे हैं। क्लास का हॉल भी सामने से गायब हो गया। बाबा के कर्मातीत योग बल का ऐसा असर हम बच्चों पर पड़ता था। ऐसे ही बाबा की कर्मातीत अवस्था को अनुभव करते-करते अचानक वह महान दिन भी आ ही गया जब बाबा ने प्रैक्टिकल में कर्मातीत अवस्था को पाया और अचानक इस पुरानी देह को त्याग दिया। यह सब ऐसा अचानक हुआ जो हम सभी आश्चर्यचकित रह गये।

मेरे को याद है, वह दिन 18 जनवरी आँखों के आगे अब भी घूम रही है। प्रात: बाबा की तबियत थोड़ी ठीक नहीं थी। थोड़ा खाँसी-जुकाम आदि का असर था। फिर भी बाबा नियम अनुसार क्लास में आये लेकिन मुरली नहीं चलाई। एकदम अव्यक्त रूप से बीस मिनट योग कराया और अव्यक्ति दृष्टि देते हुए याद प्यार देकर उठ गये। शाम को दादी प्रकाशमणि जी ने बाबा को क्लास मे नहीं आने को कहा जिससे बाबा जल्दी आराम कर सकें। लेकिन बाबा को ख्याल चला कि सुबह वाणी नहीं चलाई है। बच्चो को फ़िक्र होगा कि बाबा की तबियत ठीक नहीं है। इसलिये बाबा ने क्लास में आकर बहुत अच्छी शिक्षा भरी वाणी बच्चों प्रति चलाई। बच्चों से विदाई भी ली। और

कमरे में आकर सचमुच हम बच्चों से अचानक विदाई ले गये।

थोड़े ही दिन पहले बाबा ने एक-दो बार वाणियों में कहा था-बच्चे, सबसे अच्छा शरीर त्यागने का तरीका है, हार्टफेल होना। एक सेकण्ड में बिगर कोई कर्मभोग के शरीर छूट जाए। क्योंकि कर्मातीत बनने पर कर्मभोग तो कोई रहता नहीं और कर्मातीत आत्मा पुराने शरीर से उड़ जाती है। कर्मेन्द्रियाँ तथा हृदय आदि स्वत: काम करना बंद कर देते हैं। ऐसे ही बिगर कोई भोगना के, प्यारी दादी जी का हाथ पकड़, हम सामने खड़े बच्चों को दृष्टि देते-देते, देह त्याग कर बाबा की कर्मातीत आत्मा उड़ चली।

यह सब ऐसा अचानक हुआ जो हमको अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हो रहा था। लेकिन डॉक्टर ने आकर शरीर की चेकिंग कर बताया कि बाबा की आत्मा तो है नहीं। फिर तो क्या था। दादी जी में हिम्मत आ गई। फौरन सभी सेन्टर्स पर फोन करने लगी और विचित्र ड्रामा की भावी बताते हुए सभी को मधुबन आने के लिए कहने लगी। दीदी जी उस समय इलाहाबाद में थी। वहाँ भी फोन कर दीदी को समाचार सुनाया। कइयों को तो विश्वास ही न हो कि ऐसे कैसे बाबा हम बच्चों को छोड़कर चला जायेगा! खैर, ड्रामा में जो होना था उसको तो भगवान भी नहीं रोक सकते थे। दूसरे दिन से, सब तरफ से अनेक भाई-बहनें आने लगे, इस प्रकार सभी भाई-बहनें, दूर-दूर से तीन दिन तक आते रहे। तब तक प्यारे बाबा के रथ को सजाकर, छोटे हाल में रख दिया और अखण्ड योग चलता रहा। तीसरे दिन, 21 जनवरी को बाबा के अमूल्य तन को सारे शहर की परिक्रमा दिलाई। शाम को 5 बजे वहीं मधुबन बाबा की तपोभूमि के अन्दर ही, देह का अन्तिम संस्कार किया गया। विचार चला कि प्यारे बाबा का कैसा यादगार बनाया जाए जो बाद में आने वाले अनेकानेक बच्चे यादगार को देख, बाबा के अनमोल जीवन से प्रेरणा लें।

बाबा के शरीर का स्टैच्यू तो नही बना सकते थे, दुनिया वाले तो अपने गुरुओं के चित्र बनाकर रखते हैं लेकिन हमारे प्यारे बाबा तो प्रैक्टिकल में हमारे सामने स्तम्भ की भांति खड़े हो, हमे वही प्यारी शिक्षाये दे रहे है। वे भिन्न-भिन्न महावाक्य, मार्बल पर लिखवा करके लगाए और उसी प्यारे रथ रूपी स्तम्भ के ऊपर शिव बाबा का यादगार रखा और उसके ऊपर छत भी ऐसी बनाई जो सभी तरफ से यह शान्ति-स्तम्भ, पवित्रता का स्तम्भ, ज्ञान का स्तम्भ, शक्ति का स्तम्भ देखने में आये। यह महानतम यादगार अब भी शक्ति, ज्ञान, पवित्रता, शान्ति की प्रेरणा दे रहा है। अनेकानेक नये-नये बच्चे आकर, अपने में इन गुणों की माला पहनकर जाते है। आप प्रैक्टिकल में देख रहे है कि प्राणेश्वर बापदादा अव्यक्त रूप में, दिन-प्रति-दिन देश-विदेश या सारे विश्व से, अपने बिखरे हुए बच्चों को आकर्षित कर, अपने दैवी परिवार में नया पावन जन्म दे, ब्राह्मण परिवार की वृद्धि करते जा रहे है। यह सब बापदादा की ही तो शक्ति है। बापदादा अपने बच्चों का नाम बाला कर रहे है और खुद गुप्त है। अब हम बच्चों का ही कार्य रहा हुआ है जो बाप को प्रत्यक्ष करें ताकि दुनिया गाये कि जिसकी रचना इतनी सुन्दर वो कितना सुन्दर, सर्व गुणों की, शक्ति-शान्ति की खान है! कहिए, वो दिन कब आएगा वा आया कि आया?

दादी भोली

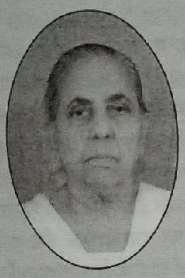

आपका लौकिक नाम देवी था। बाबा ने आपको 'अथक भव' का वरदान दिया था और भोली भण्डारी कह महिमा करते हुए मुरली में याद करते है। आप लौकिक में अनेक सितम सहन करती हुई बंधनों को तोड़ कर अपनी छोटी बच्ची मीरा सहित यज्ञ के प्रारंभ काल में कराची में समर्पित हुई। पहले-पहले आप छोटे बच्चों की संभाल के निमित्त बनी और बाद में बाबा ने भण्डारे की पूरी जिम्मेवारी आपको सौंप दी जिस जिम्मेवारी को आपने अंतिम श्वास तक, सबको संतुष्ट करते हुए, सबकी दुआयें लेते हुए निभाया। आप 9 फरवरी, 2007 को भौतिक देह त्याग अव्यक्त वतनवासी बन गई।

ब्रह्माकुमार भूपाल भाई, भोली दादी के साथ के अनुभव इस प्रकार सुनाते हैं –

मीठे-प्यारे यज्ञ में भोली दादी का बहुत बड़ा महत्व रहा। बाबा उन्हें प्यार से भोली भण्डारी कहते थे। नाम तो देवी था। दादी जानकी ने बताया था कि मै और भोली दादी एक ही दिन समर्पित हुए। भोली दादी आदिरत्न थी। बाबा ने उस आत्मा के गुणों को देखते हुए भण्डारे की इतनी बड़ी जिम्मेवारी दी। मुझे भी करीब 40 साल उनके साथ रहने का भाग्य प्राप्त हुआ।

आना सबसे पहले, जाना सबके बाद

विश्व किशोर दादा के अव्यक्त होने के एक-दो साल बाद हम भी यज्ञ में आए। बाहर के कारोबार मे दादा चन्द्रहास तथा दादा आनन्द किशोर के साथ मैं तथा एक-दो भाई और भी रहते थे। मुझे भी विशेष सारी खरीददारी का, बाहर के कारोबार का चांस मिला। मेरा भोली दादी से बहुत कनेक्शन रहा। भोली दादी अमृतवेले भण्डारे में सबसे पहले आती थी और सबके बाद में जाती थी। उस आत्मा की इतनी बड़ी विशेषता रही जो बापदादा, दादियों की आज्ञा से भोजन बनाती और मर्यादापूर्वक भोग लगाने के बाद वो भोजन सबको मिलता।

बाबा ने सन्देशी को वापस भेजा

एक बार बाबा ने सन्देशी को वापिस भेजा कि बच्चो, भोली से पूछकर आओ, भोजन टेस्ट किया। दादी ने भोजन टेस्ट किया तो पाया कि नमक नहीं था। भोली ने बोला, बाबा, आपसे पहले मैं भोजन कैसे

टेस्ट करूँ? बाबा ने कहा, बच्ची, आपको बापदादा की छुट्टी है कि पहले टेस्ट करो, भोजन में कोई बात की कमी ना हो, कोई चीज डालना भूल ना गई हो। इतना बड़ा महत्व था उस आत्मा का जो बाबा से भी पहले भोजन टेस्ट कर फिर भोग लगाती थी। यह भाग्य सबको नहीं था केवल निमित्त को था। इतना उत्तम भोजन दिल से, प्यार से बनाती थी। यदि कोई उदास हो जाए, मूँझ जाए और कितना भी बड़ा महारथी उसे समझाए, भाषण करे तो उसका मन बड़ी मुश्किल से बदलता है लेकिन भोजन में इतनी शक्ति है कि यह आत्मा के विचारों को बदल देता है, आत्मा को शक्तिशाली बना देता है। ऐसे भोजन के निमित्त आत्मा को कितनी दुआएं मिली होंगी!

कभी 'ना' नहीं

भोली दादी में यह विशेष गुण था कि कभी भी किसी को 'ना' नहीं कहा। कई बार हम देरी से आते थे, रात को 9 या 10 बज जाते थे। यदि किसी कारण से भोजन कम पड़ जाता, हम चारों तरफ चक्कर लगाते और दादी को बोलते, दादी भोजन तो है ही नहीं, तो दादी कहती, नहीं भाऊ, क्यों नहीं है, देखो बहुत है, आओ, आओ। फिर दादी यहाँ-वहाँ चक्कर लगाएगी, यह पतीला, वो पतीला खोलेगी, देखेगी, फिर बाईचांस नहीं है तो बड़े प्यार से, लाड से कहेगी, भाऊ मलाई से खा लो ना। उनकी बातों से ही पेट भर जाता था। भूख चली जाती थी, सन्तुष्टता आ जाती थी, ऐसा उनका जवाब होता था। बहुत बार का हमारा ऐसा अनुभव रहा है।

कभी नाराज होते नहीं देखा

दादी अपना भोजन बिना नमक का रखती थी, छोटी डब्बी में। कभी किसी के लिए यदि कुछ भी ना हुआ तो उसी को छोककर खिला देती थी और स्वयं नमक से या किसी चीज से चुपचाप खा लेती थी। किसी को कहती नहीं थी। मैंने कभी उस आत्मा को नाराज होते नहीं देखा। सेवाधारी भाई सभी चले जाते थे, कोई नहीं रहता था फिर भी वो अकेली बैठी रहती थी लास्ट घड़ी तक, सन्तुष्ट करती थी। कोई भी कार्यक्रम हो, दादी-दीदियों से पूछकर बहुत तरीके से, बड़ी सफाई से सब कार्य करती थी।

भोजन की कमी नहीं होने दी

उनके साथ एक बहन और थी सती भोली। देखो बाबा ने नाम भी भोली रखा। कोई बहुत पढ़ा-लिखा, होशियार, बुद्धिमान हो, ऐसा भी कामयाब नहीं होता ना। जिसका नाम भोली भण्डारी रखा, उसकी कितनी बड़ी महानता होगी। भोली थी मन और दिल से साफ। बुद्धिवाली नहीं, दिल वाली थी। शुरू-शुरू में तीन कमरे का भण्डारा था, छोटा-सा। उस जमाने में बरसात भी बहुत होती थी। महीना भर नहीं रुकती थी। लकड़ियाँ गीली हो जाती थी। रात को दो बजे चूल्हे पर रखते थे, धीमे-धीमे रात की बची आग से सूखती थी। तब जाकर वो थोड़ी-थोड़ी जलती थी, उनसे भोजन बनता था। हैण्डपम्प चलाकर भण्डारे का पानी इकट्ठा करते थे। मधुबन में एक ही नल था जहाँ अब बर्तन धुलाई होते हैं। वहाँ से भोली दादी अपने लिए बाल्टी भरकर ले जाती थी। कोई सेवाधारी नहीं। एक बार मैंने कहा, दादी, मैं ले जाता हूँ, बोली, नहीं। बाबा बोलते हैं,

सेवा नहीं लेनी। वह खुद कितनी सेवा करती थी! तो दादी को मै देखता था, वहाँ से बाल्टी भरकर, पुराने बाबा के भवन मे, छोटे-से कमरे मे जहाँ रहती थी, वहाँ ले जाती थी। दादी का दिन भर का, पौना टाइम भण्डारे में गुजरता था। जब भण्डारा काला हो जाता था, महीने, दो महीने बाद सफाई करते थे। ऐसे कम साधनों के समय मे, दादी ने बहुत मीठा, प्यारा पार्ट बजाया। भोजन की कभी कमी नहीं होने दी।

मनइच्छित फल सबको मिलता

पहले-पहले हमारे पास बैलगाड़ी होती थी। सामान तो बैलगाड़ी में जाता था और लोग पैदल जाते थे। धीरे-धीरे हमने किराए की गाड़ी लेना शुरू किया। सब्जियाँ नीचे से ऊपर जाती थी। जब सब्जियाँ पहुँचती थी, बड़े प्यार से चेक करती थी, बनाती थी। दादी ने कभी इस कारण अभाव नहीं होने दिया कि आज लकड़ी नहीं है, सेवाधारी नहीं है। कोई नहीं होता तो खुद ही लग जाती पर समय पर भोजन तैयार मिलता। पार्टियाँ भी आती-जाती थी, सबको सन्तुष्ट करके भेजती थी। मन:इच्छित फल सबको मिलता था। कभी तबीयत खराब हो जाती थी, तो भी अपनी छोटी-सी पीढ़ी पर आके बैठ जाती थी। हम कहते थे, दादी आपकी तबीयत खराब है, कहती थी, नहीं, बाबा बैठा है। बुखार में भी बैठ जाती थी। उस आत्मा ने खराब तबीयत में भी किसी से सेवा नहीं ली। मुझे उससे बहुत प्यार है क्योंकि लौकिक माँ ने तो 17-18 वर्ष पालना की पर भोली दादी ने तो 40 वर्ष पालना की। असली माँ तो हमारी यही भोली दादी थी जिसने पाल-पोस कर इतना बड़ा किया। हमारा टाइम ऐसा ही होता था बाहर जाने का। देरी से आना, सवेरे-सवेरे जाना। जब सूचना होती थी तो भोजन अलग से रखती थी, अच्छा भोजन देती थी। पूछती थी, भाऊ क्या ले जाओगे आज। दादा चन्द्रहास, दादा विश्व किशोर सबसे पूछकर, अच्छा बनाकर, प्रोग्राम प्रमाण देती थी। उस समय सेन्टर तो थे नहीं, टिफिन में दो-तीन टाइम का भोजन भी ले जाना होता था। आज तो हर 50 कि.मी. पर सेन्टर है, पानी, भोजन सब मिलता है। उस समय नहीं होता था। विश्व किशोर दादा को भी हमने एक-दो बार देखा, पाली जाते थे, उनके पास किट थी, भोली दादी उसमें चावल-दाल, नमक, मिर्च सब कुछ रख देती थी और बताती थी, यदि भोजन मे लेट हो जाओ तो इसमें यह-यह, ऐसे-ऐसे डालकर खिचड़ी बन जाएगी। बाद में दीदी ने वो किट हमें दिया।

एक दाना भी व्यर्थ नहीं

भोली दादी एक दाना भी व्यर्थ नहीं जाने देती थी। रात की रोटी बचती थी, सेलमानी बनाती थी। बची हुई हर चीज को सम्भाल कर रखती थी। भोली दादी, बाबा की आज्ञा प्रमाण पार्टियों को प्रोग्राम देती थी भोजन बनाने का। मान लो दिल्ली की पार्टी को भोजन की सेवा मिली, वो अपने तरीके से और पसंद से भोजन बनाते थे पर दादी सबके भोजन को इस तरह सेट कर देती थी कि दिल्ली वालों का बनाया भोजन महाराष्ट्र वालों को भी पसंद आए। अन्न का दाना भी कभी फेंका हो, मैंने कभी देखा नहीं।

दधीचि समान हड्डियाँ सेवा में लगाईं

दधिची ऋषि मिसल अन्त तक सेवा की। जैसे

बड़े-बड़े भाषण करने वालों को बाबा याद करता है, ऐसे भोली भण्डारी को भी बाबा मुरली में कितना याद करता है! शुरू में हम कम थे, काम बहुत करते थे। भोली दादी मुझे कहती थी, भाऊ, मुझे दादी-दीदी ने कहा है, तीन बार आपको मक्खन खिलाना है। मैंने कहा, दादी, सबको तो छाछ भी नहीं मिलती पर मेरे को एक बार तो जरूर खिलाती थी। ऐसी आत्माओं से हमें कितनी प्रेरणा लेनी चाहिए। समय बीतता जाता है। पुराने महारथी अपनी कर्मातीत अवस्था को पाते जा रहे है। हमें भी अपनी हड्डियाँ दधिची समान सेवा में लगानी हैं।

******

भोली दादी के साथ भण्डारे में लगभग 38 वर्षों तक सेवारत रहे **ब्र.कु. सूर्य भाई**, उनके साथ का अनुभव इस प्रकार सुनाते हैं –

जहाँ शान्ति स्तंभ है, वहाँ बाबा के शरीर का अंतिम संस्कार करना था। बड़ा भावुक सीन था। बहुत सारी बहनों को कमरों में बंद कर दिया गया था। कारण आप समझ सकते है। कई बहनों के मन पर दूसरी तरह का इफेक्ट हो गया था, भोली दादी के मन पर भी हो गया था। अव्यक्त बापदादा आये सन्तरी दादी के तन में। सवेरे का समय था। भोली दादी को ट्रीटमेंट के लिए अहमदाबाद ले जाया जा रहा था। उन दिनों जो भी जाते थे, बाबा से छुट्टी लेते थे। भोली दादी को बाबा के सामने लाया गया। हिस्ट्री हॉल में तीन गद्दियाँ होती थीं। एक पर बाबा विराजते थे, एक पर मम्मा और यदि किसी बच्चे को बिठाना हो तो एक तीसरी भी थी। बाबा ने वो एक गद्दी अपनी गद्दी से मिला दी और भोली दादी को अपने समीप बिठाया। एक सुन्दर सीन था। बाबा ने भोली दादी के सिर, मुँह, हाथ, पैर – पूरे शरीर पर अपना हाथ घुमाया, टच किया, पैर तक भी। फिर भोली दादी को कहा, बच्ची, माया नगरी में जाती हो? तुमको वहाँ नहीं जाना है, बाबा तुम्हारे लिए वतन से दवाई भेजेंगे। दादी बोली, नहीं बाबा, मैं नहीं जाऊँगी। बाबा की दृष्टि और प्यार पाकर वो ठीक हो गई, अहमदाबाद नहीं गई।

दादी अथक थी

जैसे इतिहास में काल होता है, बुद्ध का काल, शंकराचार्य का काल, ऐसे ही यज्ञ में भी एक मम्मा-बाबा का काल था। उसके बाद दीदी का काल, फिर दादी का, ऐसे ही भोली दादी का भी बहुत सुन्दर काल था। कराची से लेकर आबू तक उन्होंने यज्ञ की जबर्दस्त सेवा की। आबू में भोली दादी के सहयोगी के रूप में मैं और बल्लभ भाई दोनों छोटे थे, मै 19 का था, वो 20 या 21 का रहा होगा। हम थक जाते थे। वो हमें कहती थी, मैं बूढ़ी थकी नही और तुम जवान थक गए। हममें फिर वही उमंग आ जाता था। सवेरे से उनकी सेवा चालू हो जाती थी। पहली चाय वही बनाती थी अमृतवेले 3 बजे उठकर। किचन के अलग-अलग विभाग उन दिनों नहीं थे। एक ही जगह भोजन, दूध, टोली सब रहता था। भोली दादी में वो सब क्वालिटीज थी जिनके आधार पर भगवान किसी को प्यार करता है। आप सब जानते है, क्या है वो क्वालिटीज? सरलता, भोलापन, निर्मलता, सत्यता, तेरा-मेरा न हो, छल-कपट न हो। किसी ने कभी उनके मुख से नहीं सुना, मैं इतना काम करती हूँ, मुझे यह चाहिए, मुझे भी स्टेज पर बिठाया जाये, मेरा भी सम्मान हो। बहुत सेवा

करने के बाद भी जैसे उन्हें यह आभास ही नहीं था कि वो कुछ करती हैं। यह बहुत बड़ी क्वालिटी थी।

बहुत निर्मलचित्त थी

दादी में सभी को संतुष्ट करने की एक नेचुरल प्रवृत्ति थी, जैसे उन्हें कुछ करना नहीं था। वो किसी को संतुष्ट ना करे तो उनको परेशानी हो जाती थी। इसलिए संतुष्ट करने में जीवन लगाया। जाग रही हैं, नींद छोड़ दी है, दिन में सोती नहीं थी, कुर्सी पर ही थोड़ी बहुत सो लेती थी, फिर काम-काज में लग जाती थी। जब हम आये तो हमको सबने कहना शुरू किया कि भोली दादी को थोड़ा सुख तो दो, थोड़ी ड्यूटी तुम ले लो। फिर हमने और वल्लभ भाई ने चाय की ड्यूटी, टोली की, स्टोर की, सब्जियों आदि की संभालनी शुरू की। अब तो स्टोर में सामान खरीदा जाता है। पहले मातायें-भाई थोड़ी-थोड़ी चीजें लाया करते थे। एक किलो चाय, हल्दी, लाल मिर्च – इस प्रकार की चीज़ें आती थी। दूसरे-तीसरे दिन हम इन चीजों को सेट करते थे। दादी बिल्कुल निर्मलचित्त थी। हर बात में हाँ जी। कभी-कभी हम भी कह देते थे, दादी आप हर बात में ही हाँ जी कह देती हो। कभी-कभी तो लगता था कि बाबा या दादी उसे कह दे कि यह तारा जो आसमान में दिख रहा है, तोड़ लाओ, सब्जी बना दो तो वो यह नहीं कहेगी, नहीं बाबा। वो यह नहीं कहती थी, यह काम नहीं हो सकता। और हम जानते है, जब हम हाँ जी करते हैं तो बाबा अपनी शक्तियाँ हमें दे देता है। हाँ जी का परिणाम यह होता है कि भगवान का प्यार भी और शक्तियाँ भी हमारी तरफ खिंची चली आती है।

किसी से सेवा नहीं ली

एक बार भोली दादी ने कहा, बाबा, मैं तो और सेवा करती नहीं हूँ ज्ञान देने की। बाबा ने कहा, बच्ची, तुम निश्चिन्त रहो, सेवा के सब्जेक्ट में तुम्हारे 100 मार्क्स हैं, तुम्हें कुछ और करने की जरूरत नहीं। धारणायें भी ऐसी थी उनकी। दो शब्द उनके मुख पर सदा रहते थे, एक, किसी से सेवा नहीं लो और किसी को दुख नहीं दो। सेवा नहीं लो, यह अंत तक देखा गया। चन्द्रिका बहन (नर्स) सुना रही थी, अहमदाबाद ले जाने का प्रोग्राम बना, एक-दो माता या भाई को सेवा के लिए तैयार कर रहे थे, इतने में विदाई हो गई। तो जैसे जाते हुए भी किसी की सेवा नहीं ली, बहुत अच्छा रिकॉर्ड है यह।

बाबा बहुत प्यार करते थे उनसे

देहत्याग के चार दिन पहले उनको किचन में बैठे देखकर (सो गई थी वो, मैंने जगाया नहीं), मैंने बाबा से बात की, बाबा कितना अच्छा हो, यह यहाँ बैठी-बैठी चली जाये, आप बुला लो, आपका इस आत्मा से बहुत प्यार है, इस आत्मा का आपसे बहुत प्यार है। जाना तो सबको है, पर बिना कष्ट दिए चली गई। इतना अच्छा पार्ट बजाया। हाँ जी के कारण सदा भण्डारे भरपूर रहे। साकार बाबा उनको बहुत प्यार करते थे। बाबा से मिलने जाती थी। किचन का विशेष कपड़ा पहनती थी, वो मैला हो जाता था तो बाबा के कमरे के बाहर ही खड़ी होकर बाबा से कुछ पूछती थी। बाबा कहते थे, क्यों बच्ची, बाहर ही खड़ी हो, अंदर आओ। कहती थी, बाबा, मेरा वस्त्र गंदा है। बाबा कहते थे, नहीं, नहीं, आओ। जैसे माँ-बाप बैठे

हैं, बच्चा मैला-कुचैला कैसा भी हो, जूतों समेत भी उठा लेते हैं तो बाबा भी तो मात-पिता हैं, कहते थे, नहीं बच्ची, आगे आओ और वहीं बाबा उससे गले मिल लेते थे। हालाँकि उसके कपड़ों में किचन के धुएँ की बदबू (लकड़ी जलती थी ना) हो जाती थी पर बाबा भी बाप है, बहुत प्यार था उनसे। बाबा कम से कम तीन बार किचन में जाते थे। सवेरे छह बजे रूम से निकलते थे, 6.10 पर क्लास में होते थे, 6.15 पर मुरली शुरू हो जाती थी। दस मिनट बाबा के चक्कर लगाने के होते थे। बगीचे से होके किचन में जाके, ठीक 6.10 पर क्लास में पहुँच जाते थे। ऐसा टाइम था बाबा का कि लोग अपनी घड़ियाँ मिलाते थे, बाबा निकला है कमरे से, अवश्य छह ही बजे होंगे, एक-दो सेकंड आगे-पीछे नहीं। बाबा जब आते थे भण्डारे में, उसे देखते थे, बहुत काम करती थी। सभी बताते थे कि दादी बहुत सेवा करती है, सबको संतुष्ट करती है। किसी को बुरा नहीं बोलती है। दादी जी भी तीन-चार बार किचन में आती थी।

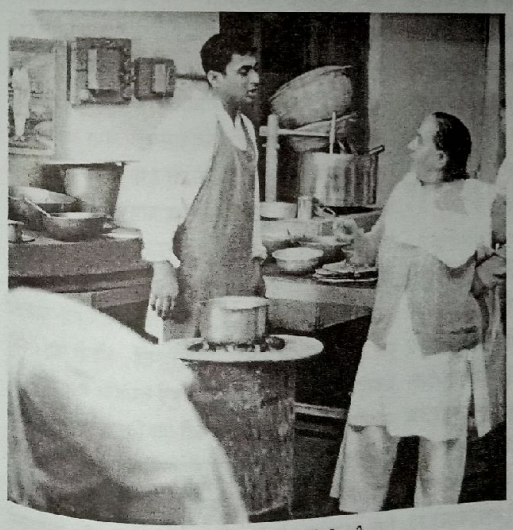

किचन में सेवा में तत्पर भोली दादी

कमल जैसा चित्त, पानी पड़ा और बह गया

एक छोटी कन्या थी जो भोली दादी से बहुत लड़ती थी। लड़कर एक घंटे में आई, बोली, भोली, मुझे कुट्टी (चूरमा) खिला दो। दादी ने कहा, हाँ, हाँ, क्यों नहीं। उसको स्पेशल बनाकर दिया। हमको बड़ा आश्चर्य लगा कि अब तो लड़के गई थी, फिर आ गई और चूरमा माँग रही है देशी घी का, भोली दादी भी कितना प्यार से खिला रही है। मैंने कहा, दादी, ये रोज लड़ती है, फिर तुम इसे बना-बनाकर देती हो। कहती थी, बाबा के बच्चे हैं, कहाँ जायेंगे, दिल होगी तो यहीं तो खायेंगे ना। स्थिति हो तो ऐसी हो। चित्त की निर्मलता है ना यह। अच्छे-अच्छे योगियों के चित्त पर नहीं रहती ऐसी निर्मलता। उसका चित्त कमल फूल की तरह था, पानी पड़ा और बह गया। हम सब भगवान को प्यार करते हैं पर कुछ ऐसे हैं जिन्हें भगवान प्यार करता है, उनमें से एक थी हमारी भोली दादी।

बच्चों ने किया है शृंगार

भोली दादी के अव्यक्त होने के बाद संदेश में था कि वह सजी

हुई बैठी थी बाबा के पास और बाबा को कह रही थी, बाबा, यह क्या है, यह शृंगार उतारो, मुझे अच्छा नहीं लग रहा है। बाबा ने कहा, यह शृंगार बाबा ने नहीं किया है, ये जो नीचे बच्चे हैं ना, वो स्नेह, प्यार, भावनायें, दुआयें दे रहे हैं। यह वो शृंगार है। फिर दिखाया कि बाबा उसे अपने बाजू में बिठा रहे थे तो बोली, नहीं बाबा, मैं आपकी आँखों के सामने बैठूँगी, यहाँ थोडे मैं आपको देख सकूँगी। फिर बाबा उनको भोग खिलाने लगे तो कहा, नहीं बाबा, मैं पहले आपको खिलाऊँगी। बाबा ने कहा, नहीं बच्ची, अब तो आप बाबा के निमंत्रण पर आई हो यहाँ इसलिए बाबा आपको खिलायेंगे। फिर बाबा ने उनको खिलाया और उन्होंने बाबा को खिलाया। फिर बाबा ने कहा, बच्ची, बहुत समय से सोचती थी ना कि बाबा, अपने साथ रख लो मुझे। अभी तो आप रहो यहाँ आराम से बाबा के पास। तो इतना अच्छा संदेश था दादी का। बहुत अच्छा पार्ट बजाया उस आत्मा ने।

******

हर्षित काका ने दादी के साथ का अनुभव इस प्रकार सुनाया –

दादी ने भण्डारे में सब कुछ करना सिखाया

जब भी मधुबन में प्रवेश करते हैं तो पहले बाबा के कमरे में और फिर भोली दादी के बैठने का जो स्थान है, वहाँ उनके चरणों में ना बैठें तब तक दिल को आराम नहीं मिलता था। हमारी 67 साल की उम्र है फिर भी भोली दादी के सामने ऐसे ही महसूस होता रहा जैसे कि मैं उसका छोटा बच्चा हूँ। हम तो खिचड़ी पकाना भी नहीं जानते थे। दादी ने ही हमें पिछले 35 वर्षों से, भोजन, टोली कैसे बनाना है, लकड़ी कैसे जलानी है, जले हुए कोयलों को कैसे धुलाई करना है, उनमें से काले-काले कोयलों को कैसे चुनना है, उनको अंगीठी में कैसे जलाना है, इन सब बातों के साथ-साथ यज्ञ के एक-एक कणे-दाने का महत्त्व सुनाया। शिव भोलेनाथ के यज्ञ के भण्डारे के एक-एक कण को बचाते हैं तो कणे का घणा होता है और कणे-कणे का हिसाब भी होता है।

दादी ने हमें इकॉनामी का पाठ, सबको संतुष्ट करने का पाठ, अथक रहने का पाठ सिखाया। हम लोग दो-दो बजे उठते थे। वो सिखाती थी, कभी किसी को ना नहीं कहना। जब तक मधुबन में रहे, रात का बचा हुआ खाना, इतना भी फेंका नहीं। रात को 11 बजे भी खाना गर्म करते थे और सुबह उसे मिक्स करके पराठे बनाते थे। बची हुई रोटियों की सेलमानी बनाते थे। टोली संभालना, अचार बनाना – सब समझाया। उनके ही आशीर्वाद से बीस हजार तक का भी भोजन बना लेते हैं। यदि समय आयेगा और पचास हजार का भी बनाना पड़ेगा तो हमारे मन में यह नहीं आयेगा कि यह कैसे होगा। यह सारी शिक्षा-समझानी हमारी भोली माँ ने हमें दी और उसके आशीर्वाद से इस उम्र में भी हम भोलेनाथ के भण्डारे में सेवा कर रहे हैं। भोली दादी के देहत्याग के बाद दादी जानकी ने मुझे बुलाया, बोली, हर्षित भाई, भोली गई। मैंने कहा, दादी, मुझे बड़ी खुशी हुई क्योंकि हमारी भोली दादी को बिल्कुल पसंद नहीं था कि उसकी नाक में नलियाँ पड़ें। उसने बिल्कुल सेवा नहीं ली। ग्यारह बजे तकलीफ हुई, पाँच बजे ब्लीडिंग हुई, उसे अहमदाबाद ले जाना था, बोली, मुझे अहमदाबाद नहीं, मधुबन में

ही रहना है। फिर आई.सी.यू. में ले गये और बाबा ने वतन में बुला लिया। हमारी भोली दादी 84 जन्म ब्रह्मा बाबा के साथ-साथ पार्ट बजायेगी और सर्वश्रेष्ठ पद प्राप्त करेगी। ऐसी हमारी शुभभावना और शुभकामना है। दादी भी वतन में बैठकर हमें देख रही हैं और हम बच्चों को दुआ दे रही है। उसकी दुआ, हमारे जन्म-जन्म के पाप काट देगी, ऐसा मेरा अनुभव है।

******

ज्ञान सरोवर के **सुभाष भाई** जो लगभग 20 वर्ष तक भोली दादी के साथ किचन में सेवारत रहे, अपने अनुभव इस प्रकार व्यक्त करते हैं –

जिसे कोई उपमा न दी जाये, उसका नाम है 'माँ'
जिसकी कोई सीमा नहीं, उसका नाम है 'माँ'
जिसके प्रेम को कभी पतझड़ स्पर्श न करे,
उसका नाम है 'माँ'
हे महान आत्माओ, प्रभु को पाने की पहली सीढ़ी है 'माँ'
ऐसी थी भोली और अलौकिक – भोली दादी मेरी 'माँ'

प्यार व दुलार देती थी दादी

जब भी वो भोली-सी सूरत याद आती है.. सारी यादें स्मृति-पटल पर जाग उठती हैं और आनंद विभोर कर देती हैं। वो महान विभूति कौन थीं? जिसका दिल सागर समान अपार था.. जिसमें प्यार ही प्यार छलकता था.. वो मेरी अलौकिक माँ.. भोली दादीजी थी।

मैं स्कूल की छुट्टियों में मधुबन आया, वह सन् 1983 के गुडिपाडवे का दिन था जिसे महाराष्ट्र में नये साल के रूप में मनाते हैं। कुछ दिन सेवा में रुकने का सौभाग्य मिला। मेरे बड़े भाई तुलसाराम जी ने मेरा परिचय भोली दादीजी से कराया। पहली मुलाकात में दादीजी ने हमें इतना प्यार दिया, वात्सल्य का हाथ सिर पर रख दिया, पीठ थपथपाई और मानो सदाकाल के लिए अपना बना लिया। जब भी हम वहाँ से गुजरते, दादीजी को ओमशान्ति जरूर करते। दादी जी आते-जाते कुछ-न-कुछ छोटी-मोटी सेवा बता देती थी जिसे हम पलक झपकते ही बड़े ही उमंग-उत्साह से पूरा कर देते थे। भोली दादीजी को वो ड्रेस – कुर्ता-पाजामा और ऊपर से कलर वाला कारटमवाला झब्बा बड़ा ही सुहाना लगता था।

'हाँ जी' का पाठ

सेवा करते-करते दो मास पूरे हो गये और वापस जाने का समय आ गया। परमात्मा बाप पर निश्चय, मधुबन के प्यार, दादियों के प्यार और भोली दादीजी के असीम प्यार ने मुझे गद्गद कर दिया था। भारी कदमों से रोते-रोते मैंने और मेरे भाई ने यहाँ से विदाई ली.. लेकिन जो नशा चढ़ा वो घर में भी नहीं उतरा.. सेवा का फाउण्डेशन भोली दादी जी ने इतना मजबूत कर दिया कि जैसे ही परीक्षा पूरी होती, मैं मधुबन ने दादीजी के पास सेवा में हाजिर हो जाता। भोली दादीजी ने मुझे धीरे-धीरे ऑलराउण्डर बना दिया। अलग-अलग प्रकार की सेवायें कैसे करनी हैं, यह दादीजी खुद करके सिखाती थी। दादीजी ने 3.30 बजे अमृतवेले से पहले कोयले की सेगड़ी जलाना, सफाई करना, मक्खन निकालना, भोजन खिलाना आदि सब सिखाया। कभी-कभी कोई कार्य मुझसे ठीक तरह से नहीं होता था तो दादी बार-बार समझाती व सिखाती थी।

मुझे याद है, उस दिन बड़ी दादीजी का क्लास था, मैं क्लास की ओर जा रहा था। उसी समय कुछ मेहमान आये, उनके लिए कुछ बनाना था। मैंने भोली

दादीजी से कहा, मै क्लास मे जा रहा हूँ। भोली दादीजी ने अपने पास बिठाया और समझाया कि कभी भी सेवा मे ना नही करना चाहिए, मम्मा कभी भी ना नही करती थी, ना माना नास्तिक, ना माना नाक कट जाती है। कभी ना नही, 'हाँ जी' का पार्ट बजाना चाहिए। यह सुनाते-सुनाते भोली दादीजी का दिल भर आया, बाबा की बाते बताते समय उनकी आँखो मे आँसू आ गये, मै पिघल गया और सदा 'हाँ जी' का पार्ट बजाने का मन-ही-मन दृढ सकल्प कर लिया। यह मेरा पहला दृढ सकल्प था, जो दादीजी द्वारा कराया गया था। कौन-सी परिस्थिति मे कौन-से काम को ज्यादा महत्त्व देना चाहिए, कौन-से काम की ज्यादा जरूरत है और पहले कौन-सा काम करना चाहिए – यह हमे भोली दादीजी से सीखने को मिला।

मेरे लिए सिफारिश

मधुबन मे, सन् 1986 का रक्षाबंधन का दिन था, राखी बँधवाकर घर वापस जाने का मेरा प्रोग्राम पक्का था, तैयारी भी कर ली थी लेकिन क्या पता था कि वो रक्षाबंधन का दिन मेरे जीवन की सबसे बड़ी खुशी का दिन होने वाला था। प्यारी प्रकाशमणि दादीजी ओमशान्ति भवन की स्टेज पर राखी बाँध रही थी। जब मेरी बारी आई तो दादी जी ने पावरफुल दृष्टि देकर, अपने हाथ मे मेरा हाथ लेकर जोर से दबाया और कहा, 'आज से तुम्हे कही नही जाना है, मधुबन मे ही रहना है।' यह सुनकर, खुशी के मारे मानो मेरे पैर धरती पर नही थे, मै उड रहा था। मेरा तमन्ना थी कि मै समर्पित हो जाऊँ, वो बाबा ने पूरी की। वहाँ से मै भोली दादी के पास कब पहुँचा, पता ही नही चला। भोली दादीजी के सामने अपनी बात कैसे व्यक्त करूँ, समझ मे नही आ रहा था। आँखो से खुशी के आँसू बह रहे थे। भोली दादी ने मुझे अपने गले से लगाया, सिर पर, पीठ पर प्यार भरे हाथो से थपथपाया और कहा, तुम

भोली दादी जी के साथ सुभाष भाई और एक डच विदेशी भाई

पास हो गये। बाद मे मुझे पता चला कि अमृतवेले के बाद भोली दादीजी भोजन का प्रोग्राम लेने बड़ी दादीजी के पास गयी तभी मेरी सिफारिश की थी – बच्चा अच्छा है, योगी है, हार्डवर्कर है, सभी लोग चाहते भी है और हमे भोजन परोसने के लिए इसकी आवश्यकता भी है। भोली दादीजी ने मेरी इतनी जोरदार सिफारिश कर दी जो बड़ी दादीजी ने हमे रक्षाबंधन के अवसर पर इतना बड़ा तोहफा दिया।

भोली दादी सदा ही गुप्त रही, उसको कभी स्टेज की माया ने स्पर्श तक नहीं किया, न कोई भाषण, न कोई मान-शान की इच्छा, बस इतना कहती थी – 'बाबा देखता है, बाबा मेरे साथ रहता है।' जो दादीजी ने कहा मानो बाबा ने कहा। बस बाबा का मत्र ही है, कभी 'ना' नहीं कहना, 'हाँ जी' का पाठ सदा पक्का करना।

दादियों ने बनायी कढ़ी

मधुबन मे भोजन खिलाने की सेवा भूरी दादीजी के पास थी। जब कभी भोजन कम पड़ता था, हम तुरन्त भोली दादीजी के पास पहुँच जाते और वे कहती, जाओ रोटी बनाने वाले को बुलाओ, माताओ को बुलाओ, भोजन कम होता तो कहती, देवू भाई को बुलाओ। जब तक भोजन बने, भोली दादीजी अपने पास जो कुछ होता था, सब दे देती थी। भोली दादीजी के मन में रहता था कि बाबा के भण्डारे से कोई भूखा न जाये।

एक दिन की बात है... भोली दादीजी भण्डारे मे सेगड़ी पर कढ़ी बनवा रही थी, मुझसे एक-एक सामान मंगवा रही थी, क्योंकि दाल कम पड़ जाये तो कढ़ी बनाना सहज होता है। करीब दो बजे का समय था, उधर से बड़ी दादीजी, गुलजार दादीजी, जानकी दादीजी, ईशू दादीजी, मुन्नी बहन, मोहिनी बहन, लच्छू दादी – सभी दादियो का झुण्ड किचन में आया। बड़ी दादीजी ने पूछा, भोली क्या बना रही हो? भोली दादीजी ने कहा, दाल कम पड गयी है इसलिए कढ़ी बना रहे है। फिर क्या था, बड़ी दादीजी ने अपने हाथ मे कड़छी ली, कोई दादी नमक डाल रही है तो कोई कुछ मानो सभी दादियो ने मिलकर कढ़ी बनायी। सभी दादियाँ इतनी खुश दिखाई दे रही थी.. सचमुच, वो देखने जैसा दृश्य था। बड़ी दादीजी ने कहा, हाँ, भोली, हमारे लिए इस लड़के के हाथ कढ़ी भेजना.. उस अन्नपूर्णा के डेगरे से कितने लोगो ने कढ़ी खायी . सभी जो भी उधर थे.. जिन्होंने खाना खा भी लिया था उन्होंने भी कढ़ी पीई इसलिए कि दादियो ने कढ़ी बनायी है। दूसरे दिन यह बात ओमशान्ति भवन की क्लास मे सबके सामने सुनायी गई।

सही समय सही निर्णय

एक दिन की बात है, दिन का भोजन लिफ्ट से चढ़ाना था और लिफ्ट खराब हो गयी थी। हम सब उसे ठीक करने की कोशिश मे लगे हुए थे लेकिन ठीक नहीं हुई। अब 12 बजने मे पाँच मिनट बाकी थे। मै भोली दादीजी के पास हाँफते-दौडते पहुँचा और लिफ्ट की बात सुनाई। भोली दादीजी खड़ी हुई, मेरा हाथ पकडा और कहा, जाओ.. बड़ी दादी के पास, यह बात सुनाओ। मै बड़ी दादी जी के ऑफिस की तरफ दौडा, उस समय दादीजी कोई पत्र पढ रही थी। जैसे ही मै गया, दादीजी ने पूछा, बोलो, क्या हुआ?

मैंने कहा, दादीजी लिफ्ट खराब हो गयी है, भोजन डायनिंग में पहुँचा नहीं है। दादीजी तुरन्त उठकर खड़ी हुई, मेरे साथ भण्डारे में आई और वहाँ मौजूद सभी भाइयो को कहा, चलो.. चलो.. पाण्डव . जाओ, नीचे किचन से भोजन ऊपर लाओ। दादीजी का कहना और करीब 25 पाण्डव किचन में दौड़े, एक साथ पाँच मिनट में भोजन ऊपर पहुँचा दिया तथा ठीक 12 बजे भोजन खिलाने की तैयारी हुई। तब भोली दादीजी ने बड़ी दादीजी को कहा, थैंक्स दादी, थैंक्स दादी। बड़ी दादीजी ने भोली दादीजी को, छोटे बच्चे को जैसे गले लगाते है, वैसे गले लगाया। वो दृश्य भी बड़ा ही प्यारा, रमणीक और देखने जैसा था। कोई भी बात होती थी या कोई भी काम होता था या कोई गलती होती थी या फिर घर जाने की छुट्टी लेनी होती थी – हम भोली दादी को ही कहते थे। भोली दादीजी बड़ी दादीजी से बात कर हमारा काम आसान कर देती थी।

लौकिक माँ से चिट-चैट

मेरी लौकिक माँ जब भी मधुबन आती थी अनाज की छोटी-छोटी गठड़ियाँ ले आती थी। एक बार की बात है, जब माँ मधुबन आयी तो साथ में 10-12 गठड़ियाँ ले आयी जिनमें दालें, चावल, गेहूँ, चीनी आदि थे। मैं माताजी को भोली दादीजी के पास ले गया, उन्होंने वो गठड़ियाँ भोली दादीजी को दी। दादी बहुत खुश हुई, मेरी लौकिक माँ को बहुत प्यार किया और कहा, देखो, बुढ़िया बाबा को कितना प्यार करती है। फिर भोली दादीजी ने मेरा हाथ पकड़ा और कहा, और माताजी को चिढ़ाने लगी, सुभाष मेरा है, मैंने उसे इतना बड़ा किया है, ऑलराउण्डर बनाया है। भोली दादीजी देखना चाहती थी, लौकिक माँ का मेरे में कितना मोह है। माँ ने कहा, यह तो बाबा का है, बाबा की सेवा करेगा। यह सुनकर भोली दादीजी बहुत खुश हुई। तब लौकिक माँ ने कहा, अच्छा, इसे बाबा के घर से इतना प्यार और दुलार मिलता है इसलिए इसे लौकिक घर की कभी याद नहीं आयी।

दादी मक्खन खिलाती थी

मुझे दादीजी ने मक्खन निकालना सिखाया। पहले तो हम चित्रों में श्रीकृष्ण को मक्खन खाते हुए देखा करते थे लेकिन भोली दादीजी ने मुझे दही मथकर मक्खन निकालना सिखाया। कभी-कभी मक्खन निकलता ही नहीं था, मैं बहुत परेशान हो जाता था क्योंकि बार-बार रस्सी खींचने से बाँहें बहुत दर्द करने लगती थी। तब स्वयं भोली दादी मेरे साथ बैठकर बड़े प्यार से मक्खन निकालती थी। मुझे मक्खन अच्छा नहीं लगता था क्योंकि मैं निकालता था तो खाने की इच्छा नहीं होती थी। एक दिन भोली दादीजी ने अपने पास बिठाकर एक कटोरी में मक्खन और चीनी का बुरा मिलाकर कहा, लो, यह खा लो। मैंने कहा, दादीजी, मुझे मक्खन अच्छा नहीं लगता। दादीजी ने कहा, तुम अभी बच्चे हो... तुम्हें तो पहलवान बनना है, तुम मक्खन खायेगा तो ताकत आयेगी तब तो बाबा के घर की सेवा करेगा। फिर मैंने धीरे-धीरे मक्खन खाना शुरू किया, कभी चीनी के साथ तो कभी रोटी के साथ। कभी-कभी मैं मक्खन खाना भूल भी जाता था तो दादीजी बुलाकर कहती, आज

मक्खन नहीं खाया? ऐसे भूलना नहीं। नहीं तो कमजोर हो जाओगे।

सुप्रीम सर्जन बाबा

एक बार की बात है, भोली दादीजी बहुत बीमार हुई। यह सन् 1990 की बात होगी। दादीजी को डॉक्टर ने अहमदाबाद ले जाने के लिए कहा लेकिन भोली दादीजी मधुबन से दूर नहीं जाना चाहती थी। उस समय अव्यक्त बापदादा आये हुए थे। भोली दादीजी को बापदादा से मिलाने लेकर गये। भोली दादी बापदादा से गले मिली और बाबा को कहा, बाबा, मुझे अहमदाबाद मत भेजो और दादी की आँखों से आँसू बहने लगे। बापदादा ने भोली दादीजी को बहुत प्यार किया, सिर पर हाथ फेरा और कहा, बच्ची, तुम्हें कहीं जाने की जरूरत नहीं। बाबा ने दादी के हाथ में टोली दी और कहा, इसे खा लो, ठीक हो जाओगी। और सचमुच दूसरे दिन सुबह दादीजी एकदम पहले जैसी ठीक हो गई। सच बात तो यह थी कि भोली दादी का बापदादा से इतना प्यार और उनमें इतना विश्वास था कि स्वयं बाबा भी दिल के प्यार में बँधा हुआ था और टोली में इतनी शक्ति और प्यार भरा जो दादीजी एकदम ठीक हो गई क्योंकि बाबा तो सुप्रीम सर्जन है।

किसको क्या चाहिए, दादी जी सबका ध्यान रखती थीं

जल में निर्मलता, चंदन में शीतलता देखी,
सागर में गंभीरता, पर्वत में अटलता देखी,
हर एक में कोई न कोई खासियत होती है,
किंतु ये सारी विशेषताएं हमने,
प्यारी भोली दादी जी आपमें देखीं।

कौन शुगर का पेशेन्ट है, किसको किस चीज की परहेज है, किसको क्या अच्छा लगता है, कोई गेस्ट आया है तो उसे क्या भोजन देना है, इस प्रकार भोली दादीजी पूरा ध्यान रखती थी। रास्ते का भोजन भी देती थी। सबको पूछती थी, भोजन किया... कुछ चाहिए?

एक बार की बात है, एक पार्टी सुबह 6 बजे बस स्टैण्ड पर पहुँची क्योंकि बस 6 बजे की थी। उस समय भोजन तैयार नहीं हुआ था। जब रास्ते का भोजन तैयार हुआ तो भोली दादीजी ने मुझे भोजन देकर एक साइकिल पर बस स्टैण्ड भेजा। वहाँ पहुँचा तो सभी लोग बस में बैठे चुके थे। मैंने कहा, भोली दादीजी ने रास्ते का भोजन भेजा है तो सब इतने खुश हुए कि उनकी आँखों से खुशी के आँसू बहने लगे और कहा, दादीजी को और बाबा को थैंक्स देना।

अव्यक्त बापदादा ने एक मुरली में विशेष रूप से भोली दादीजी को याद किया। मुझे बहुत खुशी हुई। बाबा ने कहा, जैसे बड़ी दादियों से लोग मिलते है वैसे ही भोली दादीजी को भी मिलते हैं। उनकी सेवा की विशेषता के कारण दादियों के साथ-साथ भोली दादीजी का भी नाम आता है।

बिछुड़ने के दिन

देखते ही देखते 10-12 वर्ष मधुबन व दादियों के संग, भोली दादीजी की छत्रछाया में यूँ ही बीत गये और अब समय आया बिछुड़ने का क्योंकि सालगाँव में जमीन ली थी और काम भी शुरू हो गया था। वहाँ सन् 1995 में जब किचन की नींव डालनी थी तब

भोली दादीजी को साथ लाये थे। फिर किचन भी बनकर तैयार हो गया। मैं रोज ज्ञान सरोवर आता था और निर्माण कार्य की जो ज़रूरी बाते भोली दादीजी व सूर्यभाई बताते थे, वे हम इन्जीनियर को बता देते थे। जब किचन का उद्घाटन होने वाला था तब किचन, डायनिंग आदि सजकर मानो आलीशान महल लगने लगे।

इस सुहावने समय में सभी किचन वालों ने खास रिक्वेस्ट भोली दादीजी से की कि आपको चलना ही है। सभी के आग्रह से भोली दादीजी भण्डारे में आई तो देखती ही रह गयी। वाह! कितना अच्छा बनाया, मैंने तो कभी सोचा ही नहीं था। ऐसे सुन्दर अवसर पर सभी महारथियों की उपस्थिति थी, सभी दादियाँ, बड़ी दादीजी को खुशी का ठिकाना नहीं था। सभी ने बहुत ही उमंग-उत्साह से किचन का उद्घाटन किया, उसके बाद भोली दादीजी कभी ज्ञानसरोवर नहीं आयी। कई बार चलने के लिए कहने पर वो कहती थी, बस, बाबा ने जहाँ बिठाया है, वहीं ठीक है। भोली दादीजी ज्ञान सरोवर को शालिग्राम कहती थी। पहले तो सालगाँव उसके बाद शालिग्राम कहने लगी। कभी-कभी कहती थी, मेरे अच्छे-अच्छे हैण्डस शालिग्राम ले गया है। क्योंकि सूर्य भाई के साथ कुछ किचन के पुराने भाई यहाँ की व्यवस्था संभालने के लिए आये थे, जो वहाँ जिम्मेवारी अच्छी सम्भालते थे। इस कारण भी कभी भोलीदादी को दुःख होता था।

हम जब भी मधुबन जाते, भोली दादीजी को अवश्य मिलते। कभी भूल से या अन्य किसी कारण से नहीं मिल पाते तो मन खाता था। भोली दादी नहीं तो सती दादीजी से ही मिलकर आते थे। जब भी भोली दादी से मिलते, वे कुछ न कुछ ज्ञान सरोवर किचन के लिए देती थी और कहती थी, मेरा लुडना वापस लाना और याद रहने के लिए एक चिमटी लगाती।

जब दादीजी के पास समय होता तो वो अपने पास बिठाती और किचन के बारे में सब बाते पूछती। जब उसका दिल भर आता तो पूछती, तुम्हारा मन वहाँ लगता है? तुम्हारा मन नहीं लगता तो मेरे पास आना। शुरू-शुरू में मेरा मन भी ज्ञान सरोवार में नहीं लगता था। बीच-बीच में मधुबन भाग जाता था। करीब दो साल तक मैं मधुबन में रात्रि सोने के लिए जाता था। अमृतवेला कर फिर सुबह वापस ज्ञान सरोवर आता था। लेकिन जैसे-जैसे सेवाओं का फोर्स बढ़ा, मधुबन जाने का समय ही नहीं मिल पाता था। काफी दिन के बाद जब मधुबन भोली दादीजी के पास डरते-डरते जाता तो भोली दादी मुझे झिड़ककर कहती, दूर जाओ, दूर जाओ, यहाँ तुम्हारा क्या है? यहाँ तुम्हारा कोई नहीं है और उसकी आँखो में पानी आता, वो देख मेरी आँखें भी भर जाती। फिर दादीजी अपने गले लगाती और प्यार से पीठ पर, गाल पर हल्के हाथों से धपथपाती, जैसे छोटे बच्चे को प्यार करते हैं। फिर कहती, तुम बहुत कठोर हो गये हो, तुम्हें सग तो अच्छा है ना? तुम मेरे पास नहीं, बाबा के कमरे में तो आया करो। ऐसी काफी रूहरिहान होती थी, फिर कुछ खिलाती थी, कुछ सेवा होती तो बताती थी फिर कुछ सब्जी आदि देकर भोजन कराकर ही भेजती थी। सच, ऐसी माँ कहाँ मिलेगी? जिसका दिल सागर समान अपार हो।

भोली दादीजी की अन्तिम अवस्था

कुछ आँसू ऐसे होते हैं, जो बहाए नहीं जाते,
कुछ नगमे ऐसे होते हैं, जो गाए नहीं जाते।
कुछ दिन ऐसे होते हैं, जो भुलाए नहीं जाते।

किसी ने सोचा भी नहीं होगा, इतनी महान आत्मा चलते-फिरते बाबा के पास इतना जल्दी जायेगी। कभी-कभी हमें भी संकल्प चलता था कि भोली दादीजी ने इतनी सेवा की है उनकी अन्तिम घड़ियाँ सुखद होनी चाहिएँ। उन्हें किसी प्रकार की तकलीफ ना हो।

अचानक एक दिन भोली दादीजी की तबीयत ज्यादा खराब हुई। दादीजी को तुरन्त ग्लोबल हॉस्पिटल में भर्ती कराया गया। तबियत नाजुक थी लेकिन तुरन्त इलाज के कारण नॉर्मल हुई। मधुबन किचन के देवु भाई जब भोजन बनाकर एक बजे भोली दादी से मिलने गये तो दादीजी का दिल भर आया। देवु भाई का जोर से हाथ पकड़कर कहा, देवु.. मुझे अहमदाबाद नहीं जाना.. नहीं जाना.. नहीं जाना..। मानो भोली दादीजी को अपने अन्तिम समय का एहसास हुआ हो।

फिर भी डॉक्टर लोगों ने मिलकर निश्चित किया कि कल सुबह दादीजी को लेकर अहमदाबाद जायेंगे। शाम तक दादीजी बिलकुल ठीक हुई, सभी को प्यार से मिलती, हाथ में हाथ मिलाती, किसी के गाल पर हाथ घुमाती, थैंक्स-थैंक्स कहती...।

देवु भाई ने दादीजी को प्यार से समझाया कि दादी जी, बस जाना और आना, अहमदाबाद में ज्यादा समय नहीं लगेगा। अन्दर से दादीजी का मन नहीं मान रहा था। शाम को 07.30 बजे भोली दादी जी को अहमदाबाद ले जाने के लिए एम्बुलेन्स में चढ़ाने की तैयारी हो गई। लेकिन दादीजी के दिल की पुकार थी कि मेरा शरीर यहीं छूट जाये, सो एम्बुलेन्स चलने के पहले दादीजी को उल्टी हुई। तुरन्त उन्हे उतारा गया और इस पावन धरा से पंछी उड़कर बाबा की गोद में समा गया। मानो दादीजी को पता ही नहीं चला कि वो शरीर छोड़कर सदा के लिए वतन में उड़ गई। कितनी बड़ी बात है!

कई लोग शरीर के बन्धन से निकलने के लिए पुकारते हैं, बाबा बस करो, अब मुझे ले चलो और यहाँ भोली दादीजी चलते-फिरते, हंसते-खेलते, किसी की सेवा लेने से भी मुक्त मानो प्रकृति पर जीत पाकर बाबा के सच्चे सपूत बच्चे का सबूत देकर गई। आज भी मधुबन जाते हैं तो लगता है कि उस छोटी-सी गली में दादीजी उपस्थित है लेकिन सत्य तो सत्य है। वो प्यारी-प्यारी भोली दादीजी सदा के लिए बाबा की गोद में समा गई।

दादी मिट्ठू

आप 14 वर्ष की आयु में माता-पिता सहित यज्ञ में समर्पित हुई। आपको अव्यक्त नाम मिला 'गुलजार मोहिनी'। आप यज्ञ स्थापना के समय पाँच चिड़ियाओं में एक थी। आप हारमोनियम के साथ गाकर सभी को मुग्ध कर देती थी। आप सभी प्रकार के कपडों की सिलाई में बहुत होशियार थी तथा यज्ञ में स्टाफ नर्स होकर भी रही। आपको, आपकी भावनानुसार बाबा से भाई रूप का विशेष स्नेह मिला इसलिए बाबा आपको मिट्ठू बहन कहकर बुलाते थे। आपने लुधियाना, पटियाला में रहकर पंजाब, हरियाणा के कई स्थानों जैसे जींद, हिसार, सिरसा, डबवाली, तोशाम आदि में सेवाकेन्द्र खोले। आप बहुत ही इकानामी वाली, स्वच्छता पसंद, स्थूल-सूक्ष्म पालना देकर भरपूर करने वाली यज्ञ की आदिरत्न थी। आपकी निर्णय शक्ति बहुत तेज थी। फैसला एक सेकंड में लेती थी। आपने 3 मार्च 1983 में पुरानी देह का त्याग कर बापदादा की गोद ली।

जींद सेवाकेन्द्र की निमित्त संचालिका **ब्र.कु. विजय बहन** दादी जी के बारे में इस प्रकार सुनाती हैं–

सन् 1963 से 1975 तक दादी मिट्ठू के अंग-संग रहने का तथा सन् 1975 से सन् 1983 तक उनके कनेक्शन में सेवारत रहते हुए उनकी पालना लेने का मुझे सौभाग्य मिला। दादी 14 साल की आयु में ज्ञान में आई। हारमोनियम बजाती थी। गला बहुत सुन्दर था। लौकिक जीवन में भी हारमोनियम बजाकर गुरुद्वारे में जब गाती थी तो सबकी आँखों में पानी आ जाता था। दादी, मम्मा के साथ भी गाती थी। माता-पिता की इकलौती संतान थी। माता-पिता तन-मन-धन सहित यज्ञ में समर्पित हो गये। पिताजी बाद में यज्ञ से चले गये थे। पाँच चिड़ियाओं में इनका नाम था। सिलाई में बहुत होशियार थी। बहनों के सभी कपड़े सिलती थी। स्टाफ नर्स होने के नाते होशियारी से सभी पेशेन्ट को संतुष्ट करती थी। तन की भी नब्ज देख लेती तो मन की भी। बाबा के साथ लौकिक नाते से भी मेल-जोल था।

बाबा बन गए 'भाई'

मिट्ठू दादी का जन्म उनके माता-पिता के 14 साल के इंतजार के बाद हुआ। सभी की आश थी कि बच्चा हो और मिट्ठू दादी का जन्म हुआ। जब वे यज्ञ में आई तो उन्होंने बाबा को कहा कि बाबा, मुझे भाई

नहीं है। बाबा ने उन्हें श्रीकृष्ण का साक्षात्कार कराया और कहा, मैं तुम्हारा भाई हूँ। बाबा ने उनकी भाई की आश पूरी की। इसके बाद बाबा ने सदा ही उन्हें मिट्ठू बहन कहकर सबोधित किया।

बाबा की रमणीक बात

जब हम लुधियाना में थे तो बाबा दादी से गर्म कपड़े मँगवाते थे, जुराब, मफलर, मंकी कैप आदि। एक बार दादी ने ऐसे बहुत-से कपड़े भेज दिए और बाबा को कहा, बाबा, मैंने सैम्पल भेज दिये, फैक्ट्री में जाकर देखा नहीं। तो बाबा ने कहा, बुरके वाली बीबी हो क्या, जो देखा नहीं। इस तरह बाबा ने दादी से बड़ी रमणीकता से बात की। दादी यज्ञ के अनेक प्रकार के कारोबार में आगे आती थी। दादी योग में पावरफुल दृष्टि देती थी, डेड साइलेन्स में ले जाती थी। आत्मिक दृष्टि से देखने का अभ्यास पक्का था। दादी का त्याग तथा तपस्या बहुत थी। सादा जीवन था। दादी चन्द्रमणि, दादी मनोहर तथा दादी मिट्ठू पंजाब की सेवाओं में स्नेही सखियों के रूप में रहे।

छोटी-सी बात के माध्यम से शिक्षा दी

दादी जी में निर्भयता का विशेष गुण था। बहादुर दिल वाली थी। पुरुषत्व के संस्कार थे, सभी भाई-बहने उन्हें भाई जैसा मानते थे। निर्णय शक्ति, परखने की शक्ति उनमें बहुत ज्यादा थी। मैं तो छोटेपन में ही दादी जी के पास आ गई थी। उन्होंने हमें बचपन से ही माता-पिता जैसी पालना दी। उन दिनों सारा किचन का काम चूल्हे या अंगीठी द्वारा होता था तो दीदी ने मेरे से कहा कि चूल्हे को मिट्टी लगाओ। मैंने कहा, दादी जी, मैंने तो कभी मिट्टी लगाई नहीं, तो दादी ने कहा, झाड़, त्रिमूर्ति क्या पहले समझाया था, समझने से सीख गई ना। इस प्रकार दादी ने छोटी-सी बात के माध्यम से शिक्षा दी कि हमें किसी सेवा में ना नहीं करना चाहिए। हर कार्य में कहना है, हाँ जी, आप सिखाओ तो हम जरूर करेंगे। इस तरह पालना देते आगे बढ़ाया। जब हम किसी को कोर्स कराते और बाद में जब भोजन पर बैठते तो दादी जी पूछते थे, आज आपसे क्या प्रश्न पूछे और आपने क्या उत्तर दिये। फिर अगर कोई गलती होती तो हमें समझाते थे कि किसी प्रश्न का कैसे उत्तर देना है।

मंथन करना सिखाया

इसी तरह मुरली की भी हर प्वाइंट पर मंथन करना सिखाया। एक-एक सिद्धांत को सिद्ध करने के लिए दो ग्रुप बना देते थे जैसे कि परमात्मा सर्वव्यापी नहीं है, यह सिद्ध करना है। एक ग्रुप कहता, सर्वव्यापी है। दूसरा कहता, नहीं है। इसके ऊपर मंथन करना सिखाते थे। इसी तरह अन्य प्रश्न जैसे कि गीता का भगवान कौन है तथा मनुष्य के 84 जन्म कैसे आदि पर मंथन करना सिखाया। साकार बाबा के जीवन के अनेक दिव्य अनुभव व यज्ञ की हिस्ट्री सुनाकर हमें मजबूत करते रहते थे।

******

हिसार सेवाकेन्द्र की निमित्त संचालिका **ब्र.कु. रमेश बहन** दादी मिट्ठू के बारे में अपना अनुभव इस प्रकार सुनाती हैं –

सन् 1975 में मिट्ठू दादी से मेरा संपर्क हुआ। मैं चंडीगढ़ से मधुबन में आई थी। बड़ी दीदी मनमोहिनी ने मुझे मिट्ठू दादी के हवाले कर दिया। मिट्ठू दादी ने

तीन-चार दिन पटियाला में रख मुझे हिसार सेवाकेन्द्र की जिम्मेवारी सौंप दी और सबसे पहले सेन्टर को सेट करने की कला सिखाई। यज्ञ की एक-एक वस्तु की संभाल, एक-एक भाई से स्नेह तथा आत्मिक दृष्टि से बात करना सिखाया। सर्व के प्रति कल्याण भावना रख, यज्ञ को बहुत ऊँची श्रेष्ठ नजर से देखते हुए, इसे आगे बढ़ाने के लिए छोटी वस्तु को भी बेस्ट ना कर, बेस्ट रीति से प्रयोग करना सिखाया। दादी कहती थी, कितनी भी समस्यायें आयें, कभी हिम्मत नहीं हारना। बाबा को सामने रखते हुए अमृतवेले अपनी सारी बातें बाबा को बताना। बाबा अपने आप शक्ति और रहम की दृष्टि से रहमत बरसाता रहेगा। जब हिसार में मकान की नींव रखी तो कम खर्च बालानशीन बनने की विधि सिखाई। गरीबी में भी यज्ञ को महत्त्व देते हुए कभी घबराना नहीं, सफलता हर कदम में मिलेगी, यह सिखाया। उनकी विशेषताओं को धारण करते हुए आज हिसार में उनकी कृपादृष्टि से बहुत बड़ा सेवाकेन्द्र है। सभी प्रकार का सहयोग चारों तरफ से प्राप्त है। अभी भी सूक्ष्म में उनके स्नेह-सहयोग के वायब्रेशन आते हैं।

******

सिरसा सद्भावना भवन की निमित्त संचालिका **ब्र.कु. कृष्णा बहन**, जिन्होंने सात वर्षों तक दादी के अंग-संग रहकर और कनेक्शन में सेवारत रहकर पालना ली, उनके बारे में अपने अनुभव इस प्रकार सुनाती हैं –

सन् 1974 में हम ज्ञान में आये। सन् 1977 में सिरसा में मेला किया। शीला माता मेले की तैयारी की जिम्मेवारी हमें देकर, किसी आवश्यक कार्य से लौकिक घर चले गये। तब दादी मिट्ठू मेले में आईं। हमने तब पहली बार उनको नजदीक से देखा तथा उनके गुणों और शक्तियों का अनुभव किया।

प्रभु तुम बड़े दिल के ...

एक बार बाबा-मम्मा पटियाला में आये थे। जब जाने लगे तो मिट्ठू दादी ने बाबा का हाथ पकड़ लिया। बाबा ने हाथ छुड़ाया तो दादी ने गीत गाया, 'निर्बल मोहे जानके हाथ लियो छुड़ाए, जब जाओगे दिल से तब जानूँगी तोय।' बाबा ने कहा, मिट्ठू बहन, बाबा को जाना है दिल्ली एक सप्ताह के लिए, मम्मा यहाँ रहेगी, सप्ताह बाद बाबा, मम्मा को ले जायेंगे। यह कहकर बाबा चले गये पर वहाँ जाकर बाबा ने, मम्मा को टेलीग्राम देकर बुला लिया। इस पर दादी ने एक रिकॉर्ड भरकर बाबा को भेजा। गीत के बोल इस प्रकार थे –

प्रभु तुम बड़े दिल के कठोर निकले
चोरी-चोरी चल दिये बड़े चोर निकले
मैंने समझा था तुम बड़े दाता हो
दीन-दुखियों के भाग्य विधाता हो।

मुझे बंधनमुक्त किया

मैं बहुत बांधेली थी। बंधन तोड़ने के लिए बहुत प्यार से मार्गदर्शन देते थे। मेरे पिताजी ज्ञान के प्रति बहुत विरोध करते थे। दादी ने एक ब्रह्माकुमार भाई को, जो टीचर थे, पिताजी को ज्ञान समझाने के लिए गाँव में हमारे घर भेजा। उस द्वारा बताई गई बातों से दादी जी ने हमारे पिताजी की मन:स्थिति को अच्छे से समझा। बाद में हमारे माताजी दादी से मिले, कहा, कृष्णा का गंधर्वी विवाह सुभाष भाई (एक बांधेला

कुमार) से हो जाए तो अच्छा है। मिट्ठू दादी ने कहा, कृष्णा मेरे साथ मधुबन चले, वहाँ दीदी मनमोहिनी से पूछेंगे। उन्होंने जब सारी बात बताई तो मनमोहिनी दीदी ने छुट्टी दे दी। फिर दादी ने भी छुट्टी दे दी। इस प्रकार हमारा गंधर्वी विवाह हुआ। इसके बाद भी दादी द्वारा कदम-कदम पर मार्गदर्शन मिलता रहा। उसी का प्रतिफल है कि बाबा की श्रीमत प्रमाण हम अब भी सफलतापूर्वक आगे बढ़ रहे हैं। गंधर्वी विवाह के तुरत बाद मैं दादी के साथ पटियाला सेन्टर पर रहने लगी। इस प्रकार दादी मुझे बंधनमुक्त करने के निमित्त बनी।

नम्र और निरहंकारी

मिट्ठू दादी बहुत चुस्त थी, चाल बहुत तेज थी। सब जगह पैदल जाती थी, रिक्शा नहीं करती थी। दादी चलती थी तो मुझे उनके साथ भागना पड़ता था। दादी जी पंजाब, हरियाणा के कई सेवाकेन्द्रों की संभाल के निमित्त थे। उनके साथ मैंने दो-तीन बार सब सेवाकेन्द्रों का टूर किया। वे हर कार्यक्रम में समय पर पहुँचते थे। इतने निरहंकारी थे जो छोटे-छोटे कार्यक्रमों मे भी चले जाते थे। सिरसा के पास कूसर गाँव है। उन दिनों बस सुविधा बहुत कम थी। दादी उस गाँव में बैलगाड़ी में बैठकर चले गये। वे बहुत ही नम्र और निरहंकारी थे। दादी ने मेरे को भाषण करना सिखाया। दादी के लिए प्रसिद्ध था कि जो उनके साथ रह जाये, वो सब जगह रह सकता है। बीमारी के दौरान दादी मधुबन में तीन मास रहे। उन दिनों बाबा हफ्ते में एक बार आते थे। मैं दादी की सेवा में थी, उनकी ओर से बाबा के सामने जाती थी। बड़ी दीदी मुझे बाबा से मिलवाती थी। बाबा मिट्ठू दादी के लिए स्पेशल टोली 'अनार' देते थे, कहते थे, बच्चों को खिला देना। बड़ी दीदी रोज उनके कमरे में उनसे मिलने, उनका हाल-चाल पूछने आती थी।

सिरसा: भाषण करती हुई दादी मिट्ठू

बाबा ने कहा, 'ड्रामा'

शरीर छोड़ने से सात दिन पहले दादी को मधुबन से पटियाला ले गये और वहाँ हॉस्पिटल में भर्ती कर दिया गया। मैं राजेन्द्रा हॉस्पिटल में दादी के साथ रहती थी। दादी के शरीर छोड़ने के दो घंटे पहले डॉक्टरों ने जवाब दे दिया था और कहा था, इन्हें चंडीगढ़ ले जाइये। उन दिनों मेरा ध्यान का पार्ट था। मुझे दीदी ने ध्यान में जाकर बाबा से पूछने के लिए कहा। वतन में

मैंने एक दृश्य देखा, एक बहुत बड़े पर्दे पर लिखा था, 'ड्रामा'। इसका अर्थ था कि चंडीगढ़ नही ले जाना है। आश्रम ही ले जाना है। उसी अनुसार दादी को चंडीगढ़ नहीं ले जाया गया। थोड़ी देर बाद दादी ने शरीर छोड़ दिया। दादी के शरीर छोड़ने के बाद मुझ आत्मा को दादी का भोग लगाने की सेवा मिली। ध्यान मे मुझे दादी ने संदेश दिया कि शव शोभायात्रा को पैदल ही ले जाना है। शव शोभायात्रा सारे शहर में पैदल ही घुमाई गई जिससे बहुत सेवा हुई।

जाने से पहले छुट्टी लेना चाहती थी

शरीर छोड़ने के एक दिन पहले की बात है। दादी डायरी मे कुछ लिखना चाहती थी पर लिख नहीं पाई थी। दादी के शरीर छोड़ने के बाद मुझे ध्यान मे भेजा गया तो मैंने दादी से पूछा, आप क्या लिखना चाहते थे? वतन में भी दादी ने डायरी-पेन माँगा। मेरे हाथ में डायरी दे दी गई। दादी ने लिखा, 'मैं दादी-दीदी को लैटर लिखना चाहती थी और यह बताना चाहती थी कि जो सेवा आपने मुझे दी थी उसे जिम्मेवारी से निभाकर जा रही हूँ, आगे का आप जानें।' जैसेकि दादी जाने से पहले छुट्टी लेना चाहती थी। उनको अपने जाने का पहले पता पड़ गया था।

जब दादी का तेरहवाँ हुआ तो पंजाब-हरियाणा के सब ब्रह्मावत्स पटियाला में एकत्रित हुए। दादी चंद्रमणि तथा अचल बहन भी आये थे। सब बहन-भाइयों ने कहा, हमको दादी मिट्ठू से मिलना है। मुझे ध्यान में भेजा गया, मेरे तन में दादी की आत्मा आई। जैसे ही प्रवेशता हुई (जैसा कि मुझे बताया गया), मेरे हाव-भाव बदल गये। दादी चद्रमणि ने पूछा, आप इतना जल्दी क्यों चले गये? मिट्ठू दादी ने उत्तर दिया, अभी मेरा शरीर कोई काम का नहीं रहा था। दादी चंद्रमणि ने कहा, हमें भी ले चलो ना अपने साथ वतन में। दादी मिट्ठू ने कहा, नहीं, आप जैसे शेरों की यहाँ जरूरत है।

दादी के होते पटियाला में लोकल कुमारियाँ ज्ञान में नहीं थी। दादी की बड़ी इच्छा थी कि कुमारियाँ ज्ञान में आएँ। दादी के जाते ही कुमारियों ने आना शुरू कर दिया। ऐसा लगता है कि दादी के अव्यक्त आह्वान से ही ये कुमारियाँ आईं।

******

सन् 1959 से सन् 1983 तक मिट्ठू दादी की पालना लेने वाले **ब्रह्माकुमार भ्राता दिलवाग सिंह** तथा **ब्रह्माकुमारी सतवंत बहन**, उनके साथ का अनुभव इस प्रकार सुनाते हैं –

हमें ईश्वरीय ज्ञान की प्राप्ति पटियाला (पंजाब) में सन् 1959 में मिट्ठू बहन के द्वारा हुई। यज्ञ के आदि रत्नों को शिव बाबा ने नये नाम दिये थे। मिट्ठू बहन को बाबा ने नाम दिया, गुलजार मोहिनी। ज्ञान मिलने के छह मास बाद ही हमें प्यारे बापदादा से साकार में मधुबन में जाकर मिलाने वाला पण्डा आदरणीया मिट्ठू बहन ही बनीं। हम उनके बहुत आभारी हैं जो उन्होंने हमें जगदम्बा माँ से और पिताश्री ब्रह्मा (शिवबाबा के भाग्यशाली रथ) से मुलाकात, उनके कमरों में जाकर करवाई। मम्मा और बाबा के साथ बिठा कर हमें भोजन भी खिलाया। वह कितना सुन्दर और भावना से भरपूर दृश्य था। बाबा हमारे मुख में गिट्ठी देते थे और हमने भी प्यारे बाबा को गिट्ठी खिलाई। एकदम आनन्द विभोर हो गये हम। हमें देलवाड़ा मन्दिर और

सनसेट प्वाइंट भी दादी खुद जाकर दिखलाकर लाये। यह अनुभव तो कभी भूलने वाला नहीं है। दादी के उपकारों को हम गिनती नही कर सकते है।

मिट्ठू बहन को ईश्वरीय सेवा का बहुत शौक था। यूँ कहें कि दिन-रात उनकी बुद्धि में सेवा ही घूमती थी। हमको सेवा के प्लैन बना कर देते थे। फिर हमसे प्रैक्टिकल करवाते थे। हर छुट्टीवाले दिन आसपास के किसी शहर में ले जाकर प्रोजेक्टर या प्रदर्शनी से सेवा करवाते थे। खुद भी चक्कर लगाने जाते थे। जींद, रोहतक, हिसार, सिरसा आदि शहरों में जो सेन्टर खुले, वे सब उनकी ही मेहनत का फल है।

मिट्ठू बहन जी भाई-बहनों की व्यक्तिगत पालना में भी बहुत रुचि लेते थे। उनकी चाहना होती थी कि बाबा का हर बच्चा निश्चयबुद्धि बन, निर्विघ्न रह ईश्वरीय सेवा में समय देकर भविष्य प्रालब्ध बनाये। इसके लिए वे सिंध और कराची में बाबा-मम्मा संग प्राप्त अनुभवों को सुनाकर हमारी अवस्था को ऊँचा उठाते थे।

मिट्ठू बहन की विशेषतायें –

1. जैसे बाबा-मम्मा ने चौदह वर्ष उनकी पालना की, उसी प्रकार वे हमको पालना देते थे। यज्ञ में इकॉनामी करना जैसे बाबा ने उनको सिखाया था, वह उनके जीवन में स्पष्ट देखने में आता था। वस्त्रों को टांका लगाकर जब तक काम दे सकते थे, वे जरूर प्रयोग करते थे।
2. हमको भाषण सिखाकर, अपने साथ सदली पर बिठाकर हमसे भाषण करवाते थे।
3. मधुबन में जाकर हमें कहते थे कि बाबा से मिलना है इसलिए नहा-धोकर पाउडर-सेंट आदि लगाकर जायें यानि आपसे अच्छी सुगंध आये। जिसके पास नहीं होता था, उसे अपने पास से पाउडर-सेंट देते थे। वे कहते थे कि ब्रह्मा बाबा अपने गुरु के लिए लेटरीन में भी अगरबत्ती जलाते थे इसलिए हमको भी ऐसे ही बापदादा से मिलना है।
4. कभी खाना खाते समय उनके पास जाना होता था तो वे बाबा की तरह हमारे मुख में गिट्ठी (ग्राही) जरूर डालते थे।
5. जब कभी हमें रिश्तेदारी में गाँवों में जाना होता था तो उनसे दृष्टि लेते थे। कभी भी मिश्री/इलायची देना नहीं भूलते थे और मुख मीठा कराकर बोलते थे कि बाबा की सेवा पर जा रहे हो तो बाबा को नहीं भूलना और सभी को संदेश देकर आना।

******

लुधियाना के **ब्रह्माकुमार खुशीराम साहनी** जी, मिट्ठू दादी के साथ के अनुभव इस प्रकार सुनाते हैं –

लुधियाना में आध्यात्मिक केन्द्र खोलने के लिए मिट्ठू बहन का आगमन सन् 1963 में एक बहन और एक भाई के साथ हुआ। लुधियाना में दस साल आध्यात्मिक सेवायें देकर वे पटियाला का सेन्टर संभालने के लिए चली गई। उनके अंदर ज्ञान-योग की धारणा पुरानी ब्रह्माकुमारी बहनों की तरह बहुत दृढ़ तो थी ही, उनकी अन्य भी बहुत-सी विशेषताएँ इस प्रकार थी –

1. जो कोई भी उनके संपर्क में आता, उसके ऊपर अपने रूहानी स्नेह की छाप ऐसी लगातीं कि उसको अपना सहयोगी बना लेती थीं।

2. उनके सामने अनेक समस्यायें आईं, जिज्ञासुओं की ओर से रूठने और टूटने की, मकान मालिक से मुकदमेबाजी की, धन के अभाव और शारीरिक बीमारियों की मगर उनका मन कभी डोला नहीं। उन्होंने दृढ़ता से इनका मुकाबला किया और विजय पाई। एक बार उनके घुटने पर सख्त चोट आई थी, वे कई दिनों तक चारपाई पर रही मगर फिर भी जैसे-तैसे करके क्लास में आती और थोड़ा समय योग कराती थी।

3. बहन-भाइयों का स्नेह-मिलन और ब्रह्मा भोजन हर महीने अवश्य करती थी। इसके अलावा पिकनिक कराने, कई प्रकार के नये-नये खेल सिखलाने के लिए तथा मनोरंजन के लिए बाहर खुले स्थान पर ले जाती थी।

4. उनके चेहरे पर उदासी या मायूसी की रेखाये कभी दिखाई नहीं देती थी। वे सदा हर्षित रहती, दूसरों को भी हर्ष दिलाती और अपना यह गुण उनमे भी भरती रहती थी।

5. उनके अंदर खाली न बैठने का एक विशेष गुण था। जब उनके सामने यज्ञ की कोई सेवा न होती तो वे युगलों के घर चली जाती, उनको खाना अपने हाथों से बनाकर खिलाती और उनको कई गुणों की धारणा अपने जीवन के उदाहरण से करवा देती थी।

6. उनके खुशनुमा चेहरे, स्वभाव और मिजाज के कारण कई बहन-भाई उनके आगे-पीछे रहते मगर वे कभी किसी से अपने शरीर के प्रति कोई सेवा नहीं लेती थी बल्कि अपने सब काम ब्रह्मा बाबा की तरह अपने हाथों से करती थी और साथ-साथ दूसरों को अपना सहयोग भी देती थी।

7. वे माँ-बाप की इकलौती बेटी थी। उनकी कोई दूसरी बहन या भाई न था, इसलिए वे सब बहन-भाइयों के साथ बहन जैसा ही बनकर उनसे प्यार करती और प्यार करने का सबक सिखलाती थी।

8. जब किसी दूसरे केन्द्र में कोई खास कार्यक्रम होता तो वहाँ वे बढ़-चढ़ कर सहयोग देती थी और अपने केन्द्र के बहन-भाइयों को साथ लेकर चलती थी।

9. किसी बहन-भाई की कमी-कमजोरी देखकर उनके मुँह पर कभी कुछ न कहती और न ही किसी दूसरे को बताती इसलिए कि कमी की बात सुनकर दूसरे के अंदर भी वह न आ जाये। अप्रत्यक्ष रूप से वे कमी की तरफ ध्यान खिंचवाती। उनको मेरी एक गलती का जब पता चला तो मुझे उसका एहसास तो कराया मगर मायूस नहीं होने दिया; और ही गले लगाकर ऊपर उठाया जिसके कारण मैं अब तक भी उन्हें भूल नहीं पाया।

10. दस वर्षों तक लुधियाना में सेवा करने के बाद वे पटियाला और जींद आदि कई सेवाकेन्द्रों पर चली तो गई मगर लुधियाना के बहन-भाइयों से अपना संबंध बनाये रखने के लिए उन्होंने, जहाँ और जब भी कोई विशेष कार्यक्रम किया या कराया तो उनको बुलाकर उनसे सेवा कराती रही। इस प्रकार, अलौकिक संबंध कभी टूटने नहीं दिया। ◈

दादी भूरी

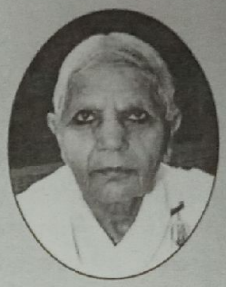

भूरी दादी यज्ञ की आदि-रत्न थी। आबू में बाबा ने उनको पार्टियों को रिसीव करने तथा यज्ञ की सभी प्रकार की खरीदारी करने की सेवा सौंपी। दादी ने एकनामी, एकानामी का अवतार बन अथक हो सब सेवायें कर सबके दिल में जगह बनाई। अंत तक बाबा के भंडारे की सेवा भी बहुत प्यार से की। आपने 2 जुलाई, 2010 को अपना पुराना शरीर छोड़ बापदादा की गोद ली।

ओमप्रकाश भाई (मधुबन) भूरी दादी के साथ का अनुभव इस प्रकार सुनाते हैं –

अथक सेवाधारी

भूरी दादी शुरू से यज्ञ में आई। आबू आने के बाद दादी की आलराउण्ड सेवा रही। उन दिनों यज्ञ का कोई यातायात साधन नहीं था। बाबा के बच्चे चाहे कोई रात की गाड़ी से आता था या दिन की गाड़ी से, सबको आबू रोड में रिसीव करके ऊपर पाडव भवन में बाबा तक पहुँचाने की सेवा अथक रूप से भूरी दादी ने की। यूँ तो हम भी अपनी-अपनी रीति से सभी अथक सेवाधारी हैं पर भूरी दादी खास अथक सेवाधारी इसलिए थी कि बाबा दिन में कभी भी उन्हें कहते थे, बच्ची, अभी आबू रोड जाना है तो हमने देखा, दिन में चार या पाँच बार जाकर वापस भी आ जाती थी। नीचे-ऊपर आने-जाने के लिए उस समय बस के अलावा और कोई साधन नहीं था। पहाड़ी रास्ते में, बस में बार-बार आना-जाना आप समझ सकते हैं, कितना मुश्किल होता है, पर दादी ने यह सेवा दिल से की। ऐसी सेवा तभी हो सकती है जब सदा यह याद रहे कि यह जो मैं सेवा कर रही हूँ, स्वयं भाग्यविधाता भगवान द्वारा दी गई है, हम निमित्त मात्र हैं। करन-करावनहार शिवबाबा है।

एक्यूरेट हिसाब

दादी का बाबा पर संपूर्ण निश्चय रहा। ज्ञानी जीवन का आधार ही निश्चय है। इसमें भी स्वयं पर निश्चय, परिवार पर निश्चय, ड्रामा पर निश्चय तथा प्यारे बाबा पर निश्चय – इन चारों में भूरी दादी सदा पास रही। कभी मैंने भूरी दादी को एक मिनट भी

खाली बैठे नहीं देखा। निर्माणचित्त बहुत थी। कोई ने कुछ कहा तो भी उनके मुख से कभी गुस्से का या ऐसा शब्द नहीं निकला। यज्ञ की सारी खरीदारी, उन दिनों में, आबू रोड से ही होती थी और भूरी दादी ही इसके निमित्त थी। सब्जी आदि सब भूरी दादी ही लेकर आती थी। वे इतनी पढ़ी-लिखी नहीं थी, इतना हिसाब भी नहीं जानती थी, फिर भी एक्यूरेट हिसाब रखती थी। यह उनकी बहुत बड़ी विशेषता थी। भूरी दादी लास्ट के दिनों में शरीर से थोड़ी ढीली हुई पर लास्ट तक भोजन ठीक-ठाक करती रही। अंत के कुछ समय तक उनको कम दिखाई पड़ने लगा था फिर भी हरेक को पहचानती और बात भी करती थी। लास्ट के दिनों में सेवा करते-करते हाथ भी थोड़े हिलने लगे थे फिर भी सेवा में अथक रही। सभी त्योहारों पर दादी को खर्ची भी अवश्य देती थी। ऐसी यज्ञ स्नेही, दधिचि सम हड्डियाँ सेवा में लगाने वाली दादी भूरी को श्रद्धासुमन समर्पित है।

भूरी दादी निमित्त भोग तथा वतन का सन्देश
(शशी बहन)

आज सर्व भाई बहिनों की यादप्यार लेकर जब मैं वतन में पहुंची तो वतन का नज़ारा बहुत सुन्दर था। चारों ही तरफ बहुत सुन्दर सजावट थी। सजावट के बीच में एक ऐसा स्थान बना हुआ था जहाँ पर भूरी दादी का बहुत सुन्दर फरिश्ते जैसा शृंगार किया हुआ था, उसके ऊपर गोल्डन रिफलेक्शन पड़ रहा था। जैसे ही मैं नजदीक पहुंची तो भूरी दादी का साक्षात देवी और फरिश्ते का रूप दिखाई दे रहा था। थोड़े समय के बाद बाबा आये, बाबा भी भूरी दादी को देख मुस्करा रहे थे। बाबा ने कहा, बच्ची, क्या सोच रही हो? मैंने कहा, यह भूरी दादी है? बाबा ने कहा, ध्यान से देखो। भूरी दादी के स्वरूप में शक्ति और स्नेह का रूप दिखाई दे रहा था। स्नेहरूप ज्यादा था और शक्ति का रिफलेक्शन पड़ रहा था। मैंने कहा, आज तो आप बहुत सुन्दर लग रही हो। तो कहा, क्यों नहीं लगूं, बाबा ने आज मेरा प्यार से शृंगार किया है। मैं तो बाबा की गोदी में, स्नेह में झूल रही हूँ। बाबा ने कहा, बच्ची का आज बाबा क्यों शृंगार कर रहे हैं क्योंकि इस बच्ची ने शुरू से ही एक तो अथक सेवा द्वारा अनेक आत्माओं को सुख दिया है। दूसरा, जब से बाबा की बनी है इसका बाबा से, दैवी परिवार से और खास करके दादियों से बहुत प्यार था। उस प्यार में जैसे खो जाती थी। जब बाबा ने यह कहा तो उसकी आंखों में स्नेह के मोती दिखाई देने लगे।

फिर मैंने कहा, दादी आप तो बाबा के पास पहुँच गयी। तो कहती है, मैं तो बाबा के पास ही थी। बाबा रोज़ मेरे को सूक्ष्मवतन में बुलाके ऐसे अनुभव कराता, कभी झूले में झुलाता, कभी अन्य स्थान पर ले जाता था। मै तो बहुत खुशी का अनुभव कर रही हूँ। बाबा ने कहा, मैं इसे कहाँ ले जाता था, बताऊं। तो इतने में एक पुष्पक विमान आया। बाबा ने कहा, चलो बच्ची, इसमें बैठो। तो कहा, मैं नहीं बैठूंगी, मैं तो बाबा के साथ ही रहूंगी। उस पुष्पक विमान में चारों तरफ बहुत से फरिश्ते दिखाई दे रहे थे जो उसको बुला रहे थे। बाबा ने कहा देखो तुम्हें कौन बुला रहा है! फिर बाबा उसे लेकर उसमें चले। जैसे ही वो उसमें बैठने लगी, सभी फरिश्ते माला लेकर उसका स्वागत कर रहे थे। बाबा ने कहा, शुरू से लेकर तुम अनेक

महारथियों को, ब्राह्मण परिवार की अनेक आत्माओं को रिसीव करती थी, गाड़ियों में बिठाकर उन्हें प्यार से भेजने की व्यवस्था करती थी, तो आज सभी भाई-बहनें उस स्नेह का रिटर्न दे रहे हैं। उस रिटर्न में सभी इतनी माला लेकर खड़े हैं। फिर जैसे ही पुष्पक विमान में चढ़ी तो उस विमान में एक तरफ बाबा, एक तरफ एडवान्स पार्टी के महारथी थे, बीच में भूरी दादी थी। विमान ऊपर उड़ते हुए, ऐसे दृश्य दिखाता है जैसे सतयुगी दुनिया के नज़ारे सामने आते जाते हैं। बाबा ने कहा, देखो तुमने सबको सुख दिया है। ये जो नज़ारे देख रही हो, ये सतयुगी दुनिया के नज़ारे नही हैं, ये वो सुख के नज़ारे हैं जिस सुख का तुमने अनुभव कराया है, जिनको अनुभूति हुई है वो अनुभूति स्नेह के रूप में, दुआओं के रूप में आज सब परिवार वाले तुम्हारे प्रति प्रकट कर रहे हैं। सुनते हुए डिटैच हो गई, कहती है, बाबा यह सब आपने किया। फिर यह दृश्य पूरा हुआ।

फिर बाबा, बड़ी दादी और सब दादियां तथा और भी कई भाई-बहनें थे। बीच में भूरी दादी थी जो उन सबको देख भी रही थी। बाबा ने कहा, बच्ची, तुम इनकी विशेषता को जानती हो? मैंने कहा, भूरी दादी की तो बहुत-सी विशेषतायें है, हरेक ने इनसे बहुत कुछ सीखा है। बाबा ने कहा, एक तो निश्चयबुद्धि, दूसरा, बाबा के स्नेह में सदा लवलीन रहती थी, तीसरा, सबको सुख देने का पुरुषार्थ करती थी। चौथा, बच्ची सदा एकनामी और इकॉनामी से चलते अपने चेहरे से बाबा का साक्षात्कार कराती थी। जहाँ भी यह जाती थी, चाहे ब्राह्मण परिवार, चाहे लौकिक में तो इसके चेहरे से उनको लगता था कि यह कोई फरिश्ता आया है। अपने अन्दर की खुशी, दातापन के संस्कार के द्वारा बहुतों को अनुभव कराती थी। तो वो बहुत मुस्करा रही थी, कुछ बोलती नहीं थी। मैंने कहा, सब मधुबन वाले आपको याद कर रहे है। तो कहती है, मधुबन निवासियों को तो मैं कभी भूल नही सकती। सब मधुबन वालों ने मुझे बहुत स्नेह दिया है, ये बाबा के रत्न हैं, बाबा के बच्चे हैं। बहुत खुशी में उसकी आखों में स्नेह का रूप दिखाई दे रहा था।

फिर मैंने कहा, आपके सेवा साथी, तो कहती है, हाँ, सब दादियाँ

बापदादा को गुलदस्ता भेंट करती हुई दादी भूरी

मेरे सेवा साथी हैं, सब दादियों ने मेरी पालना की है। फिर मैंने कहा, दूसरे सेवा साथी भी तो हैं! मधुबन वाले, संगम भवन वाले, हॉस्पिटल वाले, दिव्या भाई, प्रीति बहन सभी प्यार से सेवा करते थे। तो जैसे ही मैंने कहा, उसी समय एक तख्त पर लोटस फ्लावर बना हुआ था, उसके बीच में भूरी दादी और लोटस फ्लावर की पंखुड़ियों पर सभी दादियाँ दिखाई दी। पीछे एक सर्किल था जिसमें सब मधुबन वाले खड़े थे। सामने उनके सभी सेवाधारी खड़े थे। लोटस फ्लावर की एक-एक पंखुड़ी उठती गई तो उस पर लाइट पड़ती गई, लाइट पड़ने से उनके गुणों का सर्किल बन गया। माला नहीं गहनों का रूप था। एक गहना, दूसरा और तीसरा। तीन प्रकार के गहने थे।

मैंने कहा हमेशा तो माला होती है, आज गहने दिखाई दे रहे हैं। तो बहुत हंसती है। बाबा ने कहा, यह बच्ची सदा अपने को शृंगार करके, बहुत साफ-स्वच्छ रहती थी। तो आज बाबा और दैवी परिवार के भाई-बहनें इनका दैवी गुणों से शृंगार कर रहे हैं। तो बाबा ने कहा, बाबा भी सदा तुमको शृंगार करके सभी के सामने एक दर्शनीयमूर्त रखना चाहता है। जैसे दूसरों को बाबा का अनुभव कराती रही हो, ऐसे ही बाबा आगे भी आपसे सेवा कराते रहेंगे।

फिर मैंने कहा, किसी को याद देना है? तो कहती है, सबको बहुत याद देना, ओमप्रकाश भाई को याद किया। कहा, यह भी बहुत प्यार से सेवा करता है। फिर बाबा ने कहा, देखो, संगम भवन के आसपास के स्थानों पर इस बच्ची ने रहकर, सभी जगह पर बाबा के प्यार के बीज बोये हैं। उस प्यार की रिजल्ट यह संगम भवन है। संगम भवन के सब भाई-बहनों को याद दिया। दिव्या (दादी का सेवाधारी) को खास याद दिया। बाबा ने कहा, इस बच्चे ने भी बहुत प्यार से सेवा की है। तो दादी देखकर मुस्कराती थी, कहती है इसको जब भी कुछ कहो तो हंसते-हंसते सेवा करता था और मुझे भी हंसाता था। फिर मैंने कहा, दादी, आपके लिए भोग लाये हैं। बाबा ने खोला और कहा, देखो तुम्हारे लिए मधुबन से भोग आया है। तो स्नेह में खो गई और कहा, बाबा, यह तो आपको खाना है। फिर बाबा ने उसको अपने हाथ से खिलाया। भोग खाते-खाते कुछ सेकण्ड के लिए बाबा की तरफ देखने लगी। देखते हुए कहती है, बाबा मेरे को लास्ट तक भी ऐसे अनुभव हो रहा था कि जैसे मैं आपकी गोदी में बैठी हूँ, बाबा, आप तो मेरा हाथ पकड़कर चलाते रहे हैं, आगे बढ़ाते रहे हैं। ऐसे कहते, बाबा को कहती है, जिन्होंने सेवा की है उन्हों का कितना बड़ा पुण्य का खाता जमा हुआ है। बाबा ने कहा, तुम्हारे स्नेह और बाबा के प्यार के कारण सबने प्यार से सेवा की है। उससे पुण्य का खाता तो क्या, अनेक वरदानों को प्राप्त किया है। फिर बाबा ने सबको याद दी। दादी भी सबको याद दे रही थी, बाबा को देख रही थी, बहुत खुश हो रही थी। फिर तो मैं वापस आ गई।

"बापदादा सदैव आदि रत्नों को रीयल गोल्ड कहते हैं। आदि रत्नों का ड्रामा अनुसार विशेष पार्ट है। बापदादा ऐसे आदि रत्नों को लाख-लाख बधाइयाँ देते हैं क्योंकि आदि से सहन कर स्थापना के कार्य को साकार स्वरूप में वृद्धि को प्राप्त कराने के निमित्त बने हो। तो जो स्थापना के कार्य में सहन किया, वह औरों ने नहीं किया है। आपके सहनशक्ति के बीज ने यह फल पैदा किये हैं। तो बापदादा आदि-मध्य-अन्त को देखते हैं कि हरेक ने क्या-क्या सहन किया है और कैसे शक्ति रूप दिखाया है। और सहन भी खेल-खेल में किया। सहन के रूप में सहन नहीं किया, खेल-खेल में सहन का पार्ट बजाने के निमित्त बन अपना विशेष हीरो पार्ट नूँध लिया। इसके फलस्वरूप आप सर्व आत्मायें सदा अमर हो। कितना भी कोई आगे चला जाये – लेकिन फिर भी .... फिर भी कहेंगे, बापदादा को पुरानी वस्तु की वैल्यु का पता है।"

— अव्यक्त बापदादा